पूजनीया,

माताजी श्रीमती राजकलीजी की स्मृति में

बिना मूल्य भेंट

जिनवाणी संग्रह

विनीत :—

मामचन्द, हुलासचन्द, प्रकाशचन्द

मूल्य सदुपयोग

मंगाने के लिये पोष्टेज ॥≶) के टिकिट

किसी एक निम्न पते पर भेजें

H. C. Jain.
R. B. S. Jain Rubber Mills
Lillooah, (E. I. Ry.)

ला० मित्रसैन मामचन्द जैन
देवबन्द
यु, पी,

प्रकाशकके दो शब्द

बन्धुओं !

यह जानकर आप अवश्य ही प्रसन्न होंगे कि सच्चा जिन-वाणी संग्रह भादों मासमें ही छपाया गया था, परन्तु दो माहमें ही वह आवृत्ति शेष हो गयी। तब यह नवीन आवृत्ति यूरोपीय लड़ाई आरम्भ होनेके बाद प्रकाशित की जा रहा है। जब कि कागजका भाव बहुत ही ज्यादा बढ़ गया है। इस परिस्थितिमें इतने बड़े संग्रहका प्रकाशन करना कष्ट साध्य अवश्य हो गया था। फिर भी ५०० ग्राहकोंका आर्डर नोट होजानेसे हमने यथा साध्य पुष्ट कागज पर ही तमाम संग्रह छपवाया है गत आवृत्तिसे जरा भी त्रुटि नहीं होने दी है।

हम अपने जैन समाजके उन शास्त्र दानियोंका ध्यान इस ओर पुनः आकर्षित करते हैं कि वे इस संग्रहकी १००-१०० प्रतियां एक साथ लागत मात्रसे भी कम दाममें खरीद कर शास्त्र दानका महान यश प्राप्त करें।

मान्यवर प्यारेलालजी भगतने इस बार भी कई सौ प्रतियां मंगवा कर हमें बहुत कुछ सहायता पहुंचाई है। इसके उन्हें धन्यवाद दिये बगैर नहीं रह सकते।

दीपावली—
वीर सं० २४६५,

समाज सेवक
दुलीचंद परवार

विषय सूची।

।

|-

पवनजय चितामें गिरने जा रहे थे कि अंजना पहुंच जाती है।

(अंजना नाटक)

एक व्रती श्रावक स्वाध्याय कर रहा है।

सच्चा

जिनवाणी संग्रह

पहिला अध्याय।

णमोकार मंत्र।

गाथा।

णमो अरहंताणं, णमोसिद्धाणं णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

• अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः।

दर्शनपाठ।

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो सरन जी। यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी। तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविधप्रकारजी। या बुद्धिसेती निज न जाण्यो, भ्रम गिण्यो हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकटवनमें करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हर्यो। तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतो फिर्यो ॥ धन घडी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो। अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लखलयो ॥ २ ॥ छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं। वसु प्रातिहार्य अनंत गुण जुत, कोटि रवि छविको हरैं॥ मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदयरवि आतम भयो। मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो ॥३॥ मैं हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊं तुव चरन जी। सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरन जी ॥ जाचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज

परिजन साथजी। बुध जाचहूं तुव भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथजी ॥ इति ॥

१ ब्रह्मचारि ज्ञानानंदकृत दर्शन

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया। अबतक तुमको विनजाने, दुख पाये निज गुण हाने ॥ पाये अनंते दुःखअबतक, जगतको निज जानकर। सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर धर्म नहिं पहिचानकर ॥ भवबंध कारक सुखप्रहारक विषयमें सुखमानकर। निजपर विवेचक ज्ञान-मय सुखनिधि सुधा नहिं पानकर ॥१॥ तव पद मम उरमें आये, लखिकुमति विमोह पलाये। निजज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहितमें लागी ॥ रुचिलगी हितमें आत्मके, सतसंगमें अब मन लगा। मनमें हुई अब भावना, तब भक्तिमें जाऊँ रँगा ॥ प्रियवचनकी हो टेव गुणि गुण गानमें ही चितपगे। शुभ शास्त्रका नितहो मनन, मन दोषवादनतैं भगै ॥२॥ कब समता उरमें लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर। ममता-

मय भूतभगाकर, मुनिव्रत धारूं वन जाकर धरकर दिगंबररूप कब, अठवीसगुण पालन करूं। दोवीस परिषह सह सदा, शुभधर्म दश धारन करूं॥ तप तपूं द्वादशविधि सुखद नित, बंध आस्रव परिहरूं। अरु रोकि नूतन कर्म संचित, कर्मरिपुकों निर्जरूं॥ ३॥ कब धन्य सुअवसर पाऊं, जब निजमें ही रमजाऊं। कर्तादिक भेद मिटाऊं, रागादिक दूर भगाऊं॥ कर दूर रागादिक निरंतर, आत्मको निर्मल करूं। बल ज्ञान दर्शन सुखअतुल, लहि चरित क्षायिक आचरूं॥ आनंदकंद जिनेंद्र बन उपदेशको नित उच्चरूं। आवैं 'अमर' कब सुखद दिन 'जब' दुखद भवसागर तरूं॥४॥ इति॥

सामायिक पाठ भाषा।

१ प्रतिक्रमण कर्म।

काल अनंत भ्रम्यो जगमें सहिये दुख भारी।
जन्ममरण नित किये पापको है अधिकारी॥

कोटि भवांतरमाहिं मिलन दुर्लभ सामायिक।
धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक॥
हे सर्वज्ञ जिनेश ! किये जे पाप जु मैं अब।
ते सब मन-वच-काय-योगकी गुप्ति बिना लभ॥
आप समीप हजूर माहिं मैं खडो खडो सब।
दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब॥
२॥ क्रोधमानमदलोभमोहमायावशि प्रानी।
दुःखसहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी॥
बिना प्रयोजन एकेंद्रिय बितिचउपंचेंद्रिय।
आप प्रसादहिं मिटै दोष जो लग्या मोहि जिय॥
३॥ आपसमें इकठौर थापकरि जे दुख दीने।
पेलि दिए पगतलैं दाबिकरि प्राण हरीने॥
आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक।
अरज करूं मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक॥४॥
अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय।
तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय॥
मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिध। यह
पडिकोणो कियो आदि षटकर्ममाहिं विधि॥५॥

२ । द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म ।

इसके आदि वा अन्तमें आलोचना पाठ बोलकर फिर तीसरे सामायिक कर्मका पाठ करना चाहिये ।

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे। तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे॥ सो सब झूठो होउ जगतपतिके परसादै। जा प्रसादतैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै॥ ६॥

मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ। किये पाप अघ ढेर पापमति होय चित्त दुठ॥ निंदू हूं मैं बारबार निज जियको गरहूं। सब-विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूं॥ ७॥

दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावक कुल भारी। सतसंगति संजोग धर्मजिनश्रद्धा, धारी॥ जिन बचनामृत धार समावर्तै जिनवानी। तोहू जीव संघारे धिक धिक धिक हम जानी॥ ८॥

इंद्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब। अज्ञानी जिमि करै तिसी विधि हिंसक ह्वै अब॥ गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले। ते सब दोष किये निंदूं अब मन वच तोले॥ ९॥

आलोचनाविधिथकी दोष लागे जु घनेरे । ते सब दोष विनाश होउ तुम तैं जिन मेरे ॥ बारबार इसभांति मोहमद दोष कुटिलता । ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता ॥ १० ॥

३ तृतीय सामायिक भावकर्म ।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है । सब जिय मोसम समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूं सामायिक । संजम मो कब शुद्ध होय यह भावबधायक ॥ ११ ॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउकाय वनस्पति । पंचहि थावरमाहिं तथा त्रस जीव बसैं जित ॥ बेइंद्रिय तिय चउ पंचेंद्रियमांहि जीव सब । तिन तैं क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब ॥१२॥ इस अवसरमें मेरे सब सम कंचन अरु तृण । महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं सम गण ॥ जामन मरण समान जानि हम समता कीनी । सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी ।१३। मेरो है इक आतम तामैं ममत जु कीनो । और

सबै मम भिन्न जानि समतारसभीनो ॥ मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह, मोतैं न्यारे जानि जथारथ रूप कर्यो गह ॥ १४ ॥
मैं अनादि जगजालमांहि फांसि रूप न जाण्यो। एकेंद्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो ॥ ते सब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी। भवभवको अपराध छिमा कीज्यो कर मरजी ॥१५॥

४ चतुर्थ स्तवनकर्म

नमौं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्मको। संभव भवदुखहरण करण अभिनंद शर्म को॥ सुमति सुमति दातार तार भवसिंधु पार कर। पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीति धर ॥ १६ ॥ श्रीसुपार्श्व कृतपाश नाश भव जास शुद्धकर । श्रीचंद्रप्रभ चंद्रकांतिसम देह कांतिधर ॥ पुष्पदंत दमिदोषकोश भविपोष रोषहर। शीतल शीतल करण हरण भवताप दोषकर ॥ १७ ॥ श्रेयरूप जिनश्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक

भवभयहन ॥ विमल विमलमति देन अंतगत है अनंत जिन। धर्मशर्मशिवकरण शांतिजिन शांतिविधायिन ॥ १८ ॥ कुंथ कुंथुमुख जीवपाल अरनाथ जाल हर। मल्लि मल्लसम मोहमल्लमारन प्रचार धर। मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुर-संघहिं नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्म-रथमांहि ज्ञानधन ॥ १९ ॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्ष रमापति। वर्द्धमान जिन नमूं बमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ या विधि मैं जिन संघ-रूप चउवीस संख्यधर। स्तवूं नमूं हूं बारबार वंदूं शिव सुखकर ॥ २० ॥

५ पंचम वंदनाकर्म।

वंदूं मैं जिनवीर धीर महावीर सुसनमति। वर्द्ध-मानअतिवीर बंदि हूं मनवचतनकृत ॥ त्रिश-लातनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं। वंदौं नित प्रति कनकरूप तनु पापनिकंदूं ॥ २१ ॥ सिद्धा-रथ नृपनंदद्दुंददुख दोष मिटावन, दुरित दवा-नल ज्वालित ज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुंडल

पुर करि जन्म जगत जिय आनँदकारन । वर्ष बहत्तर आयु पाय सबही दुख टारन ॥ २२ ॥ सप्तहस्त तनु तुंग भंगकृतजन्ममरणभय । बाल-ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन । आप बसे शिव-मांहि ताहि वंदौं मन वच तन ॥ २३ ॥ जाके वंदनथकी दोष दुखदूरहि जावै । जाके वंदन थकी मुक्तितिय सन्मुख आवै ॥ जाके वंदनथकी वंद्य होवें सुरगनके, ऐसे वीर जिनेश वन्दि हूं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षटकर्ममांहिं बंदन यह पंचम । बंदों वीरजिनेंद्र इंद्रशतवंद्य वंद्य मम ॥ जन्म मरणभय हरो करो अघशांति शांतिमय । मैं अघकोष सुपोष दोषको दोष विनाशय ॥ २५ ॥

६ छठा कायोत्सर्ग कर्म ।

कायोत्सर्ग विधान करूं अंतिम सुखदाई । काय-त्यजनमय होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं । जिनगृह

वंदन करूं हरूं भवपापतिमिर मैं ॥२६ ॥ शिरो-
नती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरिकैं । आवर्ता-
दिक क्रिया करूं मन वच मद हरिकैं ॥ तीनलोक
जिनभवनमाहिं जिन हैं जु अकृत्रिम । कृत्रिम हैं
द्वय अर्द्धद्वीप माहीं वन्दों जिम ।२७। आठकोडि
परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं । च्यारि
शतक पर असी एक जिनमंदिर जाणूं ॥ व्यंतर
ज्योतिषिमाहिं संख्यरहिते जिनमंदिर । ते सब
वंदन करूं हरहु मम पाप संघकर ॥ २८ ॥ सा-
मायिकसम नाहिं और कोउ वैरमिटायक । सामा
यिकसम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक ॥ श्रावक
अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक । यह आव
श्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे
भवि आतमकाज-करण उद्यमके धारी । ते सब
काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग रोष
मदमोहक्रोध लोभादिक जे सब । बुध महाचन्द्र
विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥ ३० ॥

* इति सामायिक पाठ समाप्त *

गंधोदक लेनेका मंत्र।

निर्मलं निर्मलीकरं पवित्रं पापनाशकं।
जिन गंधोदकं वंदे कर्माष्टकविनाशकं ॥ १ ॥
निर्मलसे निर्मल अती. अघनाशक सुखसार।
वंदू जिनअभिषेककृत. यह गंधोदक नीर ॥

आशिका लेनेका दोहा।

श्रीजिनवरकी आशिका लीजै शीश चढाय।
भवभवके पातक कटैं. दुःख दूर हो जांय ॥१॥

शास्त्रजीको नमस्कार करनेके कवित्त।

वीर हिमाचलतैं निकरी. गुरु गौतमके मुख कुंड ढरी है। मोहमहाचल भेद चली. जगकी जडतातप दूर करी है ॥ ज्ञान पयोनिधिमांहि रली. बहुभंगतरंगनिसों उछरी है। ता शुचि शारद गंगनदी प्रति. मैं अंजुलिकर शीश धरी है ।१। या जगमंदिरमें अनिवार अज्ञान अँधेर छयो अति भारी। श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासम. जो नहिं होत प्रकाशन-हारी ॥ तो किसभांति

पदारथपांति. कहां लहते. रेहत अविचारी। या विधि संत कहैं धनि हैं. धनि हैं जिनवैन बडे उपकारी ॥ २ ॥

रात्रिकोभी इसीप्रकार दर्शन करके तत्पश्चात् दीपधूपसे नीचे लिखी अथवा जिसपर रुचि हो वह आरती करना चाहिये।

पंचपरमेष्ठीकी आरती।

चाल खड़ी।

मनवचतनकरि शुद्धपंचपद. पूजें भविजन सुखदाई। सबजन मिलकर दीप धूप ले. करहिं आरती गुण गाई ॥ टेक ॥ प्रथमहिं श्रीअरहंत परमगुरु चौंतिस अतिशयसहित बसें। प्रातिहार्य वसु अतुल चतुष्टय. सहित समवसृत मांहि लसैं क्षुधा तृषा भय जन्म जरा मृति. गद रति चिंता शोक महा। विस्मय स्वेद खेद मद निद्रा. राग रोष मिल मोह दहा. इन अष्टादश दोषरहितानित इंद्रादिक पूजत आई। सब०१। दूजे सिद्ध सदा सुखदाता. सिद्धशिलापर राजत हैं। सम्यक-दर्शन ज्ञान वीर्य अरु.सूक्ष्मपणाकरि छाजत हैं। अगुरुलघू अवगहनशक्तिधर बाधाविन अश-

रीरा है। तिनका सुमिरण नित्य कियेतें शीघ्र नशात भवपीरा है॥ या कारण नित चित्त शुद्ध कर भजहु सिद्ध शिवके राई सब० ॥२॥ तीजे श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं। दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज पंचाचार प्रचारी हैं॥ द्वादशतप दशधर्म गुप्तित्रय षट् आवश्यक नित पालें। सब मुनिजनको प्रायश्चित दे मुनि व्रतके दूषण टालें॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी पूजा करिये चितलाई सब० ॥३॥ चौथे—श्रीउवझाय चरणपंकजरज सुखदा भविजनको। ग्यारह अंग सु पूर्वचतुर्दश पढैं पढावें मुनिगनको॥ मुनिके सब आचरण आचरैं द्वादशतपके धारी हैं। स्यादवाद सुखकारी विद्या सबजगमैं विस्तारी हैं॥ ऐसे श्रीउवझाय गुरुनके चरणकमल पूजहु भाई सब०॥४॥पंचमि आरति सर्व साधुकी आठवीस गुण मूल धरैं। पंच महाव्रत पंचसमिति धर इंद्रिय पांचों दमन करैं॥ षट्आवश्यक केशलोंच इकबार खड़े भोजन करते

दांतणस्नान त्याग भू सोवत. यथाजात मुद्रा धरते ॥ या विधि 'पन्नालाल' पंचपद. पूजत भवदुख नशजाई । सब जन मिलकर दीप धूप ले करहिं आरती गुणगाई ॥ ५ ॥

इस प्रकार आरती बोलकर नीचे लिखा श्लोक, दोहा पढ़कर आरती मस्तक पर चढ़ावें ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघात दीपान्। दीपैःकनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेंद्रसि-द्धांतयतीन्यजेऽहं ॥

स्वपरप्रकाशनज्योति अति दीपकतमकरहीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप खेनेका श्लोक ।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून् धूपैर्विधूतान्यसुगंधगंधैर्जिनेंद्रासिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥ २ ॥

दोहा—अगनिमांहिं परिमलदहन चंदनादि गुण लीन। जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुव जिनंद दिट्ठियो, आज पातक सब भज्जे तुव जिनंद दिट्ठियो, आज वैरी सब लज्जे ॥ तुव जिनंद दिट्ठियो, आज मैं सरवस पायो। तुव जिनंद दिट्ठियौ आज चिंतामणि आयौ ॥ जै जै जिनंद त्रिभुवन तिलक आज काज मेरो सरयो। कर जोरि भविक विनती करत, आज सकल भवदुख टरयो ॥ १ ॥ तुव जिनंद ममदेव सेव मैं तुमरी करिहौं। तुव जिनंद मम देव, नाथ तुम हिरदै धरिहौं। तुव जिनंद मम देव तुही साहिब मैं बंदा। तुव जिनंद मम देव, मही कुमुदनि तुम चंदा ॥ जै जै जिनंद भवि कमल रवि, मेरो दुःख निवारिकै। लीजै निकाल भव जालतैं, अपनो भक्त विचारकै ॥२॥

सुप्रभात स्तोत्र।

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे। यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाकृतं तद्भवैः

संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपाद युग ! दुर्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनंदन ! जिनाजित शंभवाख्य ! त्वद्ध्यानतोस्तु सततं मम सुप्रभातं ॥२॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमानदेवाभिनंदन मुने सुमते जिनेंद्र । पद्मप्रभारुणमणिद्युतिभासु-रांग, त्व० ॥ ३ ॥ अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलव-र्णगात्रप्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर । चंद्रप्रभ स्फटिक पांडुर पुष्पदंत ! त्व० ॥ ४ ॥ संततप्तकां-चनरुचे जिनशीतलाख्य । श्रेयान्विनष्टदुरिताष्ट कलंकपंक बंधूकबंधुर रुचे जिनवासुपूज्य, त्व० ।५। उद्दंडदर्पकरिपो विमलामलांग स्थेमन्न-नंतजिदनंतसुखांबुराशे । दुष्कर्मकल्मषविव-र्जित धर्मनाथ, त्व० ॥ ६ ॥ देवामरीकुसुमस-न्निभ शांतिनाथ कुंथोदयागुणविभूषणभूषि-तांग देवाधिदेव भगवन्नर तीर्थनाथ, त्व० ।७। यन्मोहमल्लमदभंजन मल्लिनाथ क्षेमं कराविं-तथशासनसुव्रताख्य । यत्संपदा प्रशमितो नमि

नामधेय, त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छगुच्छरुचिरो-ज्ज्वल नेमिनाथ घोरोपसर्गविजयिन् जिन-पार्श्वनाथ । स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पण वर्द्धमान, त्व० ॥९॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासंयन्मूर्तिमव्यय सुखावसथं मुनींद्राः । ध्यायंति सप्ततिशतं जिन वल्लभानां, त्व० ॥१०॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं मांगल्यं परिकीर्तितं । चतुर्विंशति, तीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनंदितं । देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥ १२ ॥ सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्त्व सुखावहं ॥१३॥ सुप्रभातं जिनेंद्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषां । अज्ञानतिमिरांधानां नित्यमस्तमितोरविः ॥ १४ ॥ सुप्रभातं जिनेंद्रस्य वीरः कमललोचनः । येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याण सुमंगलं । त्रैलोक्याहितकर्तॄणां जिनानामेव शासनं ॥१६ ॥ इति ॥

दृष्टाष्टक स्तोत्र

(दर्शनार्थ जाते हुये जबसे जिनमंदिर दिखने लगे तबसे इसका पाठ करना प्रारंभ कर दें)

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारी भव्यात्मनां विभवसंभवभूरिहेतुः । दुग्धाब्धिफेनधवलोज्वल कूटकोटीनद्धध्वजप्रकरराजिविराजमानं ॥ १ ॥
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैक लक्ष्मीर्धामर्द्धिवर्द्धित महामुनि सेव्यमानं । विद्याधरामरवधूजनमुक्त-दिव्यपुष्पांजलिप्रकरशोभितभूमिभागं ॥ २ ॥
दृष्टं जिनेंद्रभवनं भवनादिवासविख्यातनाकगणिकागणगीयमानं । नानामणिप्रचयभासुररश्मि-जालव्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालं ॥ ३ ॥
दृष्टं जिनेंद्रभवनं सुरसिद्धयक्षगंधर्वकिन्नर करा-

र्पितवेणुवीणा। संगीतमिश्रितनमस्कृतधारना-
दैरापूरितांबरतलोरुदिगंतरालं॥ ४ ॥ दृष्टं जि-
नेंद्रभवनं विलसद्विलोलमालाकुलालिललिताल-
कविभ्रमाणं । माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासनीनां
लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यं ॥ ५ ॥ दृष्टं जिनें-
द्रभवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामर-
दर्पणाद्यैः । सन्मंगलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्रा-
जितं विमलमौक्तिकदामशोभं ॥ ६ ॥ दृष्टं जिनें-
द्रभवनं वरदेवदारुकर्पूरचंदनतरुष्कसुगंधिधूपैः।
मेघायमानगगने पवनाभिघातचचञ्चलद्वि मलके-
तनतुंगशालं ॥ ७ ॥ दृष्टं जिनेंद्रभवनं धवलात-
पत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृंदैः। दोधूयमा-
नसितचामरपंक्तिभासं भामंडलद्युतियुतप्रतिमा-
भिरामं ॥ ८ ॥ दृष्टं जिनेंद्रभवनं विविधप्रकार-
पुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमिः । नित्यं वसंत-
तिलकश्रियमादधानं सन्मंगलं सकल चंद्रमुनीं-
द्रवंद्यं ॥ ९ ॥ दृष्टं मयाद्यमणिकांचनचित्रतुंग-
सिंहासनादिजिनबिंबविभूतियुक्तं । चैत्यालयंयं-

द्‌तुलं परिकीर्तितं मे सन्मंगलं सकल चंद्रमुनीं-
द्रवंद्यं ॥ १० ॥ इति ॥

मंदिरजीमें प्रवेश करना आदि ।

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते ही "ओं जय जय जय निःसहि निःसहि निःसहि" इसप्रकार उच्चारण कर नीचे लिखा अद्याष्टक स्तोत्र बोलकर दर्शनपाठादि बोले ।

अद्याष्टक स्तोत्र ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वा-
मद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षय संपदः ॥ १ ॥ अद्य
संसारगंभीरपारावारः सुदुस्तरः । सुतरोऽयं
क्षणेनैव जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे
क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातोहं
धर्मतीर्थेषु जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे
सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमंगलं । संसारार्णवती-
र्णोऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्मा-
ष्टकज्वालं विधूतं सकषायकं । दुर्गतेर्विनिवृत्तो-
ऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्या
ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः । नष्टानि विघ्न

जालानि जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबंधः कर्मणां दुःखदायकः। सुखसंगं समापन्नो जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य कर्माष्टकं नष्ट दुःखोत्पादन कारकं। सुखांभोधिनिमग्नोऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यांधकारस्य हंता ज्ञान दिवाकरः। उदितो मच्छरीरेस्मिन् जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः। भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानंदितमानसः। तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥ इति ॥

नमस्कारमंत्रदर्शनपाठादि।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं

चत्तारि मंगलं-अरहंत मंगलं। सिद्ध मंगलं। साहू मंगलं। केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ॥१॥ चत्तारि लोगुत्तमा--अरहंत लोगुत्तमा। सिद्ध लोगुत्तमा। साहू लोगुत्तमा। केवलिपण्णत्तो

धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्तारि सरणं पवज्जा-
मि--अरहंतसरणं पवज्जामि । सिद्धसरणं पव्व-
ज्जामि । साहुसरणं पव्वज्जामि । केवलिपण्णत्तो
धम्मोसरणं पव्वज्जामि । ओं ह्रौं ह्रौं स्वाहा ॥

वर्तमान चौवीस तीर्थंकरोंके नाम कवित्त ।

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म
सुपास प्रभुचंद । पुहपदंत शीतल श्रेयांस प्रभु,
वासुपूज्य प्रभु विमल सुछंद ॥ स्वामि अनंत
धर्मप्रभु शांति सु, कुंथु अरह जिन मल्लि अनंद
मुनिसुव्रत नमि नेमि पास, वीरेश सकल वंदों
सुखकंद ॥१॥ श्रीऋषभः१ अजितः२ संभवः३
अभिनंदनः४सुमतिः५पद्मप्रभः६सुपार्श्वः७चंद्रप्र-
भः८पुष्पदंतः९शीतलः१० श्रेयांसः११ वासुपू-
ज्यः१२विमलः१३अनंतः१४धर्मः१५ शांतिः१६
कुंथुः१७अरः१८मल्लिः१९मुनिसुव्रतः२० नामिः
२१नेमिः२२पार्श्वनाथः२३महावीरः२४ इति व-
र्तमान कालसंबंधिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो
नमोनमः ॥

इसप्रकार बोलकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिये। नमस्कारके पश्चात् पूजनके लिये चावल चढ़ाना हो, तो नीचे लिखे पद्य तथा मंत्र पढ़कर चढावें। गीता छंद —

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि ठई। अति दृढ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही॥ उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल, पुंज धरि त्रयगुण जचूं। अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरुनिरग्रंथ-नितपूजा रचूं॥१॥

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन। जासों पूजों परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन॥१॥ ओं ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

यदि पुष्पोंसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा पद्य पढ़ें।

जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज-प्रकाशन भान हैं। जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान हैं। लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवेदनसों बचूं। अरहंत श्रुतसिद्धान्त गुरु निरग्रंथ नित पूजा रचूं॥२॥

विविधभाँति परिमलसुमन, भ्रमर जास आधीन।

तासों पूजों परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ २ ॥

यदि किसीको लोंग, बादाम इलायची या कोई प्रासुक फल चढ़ाना हो तो नीचे लिखे पद्य और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे।

लोचन सुरसना घ्राण उर उत्साहके करतार हैं। मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुण सार हैं ॥ सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, सकल अम्रतरस सचूं। अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरुनिर-ग्रंथनितपूजा रचूं ॥ ३ ॥

जे प्रधानफलफलाविषै, पंचकरण रसलीन।
जासौं पूजौं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥३॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

यदि किसीको अर्घ चढ़ाना हो, तो नीचे लिखे पद्य व मन्त्र बोलकर चढ़ाना चाहिये।

जल परम उज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरूं। वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनमके पातक हरूं ॥ इहभांति अर्घ चढाय नित भवि

करत शिवपंकाति मचूं। अरहंत श्रुतसिद्धांत गुरुनिरग्रंथ नित पूचा रचूं ॥४॥

वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मनकीन।
जासों पूजौं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥४॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

दर्शनदशक।

छप्पय।

देखे श्रीजिनराज, आज सब विघन नशाये।
देखे श्रीजिनराज, आज सब मंगल आये ॥
देखे श्रीजिनराज काज करना कछु नाहीं।
देखे श्रीजिनराज हौंस पूरी मनमांहीं ॥ तुम देखे श्रीजिनराज पद भौजल अंजुलिजल भया। चिंतामनिपारसकल्पतरु मोहसबनिसों उठि गया ॥ १ ॥

देखे श्रीजिनराज भाज अघ जाहिं दिसंतर।
देखे श्रीजिनराज काज सब होय निरंतर ॥
देखे श्रीजिनराज राज मनवांछित करिये। देखे

श्रीजिनराज नाथ दुख कबहुं न भरिये ॥ तुम देखे श्रीजिनराजपद,रोमरोम सुख पाइये। धनि आज दिवस धनि अब घरी, माथ नाथकों नाइये ॥२॥

धन्य धन्य जिनधर्म कर्मकों छिनमें तोरै। धन्य धन्य जिनधर्म परमपदसों हित जोरै ॥ धन्य धन्य जिनधर्म भर्मको मूल मिटावै। धन्य धन्य जिनधर्म शर्मकी[1] राह बतावै ॥ जग धन्य धन्य जिनधर्म यह, सो परगट तुमने किया। भविखेत पापतप-तपतकों[2], मेघरूप ह्वै सुख दिया ॥३॥

तेज सूरसम[3] कहूं, तपत दुखदायक प्रानी। कांति चंदसम कहूं, कलंकित मूरति मानी। वारिधिसम गुण कहूं, खारमें कौन भलप्पन ॥ पारससम जस कहूं, आपसम करै न पर-तन[4] ॥ इन आदि पदारथ लोकमें, तुमसमान[5] क्यों

१ कल्याणको, आत्महितकी। २ पापरूप अग्निसे तप्त। ३ सूर्यसदृश। ४ पराये शरीरको अर्थात् दूसरी धातुओंको। ५ पटतर, उपमा।

दीजिये। तुम महाराज अनुपमदसा, मोहि अनूपम कीजिये ॥४॥

तब विलंब नहिं कियो, चीर द्रोपदिको बाढ्यो। तब विलंब नहिं कियो, सेठ सिंहासन चाढ्यो॥ तब विलंब नहिं कियो, सीय पावकतें टारयो। तब विलंब नहिं कियो, नीरें[1] मातंग[2] उबारयो॥ इहिविधि अनेकदुख भगतके, चूर दूर किय सुख अवनि[3]। प्रभु मोहि दुःख नासनि-विषै, अब विलंब कारण कवन ॥५॥

कियो भौनतें[4] गौन[5], मिटी आरति संसारी। राह आन तुम ध्यान, फिकर भाजी दुखकारी देखे श्री जिनराज, पाप मिथ्यात विलायो। पूजाश्रुति बहुभगति, करत सम्यकगुण आयो इस मारवाड[6]संसारमें कल्पवृक्ष तुम दरश है। प्रभु मोहि देहु भौ भौ विषै, यह वांछा मन सरस है ॥६॥

---

१ जलमेंसे। २ हाथी। ३ पृथिवीमें। ४ घरसे। ५ गमन। ६ मारवाड़रूपी (वृक्षरहित सूखे देशरूपी) संसारमें।

जै जै श्रीजिनदेव, सेवतुमरी अघनाशक। जै जै श्रीजिनदेव भेव[1] षटद्रव्य प्रकाशक॥ जै जै श्रीजिनदेव, एक जो प्रानी ध्यावै। जै जै श्री जिनदेव, टेव अहमेव मिटावै। जै जै श्रीजिन देव प्रभु, हेय करमरिपु दलनकौं। हूजे सहाय सँघरायजी, हम तयार सिवचलनकौं॥ ७॥

जै जिनंद आनंदकंद, सुरवृंदवंद्यपद। ज्ञान-वान सब जान, सुगुन मनिखान आनपद[2]॥ दीनदयाल कृपाल, भविक भौजाल निकालक। आप बूझ सब सूझ[3], गूझ नहिं बहुजन पालक। प्रभु दीनबंधु करुनामयी, जगउधरन तारनतरन दुखरासनिकास स्वदासकौं, हमें एक तुमही सरन॥८॥

देखनीक[4] लखिरूप, वंदिकरि वंदनीक हुव। पूजनीक पद पूज, ध्यानकरि ध्यावनीक धुव॥ हरष बढाय बजाय, गाय जस अंतरजामी। दरब चढाय अघाय, पाय संपति निधि स्वामी

---

१ भेद। २ गद ऐसा भी पाठ है। ३ गुप्तछिपी ४ देखनेलायक।

तुमगुण अनेक मुख एकसों कौन भांति बरनन करौं। मनवचनकायबहुप्रीतिसों एक नामहीसौं तरौं ॥ ६ ॥

चैत्यालय जो करै धन्य सो श्रावक कहिये। तामैं प्रतिमा धरै धन्य सो भी सरदाहिये॥ जो दोनों विस्तरै संघनायक ही जानौं। बहुत जीवकों धर्म—मूलकारन सरधानों। इस दुखमकाल बिकरालमें तेरो धर्म जहां चले। हे नाथ काल चौथो तहां ईति भीति सबही टलै॥१०॥

दर्शन दशक कवित्त, चित्तसों पढै त्रिकालं। प्रीतम सनमुख होय, खोय चिंता गृहजालं॥ सुखमैं निसिदिन जाय, अंत सुरराय कहावै। सुर कहाय शिवपाय जनम मृति जरा मिटावै॥ धनि जैनधर्म दीपक प्रगट, पाप तिमिर छयकार है। लखि साहिबराय सुआँससों, सरधातारनहार है॥ ११ ॥ इति ॥

आलोचना पाठ ।

यह आलोचनापाठ सामायिक कालमें प्रथमकर्म प्रतिक्रमण कर्म है उस कर्मके आदि वा अन्तमें बोलना चाहिए।

दोहा--वंदों पांचों परमगुरु, चौवीसों जिनराज ।
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरनके काज ॥१॥

सखी छंद चौदह मात्रा ।

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष कियेअति भारी ॥ तिनकी अब निर्वृत्ति काज । तुम सरन लही जिनराज ॥ २ ॥ इक वे ते चउ इंद्री वा । मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं करुणा धारी । निरदइ है घात विचारी ॥ ३ ॥ समरंभ समारंभ आरँभ । मनवचतन कीने प्रारँभ। कृत कारित मोदन करिकैं । क्रोधादि चतुष्टय धरिकें ॥ ४ ॥ शत आठ जु इमि भेदनतें । अघ कीने परछेदनतैं ॥ तिनकी कहुं कोलों कहानी । तुम जानत केवलज्ञानी ॥ ५ ॥ विपरीत एकांत विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥ वश होय घोर अघ कीने । वचतें नहिं जाय कहीने ॥ ६ ॥

कुगुरनकी सेवा कीनी। केवल अदयाकरि भीनो। याविधि मिथ्यात भ्रमायो। चहुंगति मधि दोष उपायो॥ ७॥ हिंसा पुनि झूठ जु चोरी। परवनितासों दृग जोरी॥ आरंभपरिग्रह भीनो। पनपाप जु या विधि कीनो।८। सपरस रसना घ्राननको। चखु कान विषयसेवनको॥ बहु करम किये मनमानी। कछु न्याय अन्याय न जानी॥ ९॥ फल पंच उदंबर खाये। मधु मांस मद्य चितचाहे॥ नहिं अष्टमूलगुणधारी। विसन न सेये दुखकारी॥१०॥ दुइवीस अभख जिनगाये। सो भी निशदिन भुंजाये॥ कछु भेदाभेद न पायो। ज्यों त्योंकरि उदर भरायो॥११॥ अनंतानु जु बंधी जानो। प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो॥ संज्वलन चौकरी गुनिये। सब भेद जु षोडश मुनिये॥ १२॥ परिहास अरतिरति शोग। भय ग्लानि तिवेद संजोग॥ पनवीस जु भेद भये इम। इनके वश पाप किये हम। १३। निद्रावश शयन कराई। सुपनेमाधिदोष

लगाई। फिर जागि विषयवन धायो। नाना-
विध विषफल खायो ॥१४॥ कियेऽहार निहार-
विहारा। इनमें नहिं जतन विचारा॥ विन देखी
धरी उठाई। विन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥
तब ही परमाद सतायो। बहुविधि विकलप उप-
जायो॥ कछु सुधिबुधि नाहिं रही है। मिथ्या-
मति छाय गयी है॥ १६॥ मरजादा तुमढिंग
लीनी। ताहूमें दोष जु कीनी॥ भिन भिन अब
कैसें कहिये। तुम ज्ञानविषैं सब पइये॥ १७॥
हा हा! मैं दुठ अपराधी। त्रसजीवनराशि विरा-
धी॥ थावरकी जतन न कीनी। उरमें करूना
नहिं लीनी॥ १८॥ पृथिवी बहु खोद कराई।
महलादिक जागां चिनाई॥ पुनि विनगाल्यो
जल ढोल्यो। पंखातैं पवन विलोल्यो ॥१९॥ हा
हा! मैं अदयाचारी। बहु हरितकाय जु विदारी
॥ तामधि जीवनके खंदा। हम खाये धरि आनं
दा॥ २०॥ हा हा! परमाद बसाई। विन देखे
अगनि जलाई॥ तामधि जे जीव जु आये। ते

हू परलोक सिधाये ॥ २१ ॥ वींध्यो अनराति पिसायो । ईंधन विन सोधि जलायो ॥ झाड़ू ले जागां बुहारी । चिंवटी आदिक जीव विदारी ॥ २२॥ जल छानि जिवानी कीनी । सो हू पुनि डारि जु दीनी ॥ नहिं जलथानक पहुंचाई । कि-रिया विन पाप उपाई ॥२३ ॥ जल मल मोरिन गिरवायो। कृमिकुल वहु घात करायो॥ नदियन बिच चीर धुवाये । कोसनके जीव मराये ॥२४। अन्नादिक शोध कराई । तामें जु जीव निसराई ॥ तिनका नहिं जतन कराया । गरियालैं धूप डराया ॥२५॥ पुनि द्रव्य कमावन काज । बहु आरँभ हिंसा साज ॥ कीये तिसनावश भारी । करुना नहिं रंच विचारी ॥ २६ ॥ ताको जु उदय अब आयो । नानाविध मोहि सतायो ॥ फल भुं-जत जियदुख पावै । वचतें कैसें करि गावै ।२७। तुमजानत केवलज्ञानी । दुख दूर करो शिवथा-नी ॥ हम तो तुम शरण लही है । जिन तारन-विरद सही है ॥ २८ ॥ जो गांवपती इक होवै ।

सो भी दुखिया दुख खोवै ॥ तुम तीनभुवनके स्वामी। दुख मेटहु अंतरजामी ॥ २९ ॥ द्रोपदिको चीर बढायो। सीताप्रति कमल रचायो ॥ अंजनसे किये अकामी। दुख मेट्यो अंतरजामी ॥ ३०॥ मेरे अवगुन न चितारो। प्रभु अपनो विरद सम्हारो ॥ सब दोषरहित करि स्वामी। दुख मेटहु अंतरजामी ॥३१॥ इंद्रादिक पदवी न चाहूं। विषयनिमें नाहिं लुभाऊं ॥ रागादिक दोष हरीजे। परमातम निजपद दीजे ॥ ३२ ॥ दोहा—दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोय। सब जीवनके सुख बढै, आनँद मंगल होय ॥ अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरी' आप जिनंद। ये ही वर मोहि दीजिये, चरनशरन आनंद ॥इति॥

अभिषेक ।

नित्यपूजादि संग्रह ।

पंच मंगल ।

पणविवि पंच परमगुरु; गुरु जिन सासनो।
सकलसिद्धिदातार सु विघनविनासनो ॥
सारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो ।
मंगल कर चउ-संघहि पापपणासनो ॥

पापहिपणासन गुणहिं गरुवा; दोप अष्टादश-रहिउ ।
धरिध्यान करमविनाश केवल; ज्ञान अविचल जिन लहिउ ॥
प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित; सकल सुर नर ध्यावहीं ।
त्रैलोकनाथ सु देव जिनवर; जगत मङ्गल गावहीं ॥ १ ॥

१ । गर्भकल्याण ।

जाके गरभकल्याणक धनपति आइयो ।
अवधिज्ञान-परवान सु इंद्र पठाइयो ॥

अति बनी पौरि पगार परिखा सुवन उपवन सोहए ।
नर नारि सुन्दर चतुरभेष सु देख जनमन मोहए ॥
तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं रतनधारा बरसियो ।
पुनि रुचिकवासिनि जननिसेवा करहिं सब बिधि हरसियो ॥

राचि नव .ारह जोजन, नयरि सुहावनी।
कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अति बनी॥
अति बनी पोरि पगारि परिखा, सुबन उपवन सोहये।
नरनारि सुंदर चतुर भेख सु, देख जनमन मोहये।
तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो।
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा करहिं सबबिधि हरसियो॥ २॥
सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो।
केहरि-केशरशोभित, नख सिखसुन्दरो॥
कमलाकलस-न्हवन, दुइ दाम सुहावनी।
रविसासि मडल मधुर, मीन जुग पावनी॥
पावनिकनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरा।
कल्लोलमालाकुलितसागर, सिंहपीठ मनोहरो॥
रमणीक अमरविमान फणिपति-भुवन रवि छवि छाजई।
रुचि रतनरासि दिपंत, दहन सु तेजपुंज विराजई॥ ३॥
ये साखि सोरह सुपने सूती सयनहीं।
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनहीं॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो॥
भासियो फल तिहिं चित दम्पति परम आनंदित भये।
छहमासपरि नवमान पुनि तहं, रैन दिन सुखसों गये॥

गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ ४ ॥

२। जन्मकल्याणक।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो।
तिहुंलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो॥
कल्पवासि घर घंट, अनाहद बज्जिया।
जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जिया॥

गज्जिया सहजहिं संख भावन, भुवन सबद सुहावने।
विंतरनिलय पटु पटह बज्जहि, कहत महिमा क्यों बने॥
कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचै जानियो।
धनराज तब गजराज माया-मयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥

जोजन लाख गयंद, वदन सौ निरमये।
वदन वदन वसुदंत, दंत सर संठये॥
सरसर-सौ पनवीस, कमलिनी छाजहीं।
कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजहीं।

राजहीं कमलिनी कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने।
दल दलहिं अपछर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने॥
मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमण्डप सोहये।
घन घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ॥ ६ ॥

तिहिं करि हरि चढि आयउ सुरपरिवारियो।

पुरिहि प्रदच्छन दे त्रय. जिन जयकारियो ॥
गुप्तजाय जिन-जननिहिं. सुखनिद्रा रची।
मायामयि सिसु राखि तौ. जिन आन्यो सची ॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपित न हूजिये।
तब परम हरषित हृदय हरणा सहस्र लोचन १पूजिये।
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ।
ईसान इंद्र सु चंद्र छवि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ ॥ ७ ॥
सनतकुमार माहेंद्र. चमर दुइ ढारहीं।
सेस सक्र जयकार. सबद उच्चारहीं ॥
उच्छवसहित चतुरविधि. सुर हरषित भये।
जोजन सहस निन्यानव. गगन उलँघि गये ॥
लँघिगये सुरगिर जहां पांडुक, बन विचित्र विराजहीं।
पांडुक शिला तहँ अर्द्ध चंद्र समान, मणि छवि छाजहीं ॥
जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी।
वर अष्ट-मङ्गल-कनक कलसनि सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥
रचि मणिमंडप सोभित. मध्य सिंहासनो।
थाप्यो पूरव मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥
बाजहिं ताल मृदंग. वेणु वीणा घने।
दुंदुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने ॥

१—पूजिये अर्थात् पूरण किये—बनाये।

बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मङ्गल गावहीं।
पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं॥
भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुरगिरि ल्यावहीं।
सौधर्म अरु ईशान इंद्र सु कलस ले प्रभु न्हावहीं॥ ९॥

वदन उदर अवगाह, कलसगत जानिये।
एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये॥
सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरइँ।
पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करइँ॥

करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दये।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गये॥
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं॥ १०

३—तपकल्याणक।

श्रमजलरहित सरीर, सदा सब मलरहिउ।
छीर वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ॥
प्रथम सार संहनन, सरूप विराजहीं।
सहज सुगंध सुलच्छन, मंडित छाजहीं॥

छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने।
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने।
आबाल काल त्रिलोकपति मन, रुचिर उचित जु नित नये।
अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगये॥ ११॥

भवतन-भोग-विरत्त, कदाचित चित्तए।
धन जोबन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तए॥
कोउ न सरन मरनदिन, दुख चहुंगति भर्‌यो।
सुखदुख एकहि भोगत, जिय विधिवसिपर्‌यो॥
पर्‌यो विधिवसि आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो।
तन असुचि परतैं होय आस्रव, परिहरेतैं संवरो।
निरजरा तपबल होय, समकित,-विन सदा त्रिभुवन भम्यो।
दुर्लभ विवेक विना न कबहूं परम धरमविषै रम्यो॥ १२॥
ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया।
लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया॥
कुसुमांजलि दे चरन, कमल सिर नाइया।
स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकर, तिन समुझाइया॥
समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो।
रुचिरुचिर चित्र विचित्र सिविका,-करसु नंदन-वन लियो॥
तहँ पंचमुट्ठी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि थुति करी।
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर सकल परिगह परिहरी॥ १३॥
मणिमयभाजन केश परिट्ठिय सुरपती।
छीरसमुद-जल खिपकरि, गयो अमरावती॥
तपसंयमबल प्रभुको, मनपरजय भयो।
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो॥

भयो कछु तहं काल तपबल, रिद्धि वसुविधि सिद्धिया ॥
जसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया।
खिपि सातवें गुण जतनबिन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ।
करि करण तीन प्रथम सुकलबल, खिपकसेनी प्रभु चढ़िउ ॥१४॥

प्रकृति छतीस नवें-गुण, थान विनासिया।
दसवें सूच्छमलोभ, प्रकृति तहँ नासिया ॥
सुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरियौ।
बारहवें-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियौ ॥

चूरियौ त्रेसठ प्रकृति इहविधि, घातियाकरमनितणी।
तप कियो ध्यानप्रयंत बारह-विधि त्रिलोकसिरोमणी ॥
निःक्रमणकल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥ १५ ॥

४—ज्ञानकल्याणक।

तेरहवें गुण-थान सयोगि जिनेसुरो।
अनँतचतुष्टयमंडिय, भयो परमेसुरो ॥
समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो ॥
आगमजुगति प्रमान, गगनतल परिठयो ॥

परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभामण्डप सोहये।
तिहिंमध्य बारह बने कोठे, वनक सुरनर मोहये।
मुनि कलपवासिनि अरजिका पुनि ज्योति भौमि-भवनतिया।
पुनि भवनव्यंतर नभग सुरनर पसुनि कोठे बैठिया ॥ १६ ॥

मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने।
गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने॥
तीन छत्र सिर सोहत त्रिभुवन मोहए।
अंतरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए॥
सोहये चौसठ चमर ढरत, अशोकतरुतल छाजए।
पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबदजुत तहँ, देव दुंदभि बाजए।
सुरपुहुपवृष्टि सुप्रभामण्डल, कोटि रवि छवि छाजए।
इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए॥ १७॥

दुइसै जोजनमान सुभिच्छ चहूं दिसी।
गगनगमन अरु प्राणी, वध नाहिं अहनिसी॥
निरुपसर्ग निराहार, सदा जगदीशए।
आनन चार चहूंदिसि, सोभित दीसए॥
दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपना।
कायाविवर्जित सुद्ध फटिक समान तन प्रभुका बना॥
नहिं नयनपलकपतन कदाचित, केस नख सम छाजहीं।
ये घातियाछयजनित अतिशय, दस विचित्र विराजहीं॥ १८॥

सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिए।
सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिए॥
सकलरितुज फलफूल, वनस्पति मन हरै।
दरपनसम मनि अवनि, पवन गतिअनुसरै॥

अनुसरे परमानंद सबको, नारि नर जे सेवता।
जोजन प्रमान धरा सुमार्जेहिं, जहां मारुत देवता ॥
पुनिकरहिं मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी
पदकमलतर सुरखिपहिंकमलसु, धरणि ससि सोभा बनी ॥ १६ ॥

अमलगगनतल अरु दिसि, तहँ अनुहारहीं।
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं ॥
धर्मचक्र चलै आगैं, रविजहँ लाजहीं।
पुनि भृंगार--प्रमुख वसु मंगल राजहीं ॥

राजहीं चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा बने ॥
तब इंद्र आय कियो महोच्छव, सभा सोभा अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहां, उच्चरिय वानी जिनतनी ॥ २० ॥

छुधातृषा अरु रोग, रोष असुहावने।
जनम जराअरु मरण, त्रिदोष भयावने ॥
रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी ॥

गनिये अठारह दोष तिनकरि रहितदेव निरंजनो।
नव परम केवललब्धिमंडिय सिवरमनि-मनरंजनो ॥
श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥ २१ ॥

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो[1] ।
भव्यनिप्रति उपदेस्यो, जिनवर तारिसो[2] ॥
भवभयभीत भविकजन, सरणै आइया ॥
रत्नत्रयलच्छन सिवपंथ लगाइया ॥

लगाइया पंथ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतिय सकल जु पूरियो ।
तजि तेरवां गुणथान जोग, अजोगपथपग धारियो ॥
पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती ।
इमि घाति वसुविध कर्म पहुँच्यो, समयमैं पंचमगती ॥

लोकसिखर तनुवात,-बलयमहँ संठियो ।
धर्मद्रव्यविन गमन न जिहि आगैं कियो ॥
मयनरहित मूषोदर, अंवर जारिसो ।
किमपि हीन निजतनुतैं, भयो प्रभु तारिसो ॥

तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपर्जय छनछयी ।
निश्चयनयेन अनंतगुण, विवहार नय वसुगुणमयी ।
वस्तुस्वभाव विभावविरहित, सुद्ध परिणति परिणयो ।
चिद्रूपपरमानंदमंदिर, सिद्ध परमातम भयो ॥ २३ ॥

तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिरगए ।
रहे सेस नखकेश-रूप, जे परिणए ॥

१—जारिसो—जैसा । २—तारिसो—तैसा ।

तब हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभसच्यो।
मायामयि नख केशरहित, जिनतनुरच्यो॥
रचि अगरचंदन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो।
पद्पतित अगनिकुमार मुकुटानल, सुविध सँस्कारियो॥
निर्वाण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं।
भणि "रूपचंद" सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥२४॥

मैं मतिहीन भगतिवस भावन भाइया॥
मंगल गीतप्रबंध, सु जिनगुण गाइया॥
जो नर सुनहिं, बखानहिं सुर धरि गावहीं।
मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं॥
पावहीं आठों सिद्धि नवनिधि, मन प्रतीत जो लावहीं।
भ्रम भाव छूटै सकल मनके, निजस्वरूप लखावहीं॥
पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होंहिं मंगल नितनये।
भणि 'रूपचंद' त्रिलोकपति, जिनदेव चउसंघहिजये॥२५॥

दौलतरामजीकृत दर्शनस्तुति

सकल ज्ञेयज्ञायक तदपि, निजानंद रसलीन। सो
जिनेंद्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन॥१॥

पद्धरि छंद।

जय वीतराग विज्ञानपूर। जय मोहतिमिरको हरन सूर ॥ जय ज्ञानअनंतानंत धार। दृगसुख वीरजमंडित अपार ॥२॥ जय परमशांत मुद्रा समेत। भविजनको निज अनुभूति हेत॥ भवि भागनवचजोगेवशाय। तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नसाय ॥३॥ तुमगुण चिंतत निजपरविवेक। प्रगटै विघटै आपद अनेक॥ तुम जगभूषण दूषणवियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ।४। अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप। परमात्म परम पावन अनूप॥ शुभअशुभविभाव अभाव कीन। स्वाभाविकपरिणतिमयअछीन ॥५॥ अष्टादश-दोषविमुक्त धीर। सुचतुष्टयमय राजत गँभीर॥ मुनिगणधरादि सेवत महंत। नवकेवललब्धि-रमा धरंत ॥६॥ तुम शासन सय अमेय जीव। शिव गये जाहिं जैहैं सदीव। भवसागरमें दुख छार वारि। तारनको अवरन आप टारि ॥७॥ यह लखि निज दुखगदहरणकाज। तुमही

निमित्तकारण इलाज,—जाने तातें मैं शरण आय। उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥ मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप। अपनाये विधि फल पुण्य पाप। निजको परको करता पिछान। पर में अनिष्टता इष्टि ठान॥ ९॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि। ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि॥ तनपरणतिमें आपो चितार। कबहू न अनुभयो स्वपदसार ॥१०॥

तुमको विन जाने जो कलेश। पाये सो तुम जानत जिनेश॥ पशुनारकनरसुरगतिमँझार। भव धर धर मर्‍यो अनंत बार॥ ११॥ अब काललब्धिबलतें दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुश्याल॥ मन शांत भयो मिटि सकल द्वंद्व चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद॥ १२॥ तातें अब ऐसी करहु नाथ। विछुरै न कभी तुव चरण साथ॥ तुम गुणगणको नहिं छेव देव। जग तारनको तुव विरद एव॥ १३॥ आतम के अहित विषय कषाय। इनमें मेरी परिणति

न जाय ॥ मैं रहूं आपमैं आप लीन। सो करो होउँ ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप। शिव करहु, हरहु मम मोहताप ॥ १५ ॥ शशि शांतिकरन तपहरन हेत। स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय। त्यों तुम अनुभवतैं भव नसाय ॥१६॥ त्रिभुवनतिहुँकाल मँझार कोय। नहिं तुम विन निज सुखदायहोय ॥ मोउर यह निश्चय भयो आज। दुखजलधिउतारन तुम जिहाज ॥ १७ ॥

दोहा--तुम गुणगणमणि गणपती, गनत न पावहिं पार। 'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूं त्रियोगसँभार ॥ १८ ॥ इति ॥

। भूधरकृत दर्शनस्तुति ।

हरिगीतिका।

पुलकंत नयन चकोर पक्षी, हँसत उर इंदी-

वरो। दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुरी, निविड मिथ्यातम हरो॥ आनंद अंबुधि उमगि उछर्‌यो, अखिल आतप निरदले। जिनवदन पूरनचंद्र निरखत, सकल मनवांछित फले॥ १॥ मम आज आतम भयो पावन, आज विघन विनाशिया। संसारसागर नीर निवर्‌यो, अखिल तत्त्व प्रकाशिया॥ अब भई कमला किंकरी मम, उभय भव निर्मल थये। दुख जर्‌यो दुर्गति वास निवर्‌यो, आज नव मंगल भये॥ २॥ मनहरन मूरति हेरि प्रभुकी, कौन उपमा लाइये। मम सकल तनके रोम हुलसे हर्षओर न पाइये। कल्याणकाल प्रतच्छ प्रभुको, लखैं जे सुरनर घने। तिहसमयकी आनंद महिमा, कहत क्यों मुख मों बने॥ ३॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको और वांछा ना रही। मन ठठ मनोरथ भये पूरन रंक मानों निधि लही॥ अब होउ भव भव भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कीजिये। कर जोर भूधरदास विनवै, यही वर मोहि दीजिये॥४॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादना-
यकमनंतचतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृ
तकहेतुर्जैनेंद्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥ १ ॥

श्रीमन्मदरसुन्दरे शुचिजलैर्धौतैः सदर्भाक्षतैः
पीठं मुक्ति करं निधायरचितं त्वत्पादपद्मस्रजः ।
इंद्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे
मुद्राकंकणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे २

इसको पढ़कर अभिषेक करनेवाले यज्ञोपवीत धारण करें ।

सौगंध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन, संवर्ण्यमानमिव
गंधमनिंद्यमादौ । आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्द
वंद्यपादारविंदाभिवंद्य जिनोत्तमानां ॥३॥

इसको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंका अङ्गमें चंदन लगाना चाहिये

ये संति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाःप्रभूत
बलदर्पयुता विबोधाः । संरक्षणार्थममृतेनशुभेन
तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥४॥

इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमि या चौकीका प्रक्षालन करे ।

क्षीरार्णवस्य पयसांशुचिभिः प्रवाहै प्रक्षालि-

तं सुरवरैर्यदनेकवारम् । अत्युद्धमुद्यतमहं जिन पादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥ ५ ॥

जिसपर विराजमान करै उस सिंहासनका प्रक्षालन करै)

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णं श्रीमंगलीक-वरसर्वजनस्य नित्यं । श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे

(इस श्लोकको पढ़कर सिंहासनपर श्रीकार लिखना चाहिये)

इंद्राग्निदंडधरनैऋतपाशपाणि वायूत्तरेशशशिमौलिफणींद्रचंद्राः । आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिह्नाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥ ७ ॥

(नीचे लिखे मंत्रोंको पढ़कर क्रमसे दशदिक्पालोंके लिये अर्घ चढ़ावे)

१ ओं आं क्रौं ह्रीं इंद्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

२ ओं आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ॥

३ ओं आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।

४ ओं आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋताय स्वाहा ॥

५ ओं आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ॥

६ ओं आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।

७ ओं आं क्रौं ह्रीं कुवेर आगच्छ आगच्छ कुवेराय स्वाहा ।

८ ओं आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ॥

९ ओं आं क्रौं ह्रीं धरणींद्र आगच्छ आगच्छ धरणींद्राय स्वाहा ।
१० ओं आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ॥

इति दिक्पालमंत्राः ।

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः पौत्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण । त्रैलोक्यमंगलसुखानल कामदाहमारार्तिकं तवविभोरवतारयामि ॥

दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबीमें लेकर मंगल पाठ तथा अनेक वादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरती उतारनी चाहिये ।

यः पांडुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि । कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः संभावयामि पुर एव तदीय विंबं ॥१॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपणकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनविंबकी स्थापना करना चाहिये ।

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्यताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान् । संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान् संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकांते

जलपूरित सुन्दर पत्तोंसे ढके हुये सुवर्णादि धातुके चार कलश चौकी या वेदीके चारों कोनोंमें स्थापन करना चाहिये ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना

चंदनेन, श्रीद्दक्पेयैरमीभिःशुचिसदलचयैरुद्गमै रोभिरुद्धैः। हृद्यैरामिर्निवेद्यैर्मखभवनामिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलै रेभिरीशं यजामि ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं श्री परमदेवाय श्री अर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिं। प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं श्रीमतं भगवंतं कृपालसंतं वृषभादि महावीरपर्यंत-चतुर्विंशतितीर्थंकरपरमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे.... नाम्नि नगरे मासानामुत्तमेमासे.... मासे.... पक्षे....शुभदिने मुनिआर्यिका-श्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः।१३

(इसे पढ़कर श्रीजिनप्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोड़नी चाहिये) यहां प्रत्येक धाराके बाद "उदकचन्दन आदि श्लोक बोलकर अर्घ चढ़ाना चाहिये।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिरामदेहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिं। धारां घृतस्य शुभगन्ध गुणानुमेयां

वंदेर्हतां सुरभिसस्नपनीपयुक्तां ॥ १३ ॥

(ऊपर लिखा पूरा मन्त्र पढ़कर मन्त्रमें "जलेनाभिषिंचे" की जगह 'घृतेनाभिषिंचे' पढ़कर घृतके कलशसे स्नान करना चाहिये)

सम्पूर्ण शारदशशांकमरीचिजालस्यंदैरिवात्म यशसामिव सुप्रवाहैः क्षीरैर्जिनाः शुचिवरैरभि। षिंच्यमानाःसंपादयंतु मम चित्तसमीहितानि।१४

(ऊपरके मन्त्रमें 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'क्षीरेणाभिषिंचे' पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)।

दुग्धाब्धिवीचिपयसांचितफनराशिपांडुत्वकांति मवधीरयतामतीव। दध्नांगतां जिनपते प्रतिमां सुधारा संपद्यतां सपदि वांछितसिद्धयेनः॥१५॥

ऊपर लिखे मन्त्रमें 'जलेन' की जगह 'दध्ना' पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये।

भत्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः। तत्काल पीलितमहेक्षुर सस्य धारा सद्यः पुनातु जिनबिंबगतैव युष्मान्

(ऊपरके मन्त्रमें 'जलेन' की जगह 'इक्षुरसेन' पढ़कर इक्षुरसके कलश से अभिपेक करना चाहिये)।

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः सर्वाभिरोष-

धिभिरर्हतउज्ज्वलाभिः । उद्वर्तितस्य विदधाम्य-
भिषेकमेलाकालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः ।१७।

ऊपरके मंत्रमें "जलेन" की जगह 'सर्वौषधेन' पढ़कर सर्वौ-
षधीके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यैरामोदवासित-
समस्तदिगंतरालैः। मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंग
वानां त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१८॥

यहां 'जलेन' की जगह 'सुगन्धजलेन' पढ़कर केशर कपूरादि
सुगंधित पदार्थों से बनाये जलसे स्नपन करना चाहिये ।

इष्टैरमनोरथशतैरिव भव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्ण
कलशैर्निखिलैर्वसानैः। संसारसागरविलंघनहेतु-
सेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेंद्रं ॥१९॥

(ऊपर लिखे मंत्रसे बचे हुये समस्त कलशोंसे अभिषेक करो ।)

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं
नागेंद्रत्रिदशेंद्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकं ॥
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं ।
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गंधोदकं

(इस श्लोकको पढ़कर गंधोदक अपने अंगमें लगाना चाहिये)

॥ इति श्री लघु अभिषेकविधिः समाप्तः ॥

। अथ लघुपंचामृताभिषेक भाषा

घृत दुग्ध आदिसे पंचामृत अभिषेक करना हो तो यह पाठ बोलना अथवा पंचामृतके अभावमें सिर्फ जलधारासे काम लेना।

श्रीजिनवर चौवीस वर, कुनयध्वांतहर भान।
अमितवीर्यदृगबोधसुख, युत तिष्ठौ इहि थान॥

नाराच छंद।

गिरीश शीस पांडुपै, सचीश ईश थापियो।
महोत्सवो अनंदकंदको, सबै तहां कियो॥
हमें सो शक्ति नाहिं, व्यक्त देखि हेतुआपना।
यहां करें जिनेंदचंद्रकी सुविंब थापना॥२॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करके श्रीवर्णपर जिनविंबकी स्थापना करना)

सुन्दरी छंद।

कनकमणिमय कुंभ सुहावने। हरि सुछीर भरे अति पावने। हम सुवासित नीर यहां भरें। जगतपावन–पांय तरैं धरैं॥३॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करके वेदीके कोनोंमें चार कलशोंकी स्थापना)

हरिगीतका छंद।

शुद्धोपयोग समान भ्रमहर, परम सौरभ पावनो। आकृष्टभृंगसमूह गंग समुद्भवो अति

भावनो ॥ मणिकनक कुंभनिसुभकिल्विष, विमल शीतल भरि धरौं। श्रम स्वद भक्त नि-वार जिन त्रय धार दे पायनि परौं ॥ ॥

(इस मन्त्रसे शुद्ध जलकी तीन धारा जिनवर पर छोड़ना)

अति मधुर जिनधुनि सम सुप्राणित प्राणि-वर्ग सुभावसों। बुध चित्तसम हरिचित नित, सुमिष्ट इष्ट उछावसों। तत्काल इक्षुमसुत्थपासुक रतनकुंभ विषे भरों। मत्रासतापनिवार जिन त्रयधार देपांयनि परौं ॥५॥

(ऊपरका मन्त्र पढ़कर इक्षुरसकी धारा देना)

निष्टप्तसिमुवर्णतदमनीय ज्यों विधि जैन-की। आयुप्रदा बलबुद्धिदा रक्षा सुयों जिय सैनकी ॥ तत्कालमाथित क्षीर उत्थित, प्राज्य मणिभारी भरौं। दीजै अतुलबल मोहि जिन, त्रयधार दे पांयनि परौं ॥६॥

(घृतरसकी धारा देना)

शरदभ्र शुभ्र सुहाटकद्युति. सुरभि पावन सोहनों। क्लीवत्वहर बलधरन पूरन पयसकल

मनमोहनो ॥ कृतउष्ण गोथनतैं समाहृत घट जटितमणिमैं भरौं। दुर्बल दशा मो मेट जिन त्रयधार दे पांयनि परौं ॥७॥

(दुग्धकी धारा देना)

वर विशदजैनाचार्य ज्यों मधुराम्लकर्कशता धरैं। शुचिकर रसिक मंथन विमंथन नेह दोनों अनुसरैं ॥ गोदधि सुमणिभृंगार पूरन लायकर आगें धरौं। दुखदोष कोष निवार जिन त्रय-धार दे पांयनि परौं ॥८॥

(दहीकी धारा)

सर्वौषधी मिलायके, भरि कंचन भृंगार।
जजौं चरण त्रयधार दे, तारतार भवतार ॥९॥

(सर्वौषधिकी धारा देना)

। अथ जलाभिषेक का प्रक्षाल करनेका पाठ ।

प्रक्षाल करते समय बोलना।

जय जय भगवंते सदा, मंगल मूल महान।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान ॥

श्रीजिन जगमैं ऐसो, को बुधवंत जू। जो तुम गुणवरनानि करि पावै अंत जू॥ इंद्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी। कहि न सकै तुम गुणगण हे त्रिभुवनधनी॥

अनुपम अमित तुमगणनिवारिध, ज्यों अलोकाकाश है। किमि धरैं हम उर कोषमैं सो अकथगुणमणिराशि है॥ पै जिनप्रयोजन सिद्धि की तुम नाममें ही शक्ति है। यह चित्तमें सरधान यातैं नाम ही में भक्ति है॥१॥ ज्ञानावरणी दर्शनआवरणी भने। कर्ममोहनी अंतराय चारों हने॥ लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञानमें। इंद्रादिकके मुकुट नये सुरथानमें॥ तब इंद्र जान्यो अवधितैं, उठि सुरनयुत वंदत भयो। तुम पुन्य को प्रेर्यो हरी ह्वै मुदित धनपतिसौं चयो॥ अब वेगि जाय रचौ समवसृति सफल सुरपदको करौ। साक्षात् श्रीअरहंतके दर्शन करौ कल्मष हरौ॥२॥ ऐसे वचन सुने सुरपतिके

धनपती। चल आयो ततकाल मोद धारे अती॥ वीतराग छबि देखि शब्द जय जय चयो। दै परदच्छिना बार बार बंदत भयो॥ अति भक्ति भीनो नम्रचित ह्वै समवशरण रच्यौ सही। ताकी अनूपम शुभगतीको, कहन समरथ कोउ नही॥ प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणि-मय छाजही। नगजडित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजही॥ ३॥ सिंहासन तामध्य बन्यौ अदभुत दिपै। तापर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै॥ तीनछत्र सिर शोभित चौसठ चमरजी। महाभक्तियुत ढोरत है तहां अमर जी॥ प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीक्ष विराजिया। यह वीतरागदशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया॥ मुनि आदि द्वादश सभाके भवि जीव मस्तक नायकें। बहुभांति बारंबार पूजैं, नमैं गुणगण गायकें॥ ४॥ पर-मौदारिक दिव्य देव पावन सही। क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नही॥ जन्म जरा मृति

अराति शोक विस्मय नसे। राग रोष निद्रा मद मोह सबै खसे॥ श्रमविन श्रमजलरहित पावन अमल ज्योतिस्वरूपजी। शरणागतनिकी अशुचिता हरि, करत विमल अनूपजी॥ ऐसे प्रभूकी शांतिमुद्राको न्हवन जलतैं करैं। 'जस' भक्तिवश मन उक्तितैं हम भानु ढिग दीपक धरैं॥ ५॥ तुमतौ सहज पवित्र यही निश्चय भयो। तुम पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो॥ मैं मलीन रागादिक मलतैं ह्वै रह्यो। महामलिन तनमैं वसुविधिवश दुख सह्यो॥ बीत्यो अनंतो काल यह मेरी अशुचिता ना गई। तिस अशुचिताहर एक तुम ही भरहु बांछा चित ठई॥ अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोषरागादिक हरौ। तनरूप कारागेहतैं उद्धार शिववासा करौ॥६॥ मैं जानत तुम अष्टकर्म हरि शिव गये। आवागमन विमुक्त रागवर्जित भये॥ पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही। नयप्रमानतैं जानि महा साता लही॥ पापाचरण तजि न्हवन करता चित्तमें ऐसे धरूं।

साक्षात श्रीअरहंतका मानों न्हवन परसन करूं। ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तें। विधि अशुभ नसि शुभबंधतें ह्वै शर्म सब विधि तासतें ॥ ७ ॥ पावन मेरे नयन, भये तुम दरसतें। पावन पान भये तुम चरनानि परसतें॥ पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यानतें। पावन रसना मानी, तुम गुण गानतें ॥ पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरणधनी। मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं बनी ॥ धन्य ते बडभागि भवि तिन नींव शिवघरकी धरी। वर क्षीरसागर आदि जलम-णि कुंभभरि भक्ती करी॥ ८ ॥ विघनसघन-वनदाहन-दहन प्रचंड हो। मोहमहातमदलन प्रबल मारतंड हो॥ ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि संज्ञा धरो। जगविजयी जमराज नाश ताको करो॥ आनंदकारण दुखनिवारण, परममंगल मय सही। मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतित तार सुन्यौ नहीं॥ चिंतामणी पारस कलपतरु,

एकभव सुखकार ही। तुम भक्तिनवका जे चढैं ते, भये भवदधि पार ही ॥ ९ ॥ दोहा—
तुम भवदधितैं तरि गये, भये निकल अविकार
तारतम्य इस भक्तिको, हमैं उतारो पार ॥१०॥

॥ इति हरजसराय कृत अभिषेक पाठ ॥

विनयपाठ दोहावली ।

इहि विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ। धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥ अनँत चतुष्टयके धनी, तुमही हो सिरताज ॥ मुक्ति बधूके कंथ तुम, तीन भुवनके राज ॥२॥ तिहुं जगकी पीडाहरन, भवदधि शोषणहार। ज्ञायक हो तुम विश्वके. शिवसुखके करतार ॥ ३॥ हरता अघअंधियारके, करता धर्मप्रकाश। थिरतापददातार हो, धरता निजगुण रास ॥४॥ धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप। तुमरे चरणसरोजको, नावत तिहुं जग भूप ॥ ५ ॥ मैं बंदौं जिनदेवको, कर अति निरमल भाव ॥ कर्मबंधके छेदने, और न कछू

उपाव ॥ ६ ॥ भविजनकों भवकूपतैं. तुमही काढनहार ॥ दीनदयाल अनाथपति. आतम गुणभंडार ॥७॥ चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल ॥ सरल करी या जगतमें भविजन को शिवगैल ॥ ८ ॥ तुमपदपंकज पूजतें. विघ्न रोग टर जाय ॥ शत्रु मित्रताकों धरैं, विष निरविषता थाय ॥९॥ चक्रीखगधरइंद्रपद, मिलैं आपतें आप ॥ अनुक्रम कर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥ तुम विन मैं व्याकुल भयो, जैसे जलविन मीन । जन्मजरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत पावन किये. गिनती कौन करेव । अंजनसे तारे कुधी, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥ थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय । खेवटिया तुम हो प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥ रागसहित जगमें रुल्यो, मिले सरागी देव । वीतराग भेट्यो अबैं, मेटो राग कुटेव ॥ १४ ॥ कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान

आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥ तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव। धन्य भाग्य मेरो भयो, करनलग्यो तुम सेव ॥१६॥ अशरणके तुम शरण हो, निराधार आधार॥ मैं डूबत भवसिंधुमें खेओ लगाओ पार ॥१७॥ इंद्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान। अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान ॥१८॥ तुमरी नेक सुदृष्टितैं, जग उतरत है पार। हाहा डूब्यो जात हों, नेक निहार निकार ॥ १९ ॥ जो मैं कहहूं औरसों, तो न मिटै उरझार। मेरी तो तोसों बनी, तातैं करों पुकार ॥ २० ॥ वंदों पांचों परमगुरु, सुर गुरु वंदत जास। विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश ॥ २१ ॥ चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय। शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

नित्य नियमपूजा।

देव शास्त्रगुरुपूजा संस्कृत।

ओं जय जय जय। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमोलोये सव्वसाहूणं ॥१॥
ओं ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः। (पुष्पांजलि क्षेपण करना) चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तो, धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंतलोगुत्तमा, सिद्धलोगुत्तगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि· अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वज्जामि ॥ ओं नमोऽर्हते स्वाहा।

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्परमात्मानं स वाह्याभ्यंतरे शुचिः। अपराजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः। मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः॥ ३॥ एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं॥ ४॥ अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः। सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहं॥५॥ कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनं। सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहं॥ ६॥ विघ्नौघाः प्रलयं यांति शाकिनी भूतपन्नगाः। विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे॥७॥ (पुष्पांजलि)

(यदि पर्वके दिन हो वा अवकाश हो, तो यहांपर सहस्रनाम पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये। नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढ़कर एक अर्घ चढ़ाना चाहिये।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः। धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाम महं यजे॥७॥

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमज्जिनेंद्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादनायक

मनंतचतुष्टयार्हं । श्रीमूलसंघ सुदृशां सुकृतैक हेतुर्जैनेंद्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥
स्वस्ति त्रिलोकगुरुवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति-स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय । स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रशान्तललिता-द्भुतवैभवाय ॥९॥ स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधा-प्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय, स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिका-लसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥ द्रव्यस्य शुद्धि-मधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधि गंतुकामः । आलंबनानि विविधान्यवलंब्यव-ल्गन्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञं ॥ ११ ॥ अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखि-लान्ययमेकएव । अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोध वह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥१२॥

(यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनंदनः ।

श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः। श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः। श्रीपुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः। श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः। श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशांतिः। श्रीकुंथुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्यय शुद्धबोधाः। दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१॥

पुष्पांजलि क्षेपणा। आगे भी प्रत्येक श्लोकके अंतमें पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि। चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥ संस्पर्शनं संश्रवणं च दरादास्वादनघ्राणाविलोकनानि। दिव्या-

न्मतिज्ञानबलाद्धहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्ष-
यो नः ।३। प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येक-
बुद्धा दशसर्वपूर्वैः । प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तवि-
ज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।४। जंघावलि
श्रेणिफलांबुतंतुप्रसूनबीजांकुर चारणाह्वाः । न
भोंऽगणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परम
र्षयो नः ।।५।। अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि
लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि । मनोवपुर्वा-
ग्वलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः
।।६।। सकामरूपित्ववशित्वमैश्य प्राकाम्य मंतर्द्धि-
मथाप्तिमाप्ताः । तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।७।। दीप्तं च त-
प्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्ष-
यो नः ।।८।। आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा
दृष्टिविषंविषाश्च । सखिल्ल विड्जल्लमलौषधीशाः
स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।९।। क्षीरं स्रवंतो-
ऽत्र घृतं स्रवंतो मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः

अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परम-र्षयो नः ॥ १० ॥

इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं ।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसंतापहर्ता त्रैलोक्यक्रांतकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः । श्रीमान्निर्वाणसम्पद्वरयुवतिकरालीढकंठैः सुकण्ठैर्देवेंद्रैर्वंद्यपादो जयति जिनपतिःप्राप्तकल्याणपूजः ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्कांतिप्रभो जगतां पते ! जय जय भवानेव स्वामी भवांभासि मज्जतां । जय जय महामोहध्वांतप्रभातकृतेऽर्चनं । जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २॥

ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् (इत्याह्वानम्)
ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । (इतिस्थापनम्)
ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति ! त्वत्पादपङ्केरुह, द्वंद्वे यामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्यामया प्रार्थ्यते । मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा

त्राहि मां, दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूजयामोऽधुना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः।
तपः प्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र अवतर अवतर। संवौ०

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट्।

(जिनको केवल भाषाष्टक परसे भाव पूजा करना हो, वे आगे लिखे हुये भाषाष्टकको बोलकर पूजा करें)

देवेंद्रनागेंद्रनरेंद्रवंद्यान् शुंभत्पदान् शोभितसारवर्णान्। दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलौघैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥१॥

मलिन वस्तु उज्वल करै यह स्वभाव जलमांय, जलसे जिन पद पूजिये कृत कलंक मिट जाय। नीर बुझावै अग्निको तृषा रोग नहिं जाय, तृषारोग प्रभु तुम हरो यातैं पूजूं पांय ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुत ज्ञानाय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्वाहित-हारिवाक्यान्। श्रीचंदनैर्गंधविलुब्धभृंगैर्जिनेंद्र-सिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

तपत वस्तु शीतल करै, चंदन शीतल आप; चन्दनसे पूजा करूं मिटै मोह संताप। चंदन शीतलता करै भवाताप नहिं जाय, भवाताप प्रभु तुम हरो यातैं पूजूं पाय।

संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या। दीर्घाक्षतांगैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेंद्रसि-द्धांतयतीन् यजेऽहं ॥३॥

तन्दुल धवल पवित्र अति नाम सु अक्षत तास, अक्षतसों जिन पूजिये अक्षत गुण परकास, अक्षय अक्षय मैं कहूं सो अक्षय पद नाय, महा अक्षय पद तुम लियो यातैं पूजूं पाय।

अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् । कुंदारविंदप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥४॥

पुष्प चाप धर पुष्प सर धारी मनमथ वीर, यातैं पूजा पुष्पको हरै मदनकी पीर । कामवाण पुष्पे हरो सो तुम जीते राय, यातैं मैं पायन पड़ूं मदन काम नशि जाय ॥

कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदर्पकंदर्पविसर्प्पसर्प्पप्रसह्यनिर्णाशनवैनतेयान् । प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रसाढ्यैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥५॥

परम अन्न नैवेद्य विधि क्षुधाहरण तन पोष, जे पूजैं नैवेद्यसों मिटै क्षुधादिक रोग, भोजन नाना विधि किये मूल क्षुधा नहिं जाय, क्षुधारोग प्रभु तुम हरो यातैं पूजूं पाय ।

क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघातदीपान् । दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥६॥

आपापर देखे सकल, निशिमें दीपक जोत, दीपकसों जिन पूजिये निर्मल ज्ञान उद्योत । दीप घटा घटमें बसै ज्ञानघटा घट मांय, ढूढ़त डोलै कर्मको कृत कलंक मिट जाय ।

मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूम-केतून्। धूपैर्विधूतान्यसुगंधगंधैर्जिनेंद्रसिद्धांत-यतीन् यजेऽहं ॥७॥

पावक दहै सुगन्धको धूप चढ़ावै सोय, खेवत धूप जिनेशको अष्टकर्म क्षय होय। जब धूपायनमें लगे ध्यान अग्निकर वीर, कर्म काठिया खेइये त्रिभुवन पति गम्भीर।

अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान्। फलैरलं मोक्षफलाभिसारै र्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥८॥

जो जैसी करनी करै सो तैसा फल लेय, फल पूजा महाराज-की निश्चय शिव फल देय। फलियन फलियन में कहूं सो फलि-यन फल नाहिं, महा मोक्षफल तुम लियो यातैं पूजूं पाय।

मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूप-धूम्रैः। फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेंद्रसिद्धां-तयतीन् यजेऽहं ॥९॥

जलधारा चंदन घसी अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप फल अर्घ-युत ये पूजा वसु भेव। ये जिनपूजा अष्ट विधि कीजे कर शुचि अंग, प्रति पूजा जलधार सु दीजै धार अभंग।

अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते, त्रैसंध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयंतो नराः। पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा तपोभूषणांस्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरांसिद्धिं लभन्ते परम् ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलि क्षेपण करना)

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः। सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥ चंद्राभः पुष्पदंतश्च शीतलोभगवान्मुनिः। श्रेयांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥ अनंतो धर्मनामा च शांति कुंथुर्जिनोत्तमः। अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ॥ ३ ॥ हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः। ध्वस्तोपस्वर्ग दैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ।४। कर्मांतकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः एते सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पूजिता भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिभूतिभिः। चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीं ॥६॥ जिने

भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तुमे । सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ७ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे । सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ८ ॥

(पुष्पांजलिम्)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे । चारित्रमेव संसार वारणं मोक्षकारणं ॥ ९ ॥

(पुष्पांजलिम्)

अथ देव जयमाला प्राकृत

वत्ताणुट्ठाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु खत्तधरु । तुहु चरण विहाणे केवलणाणे तुहु परमप्पउ परमपरु ॥ १ ॥ जय रिसहरिसीसर णमियपाय । जय अजिय जियंगमरोसराय ॥ जय संभव संभवकयवियोय । जय अहिणंदण णंदिय पओय ॥ २ ॥ जय सुमइ सुमइसम्मयपयास, जय पउमप्पह पउमाणिवास ॥ जय जयहि सुपास सुपासगत्त । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥३॥ जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयलव-

यणभंग ॥ जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय वासुपुज्ज पुज्जाण पुज्ज ॥ ४ ॥ जय विमल विमलगुणसेढिठाण जय जयहि अणंताणंतणाण जय धम्म धम्मतित्थयर सन्त । जय सांतिसांति विहियायवत्त ॥ ५ ॥ जय कुन्थु कुन्थुपहुअङ्गिमदय । जय अर अर माहर विहियसमय ॥ जय मल्लि मल्लि आदामगन्ध । जय मुणिसुव्वयसुव्वयणिबन्ध ॥ ६ ॥ जय णमि णमियामरणियरसामि । जय णेमि धम्मरहचक्कणेमि । जय पास पासछिंदणकिवाण । जय वड्ढमाण जसवड्ढमाण ॥ ७ ॥

घत्ता—इह जाणिय णामहिं दुरियविरामहिं परहिंवि णमिय सुरावलिहिं । अणहणाहिं अणाइहिं सामिय कुवाइहिं पणविवि अरहन्तावलिहिं ॥

अथ शास्त्रजयमाला।

संपइसुहकारण कम्मवियारण भवसमुद्दतारणतरणं। जिणवाणि णमस्समि सत्तिपयासमि सग्गमोक्खसंगमकरणं ॥१॥ जिणंदमुहाउ विणिग्गयतार गणिंदविगुंफियगंथपयार। तिलोयहिमंडण धम्मह खाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥ अवग्गह ईह अवायजु एहि। सुधारणभेयहिं तिण्णिसएहि। मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥ सुदं पुण दोण्णि अणेयपयार। सुबारह भेय जगत्तयसार। सुरिंदणरिंदसमुच्चि ओ जाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ४॥ जिणंदगणिंदणरिंदह रिद्धि। पयासइ पुण्णपुराकिउलद्धि। णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥ जु लोयअलोयह जुत्ति जणेइ। जु तिण्णि विकालसरूप भणेइ। चउग्गइ लक्खण दुज्जउ जाणि। सयापणामामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥ जिणिंदचरित्तविचित्त मुणेइ। सुहावइधम्मह जुत्ति जणेइ। णिउग्ग वितिज्जउ इत्थु वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ७॥ सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु। सुपुण्ण विपाव विबंध विमुक्खु। चउत्थुणिउग्गु विभासिय

णाणि। सयापणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥ तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्त। चउत्थु रिजो-विउलं मइउत्त। सुखाइय केवलणाण वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥ जिणिंदह णाणु जगत्तयभाणु। महातमणासिय सुक्खणिहाणु। पयच्चउ भत्तिभरेण वियाणि। सया पणमामि जि-णिंदह वाणि ॥ १० ॥ पयाणि सुबारहकोडिसयेण सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण। सहस्स अठावण पंच वियाणि। सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥ इकावण कोडिउ लक्ख अठेव। सहस चुलसी दिसया छक्केव। सढाइगवीसह गंथपयाणि। सया पणमामि जिणिंदह वणि ॥ १२ ॥ घत्ता-इह जिण-वरवाणि विसुद्धमई। जो भवियण णियमण धरई। सो सुरणरिंद संपइ लहई। केवलणाण वित्तरई ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भित द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि तित्थयरत्तणहं । तवकम्म असंगइ दयधम्मंगइ पालवि पंच महव्वयहं ॥१॥ बंदामि महारिसि सीलवंत । पंचेंद्रियसंजम जोगजुत्त ॥ जे ग्यारह अंगह अणुसरंति । जे चउदह पुव्वह मुणि थुणंति ॥२॥ पादाणु सारवर कुट्ठबुद्धि । उप्पण्णु जाह आयासरिद्धि ॥ जे पाणाहारी तोरणीय जे रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥ जे मोणिधाय चंदाहणीय । जे जत्थत्थवाणि णिवासणीय ॥ जे पंचमहव्वय धरणधीर । जे समिदिगुत्ति पालणहि वीर ॥४॥ जे वड्ढहिं देहविरत्तचित्त । जे रायरोसभयमोहचित्त ॥ जे कुगइहि संवरु विगयलोह । जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥ जे जल्लमल्लतणलित्त गत्त । आरंभपरिग्गह जे विरत्त ॥ जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्ठट्ठम दसमउ तउ चरांति ॥६॥ जे इक्कगास दुइगास लिंति जे णीरसभोयण रइ करंति ॥ ते मुणिवर

वंदउं ठियमसाण, जे कम्मडहइ वर सुक्कझाण
॥ ७ ॥ बारहविहसंजम जे धरंति । जे चारिउ
विकहा परिहरंति ॥ बावीस परीषह जे सहंति ।
संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥ जे धम्मबुद्धि
महियलि थुणंति । जे काउस्सगो णिसि गमंति ॥
जे सिद्धविलासणि अहिलसंति । जे पक्खमास
आहार लिंति ॥९॥ गोदूहण जे वीरासणीय ।
जे धणुहसेज वज्जासणीय । जे तववलेण आयास
जंति जे गिरि गुहकंदरविवरथंति ॥ १० ॥ जे
सत्तु मित्त समभाव चित्त । ते मुनिवर वंदउं
दिढचरित्त ॥ चउवीसह गंथह जे विरत्त । ते
मुनिवर वंदउं जगपवित्त ॥११॥ जे सुज्झाणिज्झा
एकचित्त । वंदामि महारिसि मोखपत्त ॥ रयण-
त्तयरंजिय सुद्धभाव । ते मुणिवर वंदउं ठिदि-
सहाव ॥१२॥

घत्ता—जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणु-
राइया । रयणत्तयरंजिय, कम्महगंजिय, ते ऋ-
षिवरमय झाइया ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा।

आडिल्ल छन्द ।

प्रथमदेव अरहंत सुश्रुत सिद्धांतजू। गुरुनिरग्रंथ महन्त मुकतिपुरपंथजू। तीन रतन जगमांहि सो ये भवि ध्याइये। तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये॥ १॥ दोहा-पूजौं पद अरहंतके पूजौं गुरुपदसार। पूजौं देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार॥ १॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह! अत्रावतरावतर। संवौषट्। ओं ह्रीं देवशास्त्र गुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं देवशास्त्र-गुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

गीता छंद

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुपदप्रभा। अति शोभनीक सुवरण उज्वल, देखि छवि मोहित सभा॥ वर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि अग्र तसु बहुविधि नचूं। अरहन्त श्रुतसिद्धांत गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं॥ १॥ दोहा—

मलिन वस्तु हरलेत सब, जल स्वभाव मलछीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरुतीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व० ॥१॥

जे त्रिजग उदर मँझार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे। तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे॥ तसु भ्रमर लोभित घ्राण पावन सरस चंदन घसि सचूं। अरहंत० ॥ दोहा—
चंदन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥२॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्व० ॥ २ ॥

यह भवसमुद्र अपार तारण,—के निमित्त सुविधि ठई। अति दृढ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही॥ उज्जल अखंडित सालि तंदुल पुंज धरि त्रयगुण जचूं। अरहंत० ॥ दोहा—
तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन।
जासों पूजौं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥३॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज प्रकाशन भान

हैं। जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं। लहि कुंद कमलादिक पहुप, भव २ कुवेदनसों बचूं ॥ अरहंत० ॥४॥ दोहा—
विविधभांति परिमलसुमन, भ्रमर जास आधीन।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥४॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥४॥

अतिसबल मदकंदर्प जाको क्षुधाउरग अमान है। दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड समान है॥ उत्तम छहोंरसयुक्त नित, नैवेद्यकरि घृतमें पचूं। अरहंत० ॥ ५॥ दोहा—
नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजनसरस नवीन।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥५॥
ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महाबली। तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति प्रभावली॥ इहभांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं। अरहंत० ॥ ६ ॥ दोहा—
स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन

जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥६॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥ ६ ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै। वर धूप तासु सुगंधताकरि, सकल परिमलता हंसै ॥ इहभांति धूप चढाय नित भवज्वलनमाहिं नहीं पचूं। अरहंत० ॥ ७ ॥ दोहा--

अग्निमांहि परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥७॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व० ॥७॥

लोचन सु रसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं। मोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार हैं॥ सो फल चढावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूं। अरहंत० ॥ ८ ॥ दोहा--

जे प्रधान फल फलविषैं, पंचकरण-रस लीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं। वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनम-

के पातक हरूं॥इहिभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिवपंकतिमचूं। अरहंत०॥ १ ॥ दोहा—
वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥६॥
॥ ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला ।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार॥

पद्धरि छन्द ।

चौकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि। जे परम सुगुण हैं अनँत धीर, कह-वतके छयालिस गुण गँभीर॥२॥शुभ समवशा-नर शोभा अपार, शतइंद्र नमत करसीसधार। देवाधिदेव अरहंतदेव, बंदों मनवचतनकरि सु सेव॥३॥ जिनकी ध्वनि है ओंकाररूप, निर अक्षरमय महिमा अनूप। दस अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत॥ ४ ॥ सो स्यद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूंथ बारह सुअंग॥

रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहुप्रीति ल्याय।५। गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध। संसारदेह वैराग धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार॥६॥ गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारन तरन जिहाज ईस। गुरुकी महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपों मनवचनकाय॥ ७॥ सोरठा—

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरे।
द्यानत सरधावान, अजर अमरपद भोगवे॥८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सूचना—आगे जिस भाईको निराकुलता हो, वह नीचे लिखे अनुसार बीस तीर्थंकरोंकी भाषा पूजा करै। यदि स्थिरता न हो तो इस पूजाके आगेमें जो अर्घ लिखा है उसको पढ़कर अर्घ चढ़ा देवे।

। श्रीबीस तीर्थंकरपूजा भाषा ।

दीप अढाई मेरु पन, अरु तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् ।

इंद्र फणींद्र नरेंद्र वंद्य, पद निर्मल धारी।
शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी॥
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार॥
श्री जिनराज हो भव, तारणतरण जिहाज ॥१॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं०

(इस पूजामें बीस पुंज करना हो, तो इस प्रकार मंत्र बोलना)

ओं ह्रीं सीमंधर—जुगमंधर—बाहु सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ-ऋषभानन अनंतवीर्य सूरप्रभ—विशालकीर्ति—वज्रधर-चंद्रानन-भद्रबाहु भुजंगम—ईश्वर—नेमिप्रभ—वीरसेण—महाभद्र—देवयशोऽजितवीर्येति विंशतिविद्यमान तीर्थङ्करेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

तीनलोकके जीव, पाप आताप सताये।
तिनकों साता दाता, शीतल वचन सुहाये॥
बावन चंदनसों जजूं (हो) भ्रमन-तपत निर-
वार। सीमंधर०॥ २॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं नि०

(इसके स्थानमें यदि इच्छा हो, तो बड़ा मंत्र पढ़ैं)

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बडी भक्ति-नौका जगनामी॥
तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुण-
सार। सीमंधर० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०

भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो।
जति श्रावक आचार, कथनको, तुमही बडे हो॥
फूलसुवास अनेकसों (हो) पूजों मदन प्रहार।
सीमंधर० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय दीपं निर्व०

काम नाग विषधाम, नाशको गरुड कहे हो।
छुधा महादवज्वाल, तासको मेघ लहे हो॥
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूखविडार।
सीमंधर० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भऱ्यो है।
मोह महातम घोर, नाश परकाश कऱ्यो है॥
पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार।
सीमंधर० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं०
कर्म आठ सब काठ,--भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनि कर प्रकट, सरव कीनो निरवारा॥
धूप अनूपम खेवतैं (हो), दुःख जलैं निरधार।
सीमंधर० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं०।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं। सबको
छिनमैं जीत जैनके मेरु खरे हैं॥ फल अति
उत्तमसों जजों (हो) वांछितफलदातार। सीमं०

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वा०।

जल फल आठों दर्व, अरघकर प्रीति धरी है।
गणधर इंद्रनहूतैं, थुति पूरी न करी है॥ द्यानत
सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार। सीमं०

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०।

अथ जयमाला आरती।

सोरठा--ज्ञान सुधाकर चंद, भविकखेतहित मेघ
हो। भ्रमतमभान अमंद, तीर्थंकर बीसों नमों॥

चौपाई १६ मात्रा।

सीमंधर सीमंधर स्वामी। जुगमंधर जुगमंधर

नामी। बाहु बाहु जिन जगजन तारे। करम सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥ जात सुजात केवल-ज्ञानं। स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं। ऋषभानन ऋषि भानन दोषं। अनंतवीरज वीरजकोषं ॥२॥ सौरीप्रभ सौरीगुणमालं। सुगुण विशाल विशाल दयालं। वज्रधार भव गिरिवज्जर हैं। चंद्रानन चंद्रानन वर हैं ॥३॥ भद्रबाहु भद्रनिके करता। श्रीभुजंग भुजंगम हरता॥ ईश्वर सबके ईश्वर छाजैं। नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥ वीर-सेन वीरं जग जानै। महाभद्र महाभद्र बखानै॥ नमों जसोधर जसधरकारी। नमों अजितवीरज बलधारी ॥५॥ धनुष पांचसै काय विराजै। आव कोडिपूरव सब छाजै॥ समवसरण शोभित जिनराजा। भवजलतारनतरन जिहाजा ॥६॥ सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी। लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी॥ शतइंद्रनिकरि बंदित सोहैं। सुरनर पशु सबके मन मोहैं॥ ७॥

दोहा--तुमको पूजें वंदना, करै धन्य नर सोय।

द्यानत सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकैः। धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे॥ १॥

ओं ह्रीं श्री सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभऋषिभानन अनन्तवीर्य सूर्यप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्रानन भद्रबाहुभुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थङ्करेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अकृत्रिम चैत्यालयोंके अर्घ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यंत्रिलोकीं गतान्। वंदे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्॥ सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैर् द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये॥ १॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नंदीश्वरे यानि च मंदरेषु यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिन

पुंगवानां ॥ २ ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ॥ इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां। जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ ३ ॥ जंबूधातकिष्पुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रय ये भवाँश् चंद्रांभोजशिखंडिकण्ठकनकप्रावृङ्घना भाजिनाः॥सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेंधनाः।भूताः नागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबु वृक्षे, वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुंडले मानुषांके। इष्वाकारेंजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥५॥ द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ। द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ। शेषाः षोडस जन्ममृत्युरहिताः सततहेमप्रभास् ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधी कृत्याकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपा०

इच्छामि भंते चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेयाणि ताणि सव्वाणि, तासुवि लोयेसु भवणवसिय वाणविंतरजोयासियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुप्पेण दिवेण वासेण दिव्वेण ह्णाणेण णिच्चकालं अच्चांति पुज्जांति बंदंति णमस्संति। अहमवि इहसंतो तत्थसंताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जोमि बंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं॥

(इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्णिक-माध्याह्निक-अपराह्णिकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।
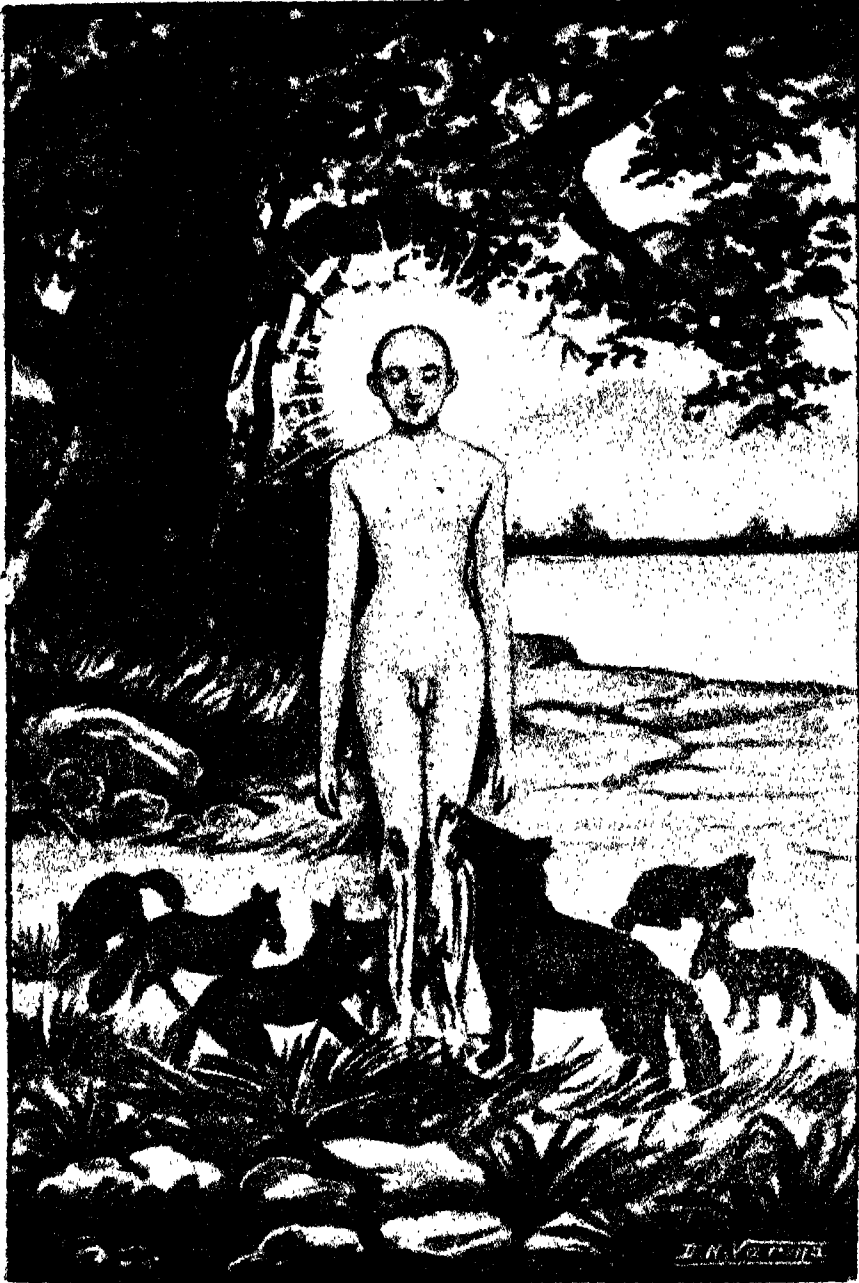
णमो अरहंताणं। णमो सिद्धाणं णमो आइरी-

सुकुमाल स्वामीको स्यालनी बच्चों सहित भक्षण कर रही है।

(सुकुमाल चरित्र)

चंपा दासी पवन द्वारा दी हुई अंगूठीको अंजनाकी अंगुली से बदल रही है। (अंजना नाटक)

याणं। णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूण
तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

। अथ सिद्धपूजा द्रव्याष्टक ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं।
वर्गापूरितादिग्गतांबुजदलं तत्संधितत्त्वान्वितं॥
अंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकार संवेष्टितं।
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकंठीरवः।

ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन! अत्र तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते! सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो। भव भव। वषट्।

निरस्तकर्मसंबंधं, सूक्ष्म नित्यं निरामयम्।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुपद्रवम्॥ १॥

(यहां सिद्धयंत्रकी भी स्थापना करना)

जिन त्यागियोंको बिना द्रव्य चढ़ाये भाव पूजा करना हो, वे आगे भावाष्टक है, उसको बोलकर करें। अष्टद्रव्य से पूजा करनेवालोंको भावपूजाका अष्टक कदापि नहीं बोलना चाहिये।

द्रव्याष्टक।

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्म्यगम्यं हान्यादि

भावरहितं भववीतकायं। रेवापगावरसरोयमु-
नोद्भवानां, नीरैर्यजेकलशगैर्वरसिद्धचक्रं ॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मग-
रिमं जननार्ति वीतं। सौरभ्यवासितभुवं हरि-
चंदनानां, गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥२॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूप-
निपुणं कमलं विशालं। सौगंध्यशालिवनशालि-
वराक्षतानां,पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ।३।

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं

नित्यंस्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानिपेक्ष-
ममृतं मरणाद्यतीतम्। मंदारकुंदकमलादि वन-
स्पतीनां,पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं,ब्रह्मादिबीज-
सहितं गगनावभासम्। क्षीरान्नसाज्यवटके रस-
पूर्णगर्भैर्नित्यं यजे चरुवरैर्वर सिद्धचक्रम् ॥५॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंशनाय नैवेद्य

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांत-निर्द्वंद्वभाव-
धरणं महिमानिवेशं। कर्पूरवर्तिबहुभिः कनका-
वदातैर्-दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीप

पश्यन्समस्तभुवनं युगपान्नितांतं त्रैकाल्यवस्तु
विषये निविडप्रदीपम्। सद्द्रव्यगंधघनसारवि-
मिश्रितानां धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम्॥७॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं ८

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेंद्रचक्रैर्ध्येयं शिवं सक-
लभव्यजनैःसुवंद्यं। नारिंगपूगकदलीवरनारि-
केलैः सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं

गंधाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चंदनं।
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं॥
धूपं गंधयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये॥
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वांछितं॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्वपामीति

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभा-
वपरमं यदनंतवीर्यं । कर्मौघकक्षदहनं सुखसस्य
बीजं बंदे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रं ॥१०॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने महार्घं निर्व० स्वाहा ॥

त्रैलोक्येश्वरवंदनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शा-
श्वतीं यानाराध्य निरुद्धचंडमनसः संतोऽपि
तीर्थंकराः ॥ सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदा
ऽव्याबाधताद्यैर्गुणैर् युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि
सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ (पुष्पांजलिं)

अथजयमाला ।

विरागसनातनशांतनिरंश । निरामय निर्भय
निर्मल हंस ॥ सुधाम विबोधनिधान विमोह ।
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥ विदूरित
संसृतिभाव निरंग । समामृतपूरित देव विसंग ॥
अबंधकषाय विहीनविमोह । प्रसीद विशुद्ध सु-
सिद्धसमूह ॥२॥ निवारितदुष्कृतकर्मविपास ।
सदामल केवलकेलिनिवास ॥ भवोदधिपारग
शान्त विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह

॥ ३ ॥ अनंतसुखामृतसागर धीर । कलंक-
रजोमलभूरिसमीर ॥ विखंडितकाम विराम
विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥
विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्र-
विलोकितलोक ॥ विहार विराव विरंग विमोह
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥ रजोमल-
खेदविमुक्त विगात्र । निरंतर नित्य सुखामृत-
पात्र ॥ सुदर्शनराजित नाथ विमोह । प्रसिद्ध
विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥ नरामरवंदित नि-
र्मल भाव । अनंत मुनीश्वरपूज्य विहाव ॥ सदो-
दय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध
समूह ॥ ७ ॥ विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र ।
परात्परशंकरसार वितंद्र ॥ विकोप विरूप
विशंक विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८
जरामरणोज्झित वीतविहार । विचिंतित नि-
र्मल निरहंकार ॥ अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह।
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥ विवर्ण विगंध
विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्द विशो-

भ ॥ अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥ घत्ता—

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं, परपरणति मुक्तं पद्मनंदींद्रवंद्यं। निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिं ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथाशीर्वाद। अडिल्लछंद।

आविनाशी आविकार परमरसधाम हो। समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो। शुद्धबोध आविरुद्ध अनादि अनंत हो, जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सबै दहे, नित्य निरंजनदेव सरूपी ह्वै रहे। ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं, सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनंतकी खान। ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

। अथ सिद्धपूजाका भावाष्टक ।

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधारसधारया ।
सकल बोधकलारमणीयकं, सहज सिद्धमहं परिपूजये ।। जलं ।।
सहजकर्मकलंकविनाशनैरमलभावसुवासितचन्दनैः ।
अनुपमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। चन्दनं ।।
सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकल दोषविशालविशोधनैः ।
अनुपरोधसुबोधनिधानकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। अक्ष० ।।
समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया ।
परमयोगबलेन वशीकृतं. सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। पुष्पं ।।
अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। नैवेद्यं ।।
सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः, रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः ।
निरवधिस्वविकाशप्रकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। दीपं ।।
निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। धूपं ।।
परमभावफलावलिसम्पदा, सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणास्फुरणात्मनिरञ्जनं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ।। फलं ।।

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै ।
वार्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीप धूपैः फलैः ।
यश्चिंतामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं सञ्चर्चयामो वयं ।। ६ ।।

इति सिद्धपूजा भावाष्टकं ।

सोलहकारणका अर्घ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं
यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं
यजे ॥ २ ॥

ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्ज्जवशौचसत्य संयम
त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घं नि. स्वाहा

रत्नत्रयका अर्घ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः
धवलमंगलगानरवाकुलेजिनगृहेजिनरत्नमहंयजे

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

। अथ पंचपरमेष्ठिजयमाला।

मणुय-णाइंद-सुरधरियछत्तत्तया पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया। दंसणं णाण झाणं अणंतं

बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥ जेहिं
झाणग्गिवाणेहिं अइथट्टयं, जम्मजरमरणणाय
रत्तयं दट्टयं। जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं ते जि-
णादिंतु सिद्धावरं णाणयं ॥२॥ पंचहाचारपंचग्गि
संसाहया, बारसंगाइ सुयजलहिं अवगाहया।
मोक्खलच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु
मोक्खं गया संगया ॥ ३ ॥ घोरसंसारभीमाड-
वीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे णट्ठ
मग्गाण जीवाण पहदेसया, वंदिमो ते उवज्झाय
अम्हे सया ॥ ४ ॥ उग्गतवयरणकरणेहिं झीणं
गया, धम्मवरझाणसुक्केझाणंगया। णिब्भरं
तवसिरीएसमालिंगया साहओ ते महामोक्खपह
मग्गया ॥५॥ एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदये गुरु-
यसंसारघणवेल्लि सो छिंदए। लहइ सो सिद्ध सु-
क्खाइवरमाणणं कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं

आर्या।

अरिहा सिद्धाइरीया उवज्झाया साहु पंचपरामिट्ठी
एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपञ्चपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्व०

अथाशीर्वादः ।

इच्छामि भंते पंचगुरुभत्ति कओसग्गो कओ तस्सालो चेओ अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं। अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमि पइट्ठियाणं सिद्धाणं। अट्ठपवयणमाउसंजुत्ताणं आइरीयाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं। तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं। णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं। इत्याशीर्वादः

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ शांतिपाठ स्तुति ।

(शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहें।)

दोधकवृत्तं ।

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं। अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रं ॥१॥ पंचमभीप्सितचक्रधराणां पू-

जिनमिंद्रनरेन्द्रगणैश्च शांतिकरं गणशांतिमभी-
प्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ॥२॥ दिव्यतरुः
सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुंदुभिरासनयोजनघोषौ। आतप-
वारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडल तेजः
॥ ३ ॥ तं जगदर्चितशांतिजिनेंद्रं शांतिकरं
शिरसा प्रणमामि। सर्व गणाय तु यच्छतु शांतिं
मह्यपरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसंततिलका छंद।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैःशक्रादिभिः
सुरगणैः स्तुतपादपद्माः। ते मे जिनाःप्रवरवंश
जगत्प्रदीपास् तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवंतु

इन्द्रवज्रा।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र सामान्यत-
पोधनानां देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु
शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तं।

क्षेमं सर्व प्रजानां प्रभवतुबलवान् धार्मिको भूमि
पालः काले काले च सम्यग्वर्षत् मघवा व्याधयो

यांतु नाशं। दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके जैनेंद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञान भास्कराः।
कुर्वंतु जगतःशांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः॥ ८॥
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।

अथेष्ट प्रार्थना।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथादोषवादे च मौनं।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
संपद्यंतां मम भवभेव यावदेतेऽपवर्गः॥

आर्यावृत्तं।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेंद्र! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः॥१०॥
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु
॥११॥ दुःक्खक्खओ कम्मखओ, समाहिमरणं च

बोहिलाहोय। मम होउ जगतबन्धव तव, जि-
नवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥

संस्कृतप्रार्थना।

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दैककारण
कुरुष्व। मयि किंकरेत्र करुणा यथा तथा जाय
ते मुक्तिः ॥१३॥ निर्विरणोहं नितरामर्हन् बहु
दुक्खया भवस्थित्या। अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु
करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥ उद्धर मां पतित-
मतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा। अर्हन्नल-
मुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥ १५ ॥ त्वं
कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरःकुर्वे ॥१६॥
ग्रामपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि।
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलुकर्मभि
प्रहते ॥१७॥ अपहर मम जन्म दयां, कृत्वेत्येक-
वचसि वक्तव्यं। तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव
प्रलापित्वं ॥ १८ ॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं
करुणामृतशीतलं यावत। संसारतापतप्तः करो

मि हृदि तावदेव सुखी ॥ १९ ॥ जगदेकशरण भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ विसर्जनं ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वपूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥
आहूता ये पुरा देवा लब्ध भागा यथाक्रमं ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थितिं ४

। अथ भाषास्तुतिपाठ ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो । श्रीनाभिनंदन जगतवंदन, आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥ तुव आदिनाथ अनादि सेऊँ सेय पदपूजा करूं । कैलाश गिरिपर रिष-

भजिनवर, पदकमल हिरदै धरूं ॥ २ ॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली। इह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीज्यो नाथजी ॥ ३ ॥ तुम चंद्रवदन सु चंद्रलच्छन चंद्रपुरि परमेश्वरो। महासेननंदन, जगतवंदन चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥ तुम शांतिपाँचकल्याण पूजों, शुद्धमनवचकाय जू। दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥ ५ ॥ तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो। श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥ जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी। चारित्ररथ चढि होय दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥ कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो। अश्वसेननंदन जगतवंदन सकलसँघ मंगल कियो ॥ ८ ॥ जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानाविदारकैं। श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्रके पद, मैं नमों शिरधारकैं ॥ ९ ॥ तुम कर्मघाता मोक्षदाता.

दीन जानि दया करो। सिद्धार्थनदन जगत बंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥:०॥ छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अवधारिये। करजोड़ि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये ॥ ॥११॥ अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों। करजोड़ यो वरदान मांगूं, मोक्षफल जावत लहों॥१२॥ जो एक मांहीं एक राजत एकमांहिं अनेकनो। इक अनेककि नहीं संख्या नमूं सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौ०—मैं तुम चरणकमलगुणगाय। बहुविधि भक्ति करो मनलाय॥ जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवाफल दीजै मोहि ॥१४॥ कृपा तिहारी ऐसी होय। जामन मरन मिटावो मोय॥ बारबार मैं विनती करूं। तुम सेयां भवसागर तरूं॥ १५॥ नाम लेत सब दुख मिटजाय। तुमदर्शन देख्याप्रभु आय॥ तुम हो प्रभु देवनका देव मैं तो करूं चरण तव सेव॥ १॥ मैं आयो पूजनके काज। मेरो जन्म सफल भयो

आज। पूजाकरके नवाऊं शीश। मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१७॥

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी वान।
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान॥

पूजन करते देवकी, आदिमध्य अवसान।
सुरगनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१६

जैसी महिमा तुमविषैं, और धरै नहिं कोय।
जो सूरजमें जोति है, तारणमें नहिं सोय ॥२०

नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनशाय ॥२१

बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान।
पूजाविधि जानूं नहीं, सरन राखि भगवान॥

इति भाषास्तुति पाठ।

देवशास्त्रगुरु स्तुति संग्रह।

नामावली स्तुति।

छंद १६ मात्रा।

जय जिनंद सुखकंद नमस्ते। जय जिनंद जितफंद नमस्ते॥ जय जिनंद वरबोध नमस्ते

जय जिनंद जितक्रोध नमस्ते ॥ १ ॥ पापताप-
हर इंदु नमस्ते । अर्हंवरनज़ुतविंदु नमस्ते ॥
शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते । इष्ट मिष्ट उत्कृष्ट
नमस्ते ॥ २ ॥ पर्म धर्म वर शर्म नमस्ते । मर्म
भर्मघन धर्म नमस्ते ॥ दृग विशाल वरभाल
नमस्ते । हृददयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥ शुद्ध
बुद्ध अविरुद्ध नमस्ते । रिद्धिसिद्धि वरवृद्धि
नमस्ते ॥ वीतराग विज्ञान नमस्ते । चिद्विलास
धृत ध्यान नमस्ते ॥ ४ ॥ स्वच्छगुणांबुधि रत्न
नमस्ते । सत्त्व हितंकरयत्न नमस्ते ॥ कुनयक-
रीमृगराज नमस्ते । मिथ्याखगवरबाज नमस्ते
॥ ५ ॥ भव्यभवोदधिपार नमस्ते । शर्मामृत-
सिवसार नमस्ते ॥ दरश-ज्ञान-सुखवीर्य नमस्ते ।
चतुराननधरधीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहरब्रह्मा
विष्णु नमस्ते । मोहमर्दमनुजिष्णु नमस्ते ॥
महादान मह भोग नमस्ते । महाज्ञान महजोग
नमस्ते ॥ ७ ॥ महाउग्रतपसूर नमस्ते । महा
मौनगुणभूरि नमस्ते ॥ धरमचक्रि वृषकेतु

नमस्ते। भवसमुद्रशतसंतु नमस्ते॥ विद्या ईश मुनीश नमस्ते। इंद्रादिकनुतशीस नमस्ते। जय रत्नत्रयराय नमस्ते। सकल जीवसुखदाय नमस्ते॥ ९॥ असरणशरणसहाय नमस्ते। भव्यसुपंथलगाय नमस्ते॥ निराकार साकार नमस्ते। एकानेक अधार नमस्ते॥१०॥ लोकालोकविलोक नमस्ते। त्रिधा सर्वगुणथोक नमस्ते॥ सल्लदल्लदलमल्ल नमस्ते। कल्लमल्लजित-छल्ल नमस्ते॥ ११॥ भुक्तिमुक्तिदातार नमस्ते। उक्तिसुक्तिशृंगार नमस्ते॥ गुणअनंत भगवंत नमस्ते। जै जै जै जयवंत नमस्ते॥ १२॥

। जिनेंद्रस्तुति ।

गीता छंद।

मंगलसरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी तुम अधमतारण अधम मम लखि मेट जन्म-कलेश जी॥टेक॥ तुम मोह जीत अजीत इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वर भा-सदृग नभ ज्ञेय सब इक उडुचरे॥ रटरास क्षति

अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजगभूषण अज अमल चिद्रूप हो ॥१॥ इच्छा विना भविभाग्यतें तुम, ध्वनि सु होय निरक्षरी। षटद्रव्यगुणपर्यय अखिलयुत एकछिनमें उच्चरी। एकांतवादी कुमत पक्षविलिप्त इम ध्वनि मद हरी। संशय तिमिरहर रविकला भविशस्यकों अमरित झरी ॥ २ ॥ वस्त्राभरण विन शांतमुद्रा, सकल सुरनरमन हरै। नाशा-ग्रदृष्टि विकारवर्जित निरखि छवि संकट टरै ॥ तुम चरणपंकज नखप्रभा नभ कोटिसूर्य प्रभा धरै। देवेंद्र नाग नरेंद्र नमत सु, मुकुटमणिद्युति विस्तरै ॥ ३ ॥ अंतर बहिर इत्यादि लक्ष्मी, तुम असाधारण लसै। तुम जाप पापकलापनासै, ध्यावते शिवथल बसै ॥ मैं सेय कुदृग कुबोध अव्रत, चिर भ्रम्यो भववन सबै। दुख सहे सर्व प्रकार गिरिसम, सुख न सर्षपसम कबै ॥ ४ ॥ परचाहदाहदह्यो सदा कबहूं न साम्यसुधा च-ख्यो। अनुभव अपूरव स्वादुविन नित, विषय

रसचारो भस्यो ॥ अब बसो मो उरमें सदा प्रभु, तुम चरण सेवक रहों। वर भक्ति अति दृढ होहु मेरे, अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एकें-द्रियादिक अंतग्रीवक, तक तथा अंतरघनी। पर्याय पाय अनंतबार अपूर्व, सो नहिं शिवध-नी।संसृतिभ्रमणतें थकित लखि निज, दासकी सुन लीजिये। सम्यकदरश वरज्ञानचारितपथ 'विहारी' कीजिये ॥

दुःखहरण स्तुति।

श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन तुमारा बाना है। मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है ॥टेक॥ त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुमसौं कछु बात न छाना है। मेरे उर आरत जो वरतें, निहचै सब सो तुम जाना है॥ अवलोक विथा मत मौन गहो नहिं मेरा कहीं ठिकाना है। हो राजिवलोचन सोचविमोचन, मैं तुमसौं हित ठाना है ॥ श्री० ॥१॥ सब ग्रंथनिमें निरग्रंथनिने, निरधार यही

गणधार कही। जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायक ज्ञानमही ॥ यह बात हमारे कान परी, तब आन तुमारी सरन गही। क्यों मेरी बार विलंब करो, जिननाथ कहो वह बात सही ॥ श्री० ॥२॥ काहूको भोग मनोग करो, काहूको स्वर्गविमाना है। काहूको नागनरेशपती, काहूको ऋद्धि निधाना है। अब मोपर क्यों न कृपा करते, यह क्या अंधेर जमाना है। इनसाफ करो मत देर करो, सुखवृंद भरो भगवाना है॥ श्री० ॥ ३ ॥ खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुमसों आन पुकारा है। तुम ही समरत्थ न न्याव करो, तब बंदेका क्या चारा है। खल घालक पालक बालकका नृपनीति यही जगसारा है। तुम नीतिनिपुन त्रैलोकपती, तुमही लगि दौर हमारा है ॥ श्री०॥४॥ जबसे तुमसे पहिचान भई, तबसें तुमहीको माना है। तुमरे ही शासनका स्वामी, हमको शरना सरधाना है ॥ जिनको तुमरी शरनागत है, तिन-

सौं जमराज डराना है। यह सुजस तुम्हारे सांचेका सब गावत वेद पुराना है ॥ श्री० ॥ ५॥ जिसने तुमसे दिलदर्द कहा तिसका तुमने दुख हाना है। अघ छोटा मोटा नाशि तुरत सुख दिया तिन्हें मनमाना है॥ पावकसों शीतल नीर किया औ चीर चढा असमाना है। भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुबेर समाना है ॥श्री०॥ ॥६॥ चिंतामन पारस कल्पतरू सुखदायक ये परधाना है । तव दासनके सब दास यही हमरे मनमें ठहराना है ॥ तुम भक्तनको सुरइंदपदी फिर चक्रपतीपदपाना है। क्या बात कहौं विस्तार बड़ी वे पावैं मुक्ति ठिकाना है॥ श्री० ॥ ७ ॥ गति चार चुरासी लाखविषैं चिन्मूरत मेरा भटका है। हो दीनबंधु करुणानिधान अबलौं न मिटा वह खटका है ॥ जब जोग मिला शिवसाधनका तब विघन कर्मने हटका है। तुम विघन हमारे दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है ॥ श्री० ॥ ८ ॥

गजग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन त-
स्कर तारा है। ज्यों सागर गोपदरूप किया।
मैनाका संकट टारा है॥ ज्यों शूलीतें सिंहासन
औ बेडीको काट विडारा है। त्यों मेरा संकट
दूर करो प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है॥ श्री०
॥ ९ ॥ ज्यों फाटक टेकत पांय खुला औ सांप
सुमन कर डारा है। ज्यों खड्ग कुसुमका माल
किया। बालकका जहर उतारा है॥ ज्यों सेठ
विपत चकचूर पूर घर लक्ष्मीसुख विस्तारा
है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकूं आस
तुम्हारा है॥ श्री०॥१०॥ यद्यपि तुमको रागादि
नहीं यह सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति
आप अनंतगुनी नित शुद्धदशा शिवथाना है
यद्दपि भक्तनकी भीड हरो सुखदेत तिन्हें जु
सुहाना है। यह शक्ति अचिंत तुम्हारीका क्या
पावै पार सयाना है॥ श्री०॥११॥ दुखखंडन
श्रीसुखमंडनका तुमरा प्रन परम प्रमाना है।
वरदान दया जस कीरतका तिहुंलोकधुजा

फहराना है ॥ कमलाधरजी ! कमलाकरजी, क-
रिये कमला अमलाना है । अब मेरि विथा
अवलोकि रमापति, रंच न बार लगाना है ॥
श्री० ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन
दीन अनाथ पुकारी है । उदयागत कर्मविपाक
हलाहल, मोह विथा विस्तारी है ॥ ज्यों आप
और भवि जीवनकी, ततकाल विथा निरवारी
है । त्यों 'वृंदावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज
हमारी बारी है ॥ १३ ॥
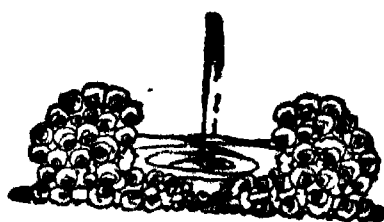
। करुणाष्टक ।

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणाल्यो०॥टेक
अहो जगतगुरु जगपतीजी, परमानंदनिधान।
किंकरपर कीजै दयाजी, दीजे अविचल थान।
हमारी०।१।भव दुखसौं भयभीत हौंजी, शिवपद
वांछासार। करौ दया मुझ दीनपैजी, भवबंधन
निरवार॥हमारी०॥२॥ पर्‍यो विषम भवकूपमेंजी
हे प्रभु! काढौ मोहि। पतित उधारण हो तुम्हीं
जी, फिर फिर विनऊँ तोहि।हमारी०॥३॥ तुम
प्रभु परम दयाल हो जी, अशरनके आधार।
मोहि दुष्ट दुख देत हैं जी, तुमसों करहुं पुकार
हमारी० ॥ ४ ॥ दुःखित देखि दया करैजी,
गांवपति इक होय।तुम त्रिभुवनपति कर्मतैंजी
क्यों न छुडावो मोय। हमारी० ॥ ५ ॥ भव
आताप तबै बुझैजी, जब राखूं उर धोय।दया
सुधारक सीयराजी, तुम पदपंकज दोय॥

हमारी० ॥ ६ ॥ यही एक मुझ वीनतीजी, स्वामी ! हर संसार । बहुत धज्यौ हूं त्रासतैंजी, विलख्यो बारंबार । हमारी० ॥७॥ पदमनंदिको अर्थ लैजी, अरज करी हितकाज । शरणा गत भूतरतणीजी, राखहु जगपति लाज॥हमा० ॥८

। पार्श्वनाथ स्तुति ।

सोरठा ।

पारसप्रभुको नाउँ, सार सुधारस जगतमैं ।
मैं वाकी बलिजाउँ, अजर अमरपदमूल यह ॥१॥

हरिगीता (१८ मात्रा)

राजत उतंग अशोक तरुवर, पवन प्रेरित थरहरै । प्रभु निकट पाय प्रमोद नाटक, करत मानों मन हरै ॥ तस फूल गुच्छन भ्रमर गुंजत, यही तान सुहावनी । सो जयो पार्श्व जिनेंद्र पातकहरन जग चूडामनी ॥ २ ॥ निज मरन देखि अनंग डरप्यो, सरन ढूंढत जग फिर्‌यो । कोई न राखैं चोर प्रभुको, आयपुनि पायनि गिर्‌यो ॥ यौं हार निज हथियार डारे पुहूपवर्षा

मिस भनी । सो जयो० ॥ ३ ॥ प्रभुअंगनीलउ-
तंगगिरितैं वानि शुचि सरिता ढली । सो भेदि
भ्रमगजदंतपर्वत, ज्ञानसागरमैं रली ॥ नय सप्त-
भंग-तरंग-मंडित, पापतापविध्वंसनी । सो जयो०
॥ ४ ॥ चंद्रार्चिचयछवि चारु चंचल, चमरवृंद
सुहावने । ढोलै निरंतर यक्षनायक, कहत क्यों
उपमा बने ॥ यह नीलगिरिके शिखर मानों,
मेघझरि लागी घनी । सोजयो० ॥ ५ ॥ हीरा
जवाहिर खचित बहुविधि. हेमआसन राजये।
तहँ जगत जनमनहरन प्रभु तन, नील वरन
विराजये । यह जटिल वारिजमध्यमानौं, नील
मणिकलिका बनी । सोजयो० ॥ ६ ॥ जगजीत
मोह महान जोधा जगतमें पटहा दियो । सो
शुकल-ध्यान-कृपानबल जिन. निकट वैरी वश
कियो ॥ ये बजत विजयनिशान दुंदुभि, जीत
सूचै प्रभुतनी । सोजयो० ॥ ७ ॥ छदमस्थपदमें
प्रथम दर्शन, ज्ञानचारित आदरे । अब तीन तेई
छत्रछलसों, करत छाया छवि भरे ॥ अति धवल

रूप अनूप उन्नत, सोमविंबप्रभाहनी। साजयो०
दुति देखि जाकी चन्द सरमै, तेजसौं रवि लाजई
तव प्रभामण्डलजोग जगमैं, कौन उपमा छाजई
इत्यादि अतुल विभूति मंडित, सोहिये त्रिभुव-
नधनी। सोजये० ॥ ६ ॥ या अगम महिमा
सिंधु साहब, शक्र पार न पावहीं। ताजि हासमय
तुम दास 'मधुर' भगतिवश यश गावहीं ॥ अब
होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदासेवक रहौं। कर
जोरि यह वरदान मांगौं, मोखपद जावत लहौं॥

। शारदाष्टक ।

नमो केवल नमो केवल रूप भगवान। मुख
ओंकार धुनि सुनि अर्थ गणधर विचारैं। रचि
रचि आगम उपदिसै भविक जीव संशय निवारैं।
सो सत्यारथ शारदा तासु भक्ति उर आन।
छंद भुजङ्गप्रयातमैं अष्टक कहौं बखान ॥ १ ॥

जिनादेश जाता जिनेंद्रा विख्याता । विशुद्ध-प्रबुद्धा नमों लोकमाता ॥ दुराचार दुर्नैहरा शंकरानी । नमों देवि वागीश्वरी जैनवानी ॥ २ ॥
सुधाधर्मसंसाधनी धर्मशाला । क्षुधातापनिर्नाशिनी मेघमाला ॥ महामोहविध्वंसनी मोक्ष-दानी । नमों देवि०॥३॥ अखै वृक्षशाखा व्यतीताभिलाषा । कथा संस्कृता प्राकृता देशभाषा । चिदानंदभूपालकी राजधानी । नमो० ॥ ४ ॥
समाधानरूपा अनूपा अछुद्रा । अनेकांतधा स्यादवादांकमुद्रा ॥ त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी बखानी । नमो देवि० ॥ ५ ॥ अकोपा अमाना अदंभा अलोभा । श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा महापावनी भावना भव्यमानी । नमो देवि०॥६।
अतीता अजीता सदा निर्विकारा । विषै वाटिका खंडिनी खड्गधारा ॥ पुरापापविक्षेपकर्त्री कृपाणी । नमो देवि०॥७॥ अगाधा अबाधा निरंध्रा निराशा । अनंता अनादीश्वरी कर्मनाशा ॥ निशंका निरांका चिदंका भवानी । नमो देवि०।

॥८॥ अशोका मुदेका विवेका विधानी । जग-
ज्जंतु मित्रा विचित्रावसानी ॥ समस्ता विलोका
निरस्ता निदानी ॥ नमोदेवि० ॥९॥

जैनवानी जैनवानी सुनहि जे जीव ।
जे आगमरुचि धार, जे प्रतीत मनमांहिं आनहिं
अब धारहिं जे पुरुष समर्थ पद अर्थ जानहिं ॥
जे हित हेतु बनारसी देहिं धर्म उपदेश ।
ते सब पावहिं परमसुख तज संसार कलेश ।१०।

इति शारदाष्टक ।

शास्त्र-भक्ति ।

अकेला ही हूं मैं करम सब आये सिमिटिकें ।
लिया है मैं तेरा शरण अब माता सटकिकें ॥
भ्रमावत है मोको-करम दुख देता जनमका ।
करों भक्तीतेरी, हरो दुख माता भ्रमनका ॥१॥
दुखी हूआ भारी, भ्रमत फिरता हूं जगतमैं ।
सहा जाता नाहीं अकल घबरानी भ्रमनमें ॥
करों क्या मा मोरी, चलत वश नाहीं मिटनका ।
करों भक्ती तेरी, हरो दुख माता भ्रमनका ॥२॥

सुनो माता मोरी, अरज करता हूं दरदमैं ।
दुखी जानों मोकों, डरप कर आयो शरनमैं ।
कृपा ऐसी कीजे, दरद मिटजावै मरनका । करों
भक्ती तेरी हरो दुख माता भ्रमनका ॥ ३ ॥
पिलावै जो मोकों, सुबुधिकर प्याला अमृतका ।
मिटावै जो मेरा सरब दुख सारा फिरनका ।
परों पावां तेरे हरो दुख सारा फिकरका । करों
भक्ती तेरी, हरो दुख माता भ्रमनका ॥ ४ ॥

सवैया ।

मिथ्या-तम नाशवेको ज्ञानके प्रकाशवेको. आ-
पा-परभासवेको भानुसी बखानी है । छहों द्रव्य
जानवेको बंधविधि भानवेको स्वपर पिछानवे-
को परम प्रमानी है ॥५॥ अनुभौ बतायवेको
जीवके जतायवेको. काहू न सतायवेको भव्य
उर आनी है । जहांतहां तारवेको पारके उता-
रवेको. सुख विसतारवेको येही जिनवानी है ।६

दोहा ।

यह जिनवानी की थुती. अल्प बुद्धि परमान ।

पनालाल विनती करै. दे माता मोहि ज्ञान ।७।
हे जिनवानी भारती. तोहि जपों दिन रैन ।
जो तेरा शरना गहे, सो पावे सुख चैन ॥८॥
जा वानीके ज्ञानतैं. सूझै लोकालोक ।
सो वानी मस्तक चढो. सदा देत हों धोक॥९॥

। अथ बड़ी साधुवंदना ।

दोहा ।

श्रीजिनभाषित भारती. सुमरि आन मुखपाठ ।
कहूं मूलगुणसाधुके, परमित विंशति आठ
पंचमहाव्रत आदरन. समिति पंच परकार ।
प्रबल पंचइंद्रिय. विजय. षट अविशिक आचार॥
भूमिशयन मंजनतजन. वसन त्याग कचलोच ।
एकबार लघुअसन थिति-असन दंतवनमोच ॥

चौपाई ।

थावर जंतु पंचपरकार । चारभेद जंगमतनधार॥
जो सब जीवनको रछपाल । सो सुसाधु वंदहु
तिरकाल ॥४॥ संतत सत्यवचन मुख कहे ।
अथवा मौन विरत धर रहे ॥ मृषावाद नहिंबोले

रती । सो जिनमारग सांचा जती ॥५॥ कोडी आदि रतन परजंत । घटित अघट धनभेद अनंत ॥ दत्त अदत्त न फरसै जोइ । तारण तरण मुनीश्वर सोय ॥६॥ पशु पंछी नर दानव देव । इत्यादिक रमणी-रति-सेव ॥ तजहिं निरं-तर मदन विकार । सो मुनि नमहुं जगतहितकार ॥ ७ ॥ द्विविध परिग्रह दशविध जान । संख असंख अनंत बखान ॥ सकल संगतज होय निरास । सो मुनि लहै मोखपद वास ॥ ८ ॥ अधोदृष्टि मारग अनुसरै । प्रासुक भूमि निरख पग धरै ॥ सदय हृदय साधै शिवपंथ । सो तपीश निरभय निरग्रंथ ॥ ९ ॥ निरभिमान निरवद्य अदीन । कोमल मधुर दोष दुखहीन ॥ ऐसे सुव-चन कहैं स्वभाव । सो रिषिराज नमहुं धरि भाव ।१०। उत्तम कुल श्रावक संचार । तास गेह प्रासुक आहार ॥ भुंजै दोष छियालिस टाल । सो मुनि वंदौं सुरति सँभाल ॥ ११ ॥ उचित वस्तु निज हित परहेत । तथा धरम उपकरण अचेत ॥

निरख जतनसों गहै ज़ु कोय। सो मुनि नमहुँ जोर कर दोय ॥१२॥ रोग विकृति पूरव आदान नवदुवार-मल-अंग उठान ॥ डारै प्रासुक भूमि निहार। सो मुनि नमहुं भगति उरधार ॥१३॥ कोमल कर्कस हरुव सँभार। रूक्षसचिक्कण तपत तुसार। इनको परसन सुखदुख लहैं। सो मुनिराज जिनेश्वर कहैं ॥१४॥ आमल कटुक कषायल मिष्ट। तिक्त क्षार रस इष्ट अनिष्ट ॥ इनहिं स्वाद रति अरति न बेव। सो ऋषिराज नमहिं तिहँ देव ॥१५॥ शुभ सुगंध नानापर-कार। दुखदायक दुर्गंध अपार। नासा विषय गनहिं समतूल। सो मुनि जिन सासनतरुमूल ॥१६॥ श्याम हरित सित लोहित पीत। वर्ण विवर्ण मनोहर भीत। ए निरखे तज राग विरोध सो मुनि कर कर्ममल शोध ॥१७॥ शब्द कु शब्द हि समरससाद। श्रवण शुनत नहिं हर्ष विशाद ॥ थुति निंदा दोऊं सम शुणैं। सो राज परमपद मुणैं ॥१८॥ सामाइक साधै

काल। मुकति पंथकी करै सँभाल ॥ शत्रु मित्र दोऊ सम गिणै। सो मुनिराज करमरिपु हणै ॥ १९ ॥ अरहंत सिद्ध सूरि उवझाय। साधु पंच पद परम सहाय ॥ इनके चरणनिमें मनलाय। तिह मुनिवरके वंदों पाय ॥ २० ॥ पावनपंच परमपदइष्ट। जगतमाहिं जानै उतकिष्ट ॥ ठानै गुणथुति बारंबार। सो मुनिराज लहै भवपार ॥२१॥ ज्ञानक्रियागुण धारै चित्त। दोष विलोकि करै प्राछित्त ॥ नित प्रतिक्रमण क्रिया रसलीन। सो सुसाधु संजम परवीन ॥ २२ ॥ श्री जिनवचनरचन विस्तार। द्वादशांग परमागम सार ॥ निजमति मान करै सज्झाउ[1]। सो मुनिवर वंदहुं धर भाव ॥ २३ ॥ काउसग्ग मुद्रा धरि नित्त। शुद्ध स्वरूप विचारै चित्त ॥ त्यागै त्रिविध जोग ममकार। सो मुनिराज नमों निरधार ॥ २४ ॥ प्रासुक शिला उचित भू खेत। अचल अंग समभाव समेत ॥ पच्छिमरैन अलप निद्राल

---

१ स्वाध्याय।

सो योगीश्वर बंचै काल ॥ २५ ॥ धर्म ध्यान
युत परम विचित्र। अंतर बाहिज सहज पवित्र॥
न्हानाविलेपन तजै त्रिकाल। वंदों सो मुनि दीन
दयाल ॥२६॥ लोकलाज विगलित भय हीन।
विषयवासना रहित अदीन ॥ नगन दिगंबर-
मुद्राधार। सो मुनिराज जगतसुखकार ॥२७॥
सघन केशगर्भित मल कीच। त्रस असंख्य
उतपति तसु वीच॥ कच लुंचै यह कारण जान।
सो मुनि नमहुं जोरि जुगपान ॥ २८ ॥ छुधा
वेदनी उपशमहेत। रस अनरस समभाव समेत॥
एक बार लघु भोजन करै। सो मुनिमुकतिपंथ
पगधरै ॥ २९ ॥ देहसहारो साधन मोख। तब
लों उचित काय बलपोख॥ यह विचार यति
लेहिं अहार। सो मुनि परम धरम धनधार ॥३०॥
जहँजहँ नवदुवार मलपात। तहँतहँ अमिति
जीव उतपात ॥ यह लख तजहिं दंतवनकाज।
सो शिवपथ साधक ऋषिराज ॥ ३१ ॥

अथ भूधरकृत गुरुस्तुति।

बंदौं दिगंबर गुरुचरन जग-तरन तारन जान। जे भरमभारी रोगको हैं राजवैद्य महान जिनके अनुग्रह बिन कभी नहिं कटै कर्मजंजीर। ते साधु मेरे उर बसहु मम हरहु पातक पीर ॥१॥ यह तन अपावन अथिर है संसार सकल असार। ये भोग विषपकवानसे इहभांति शोच विचार॥ तप विरचि श्रीमुनि वनबसे सब छांड़ि परिगह भीर। ते साधु०॥२॥ जे काच कंचनसम गिनहिं अरि मित्र एक सरूप। निंदा बड़ाई सारिखी, वनखंड शहर अनूप॥ सुखदुःख जीवनमरनमें, नहिं खुशी नहिं दिलगीर। ते साधु० ॥३॥ जे वाह्य परवत वनबसैं गिरि गुफा महल मनोग। सिल सेज समता सहचरी, शशिकिरनदीपक जोग॥ मृग मित्र भोजन तपमई विज्ञान निरमल नीर। ते साधु० ॥४॥ सूखहिं सरोवर जल भरे, सूखहिं तरंगिनि-तोय॥ बाटहि बटोही ना चलैं, जहँ घाम

गरमी होय ॥ तिहँकालमुनिवरतपतपहि, गिरि शिखरठाडे धीर। ते साधु० ॥ ५ ॥ घनघोर गरजहिं घनघटा, जलपरहिं पावसकाल। चहुँ ओर चमकहि बीजुरी, अति चलै सीरी व्याल॥ तरुहेठ तिष्ठहिं तब जती, एकान्त अचल शरीर। ते साधु० ॥ ६ ॥ जब शीतमास तुषारसों, दाहै सकल वनराय। जब जमै पानी पोखरां, थरहरै सबकी काय॥ तब नगन निवसैं चौहटै, अथवा नदीके तीर। ते साधु० ॥७॥ करजोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलहिं वे मुनिराज। यह आश मनकी कब फलै, मम सरहिं सगरे काज॥ संसार विषम विदेशमें जे बिना कारण वीर। ते साधु० ॥ ८ ॥

अथ भूधरकृत दूसरी गुरुस्तुति।

राग भरतरी—दोहा।

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भवजलधि जिहाज। आप तिरहिं पर तारहीं, ऐसे श्रीऋषिराज॥ ॥ ते गुरु० ॥१॥ मोहमहारिपु जानिकैं छाड्यो

सब घरबार। होय दिगंबर वन बसे, आतम शुद्ध विचार॥ ते गुरु०॥२॥ रोग उरग-विलवपु गिरयो, भोग भुजंग समान। कदलीतरु संसार है, त्याग्यो सब यह जान ॥तेगुरु०॥३॥ रतन-त्रयनिधिउरधरैं, अरु निरग्रंथ त्रिकाल। मार्‍यो कामखवीसको, स्वामी परमदयाल ॥तेगुरु०॥ पंचमहाव्रत आदरे, पांचों सामिति समेत। तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पदहेत॥ ते गुरु० ॥५॥ धर्म धरैं दशलाछनी, भावैं भावन सार। सहैं परीषह बीस द्वै, चारित-रतन-भँडार ॥तेगुरु०॥६॥ जेठ तपे रवि आकरो, सूखै सर वर नीर। शैल-शिखर मुनि तप तपैं दाझैं नगन शरीर॥ ते गुरु० ७॥ पावस रैन डरावनी, बरसै जलधरधार। तरुतल निवसैं तब यती, बाजै झंझा व्यार॥ ते गु० ८॥ शीत पडै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय। तालतरंगनि के तटैं, ठारे ध्यान लगाय॥ ते गु०॥९॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनोंकाल मंझार। लागे

सहज सरूपमैं तनसों ममत निवार ॥ ते गु०॥ पूरव भोग न चिंतवैं, आगम बांछैं नाहिं। चहुं गतिके दुखसों डरै, सुरति लगी शिवमाहिं॥ ते गु० ॥११॥ रंगमहलमें पौढ़ते, कोमल सेज बिछाय। ते पच्छिम निशि भूमिमैं, सोवें संवरि काय ॥ ते गु० १२ ॥ गजचाढि चलते गरवसों, सेना साजि चतुरंग। निरखि निरखि पग वे धरैं पालैं करुणा अङ्ग ॥ तेगु०१३॥ वे गुरू चरण जहां धरै जगमैं तीरथ जेह। सो रज मम मस्तक चढ़ो, भूधर मांगे एह ॥ ते गु० १४ ॥

अथ गुर्वावली लिख्यते ।

जैवंत दयावंत सुगुरू देव हमारे। संसारविषम खारसों जिनभक्त उधारे ॥ टेक ॥ जिनवीरके पीछें यहां निर्वानके थानी। बासठ बरसमें तीन भये केवलज्ञानी। फिर सौ बरसमैं पांच श्रुतके वली भये। सर्वांग द्वादशांगके उमंग रस लये ॥ जैवंत० १॥ तिस बाद वर्ष एकशतक और तिरासी। इसमैं हुयेदशपूर्व ग्यारै अंगके भाषी।

ग्यारै महामुनीश ज्ञानदानके दाता । गुरुदेव सोई देहिंगे भविवृंदको साता। जैवंत० २। तिस बाद वर्ष दोय शतक बीसके माहीं । मुनि पांच ग्यारै अंगके पाठी हुये ह्यांहीं ॥ तिसबाद वरष एकसौ अठारमें जानी । मुनि चार हुये एक आचारांगके ज्ञानी । जैवंत० ॥ ३ ॥ तिसबाद हुये हैं जु सुगुरु पूर्वके धारक । करुणानिधान भक्तको भवसिंधु उधारक ॥ करकंजतें गुरु मेरे उपर छांह कीजिये। दुख द्वंद्वको निकंदके आनंद दीजिये ॥ जैवंत० ॥ ४ ॥ जिनवीरके पीछेसों वरष छहसौ तिरासी । तबतक रहे इक अंगके गुरुदेव अभ्यासी ॥ तिसबाद कोई फिर न हुये अंगके धारी । पर होते भये महा सुविद्वान उदारी ॥ जैवंत०।५। जिनसों रहा इस कालमें जिनधर्मका शाका । रोपा है सात भंगका अभंग पताका ॥ गुरुदेव नयंधरको आदि दे बडे नामी। निरग्रंथ जैनपंथके गुरुदेव जो स्वामी ॥ ॥जैवंत० ६॥ भाषों कहां लों नाम बडी बार

लगैगा। परनाम करों जिससे बेडा पार लगैगा।
जिसमेंसे कछुइक नाम सूत्रकारके कहों। जिन
नामके प्रभावसे परभावको दहों ॥जैवंत० ७॥
तत्वार्थसूत्र नामि उमास्वामी किया है। गुरुदेव
ने संक्षेपसे क्या काम किया है॥ जिसमें अपार
अर्थने विश्राम किया है। बुधवृंद जिसे ओरसे
परनाम किया है॥जैवंत०।८। वह सूत्र है इस
कालमें जिनपंथकी पूंजी। सम्यक्त्व ज्ञानभाव है
जिस सूत्रकी कूंजी॥ लडते हैं उसी सूत्रसों
परवादके मूंजी॥ फिर हारके हट जाते हैं इक
पक्षके लूंजी॥ जैवंत०।९। स्वामी समंतभद्र
महाभाष्य रचा है। सर्वंग सात भंगका उमंग
मचा है॥ परवादियोंका सर्व गर्व जिससे पचा
है। निर्वान सदनका सोई सोपान जचा है॥
॥जैवंत०१०। अकलंकदेव राजवारतीक बनाया।
परमान नयनिक्षेपसों सब वस्तु बताया॥ श्लोक
वारतीक विद्यानंदजी मंडा। गुरुदेवने जडमूल
सों पाखंडाको खंडा॥जै० ११॥ गुरु पूज्यपाद

जी हुये मरजादके धोरी। सर्वार्थसिद्धि त्र
की टीका जिन्हों जोरी ॥ जिसके लखेसों फिर
न रहे चित्तमें भरम। सब जीवको भाषै है स्व.
रभावका मरम ॥ जैवंत०। १२। धरसेन गुरू-
जी हरो भविवृंदकी व्यथा। अग्रायणीयपूर्वमें
कुछ ज्ञान जिन्हें था॥ तिनके हुये दो शिष्य पुष्प-
दंत भुतबली। धवलादिकोंका सूत्र किया जि
स्से मग चली ॥ जैवंत०। १३। गुरु औरने
उस सूत्रका सब अर्थ लहा है। तिन धवल महा-
धवल जयसुधवल कहा है॥ गुरु नेमिचंद्रजी
हुये धवलादिके पाठी। सिद्धांतके चक्रीशकी
पदवी जिन्हों गांठी ॥ जैवंत०॥ तिन तीनोंही
सिद्धांतके अनुसारसों प्यारे। गोमट्टसार आदि
सुसिद्धांत उचारे॥ यह पहिले सुसिद्धांतका
विरतंत कहा है। अब और सुनो भावसों जो
भेद महा है ॥ जैवंत० ।१५। गुणधर मुनीशने
पढा था तीजा पराभृत। ज्ञानप्रवाद पूर्वमें जो
भेद है आश्रित। गुरु हस्तिनागजीने सोई जिन-

सों लहा है। फिर तिनसों यतीनायकने मूल गहा है ॥ जैवंत० । १६ । तिन चूर्णिका स्वरूप तिस्से सूत्र बनाया । परमान छै हजार यों सिद्धांतमें गाया ॥ तिसका किया उद्धरण समुद्धरण जु टीका । बारह हजारके प्रमान ज्ञानकी टीका ॥ जैवंत० । १७ । तिसहीसे रचा कुंदकुंदजीने सुशासन । जो आत्मीक पर्म धर्मका है प्रकाशन ॥ पंचास्तिकाय समयसार सारप्रवचन । इत्यादि सुसिद्धांत स्यादवादका रचन ॥ जैवंत० । १८ । सम्यक्त्वज्ञान दर्श सुचारित्र अनूपा । गुरुदेवने अध्यात्मीक धर्म निरूपा ॥ गुरुदेव अमीइंदुने तिनकी करी टीका ॥ झरता है निजानंद अमीवृंद सरीका ॥ जैवंत० । १९ । रचनानुवेदभेदके निवेदके करता । गुरुदेव जे भये हैं पापतापके हरता ॥ श्रीवट्टकेर देवजी वसुनंदजी चक्री । निरग्रंथ ग्रंथ पंथके निरग्रंथके शक्री ॥ जैवंत० । २० । योगींद्रदेवने रचा परमात्माप्रकाश । शुभचंद्रने किया है ज्ञान आर-

णव विकाश ॥ की पद्मनंदजीने पद्मनंदिप
सी । शिवकोटिने आराधना सुसार रचीसी ॥
जैवंत । २१ । दोसंध तीनसंध चारसंध पांचसंध ।
षटसंध सातसंधलों गुरु रचा है प्रबंध ॥ गुरु देव-
नंदिने किया जैनेंद्रव्याकरन । जिस्से हुवा पर-
वादियोंके मानका हरन ॥ जैवंत० । २२ । गुरु-
देवने रची है रुचिर जैनसंहिता । वरनाश्रमादि
की क्रिया कहें हैं जु सांहिता ॥ वसुनंदि वीरनंदि
यशोनंदि संहिता । इत्यादि बनी हैं दशोंप्रकार
संहिता ॥ जैवंत० ।२३। परमेयकमलमारतंडके
हुये कर्ता । प्रभेन्दु माणिक्यनंदि नयप्रमाणके
भर्ता ॥ जैवंत सिद्धसेन सुगुरु देव दिवाकर ।
जै वादिसिंह देवसिंह जैति यशोधर ॥ जैवंत०
२४ ॥ श्रीदत्त काणभिक्षु और पात्रकेशरी ।
श्रीवज्रसूर महासेन श्रीप्रभाकरी । शिरीजटा-
चार गुरु वीरसेन हैं । जैसेन शिरीपाल मुझे
कामधेन हैं ॥ जैवंत । २५ । इन एक एक गुरूने
जो ग्रंथ बनाया । कहि कौन सके नाम कोइ

पार न पाया ।। जिनसेन गुरूने महापुराण रचा है। मरजाद क्रियाकांडका सब भेद खचा है ।। जैवंत०।।२६।। गुणभद्र गुरूने रचाउत्तरपुरानको सो देव गुरूजी कल्याण थानको।। रविषेण गुरूजीने रचा रामका पुरान । जो मोहतिमर भाननेको भानुके समान ।।जैवंत०।।२७।।पुन्नाटगणविषै हुये जिनसेन दूसरे । हरिवंशको बनाके दास आसको भरे। इत्यादि जे वसुबीस सुगुण मूलके धारी। निर्ग्रंथ हुये हैं गुरू जिनग्रंथके कारी ।। जैवंत० ।।२८।।वंदौं तिन्हें मुनि जे हुये कवि काव्य करैया ।। वंदामि गमक साधु जो टीकाके धरैया।। वादी नमों मुनिवादमें परवाद हरैया। गुरु वागमीकको नमों उपदेश करैया ।। जैवंत० ।।२९ ।। ये नाम सुगुरु देवका कल्याण करै है। भविबृंदका तत्काल ही दुख द्वंद हरै है ।। धनधान्य ऋद्धि सिद्धि नवों निद्धि भरै हैं। आनंद कंद देहि सबी विघ्न टरै हैं ।। जैवंत०। ३०। इह कंठमें धारै जो सुगुरु नामकी

माला। परतीतसों उरप्रीतिसों ध्यावै जु त्रिकाला। इहलोकका सुख भोग सो सुरलोकमें जावै। नरलोकमें फिर आयके निरवानको पावै। जैवंत दयावंत सुगुरुदेव हमारे। संसार विषमखारसों जिन भक्त उधारे ॥ २१॥इति०॥

१ मंगलाष्टक

कवित्त (३१ मात्रा)

संघसहित श्रीकुंदकुंदगुरु, वंदनहेत गये गिरनार। वाद पर्‌यो तहँ संशयमतिसों, साक्षी बदी अंबिकाकार॥ 'सत्य' पंथ निरग्रंथ दिगंबर, कही सुरी तहँ प्रगट पुकार। सो गुरुदेव वसौ उर मेरे, विघनहरण मंगल करतार ॥१॥
स्वामी समंतभद्र मुनिवरसों शिवकोटी हठ कियो अपार। वंदन करो शंभुपिंडीको, तब गुरु रच्यो स्वयंभू भार॥ वंदन करत पिंडिका फाटी, प्रगट भये जिन चंद्र उदार। सो० ॥२॥
श्रीअकलंकदेव मुनिवरसों, वाद रच्यौ जहँ

१। अंबादेवीकी मूर्ति।

बौद्ध विचार । तारादेवी घटमें थापी, पटके ओट करत उच्चार ॥ जीत्यो स्यादवादबल मुनिवर, बौद्धबोध तारामद टार।सो०।३। श्रीमतविद्यानंदि जबै, श्रीदेवागमथुति सुनी सुधार । अर्थ हेतु पहुंच्यो जिनमंदिर, मिल्यो अर्थ तहँ सुख दातार॥ तब व्रत परमदिगंबरको धर, परमत को कीनों परिहार ॥सो०॥ ४ ॥ श्रीमत मानतुंग मुनिवरपर, भूप कोप जब कियौ गँवार । बंद कियो तालोंमें तबही, भक्तामर गुरु रच्यौ उदार ॥ चक्रेश्वरी प्रगट तब ह्वैकै, बंधन काट कियो जयकार ॥ सो० ॥ ५ ॥ श्रीमत वादिराज मुनिवरसों, कह्यो कुष्टिभूपति जिहँ बार ॥ श्रावक सेठ कह्यो तिहँ अवसर, मेरे गुरु कञ्चन तनधार ॥ तबहीं एकीभाव रच्यो गुरु, तन सुवरणदुति भयो अपार ॥ सो०॥६ ॥ श्रीमत कुमुदचन्द्र मुनिवरसों, वाद परयो जहँ सभा मँझार । तब ही श्रीकल्यानधामथुति, श्रीगुरु रचना रची अपार॥ तब प्रतिमा श्रीपार्श्वनाथ-

की, प्रगट भई त्रिभुवन जयकार ॥ सो० ॥७॥
श्रीमत अभयचंद्र गुरुसों जब, दिल्लीपति इमि
कही पुकार। कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय
कै पकरौ मेरो मत सार ॥तब गुरु प्रगट अलौ-
किक अतिशय, तुरत हर्‌यो ताको मद भार।
सो गुरुदेव बसौ उर मेरे विघन हरन मङ्गल
करतार ॥ ८ ॥

दोहा—

विघन हरण मङ्गल करण वांछित फल दातार।
'वृन्दावन' अष्टक रच्यो, करौ कंठ सुखकार॥

आचार्यवर्य रविषेणस्तुति।

रविसे रविसेन अचारज हैं, भविवारिजके विक-
सावनहारे। जिन पद्मपुराण बखान कियौ भव
सागरतैं जगजन्तु उधारे॥ सियरामकथा सुजथा-
रथ भाखि, मिथ्यातसमूह समस्त विदारे। भावि
'वृंद' विथा अब क्यों न हरौ, गुरुदेव तुम्हीं मम
प्राण अधारे ॥१॥

आचार्यवर्य जिनसेनस्तुति।

भगवज्जिनसेन कविंद नमों जिन आदि जि-

निंदके फंद सुधारे। प्रथमानुसुवेद निवदनमें जिनको परधान प्रमान उचारे॥जगमें मुदमङ्गल भूरि भरे दुख दूर करे भवसागर तारे। भव 'वृंद' विथा अब क्यों न हरो गुरुदेव तुम्हीं मम प्रान अधारे॥१॥
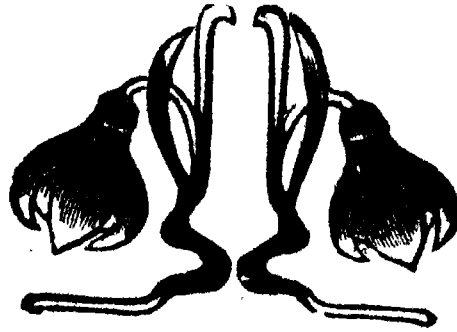
स्तोत्रसंग्रह संस्कृत और भाषा।

भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं

श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रं।

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि। स्वात्मनैव तथोद्भूतवृत्तये चिंत्यवृत्तये १॥ नमस्ते जगतांपत्ये लक्ष्मीःभर्त्रेनमोनमः॥विदांवर नम-

स्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥ कामशत्रुहणं
देवमामनंति मनीषिणः। त्वामानमस्तुरेन्मौलि-
भामालाभ्यर्चितक्रमम्॥३॥ध्यानदुर्घणनिर्भिन्न-
घनघातिमहातरुः । अनंतभवसंतानजयोप्या-
सीरनंतजित् ॥ ४ ॥ त्रैलोक्यनिर्जयाव्याप्तदुर्द-
र्पमतिदुर्जयं। मृत्युराजं विजित्यासीज्जन्ममृत्युं
जयो भवान्॥५॥ विधूताशेषसंसारो बंधुर्नो
भव्यबांधवः। त्रिपुरारिस्त्वमीशोसि जन्ममृ-
त्युजरांतकृत् ॥६॥ त्रिकालविजयाशेषतत्त्व-
भेदात् त्रिधोच्छिदं। केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिने-
त्रोसि त्वमीशिता ॥७॥ त्वामंधकांतकं प्राहुर्मो-
हांधासुरमर्द्दनात्। अर्द्धंते नारयो यस्मादर्धनारी-
श्वरोस्युत ॥८॥ शिवः शिवपदाध्यासाद् दुरि-
तारिहरो हरः। शंकरः कृतशं लोके संभवस्त्वं
भवन्मुखे ॥९॥ वृषभोसि जगज्ज्येष्ठः गुरुर्गुरु
गुणोदयैः । नाभेयो नाभिसंभूतोरिक्ष्वाकुकुला-
नंदनः ॥१०॥ त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोक-
स्य लोचने। त्वं त्रिधाबुधसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान

धारकः ॥ ११ ॥ चतुर्मांगल्यमूर्तिस्त्वं शरण-
चतुरःसुधीः । पंचब्रह्ममयो देवःपवित्रस्त्वं पुनी-
हि मां ॥१२॥स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्योजाता-
त्मनेनमः। जन्माभिषेकवामाय वामदेव नमोस्तु
ते ॥ १३ ॥ सुनिःक्रांताय घोराय परं प्रश-
ममीयुषे ।केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोस्तु
ते ॥१४॥ पुरुस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्तपदभागिने
नमस्तत्पुरुषावस्थां भावनार्णवविभ्रते ॥१५॥
ज्ञानावरणनिर्हास नमस्तेनंतचक्षुषे। दर्शना
वरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदर्शिने ॥१६॥नमो
दर्शनमोहादिक्षायिकामलदृष्टये।नमश्चारित्रमो
हघ्ने विरागाय महौजसे ॥१७॥ नमस्तेनंतवी-
र्याय नमोनंतसुखाय ते। नमस्तेनंतलोकाय
लोकालोकविलोकिने ॥ १८ ॥ नमस्तेनंतदा-
नाय नमस्तेनंतलब्धये । नमस्तेनंतभोगाय न-
मोनंताय भोगिने ॥ १९ ॥ नमः परमयोगाय
नमस्तुभ्यमयोनये। नमः परमपूताय नमस्ते
परमर्षये॥२०॥ नमः परमाविद्याय नमःपरमव-

च्छिदे। नमःपरमतत्वाय नमस्ते परमात्मने ॥ २१॥ नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे । नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥ परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः । नमः पारेतमः प्राप्तधाम्ने ते परमात्मने॥२३॥नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबंध नमोस्तुते । नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः॥२४॥ नमःसुगतये तुभ्यं शोभनागतमीयुषेः । नमस्तेतींद्रियज्ञानसुखायानिन्द्रियात्मने ॥२४॥ कायबंधननिर्मोक्षादकायाय नमोस्तुते । नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामपि योगिने ॥ २६ ॥ अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः। नमः परमयोगींद्रिबान्दितांघ्रियद्धयाय ते ॥ २७॥ नमः परम विज्ञान नमःपरमसंयम । नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥ नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्लेश्यांशकस्पृशे। नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षणे॥२९॥ संज्ञासांशिद्धयावस्थाव्यातिरिक्तामलात्मने । नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः

क्षायिकदृष्टये ॥३०॥ अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे। व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धे पारमीयुषे ॥ ३१ ॥ अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेतीत जन्मने। अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२ ॥ अलमास्तां गुणस्तोत्रमनंतास्तावका कुणाः त्वन्नामस्मृतिमात्रेण परमं शं प्रशास्महे ॥ ३३ ॥ एवं स्तुत्वा जिनंदेवं भक्त्या परमया सुधीः। पठेदष्टोतरं नाम्नां सहस्रं पाप शांतये॥

इति प्रस्तावना।

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणस्त्वं गिरां पतिः नाम्नामष्टसहस्रेण त्वां स्तुमोभीष्टसिद्धये॥१॥श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभःशंभवःशंभुरात्मभूः।स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः विश्वविद्विश्व विद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥३॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः विश्वव्यापी विधिर्वेधाःशाश्वतो विश्वतोमुखः॥ ४ ॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः।विश्वदृक्

विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥५॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा जगदीशो जगत्पतिः। अनंत चिदचिंत्यात्मा भव्यबंधुरबंधनः ॥६ ॥युगादि-पुरुषो ब्रह्मा पंचब्रह्ममयःशिवः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥ स्वयंज्योतिर-जोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः मोहारिविजयी-जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशांतारिर-नंतात्मा योगी योगीश्वरार्चितः । ब्रह्मविद् ब्रह्म-तत्त्वज्ञो ब्रह्मेद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥ शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सि-द्धांतविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १०॥ सहिष्णुरच्युतोनंतः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः । प्रभू-ष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः॥११॥ विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । पर-मात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

(यहां उदकचन्दनतंदुल आदि श्लोक पढ़कर अर्घ चढ़ाना चाहिये)

दिव्य भाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।

पूतात्मा परमज्योतिधर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजाविरजाः शुचिः। तीर्थ-
कृत्केवली शांतः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥२॥
अनंतदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धःप्रजापतिः।मुक्तः
शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥
निरंजनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः। अ-
चलस्थितिरक्षोभ्यःकूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥
५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभांको वृषोद्भवः॥६॥हि-
रण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः। प्रभवो
विभवो भास्वान् भवो भावो भवांतकः ॥ ७ ॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः। स्वयं-
प्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः सर्वादिः
सर्वदृक् सार्वःसर्वज्ञः सर्वदर्शनः। सर्वात्मा सर्व-
लोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ८ ॥ सुगतिः
सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिबहुश्रुतः विश्रुतः

विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवा ॥ १०॥ सहस्त्रशीर्षः क्षेत्रज्ञसहस्राक्षः सहस्रपात् । भूत-भव्यभवद्भर्ता विश्वविद्या महेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥ अर्घं ।

स्थाविष्ठःस्थविरो जेष्ठ पृष्ठःप्रेष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो वंहिठः श्रेष्ठो निष्ठोगरिष्ठगीः ॥१॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वभुग्विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितांतकः ॥ २ ॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् । विरागो विरतोऽसंगो विविक्तो वीतमत्सरः ॥३॥ विनेयजनताबंधुर्विलीनाशेष कल्मषः। वियोगो योगविद्विद्वांविधातासुविधि-सुधीः ॥ ४ ॥ क्षांतिभाक्पृथिवीमूर्तिः शांति-भाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्नि-मूर्तिरधर्मधृक्॥५॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगम-मृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्य-

मूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥ मंत्रविन्मंत्रकृन्मंत्री मंत्रमूर्तिरनंतकः। स्वतंत्रस्तंत्रकृत्स्वांत कृतांतांतः कृतांतकृत् ॥८॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्य कृतक्रतुः। नित्यो मृत्युंजयो मृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः। महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः। प्रशमात्मा प्रशांतात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥ अर्घं।

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टापद्मविष्टरः। पद्मेशः पद्मसंभूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥१॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः। स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः गुणाकरो गुणांभोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥ गुणाकरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणःशरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥४॥ अगण्यः पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः।

धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥५॥
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वंद्वो निर्मदःशान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥
निर्निमेषो निराहारो निःक्रियोनिरुपप्लवः । नि
ष्कलङ्को निरस्तैनानिर्धूतांगो निराश्रयः॥७॥
विशालो विपुलज्योतिरतुलोचिंत्यवैभवः । सुसं
वृतः सुगुप्तात्मा सुब्रत्सुनयतत्वावित् ॥८॥ एक-
विद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः । धीशो
विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतांतकः ॥ ९॥
पिता पितामहःपाता पवित्रःपावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदःपरमःपुमान् ॥ १०॥
कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभःपुरुः । प्रतिष्ठः
प्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥ ४ ॥ अर्घं ।

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्य शुभलक्षणः
निरक्षः पुंडरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः॥१॥
सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः सिद्धात्मा सिद्धिसाधनः
बुद्ध बोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥२॥

वेदांगो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः। वेदवे-
द्यः स्वयंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥३॥ अनादि-
निधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः। युगादि-
कृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥ अतीं-
द्रोऽतींद्रियो धींद्रो महेंद्रोऽतींद्रियार्थदृक्। अ-
निंद्रियोऽहमिंद्राच्यों महेंद्रमहितो महान् ॥ ५॥
उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः। अग्रा-
ह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यं परमेश्वरः ॥ ६ ॥ अनंत-
र्द्धिरमेयर्द्धिरचिंत्यर्द्धिः समग्रधीः प्राग्र्यः प्राग्रह-
रोऽभ्यग्र्यः प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ॥ ७ ॥ महा-
तपा महातेजा महोदर्को महोदयः। महायशो
महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८॥ महाधैर्यो
महावीर्यो महासंपन्महाबलः। महाशक्तिर्महा-
ज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥ महामतिर्महा-
नीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः। महाप्राज्ञो महाभागो
महानंदो महाकविः ॥२०॥ महामहामहाकीर्ति-
र्महाकांतिर्महावपुः। महादानो महाज्ञानो महा-
योगो महागुणः ॥११॥ महामहपतिः प्राप्तमहा-

कल्याणपंचकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ४॥ अथ

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः । महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायो महोदयः ॥ २ ॥ महाकारुण्यको मंता महामंत्री महायतिः । महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ॥३॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महेष्टवाक् । महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽनंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसंतारिर्महामोहाद्रिसूदनः । महागुणाकर क्षांता महायोगीश्वरः शमी ॥६॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारि[illegible]त्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥७॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमा-

त्मा प्रशमाकरः ॥८॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिंत्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दांतात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥ प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः । प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोध्वर्युरध्वरः ॥११॥ आनंदो नंदनो नंदो वंद्योऽनिंद्योऽभिनंदनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥ १२ ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्घं ।

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् । अन्तकृत्कांतगुः कांतश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥१॥ अजितोजितकामारिरमितोऽमितशासनः । जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥२॥ जिनेन्द्रः परमानंदो मुनींद्रो दुंदुभिस्वनः । महेन्द्रवंद्यो योगींद्रो यतींद्रो नाभिनंदनः ॥ ३ ॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतो मनुरुत्तमः । अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोधिगुरुः सुधीः ४

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः । वि
शिष्टः शिष्टभुक्शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः
५ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ६
सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयनश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ।७।
सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरायणः ।८।
स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः ।अ-
णोरणीयाननणुर्गुरुराद्योगरीयसां९ सदायोगः
सदाभोगः सदातृप्तःसदाशिवः । सदागतिःसदा
सौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥ १० ॥ सुघोषः
सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तो
गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः॥ ११ ॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥ ७ ॥ अर्घ ।

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमांञ्छेमुषीशो गिरांपतिः १
नैकरूपो नयस्तुंगो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।

अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः। पद्म-
गर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥३॥ लक्ष्मी-
वांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता। मनोहरो
मनोज्ञांगो धीरो गंभीरशासनः ॥ ४ ॥ धर्मयूपो
दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः धर्मचक्रायुधो
देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमो-
घाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः। सुरूपः सुभगस्त्या-
गी समयज्ञः समाहितः ॥ ६ ॥ सुस्थितः स्वा-
स्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो
निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्यें-
द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेंद्रियः। प्रशां-
तोऽनंतधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनी-
दृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः। अमूर्तो मूर्ति-
मानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्म-
गम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवंदितः। सर्वत्रगः
सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः
शंवदो दांतो दमी क्षांतिपरायणः। अधिपः पर-

मानंदः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्वल्ल-
भोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः। त्रिजगत्पतिपूजां
घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥ अर्घं

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः।
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥
पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः। आदिदेवः
पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो
युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः। कल्याणवर्णः
कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥
कल्याणः प्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः
॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्बंधुर्जगद्विभुः।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥ ५ ॥
चराचर गुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः। सद्यो-
जातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ ६ ॥
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ ७ ॥

तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
संध्याभ्रभ्रबभ्रूर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥८॥
निष्टप्तकनकच्छायः कनत्कांचनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णःस्वर्णाभःशातकुंभनिभप्रभः ॥९॥
द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजांबूनदद्युतिः। सुधौ-
तकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥ १० ॥
शिष्टेष्टः पुष्टिदःपुष्टःस्पष्टःस्पष्टाक्षरक्षमः। शत्रु
घ्नोप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः
॥११॥ शांतिनिष्ठो मुनिज्ज्येष्ठः शिवतातिः शि-
वप्रदः। शांतिदः शांतिकृच्छांतिः कांतिमान्का-
मितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रति-
ष्ठितः। सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथीया-
न्प्रथितः पृथुः ॥ १३ ॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्घं

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रंथेशो निरंबरः।
निष्किंचनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥
तेजोराशिरनंतौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः।
तेजोमयोऽमिततज्योतिर्ज्योतिमूर्तिस्तमोपहः ॥२॥

जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः। कलि-
घ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥ ३ ॥
अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रभामयः। लक्ष्मी-
पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमु-
क्षुर्बंधमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः। प्रशांत
रसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ता-
खिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः। आप्तो वागी-
श्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥ प्रवक्ता
वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित्। सुतनुस्तनु-
निर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्री-
श्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः। उत्सन्नदोषो
निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥८॥ लोकोत्तरो
लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः। धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः
शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो
यतिर्नियमितेंद्रियः। भदंतो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृ-
क्षो वरप्रदः ॥ १ ॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्म-
काष्ठा शुशुक्षणिः। कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेया-
देयविचक्षणः ॥११॥ अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरा-

रिस्त्रिलोचनः । त्रिनेत्रस्त्र्यंबकस्त्र्यक्षः केवल-
ज्ञानवीक्षणः ॥१२॥ समंतभद्रः शान्तारिर्धर्मा-
चार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शी जितानंगः कृपा-
लुर्धर्मदेशकः ॥१३॥ शुभंयुः शुखसाद्भूतः पुण्य
राशिरनामयः । धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्रा
ज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासादिशतं ॥१०॥ इत्याष्टाधिक सहस्त्रनामावली । अर्घं

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥
गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं लभेत्
॥२॥त्वमतोऽसि जगद्बंधुस्त्वमतोसि जगद्भि
षक् । त्वमतोसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धि-
तः ॥३॥त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयो-
गभाक् । त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगं सोत्थानंतचतु-
ष्टयः ॥४॥ त्वं पंचब्रह्मतत्त्वात्मा पंचकल्याणना-
यकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः॥५॥
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।

दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वरः ॥ ६ ॥ युष्मन्नामावलीदृब्धाविलसत्स्तोत्रमालया। भवं-तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः। यः स-पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनं ॥८॥ ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः। पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥ ९ ॥ स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुं। ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमां ॥१०॥ स्तुतिः पुण्यगु-णोत्कीर्तिः स्तोतः भव्यः प्रसन्नधीः। निष्ठिता-र्थो भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखं ॥११॥

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्। ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् ॥ यो नेतॄन् नयते नमस्कृतिमल नंतव्यपक्षेक्षणः स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥ तं देवं त्रिदशाधिपा र्चितपदं घातिक्षयानंतरं । प्रोत्थानंतचतुष्टयं जिनामिमं भव्याब्जनीनामिनं। मानस्तंभविलो-

कनानन्तजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं। प्राप्ताचिंत्यव हिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवंदामहे ॥१३॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत।

श्रीमानतुङ्गाचार्य विरचित आदिनाथ स्तोत्र

भक्तामर स्तोत्र।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं द-लितपापतमोवितानं। सम्यक् प्रणम्य जिनपा-दयुगंयुगादा-वालंबनं भवजले पततां जनानां ॥१॥यः संस्तुतःसकलवाङ्मयतत्त्वबोधादुद्भूत बुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः। स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्तहरैरुदारैः, स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेंद्रं ॥२॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपी-ठस्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहं। बालं वि-हाय जलसंस्थित मिंदुबिंबमन्यः क इच्छतिज-नः सहसा गृहीतुं ॥३॥ वक्तुं गुणान्गुणसमुद्र शशांककांतान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि-बुद्ध्या। कल्पांतकालपवनोद्धतनक्रचक्रं. को वा

तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्यां ॥ ४ ॥ सोहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश, कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः। प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगी मृगेंद्रं, नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थं ॥५॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम, त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्मां। यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति, तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥६॥ त्वत्संस्तवेन भवसंततिसन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजां। आक्रांतलोकमलिनीलमशेषमाशु, सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंधकारं ॥७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात्। चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु, मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिंदुः॥८॥ आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्त दोषं, त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति। दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि विकासभांजि ॥९॥ नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ ! भूतैर्गुणैर्भुवि भवंतमभिष्टुवंतः । तुल्या

भवंति भवतो ननु तेन किं वा, भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥ १० ॥ दृष्ट्वाभवंतमनिमेष-विलोकनीयं, नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्यचक्षुः पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिंधोः क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ॥११॥ यैः शांतराग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं निर्मापितः स्त्रिभुवनैक ललामभूत । तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथि-व्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥ १२ ॥ वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि, निश्शेषनिर्जित-जगत्त्रितयोपमानं । विंबं कलंकमलिनं क्व नि-शाकरस्य, यद्वासरे भवतिपांडुपलाशकल्पं ।१३। संपूर्ण मंडलशशांककलाकलाप-शुभ्रा गुणास्त्रि-भुवनं तव लंघयंति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं, कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टं ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गं । कल्पांत-कालमरुता चलिताचलेन, किं मंदराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूम वर्तिरपवर्जित-

तैलपूरः, कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रगटीकरोषि । गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगंति । नांभोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनींद्र लोके ॥१७॥ नित्योदयं दलितमोहमहांधकारं, गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानां । विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति, विद्योतयज्जगदपूर्वशशांकविंबं ॥१८॥ किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा, युष्मन्मुखेंदुदलितेषु तमस्सु नाथ। निष्पन्न शालिवनशालिनि जीवलोके, कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं, नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु । तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं, नैवं तु काचशकले किरणाकुलेपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति । किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः

कांश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेपि ॥२१॥ स्त्रीणां शतानि शतसो जनयंति पुत्रान्, नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं, प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालं ॥२२॥ त्वामामनंति मुनयः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्। त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयंति मृत्युं, नान्यः शिवश्शिवपदस्य मुनींद्र पंथाः ॥ २३ ॥ त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्यं, ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुं। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं, ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदंति संतः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्, त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात्। धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद् व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ, तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय, तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥२६॥ को विस्मयोत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवका-

शतया मुनीश । दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः
स्वप्नांतरेपि न कदाचिदपीक्षितोसि ॥ २७ ॥
उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं
भवतो नितांतं । स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो-
वितानं, विंबं रवेरिवपयोधरपार्श्ववर्ति ॥ २८ ॥
सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते
तव वपुः कनकावदातं । विंबं वियद्विलसदंशु-
लतावितानं तुंगोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः
॥२९॥ कुंदावदातचलचामरचारुशोभं, विभ्राजते
तव वपुः कलधौतकांतं । उद्यच्छशांकशुचिनि-
र्झरवारिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौंभं
॥३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति शशांककांतमुच्चै-
स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापं । मुक्ताफलप्रकर-
जालविवृद्धशोभं, प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वर-
त्वं ॥ ३१ ॥ गंभीरताररवपूरितदिग्विभागस्त्रै-
लोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः । सद्धर्मराज-
जयघोषणघोषकः सन्, खे दुंदुभिर्ध्वनति ते
यशसः प्रवादी ॥ ३२ ॥ मंदारसुंदरनमेरुसुपा-

रिजातसंतानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा । गंधोदबिंदुशुभमंदमरुत्प्रयाता, दिव्यादिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुंभत्प्रभावलयभूरिविभा विभोस्ते, लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपंती । प्रोद्यद्दिवाकरनिरंतरभूरिसंख्या, दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्यां ॥ ३४ ॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः, सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थ सर्व भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥ उन्निद्रहेमनवपंकजपुंजकांती, पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिनेंद्र ! धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयंति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेंद्र, धर्मोपदेशनाविधौ न तथा परस्य । यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतांधकारा तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोपि ॥ ३७ ॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपं । ऐरावताभमिभमुद्धतमापतंतं, दृष्ट्वा भयं भवति

नो भवदाश्रितानां ॥ ३८ ॥ भिन्नेभकुंभगलदु-
ज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभा-
गः । बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोपि, नाक्रा-
मति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पांत-
कालपवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलंज्वलितमु-
ज्ज्वलमुत्स्फुलिंगं । विश्वं जिघित्सुमिव संमुख-
मापतंतं, त्वन्नामकीर्त्तनजलं शमयत्यशेषं ॥४०॥
रक्तेक्षणं समदकोकिलकंठनीलं, क्रोधोद्धतं फ-
णिनमुत्फणमापतंतं । आक्रामति क्रमयुगेण नि
रस्तशंकस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः
॥४१॥ बल्गत्तुरंगगजगार्जितभीमनादमाजौ बलं
बलवतामपि भूपतीनां । उद्यद्दिवाकरमयूखशि-
खापविद्धं, त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति
॥ ४२ ॥ कुंताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगा-
वतारतरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजितदु-
र्जयजेयपक्षास्, त्वत्पादपंकजवनाश्रयिणो लभंते
॥ ४३ ॥ अंभोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपा-
ठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ । रंगत्तरंगशिख

रस्थितयानपात्रास् त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजंति ॥४४॥ उद्भूत भीषणजलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः। त्वत्पादपंकजरजोमृतदिग्धदेहा, मर्त्या भवंति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकंठमुरुशृंखल वेष्टितांगा, गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघाः। त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजाः स्मरंतः, सद्यः स्वयं विगतबंधभयाभवंति ॥४६॥ मत्तद्विपेंद्रमृगराजदवानलाहिसंग्रामवारिधिमहोदरबंधनोत्थं। तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव, यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेंद्र गुणैर्निबद्धां, भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पां। धत्ते जनो य इह कंठगतामजस्रं, तं मानतुंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

इति श्रीमानतुंगाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्रं समाप्तम् ॥

अथ भक्तामर भाषा।

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधिकरतार।
धरमधुरंधर परमगुरु, नमों आदि अवतार ॥१॥

चौपाई—

सुरनतमुकुट रतन छवि करैं । अंतर पापतिमिर सब हरैं ॥ जिनपद बंदों मनवचकाय । भवजलपतित-उधरनसहाय ॥ १ ॥ श्रुतपारग इंद्रादिक देव । जाकी थुति कीनी कर सेव ॥ शब्द मनोहर अरथ विशाल । तिस प्रभुकी वरनों गुनमाल ॥२॥ विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन । हो निलज्ज थुति-मनसा कीन । जलप्रतिविंब बुद्ध को गहै । शशिमंडल बालक ही चहै ॥३॥ गुनसमुद्र तुमगुन अविकार । कहत न सुरगुरु पावैं पार ॥ प्रलयपवनउद्धत जलजंतु । जलधि तिरै को भुजबलवंतु ॥ ४ ॥ सो मैं शक्तिहीन थुति करूं । भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं ॥ ज्यों मृगि निजसुतपालन हेत । मृगपतिसन्मुख जाय अचेत ॥५॥ मैं शठ सुधीहँसनको धाम । मुझ तव भक्ति बुलावै राम ॥ ज्यों पिक अंबकलीपरभाव । मधुऋतु मधुर करै आराव ॥६॥ तुमजस जंपत जन छिनमाहिं । जनम जनमके पाप नशाहिं ॥

ज्यों रवि उगै फटै ततकाल। अलिवत नील निशातमजाल॥ तुत्र प्रभावतैं कहूं विचार। होसी यह थुति जनमनहार॥ ज्यों जलकमल-पत्रपै परै। मुक्ताफलकी द्युति विस्तरै॥८॥ तुम गुनमाहिमा हतदुखदोष। सो तो दूर रहो सुख-पोष। पापविनाशक है तुम नाम। कमलविका-शी ज्यों रविधाम॥ ९॥ नहिं अचंभ जो होहिं तुरंत। तुमसे तुमगुण वरणत संत॥ जो अधी-नको आपसमान। करै न सो निंदित धनवान ॥१०॥ इकटक जन तुमको अविलोय। अवर-विषै रति करै न सोय॥ कोकरि च्छीरजलधिजल पान। च्छारनीर पीवै मतिमान ॥११ प्रभु तुम वीतराग गुनलीन। जिन परमाणु देह तुम कीन हैं तितने ही ते परमाण। यातैं तुम सम रूप न आन॥१२॥ कहँ तुम मुख अनुपम अविकार। सुरनरनागनयनमनहार। कहां चंद्रमंडल सक-लंक। दिनमें ढाकपत्र सम रंक॥ १३॥ पूरन-चंद जोति छविवंत। तुमगुन तीनजगत लघंत

एक नाथ त्रिभुवन आधार। तिन विचरतको करै निवार ॥१४॥ जों सुरातिय विभ्रम आरंभ। मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ॥ अचल चलाव प्रलय समीर। मेरुशिखर डगमगैं न धीर ॥१५॥ धूमरहित वाती गतनेह। परकाशै त्रिभुवन घर एह॥ वातगम्य नाहीं परचंड। अपर दीप तुम बलो अखंड ॥१६॥ छिपहु न लुपहु राहुकी छांहिं। जगपरकाशक हो छिनमांहिं॥ घन अनवर्त्त दाह विनिवार। रवितैं अधिक धरो गुणसार ॥१७॥ सदा उदित विदलित मनमोह विघटित मेघराहु अविरोह॥ तुम मुखकमल अपूरवचंद। जगतविकाशी जोति अमंद॥१८॥ निशदिन शशि रविको नहिं काम। तुम मुख चंद हरैं तमधाम।॥ जो स्वभावतैं उपजै नाज सजल मेघ तो कौनहु काज॥१९॥ जो सुबोध सोहै तुममाहिं। हरि हर आदिकमैं सो नाहिं॥ जो द्युति महारतनमें होय। काजखंड पावै नहिं सोय ॥२०॥

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया ।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥
कछू न तोहिं देखके जहां तुही विशेखिया ।
मनोग चित्तचोर और भूलहू न पेखिया ॥२१॥
अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत हैं । न तो-
समान पुत्र और माततें प्रसूत हैं ॥ दिशा ध-
रंत तारिका अनेक कोटि को गिनै । दिनेश
तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै ॥२२॥ पुरान
हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो । कहैं मुनीश
अंधकारनाशको सुभान हो ॥ महंत तोहि जा-
नके न होय वश्य कालके । न और मोहि मो-
खपंथ देय तोहि टालके ॥२३॥ अनंत नित्य
चित्तकी अगम्य रम्य आदि हो । असंख्य सर्व-
व्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ॥ महेश का-
मकेतु योग ईश योग ज्ञान हो । अनेक एक
ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ।२४। तुही जिनेश
बुद्ध है सुबुद्धिके प्रमानतें तुही जिनेश शंकरो

जगत्त्रये विधानतैं ॥ तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं। नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं ॥ २५ ॥ नमों करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो। नमों करूं सुभूरि भूमिलोकके सिंगार हो॥ नमों करू भवाब्धिनीरराशि-शोषहेतु हो। नमों करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो॥ २६ ॥

चौपाई १५ मात्रा

तुम जिन पूरनगुनगन भरे। दोष गर्वकरि तुम परिहरे ॥ और देवगण आश्रय पाय। स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥ २७ ॥ तरुअशोकतर किरन उदार। तुमतन शोभित है अविकार ॥ मेघनिकट ज्यों तेज फुरंत। दिनकर दिपै तिमिर निहनंत ॥२८॥ सिंहासन मनिकिरन-विचित्र। तापर कंचनवरन पवित्र ॥ तुमतन-शोभित किरनविथार। ज्यों उदयाचल रवित-महार ॥२९॥ कुंदपुहुपसितचमर ढुरंत। कन-कवरन तुमतन शोभंत ॥ ज्यों सुमेरुतट

निर्मल कांति। झरना झरै नीर उमगांति ॥३०
ऊंचे रहैं सूर दुति लोप । तीन छत्र तुम
दिपैं अगोप ॥ तीन लोककी प्रभुता कहैं
मोती झालरसों छवि लहैं ॥ ३१ ॥
दुंदुभि शब्द गहर गंभीर । चहुँदिशि होय
तुम्हारै धीर ॥ त्रिभुवनजन शिवसंगम करै।
मानूं जय जय रव उच्चरै ॥३२। मंद पवन गंधोदक
इष्ट। विविध कल्पतरु पुहपसुवृष्ट ॥ देव करैं
विकसित दल सार। मानों द्विजपंकति अवतार
॥ ३३ ॥ तुमतन-भामंडल जिनचंद । सब
दुतिवंत करत है मंद ॥ कोटिशंख रवितेज
छिपाय। शशिनिर्मलनिशि करै अछाय॥३४॥
स्वर्गमोखमारगसंकेत । परमधरम उपदेशनहेत
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध। सबभाषागार्भित
हितसाध ॥३५॥

दोहा—विकसितसुवरनकमलदुति, नखदुति-
मिलि चमकाहिं । तुमपद पदवी जहँ धरो, तहँ
सुर कमल रचाहिं ॥३६॥ ऐसी महिमा तुमविषै,

और धरै नहिं कोय। सूरजमैं जो जोत है, नहिं तारागण होय ॥ ३७ ॥

षट्पद—मदअवलिप्तकपोल-मूल अलिकुल झंकारैं। तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत-अति धारैं ॥ कालवरन विकराल, कालवत सन मुख आवै। ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै ॥ देखि गयंद न भय करै तुम पदमहि-मा छीन। विपतिरहित संपतिसहित, वरतैं भक्त अदीन ॥ ३८ ॥ अति मदमत्तगयंद कुंभ-थल नखन विदारै। मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै ॥ बांकी दाढ विशाल, वदनमें रसना लोलै। भीमभयानकरूप देखि जन थर-हर डोलै ॥ ऐसे मृगपति पगतलैं, जो नर आयो होय। शरण गये तुम चरणकी, बाधा करै न सोय ॥३९॥ प्रलयपवनकर उठी आग जो तास पटंतर। बमैं फुलिंग शिखा उतंग परजलैं निरं-तर ॥ जगत समस्त निगल्ल भस्मकर हैगी मानों तडतडाट दवअनल, जोर चहुंदिशा उठानों ॥

सो इक छिनमें उपशमैं, नामनीर तुम लेत।
होय सरोवर परिनमै विकसित कमल समेत ॥
॥४०॥ कोकिलकंठसमान, श्याम तन क्रोध ज-
लंता। रक्तनयन फुंकार, मार विषकण उगलंता॥
फणको ऊंचो करै, वेग ही सन्मुख धाया। तब
जन होय निशंक, देख फणिपतिको आया॥ जो
चांपै निज पगतलैं, व्यापै विष न लगार। नाग-
दमनि तुम नामकी है जिनके आधार ॥४१॥
जिस रनमाहिं भयानक रवकर रहे तुरंगम।
घनसे गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम॥
अति कोलाहलमाहिं बात जहँ नाहिं सुनीजे।
राजनको परचंड, देख बल धीरज छीजे॥ नाथ
तिहारे नामतें सो छिनमांहि पलाय। ज्यों दिन-
कर परकाशतें अंधकार विनशाय ॥४२॥ मारै
जहां गयंद कुंभ हथियार विदारै। उमगै रुधिर
प्रवाह वेग जलसम विस्तारै॥ होय तिरन अस
मर्थ महाजोधा बलपूरे। तिस रनमें जिन तोर
भक्त जे हैं नर सूरे॥ दुर्जय अरिकुल जीतके,

जय पावैं निकलंक। तुम पद पंकज मन बसै ते नर सदा निशंक ॥४३॥ नक्र चक्र मगरादि मच्छकरि भय उपजावै। जामैं बडवा अग्नि दाहतैं नीर जलावै॥ पार न पावै जास थाह नहिं लहिये जाकी। गरजै अतिगंभीर, लहरकी गिनति न ताकी॥ सुखसों तिरै समुद्रको, जे तुमगुनसुमराहिं। लोलकलोलनके शिखर, पार यान ले जाहिं ॥४४॥ महा जलोदर रोग, भार पीडित नर जे हैं। वात पित्त कफ कुष्ट आदि जो रोग गहै हैं॥ सोचत रहैं उदास नाहिं जीवनकी आशा। अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गंधि निवासा॥ तुम पदपंकजधूलको, जो लावैं निज अंग। ते नीरोग शरीर लहि, छिनमें होय अनंग॥ ४५॥ पांव कंठतें जकर बांध सांकल अति भारी। गाढी बेडी पैरमांहि, जिन जांघ विदारी॥ भूख प्यास चिंता शरीर दुख जे विललाने। सरन नाहिं जिन कोय भूपके बंदीखाने॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही

बंधन सब खुल जाहिं। छिनमें ते संपाति लहैं, चिंता भय विनसाहिं ॥ ४६ ॥ महामत्त गजराज और मृगराज दवानल। फणपाति रणपरचंड नीरानिधि रोग महाबल॥ बंधन ये भय आठ डरपकर मानों नाशै। तुम सुमरत छिनमाहिं अभय थानक परकाशै ॥ इस अपार संसारमैं शरन नहीं प्रभु कोय। यातैं तुम पदभक्तको भक्ति सहाई होय ॥४७॥ यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सँवारी। विविधवर्णमय पुहुप गूँथ मैं भक्ति विथारी ॥ जे नर पोहर कंठ भावना मनमैं भावैं। मानतुंग ते निजाधीन शिवलछमी पावैं ॥ भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित हेत। जे नर पढैं सुभावसों, ते पावैं शिवखेत ॥ ४८ ॥ इति।

। मोक्षशास्त्रं ।

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृतां।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वंदे तद्गुणलब्धये ॥

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं नवपदसहितं जीवषट्कायलेश्याः।
पंचान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगतिज्ञानचारित्रभेदाः ॥
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः।
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥
सिद्धे जयप्पसिद्धे, चउविहाराहणाफलं पत्ते।
वंदित्ता अरहंते, वोच्छं आराहणा कमसो ॥ २ ॥
उज्जोवणमुज्जवणंणिव्वाहणं साहणं च णिच्छरणं।
दंसणणाणचरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥ ३ ॥

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं ॥ २ ॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्रवबंधसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वं ॥४॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥ ५ ॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणास्थितिविधानतः ॥७ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालांतरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानं ॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्ये परोक्षं ॥११॥

प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिंताभिनिबोध इत्यनर्थांतरं ॥ १३ ॥ तदिंद्रियानिंद्रियनिमित्तं ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणां ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यंजनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिंद्रियाभ्यां ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदं ॥ २० ॥ भवप्रत्ययोवधिर्देवनारकाणां ॥ २१ ॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणां ॥ २२ ॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनंतभागे मनःपर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसम-

भिरूढैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशातित्रिभेदा यथाक्रमं ॥ २ ॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥ ६ ॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगो लक्षणं ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥ समनस्कामनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥ द्वींद्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥ पंचेंद्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येंद्रियं ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगो भावेंद्रियं ॥ १८ ॥ स्प-

र्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १९ ॥ स्पर्शरस-
गंधवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिंद्रियस्य
॥२१॥ वनस्पत्यंतानामेकं ॥ २२ ॥ कृमिपि-
पीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥
संज्ञिनःसमनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः
॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहा
जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक्
चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥२९॥ एकं
द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥ संमूर्छनगर्भोपपादा
जन्म ॥३१॥ सचित्तशीतसंवृताःसेतरा मिः
श्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजांडजपो
तानां गर्भः ।३३। देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥
शेषाणां सम्मूर्च्छनं ॥ ३५ ॥ औदारिकवैक्रियि-
काहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं
परं सूक्ष्मं ॥ ३७ ॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्
तैजसात् ॥ ३८ ॥ अनंतगुणे परे ॥ ३९ ॥ अ-
प्रतीघाते ॥ ४० ॥ अनादिसंबंधे च ॥ ४१ ॥
सर्वस्य ॥ ४२ ॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदे-

कर्मभाक्चतुर्थ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमंत्यं ॥४४॥ गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यं ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकं ॥ ४६ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥ तैजसमपि ॥ ४८ ॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥ नारकसंमूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रो द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

रत्नशर्कराबालुकापंकधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनांबुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिपचोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमं ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ४ ॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा स्थितः

॥ ६ ॥ जंबूद्वीपलवणोदादयःशुभनामानो द्वी-
पसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कंभाः पूर्वपूर्वपरिक्षे-
पिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥ तन्मध्येमेरुनाभिर्वृ-
त्तो योजनशतसहस्रविष्कंभो जंबूद्वीपः ॥ ९ ॥
भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः
क्षेत्राणि ॥ १० ॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता
हिमवन्महाहिमवन्निषिधनीलरुक्मिशिखरिणो व-
र्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्य-
रजतहेममयाः ॥ १२ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि-
मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मति-
गिंछकेशरिमहापुंडरीकपुंडरीकाह्रदास्तेषामुपरि
॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कं-
भो ह्रदाः ॥ १५ ॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥
तन्मध्ये योजनं पुष्करं ॥ १७ ॥ तद्द्विगुणाद्विद्वि-
गुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥ तन्निवासि-
न्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्यो-
पमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥ गं-
गासिंधुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकांतासीतासी-

तोदानारीनरकांतासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गंगासिंध्वादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशतिपंचयोजनशताविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहांताः ॥ २५ ॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्यां ॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयाऽवस्थिताः ॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपल्योपमास्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कंभो जंबूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥ द्विर्द्धातकीखंडे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थिती
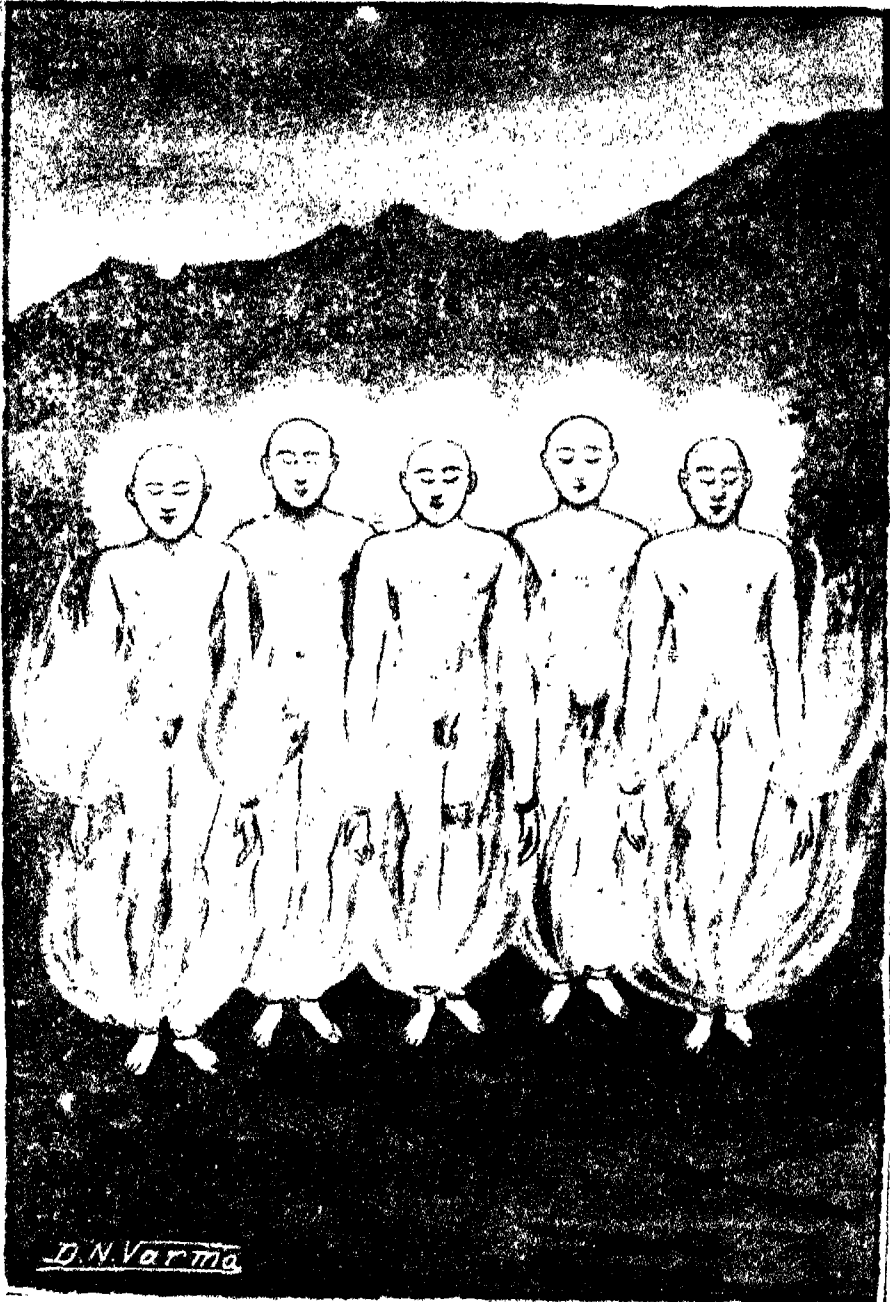
पांचों पाण्डवोंका घोर परीषह द्वारा निर्वाण गमन ।

(पांडव पुराण)

रानी केतुमती अंजनाके संबन्धमें बसन्तमाला पर वार कर रही है। (अंजना नाटक)

परावरे त्रिपल्योपमांतर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितास्त्रिषु पीतांतलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यंताः ॥ ३ ॥ इंद्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यंतरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवनवासिनोसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तानितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ।१०। व्यंतराः किन्नरकिंपुरुषमहोरगगंधर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्याचंद्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥ वहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमा-

निकाः ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशानसानत्कुमार-माहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रश तारसहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयंतजयंतापराजितेषु सर्वार्थ-सिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्या विशुद्धींद्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गति-शरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥ पीत-पद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयके भ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकांतिकाः ॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिता-व्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्विचरमाः ।२६॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ।२७। स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरो पम-त्रिपल्योपमार्धहीनमिताः॥२८॥सौधर्मैशान-योसागरोपमऽधिके।२९। सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपंचदश-भिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेके-

केन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरा पल्योपममधिकं ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानंतराः ॥ ३४ ॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायां ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥ व्यंतराणां च ॥ ३८ ॥ परापल्योपममधिकं ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकांतिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषां ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥ २ । जीवाश्च ।३। नित्यावस्थितान्यरूपाणि ।४। रूपिणः पुद्‌गलाः ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ।६। निष्क्रियाणि च ॥७॥ असंख्येयाः प्रदेशाधर्माधर्मैकजीवानां ॥८॥ आकाशस्यानंताः ॥९॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानां ॥१०॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥१२॥धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिभाज्यः पुद्गलानां । १४ । असंख्येयभागादिषु

जीवानां ॥१५॥ प्रदेश संहारविसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ।१६। गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरुपकारः ।१७। आकाशस्यावगाहः ।१८। शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानां ।१९। सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ।२०। परस्परोपग्रहो जीवानां ॥ २१ ॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगंधवर्णवंतः पुद्गलाः ॥ २३ ॥ शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोऽद्योतवंतश्च ॥ २४ ॥ अणवस्कंधाश्च । २५ । भेदसंघातेभ्य उत्पद्यंते । २६ । भेदादणुः ।२७। भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः । २८ । सद्द्रव्यलक्षणं ॥२९॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत । ३० । तद्भावाव्ययं नित्यं ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ।३२। स्निग्धरूक्षत्वाद्बंधः । ३३ । न जघन्यगुणानां ।३४। गुणसाम्ये सदृशानां ।३५। द्व्यधिकादिगुणानां तु ।३६। बंधेऽधिकौपारिणामिकौ च ।३७। गुणपर्ययवद्द्रव्यं ।३८। कालश्च ।३९। सोऽनंतसमयः ।४०। द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः

। ४१ । तद्भावः परिणामः । ४२ ।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनःकर्मयोगः ॥१॥ स आस्रवः ॥२॥ शुभःपुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः सांपरायिकेर्यापथयोः ॥४॥ इंद्रियकषायाव्रतक्रियाः पंच चतुः पंच पंचविंशतिसंख्याः पूर्वस्यभेदाः ॥५॥ तीव्रमंदज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ।६॥ अधिकरणं जीवाजीवाः॥ ७ ॥ आद्यं संरंभसमारंभारंभयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ।८। निर्वतनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परं ।९। तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावर्णयोः ॥ १० ॥ दुःखशोकतापाक्रंदनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतवृत्यनुकंपादानसरागसंयमादियोगः क्षांतिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारि-

त्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारंभपरिग्रहत्वं नारकस्या-
युषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पा-
रंभपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभावमार्दवं च
॥१८॥ निःशीलव्रतित्वं च सर्वेषां ॥१९॥ सरा-
गसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दै-
वस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता-
विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं
शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शी-
लव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ श-
क्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणम-
र्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणि-
र्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्व-
स्य ॥२४॥ परात्मनिंदाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छा-
दनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो
नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरण-
मंतरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतं ॥१॥

देशसर्वतोणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावना पंच पंच ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्या-लोकितपानभोजनानि पंच ॥४॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच ॥५॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धिसद्धर्माविसंवादाः पंच ॥ ६ ॥ स्त्रीराग-कथाश्रवणतन्मनोहरांगनिरीक्षणपूर्वरतानुस्म-रणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेंद्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनं ॥९॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्य-स्थ्यानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनियेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थं ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधानमनृतं ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयं ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदंडविरति-

सामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणा
तिथिसंविभागव्रतसंपन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणांति
कीं सल्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥ शंकाकांक्षावि-
चिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरती-
चाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषु पंच पंच यथा-
क्रमं ॥२४॥ बंधवधच्छेदातिभारारोपणान्नपान-
निरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूट-
लेखक्रियान्यासापहारसाकारमंत्रभेदाः ॥ २६ ॥
स्तेन प्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमही-
नाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥
परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीताग-
मनानंगक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षे-
त्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमा-
णातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्र-
वृद्धिस्मृत्यंतराधानानि ॥ ३० ॥ आनयनप्रेष्य-
प्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥३१॥ कंदर्प
कौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभो-
गानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥ योगदुःप्रणिधाना-

नादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्तसंबंधसंमिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्य्यकालातिक्रमाः ॥३६॥ जीवितमरणा शंसामित्रानुरागसुखानुबंधनिदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानं ॥३८। विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः।३९।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बंधहेतवः ॥ १ ॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स बंधः ॥ २ ॥ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रांतरायाः ॥ ४ ॥ पंचनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमं ॥ ५ ॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानां ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धय-

श्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शनचारित्रमोह-
नीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडश-
भेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ
हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदा
अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनवि-
कल्पाश्चैकशःक्रोधमानमायालोभाः ॥९॥ नार-
कतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥१०॥ गतिजातिश-
रीरांगोपांगनिर्माणबंधनसंघातसंस्थानसंहनन-
स्पर्शरसगंधवर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघातपरघातात-
पोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रस-
सुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्ति-
सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नीचैश्च
॥ १२ ॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणां ॥१३॥
आदितस्तिसृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-
कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोह-
नीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥
त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा
द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्र-

योरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामंतर्मुहूर्ता ॥ २० ॥ विपाकोनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥२२ ॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्म-प्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्वेद्यशुभायु-र्नामगोत्राणि पुण्यं ।२५। अतोऽन्यत्पापं ।२६॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

आश्रवनिरोधः संवरः ॥ १॥ सगुप्तिसमिति-धर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥४॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमत-पस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्माः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवर-निर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्वानुचिं-तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं प-रिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतो-ष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्या-

क्रोशवधयाच्ञालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥ सूक्ष्मसांपरायच्छद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥ ११ ॥ बादरसांपराये सर्वे ॥ १२ ॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहांतराययोरदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाच्ञासत्कार पुरस्काराः ॥ १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः ॥ १७ ॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसांपराययथाख्यातमिति चारित्रं ॥१८॥ अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरं ॥ २० ॥ नवचतुर्दशपंचाद्विभेदायथाक्रमं प्राग्ध्यानात्॥२१॥आलोचनाप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः।२२। ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपा-

ध्यायतपस्विशैक्ष्यग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञा-
नां ॥ २४ ॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मो-
पदेशाः ॥ २५ ॥ बाह्याभ्यंतरोपध्योः ॥ २६ ॥
उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिंतानिरोधो ध्यानमांतमु-
हूर्तात् ॥ २७ ॥ आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥
परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे
तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विप-
रीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥
निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्त-
संयतानां ॥ ३४ ॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणे-
भ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥ ३५ ॥ आज्ञा-
पायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यं ॥ ३६ ॥ शुक्ले
चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥ परे केवलिनः
॥ ३८ ॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-
व्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥ ३९ ॥ त्र्येकयोगका-
ययोगायोगानां ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्कवी-
चारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयं ॥ ४२ ॥ वि-
तर्कः श्रुतं ॥ ४३ ॥ वीचारोर्थव्यंजनयोगसंक्रांतिः

॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानंतवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशांतमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रंथस्नातका निर्ग्रंथाः ॥ ४६ ॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिंगलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतरायक्षयाच्च केवलं ॥ १ ॥ बंधहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनंतरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकांतात् ॥ ५ ॥ पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्बंधच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरंडबीजवदग्निशिखावच्च ॥ ७ ॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥ ८ ॥ क्षेत्रकालगतिलिंगतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनांतरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृतां ।
ज्ञातारं विश्वतत्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

कोटिशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्श्रुतं पंचपदं नमामि ॥ १ ॥

अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥ २ ॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसंधिविवर्जितरेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥३॥

दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुंगवैः ॥ ४ ॥

तत्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्ध्रपिच्छोपलक्षितम् ।
वंदे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ५ ॥

जं सक्कइ तं कीरइ, जं पण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ॥ ६ ॥

तव यरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणम् ।
अंते समाहिमरणं, चउविह दुक्खं णिवारेई ॥ ७ ॥

इति तत्वार्थसूत्रापरनाम तत्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रं समाप्तम् ।

कल्याणमंदिर स्तोत्र

कल्याणमंदिरमुदारमवद्यभेदि भीताभयप्रदम-
निंदितमंघ्रिपद्मं । संसारसागरनिमज्जदशेषजंतु-

पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥ १ ॥ यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमांबुराशेः स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुं । तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतोस्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥२॥ सामान्यतोपि तव वर्णयितुं स्वरूपमस्मादृशाः कथमधीश भवंत्यधीशाः । धृष्टोपि कोशिकशिशुयदि वा दिवांधो रूपं प्ररूपयति किं किल धर्मरश्मेः ॥ ३ ॥ मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत् । कल्पांतवांतपयसः प्रगटोऽपि यस्मान्मीयेत केन जलधेननु रत्नराशिः ॥४॥ अभ्युद्यतोस्मि तव नाथ जडाशयोपि कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य । बालोपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य विस्तीर्णतां कथयति स्वधियांबुराशेः ॥५॥ ये योगिनामपि न यांति गुणास्तवेश वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः । जातातदेवमसमीक्षितकारितेयं जलपंति वा निजगिरा ननु पक्षिणोपि ॥ ६ ॥ आस्तामचिंत्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि

पाति भवतो भवतो जगंति । तीव्रा तपोपहत-
पांथजनान्निदाघे प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनि-
लोपि ॥ ७ ॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिली-
भवंति जंतोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबंधाः ।
सद्यो भुजंगमम या इव मध्यभागमभ्यागते वन-
शिखंडिनि चंदनस्य ॥८॥ मुच्यंत एव मनुजाः
सहसा जिनेंद्र रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षि-
तेऽपि । गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे
चौरैरिवाशुपशवः प्रपलायमानैः ॥९॥ त्वं तार-
को जिन कथं भविनां त एव त्वामुद्वहंति हृदयेन
यदुत्तरंतः । यद्वा दृतिस्तरंतियज्जलमेष नूनमंत-
र्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १० ॥ यस्मि-
न्हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः सोपि त्वया रतिप-
तिः क्षपितः क्षणेन । विध्यापिता हुतभुजः पय-
साथ येन पीतं न किं तदपि दुर्धरवाड़वेन ॥११॥
स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपिप्रपन्नास्त्वां जंतवः
कथमहो हृदये दधानाः । जन्मोदधिं लघु तरंत्य-
तिलाघवेन चिंत्यो न हंत महतां यदि वा प्रभावः

॥ १२ ॥ क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौराः प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥ १३ ॥ त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूपमन्वेषयंति हृदयांबुजकोषदेशे । पूतस्य निर्मल रुचेर्यदि वा किमन्यदक्षस्य संभवपदं ननु कर्णिकायाः ॥ १४ ॥ ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनं क्षणेन देहं विहाय परमात्मदशां व्रजंति । तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥१५॥ अंतः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरं । एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि यद्विग्रहं प्रशमयंति महानुभावाः ॥ १६ ॥ आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या ध्यातो जिनेंद्र भवतीह भवत्प्रभावः । पानीयमप्यमृतमित्यनुचिंत्यमान किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ॥ १७ ॥ त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि नूनं विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ।

किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शंखो नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥१८॥ धर्मोपदेश-समये सविधानुभावादास्तां जनो भवति ते तरु-रप्यशोकः । अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि किंवा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ।१९। चित्रं विभो कथमवाङ्मुखवृंतमेव विष्वक्पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः। त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! गच्छंति नूनमध एव हि बंधनानि ॥ २० ॥ स्थाने गभीरहृदयोदधिसंभवायाः पीयूषतां तव गिरः समुदीरयति । पीत्वा यतः परमसंमदसंगभाजो भव्या व्रजंति तरसाप्यजरामरत्वं ॥२१। स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतंतो मन्ये वदंति शुचयः सुरचामरौघाः। येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुंगवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥२२॥ श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नासिंहा-सनस्थमिह भव्यशिखंडिनस्त्वां । आलोकयंति रभसेन नदंतमुच्चैश्चामीकराद्रिशिरसीव नवांबु-वाहं ॥२३॥ उद्गच्छता तव शितिद्युतिमंडलेन

लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव । सांनिध्यतोपि यदि वा तव वीतराग ! नीरागतां व्रजति को न सचेतनोपि ॥ २४ ॥ भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेनमागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् । एतन्निवेदयाति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुंदुभिस्ते ॥२५॥ उद्द्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ तारान्वितो विधुरयं विहतांधकारः । मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रिधा धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिंडितेन कांतिप्रतापयशसामिव संचयेन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥ २७ ॥ दिव्यस्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबंधान् । पादौ श्रयंति भवतो यदि वापरत्र त्वत्संगमे सुमनसो न रमंत एव ॥२८॥ त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोपि यत्तारयत्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव चित्रं विभो यदसि कर्मविपाकशून्यः

॥ २९ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गतस्त्वं
किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश। अज्ञानव-
त्यपि सदैव कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-
विकासहेतु ॥ ३० ॥ प्राग्भारसंभृतनभांसि र-
जांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्व-
मीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥३१॥ यद्गर्जदूर्जितघ-
नौघमदभ्रभीमभ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारं।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे तेनैव तस्य जिन
दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृ-
ताकृतिमर्त्यमुंडप्रालंबभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवंतमपीरितो यः सोऽस्यभवत्प्र-
तिभवं भवदुःखहेतुः ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव
भवनाधिप ये त्रिसंध्यमाराधयंति विधिवद्विधु-
तान्यकृत्याः। भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः
पादद्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥
अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश मन्ये न मे
श्रवणगोचरतां गतोऽसि। आकर्णिते तु तव

गोत्रपवित्रमंत्रे किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥३५॥ जन्मांतरेऽपि तव पादयुगं न देव मन्ये मया महितमीहितदानदक्षं । तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानां जातो निकेतनमहं मथिताशयानां ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोसि । मर्माविधो विधुरयंति हि मामनर्थाः प्रोद्यत्प्रबंधगतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोपि महितोपि निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया विधृतोसि भक्त्या । जातोस्मि तेन जनबांधव दुःखपात्रं यस्मात्क्रियाः प्रतिफलंति न भावशून्याः ॥३८॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य कारुण्यपुण्यवसते वशिनां वरेण्य । भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय दुःखांकुरोद्दलनतत्परतां विधेहि ॥३९॥ निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्यमासाद्य सादितरिपुप्रथितावदानं । त्वत्पादपंकजमपि प्रणिधानवंध्यो वंध्योस्मि चेद्भुवनपावन हा हतोस्मि ॥ ४० ॥ देवेंद्रवंद्य विदिताखिलव-

स्तुसार संसार तारक विभो भुवनाधिनाथ त्राय स्व देव करूणाह्रद मां पुनीहि सीदंतमद्य भयद व्यसनांबुराशेः ॥४१॥ यद्यस्ति नाथ भवदंघ्रिस-रोरूहाणां भक्तेः फलं किमपि संततसंचितायाः। तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव भुवनेत्र भवांतरेपि ।४२। इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्रसांद्रोल्लसत्पुलककंचुकितांगभागाः त्वद्बिंबनिर्मलमुखांबुजबद्धलक्ष्याः ये संस्तवं तव विभो रचयंति भव्याः ॥४३॥ जननयनकुमुदचंद्रप्रभास्वराः स्वर्गसंपदो भुक्त्वा ते विगलितमलनिचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यंते ॥४४॥

कल्याणमंदिरस्तोत्र भाषा ।

दो०—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।
बंदूं परमानंदमय घटघटअंतरलीन ॥१॥

निर्भय करन परम परधान । भवसमुद्रजलतारन यान ॥ शिवमंदिर अघहरण अनिंद । बंदहु पासचरण अरविंद ॥१॥ कमठमानभंजन वरवीर । गरिमासागर गुनगंभीर । सुरगुरु पार लहैं नहिं

जास । मैं अजान जंपू जस तास ॥२॥ प्रभुस्व-
रूप अति अगम अथाह । क्यों हमसेती होय
निवाह ॥ ज्यों दिन अंध उलूको पोत । कहि न
सकै रवि-किरन-उदोत ॥३॥ मोहहीन जानै म-
नमाहिं । तोहु न तुम गुन वरने जाहिं ॥ प्रलय-
पयोधि करै जल वौन । प्रगटहिं रतन गिनै ति-
हिं कौन ॥४॥ तुम असंख्य निर्मल गुणखान ।
मैं मतिहीन कहूं निज बान ॥ ज्यों बालक निज
बांह पसार । सागर परमित कहै विचार ॥५॥
जे जोगींद्र करहिं तपखेद । तऊ न जानहिं तुम
गुनभेद । भक्तिभाव मुझ मन अभिलाख । ज्यों
पंछी बोलैं निज भाख ॥६॥ तुमजसमहिमा, अ-
गम अपार । नाम एक त्रिभुवन-आधार ॥ आवै
पवन पदमसर होय । ग्रीषमतपत निवारै सो-
य ॥७॥ तुम आवत भविजन घटमाहिं कर्म-
निबंध शिथिल ह्वै जाहिं ॥ ज्यों चंदनतरु बोल-
हिं मोर । डरहिं भुजंग लगे चहुं ओर ॥८॥ तुम
निरखत जन दीनदयाल । संकटतैं छूटैं तत्काल ॥

ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर। ते तज भागहिं देखत भोर ॥ ९ ॥ तू भविजनतारक किमि होहि। ते चितधार तिरहिं ले तोहि। यह ऐसें कर जान स्वभाव तिरहिं मसक ज्यों गर्भित बाव ॥ १० ॥ जिहँ सब देव किये वश बाम। तैं छिनमें जीत्यो सो काम॥ ज्यों जल करै अगनिकुल हान। बडवानल पीवै सो पान॥११॥ तुम अनंत गरवा गुन लिये। क्योंकर भक्ति धरों निज हिये। है लघुरूप तिर.. संसार। यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥ क्रोध निवार कियो मन शांत। कर्मसुभट जीते किहिं भांत। यह पटतर देखहु संसार। नील विरछ ज्यों दहै तुसार ॥ १३ ॥ मुनिजनहिये कमल निज टोहि। सिद्धरूपसम ध्यावहिं तोहि॥ कमलकरणिका विन नहिं और। कमलबीज उपजनकी ठौर ॥ १४ ॥ जब तुव ध्यान धरै मुनि कोय। तब विदेह परमातम होय॥ जैसे धातु शिलातनु त्याग। कनकस्वरूप धवै जब

आग ॥ १५ ॥ जाके मन तुम करहु निवास
विनशि जाय क्यों विग्रह तास ॥ ज्यों महंत
विच आवै कोय । विग्रहमूल निवारै सोय ।१६।
करहिं विबुध जे आतमध्यान । तुम प्रभावतैं
होय निदान ॥ जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत
विषविकारकी हान ॥१७॥ तुम भगवंत विमल
गुणलीन । समलरूप मानहिं मतिहीन ॥ ज्यों
नीलिया रोग दृग गहै । वर्ण विवर्ण शंखसों
कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रहत उपदेश सुन तरुवर भयो
अशोक । ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रगट होत
भुविलोक ॥ १९ ॥ सुमनवृष्टि ज्यों सुर कर-
हिं, हेठ बीठमुख सोहि । त्यों तुम सेवत
सुमनजन बंध अधोमुख होहिं ॥२०॥ उपजी तुम
हिय उदधितैं, वानी सुधा समान ॥ जिहँ पीवत
भविजन लहहिं, अजर अमरपदथान ॥ २१ ॥
कहहिं सार तिहुँ लोककी, ये सुरचामर दोय ।
भावसहित जो जिन नमैं, तिहँगति ऊरध होय

॥२२॥ सिंघासन गिरिमेरुसम, प्रभु धुनि गर-
जत घोर । श्याम सुतनु घनरूप लखि, नाचत
भविजन मोर ॥ २३ ॥ छविहत होत अशोक
दल, तुम भामंडल देख । वीतरागके निकटरह
रहत न राग विसेष ॥ २४ ॥ सीख कहै तिहुँ
लोककों ये सुरदुंदुभिनाद । शिवपथसारथिबा-
हजिन, भजहु तजहु परमाद ॥२५॥ तीन छत्र
त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छविदेत । त्रिविध-
रूप धर मनहु शशि, सेवत नखत समेत ।२६।

पद्धरिछंद–प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम ।
परतापपुंज जिम शुद्ध हेम ॥ अतिधवल सुजस
रूपा समान । तिनके गढ तीन विराजमान
॥ २७ ॥ सेवहिं सुरेंद्र कर नमत भाल । तिन
सीस मुकुट तज देहिं माल ॥ तुमचरणलगत
लहलहै प्रीति । नहिं रमहिं और जन सुमन
रीति ॥ २८ ॥ प्रभु भोगविमुख तन गरमदाह ।
जन पार करत भवजल निवाह ॥ ज्यों माटीकल-
श सुपक्क होय । ले भार अधोमुख तिरहिं तोय

॥ २९ ॥ तुम महाराज निरधन निराश। तज विभव विभव सबजगप्रकाश ॥ अक्षरस्वभाव सुलिखै न कोय। महिमा भगवंत अनंत सोय ॥ ३० ॥ कर कोप कमठ निज वैर देख। तिन करी धूलिवरषा विशेष ॥ प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन। सो भयो पापि लंपट मलीन ॥३२॥ गरजंत घोर घन अंधकार। चमकंत विज्जु जल मुसलधार ॥ बरषंत कमठ धर ध्यान रुद्र। दुस्तर करत निज भव समुद्र ॥ ३३ ॥

वास्तु छंद।

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि। भेजे तुरत पिशाचगण, नाथ पास उपसर्ग कारण। अग्नि जाल झलकंत मुख, धुनिकरत जिमि मत्तवारण। कालरूप विकराल तन, मुंडमाल हित कंठ। है निशंक वह रंकनिज, करै कर्म दृढगंठ ।३४।

चौपाई—जे तुम चरणकमल तिहुँकाल। सेवहिं तज माया जंजाल ॥ भाव भगातिमन हरष अपार। धन्य धन्य जग तिन अवतार ॥३५॥

भवसागरमैं फिरत अजान ॥ मैं तुअ सुजस सुन्यो नहिं कान ॥ जो प्रभुनाममंत्र मन धरै । तासों विपति भुजंगम डरै ॥ ३६ ॥ मनवांछित फल जिनपदमांहिं । मैं पूरव भव पूजे नाहिं ॥ मायागमन फिर्‍यो अज्ञान । करहिं रंकजन मुझ अपमान ॥३७॥ मोहतिमिर छायो दृग मोहि । जन्मांतर देख्यो नहिं तोहि ॥ तौ दुर्जन मुझ संगति गहैं । मरमछेदके कुवचन कहैं ॥ ३८ ॥ सुन्यो कान जस पूजे पाय । नैनन देख्यो रूप अघाय ॥ भक्तिहेतु न भयो चित चाव । दुख दायक किरियाविन भाव ॥३९॥ महाराज शरणागत पाल । पतितउधारण दीनदयाल । सुमिरण करहुं नाय निज शीश । मुझ दुख दूर करहु जगदीश ॥ ४० ॥ कर्मनिकंदनमहिमा सार । अशरणशरण सुजस विसतार ॥ नहिं सेये प्रभु तुमरे पाय । तो मुझ जन्म अकारथ जाय । ४१ । सुरगनवंदित दयानिधान । जगतारण जगपति अनजान ॥ दुखसागरतैं मोहि

निकासि। निर्भयथान देहु सुखरासि ॥ ४२ ॥
मैं तुम चरणकमल गुनगाय। बहुविधि भक्ति करी मनलाय॥ जनमजनम प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ ४३ ॥

दोधकांत बेसरी छंद—षट्पद।

इहविधि श्रीभगवंत, सुजस जे भविजन भाषहिं। ते जिन पुण्यभँडार, संचि चिरपाप प्रणासहिं॥ रोमरोम हुलसंति, अंग प्रभु गुणमन ध्यावहिं। स्वर्ग संपदा भुंज वेग पंचमगति पावहिं॥ यह कल्याणमंदिर कियो, कुमुदचंद्रकी बुद्धि। भाषा कहत 'बनारसी' कारण समकित शुद्ध॥ ४४ ॥

एकीभाव स्तोत्रं।

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबंधो घोरं दुःखं भवभवगतो दुर्निवारः करोति। तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे! भक्तिरुन्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तया कोपरस्तापहेतुः ॥१॥
ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वांतविध्वंसहेतुं त्वामे-

वाहुर्जिनवर चिरं तत्त्वविद्याभियुक्ताः। चेतोवा-
से भवासि च मम स्फारमुद्रासमानस्तस्मिन्नंहः
कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे॥ २॥ आनं-
दाश्रुस्नापितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्यश्चायेत
त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमंत्रैर्भवंतं। तस्याभ्यस्ता-
दपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्निष्कास्यंते वि-
विधविषमव्याधयः काद्रवेयाः॥ ३॥ प्रागेवेह
त्रिदिवभवनादेष्यता भव्यपुण्यात्पृथिवीचक्रं
कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदं। ध्यानद्वारं मम
रुचिकरं स्वांतगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन वपु-
रिदं यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्त्वमसि
भगवन्निर्निमित्तेन बंधुस्त्वय्येवासौ सकलविषया
शक्तिरप्रयत्नीका। भक्तिस्फीतां चिरमधिवस-
न्मामिकां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततः
क्लेशयूथं सहेथाः॥ ५॥ जन्माटव्यां कथमपि
मया देव दीर्घं भ्रमित्वा प्राप्तैवेयं तव नयकथा
स्फारपीयूषवापी। तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूह-
शीते नितांतं निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदा

वोपतापाः ॥६॥ पादन्यासादपि च पुनतो यात्र-
या ते त्रिलोकीं हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनि-
वासश्च पद्मः । सर्वांगेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं
मनो मे श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति
॥७॥ पश्यंतं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिबंतं
कर्मारण्यात्पुरुषमसमानंदधाम प्रविष्टं । त्वां दुर्वा-
रस्मरमदहरं त्वत्प्रसादैकभूमिं क्रूराकाराः कथ-
मिव रुजाकंटका निर्लुठंति ॥ ८ ॥ पाषाणात्मा
तदितरशमः केवलं रत्नमूर्तिमानस्तंभो भवंति
च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिप्राप्तो हरति स कथं
मानरोगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य
तच्छक्तिहेतुः ॥९॥ हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मू-
र्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां निरवधिरुजाधूलि-
बंधं धुनोति । ध्यानाहूतो हृदयकमलं यस्य तु
त्वं प्रविष्टस्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोको-
पकारः ॥ १० ॥ जानासि त्वं मम भवभवे यच्च
यादृक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रव-
न्निष्पिनष्टि । त्वं सर्वेशः, सकृप इति च त्वामु-

पेतोस्मि भक्त्या यत्कर्तव्यं तादिह विषये देव एव प्रमाणं ॥ ११ ॥ प्रापद्दैवं तव नुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोपि सौख्यं । कः संदेहो यदुपलभते वासव श्रीप्रभुत्वं जल्पंजाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रं ॥१२॥ शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखावंचिका कुंचिकेयं। शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढमहामोहमुद्राकवाटं ॥१३॥ प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरंधकारैः समंतात्पंथा मुक्तेः स्थपुटितपदः क्लेशगर्तैरगाधैः। तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासी यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीरत्नदीपः ॥ १४ ॥ आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानंदहेतुः कर्मक्षोणीपटलपिहितो योनवाप्यः परेषां । हस्ते कुर्वंत्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः स्तोत्रैर्बंधप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ॥१५॥ प्रत्युत्पन्ना नयहिमगिरेरायता चामृताब्धेर्या देव त्वत्पादकमलयोः संगता भक्तिगंगा। चेतस्त-

स्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांहः कल्माषं यद्भवति किमियं देव संदेहभूमिः ॥१६॥ प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख त्वामनुध्यायतो मे त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा । मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां दोषात्मानोप्यभिमतफलास्त्वत्प्रसादाद्भवंति ॥ १७ ॥ मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभंगीतरंगैर्वागंभोधिभुवनमखिलं देव पर्येति यस्ते । तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन । व्यातन्वंतः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवंति ॥ १८ ॥ आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः शस्त्रग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वांगेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥ १९ ॥ इंद्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते तस्यैवेयं भवलयकरी श्लाघ्यतामातनोति । त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकांतापतिस्त्वं त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थं ॥ २० ॥ वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वम-

न्येन तुल्यः स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी-
नः क्रमंते । मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्तिपीयूष-
पुष्टास्ते भव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवंति
॥ २१ ॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव
प्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षं ।
आज्ञावश्यं तदपि भुवनं सन्निधिर्वैरहारी क्वैवं-
भूतं भुवनतिलक ! प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥ देव
स्तोतुं त्रिदिवगणिकामंडलीगीतकीर्तिं तोतूर्ति
त्वां सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः । तस्य क्षेमं न
पदमतटो जातु जाहूर्ति पंथास्तत्त्वग्रंथस्मरण-
विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥ चित्ते कुर्वन्नि-
रवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं देव त्वां यः समयनि-
यमादादरेण स्तवीति । श्रेयोमार्गं स खलु सुकृ-
ती तावता पूरयित्वा कल्याणानां भवति विषयः
पंचधा पंचितानां ॥२४॥ भक्तिप्रह्वमहेंद्रपूजित-
पद त्वत्कीर्तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोपि संयम-
भृतः के हंत मंदा वयं । अस्माभिः स्तवनच्छलेन
तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां

स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः ॥२५॥ वादिराज मनु शाब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्यसहायः ॥ २६ ॥

एकीभावस्तोत्र भाषा ।

दोहा ।

वादिराज मुनिराजके, चरणकमल चित लाय ।
भाषा एकीभावकी, करूं स्वपरसुखदाय ॥ १ ॥

रोलाछन्द अथवा "अहो जगत गुरुदेव सुनियो अर्ज हमारी" बीनतीकी चालमें ।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी ।
सो मुझ कर्मप्रबंध करत भव भव दुख भारी ॥
ताहि तिहारी भक्ति जगतरवि जो निरवारै ।
तो अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै ॥१॥
तुम जिन जोतिस्वरूप दुरितअँधियारिनिवारी ।
सो गणेश गुरु कहैं तत्वविद्याधनधारी ॥ मेरे चितघरमाहिं बसौ तेजोमय यावत । पापतिमिर अवकाश तहां सो क्योंकरि पावत ॥ २ ॥ आ-

नँदआँसूवदन धोय तुमसों चित सानै। गदगद सुरसों सुयशमंत्र पढि पूजा ठानैं ॥ ताके बहु-विधि व्याधि व्याल चिरकालनिवासी। भाजैं थानक छोड देहबांबइके वासी ॥ ३ ॥ दिवितैं आवनहार भये भविभागउदयबल। पहलेही सुर आय कनकमय कीय महीतल ॥ मनगृहध्यान-दुवार आय निवसो जगनामी। जो सुवरन तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥ प्रभु सब जगके विनाहेतुबांधव उपकारी। निरावरन सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी ॥ भक्तिरचित ममचित्त सेज नित वास करोगे। मेरे दुखसंताप देख किम धीर धरोगे ॥ ५ ॥ भववनमें चिरकाल भ्रम्यो कछु कहिय न जाई। तुम थुतिकथा-पियूषवापिका भागन पाई ॥ शशि तुषार घन सार हार शीतल नहिं जा सम। करत न्हौन तामाहिं क्यों न भवताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री विहार परिवाह होत शुचिरूप सकल जग। कमलकनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग ॥

मेरो मन सर्वंग परस प्रभुको सुख पावै। अब सो कौन कल्यान जो न दिन दिन ढिग आवै ॥ ७ ॥ भवतज सुखपद बसे काममदसुभट संहारे। जो तुमको निरखंत सदा प्रियदास तिहारे॥ तुमवचनामृतपान भक्तिअंजुलिसों पीवै। तिन्हें भयानक क्रूररोगरिपु कैसे छीवै ॥ ८ ॥ मानथंभ पाषान आन पाषान पटंतर। ऐसे और अनेक रतन दीखें जगअंतर ॥ देखत दृष्टिप्रमान मानमद तुरत मिटावै। जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावै ॥ ९ ॥ प्रभुतन पर्वतपरस पवन उरमें निवहै है। तासों ततछिन सकल रोगरज बाहिर ह्वै है। जाके ध्यानाहूत बसो उरअंबुजमाहीं। कौन जगत उपकारकरन समरथ सो नाहीं ॥ १० ॥ जनमजनमके दुःख सहे सब ते तुम जानो। याद किये मुझ हिये लगें आयुधसे मानों। तुम दयाल जगपाल स्वामि में शरन गही है। जो कछु करनो होय करो परमान वही है ॥ ११ ॥ मरनसमय तुम नाम

मंत्र जीवकतैं पायो। पापाचारी श्वान प्रान तज
अमर कहायो। जो मणिमाला लेय जपै तुम
नाँम निरंतर। इंद्रसंपदा लहै कौन संशय इस
अंतर ॥१२॥ जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि
चारित साधै। अनवधि सुखकी सार भक्ति कूची
नहिं लाधै। सो शिववांछक पुरुष मोक्षपट केम
उघारै। मोह मुहर दिढ करी मोक्ष मंदिरके द्वारै
॥१३॥ शिवपुर केरो पंथ पापतमसो अतिछा
यो। दुखसरूप बहु कूपखाड सों विकट बतायो
स्वामी सुखसों तहां कौन जन मारग लागैं।
प्रभुप्रवचनमणिदीप जोनके आगैं आगैं ॥१४॥
कर्मपटलभूमाहिं दबी आतमनिधि भारी। देखत
अतिसुख होय विमुखजन नाहिं उघारी॥ तुम
सेवक ततकाल ताहि निहचै कर धारै। थुति
कुदालसों खोद बंद भू कठिन विदारै ॥१५॥
स्यादवादगिरि उपजैं मोक्ष सागर लों धाई। तुम
चरणांबुज परस भक्तिगङ्गा सुखदाई। मो चित
निर्मल थयो न्होन रुचिपूरव तामैं। अब वह हो

न मलीन कौन जिन संशय यामें ॥१६॥ तुम शिवसुखमय प्रगट करत प्रभु चिंतन तेरो। मैं भगवान समान भाव यों वरतै मेरो॥ यदपि झूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उपजावै। तुव प्रसाद सकलङ्क जीव वांछित फल पावै॥१७॥ वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै। भंग तरंगिनि विकथवादमल मलिन उथापै॥ मन-सुमेरुसों मथै ताहि जे सम्यग्ज्ञानी। परमामृत सों तृपत होहिं ते चिरलों प्रानी॥१८॥ जो कुदेव छविहीन वसन भूषण अभिलाखै। वैरी सों भयभीत होय सो आयुध राखै॥ तुम सुंदर सर्वङ्ग शत्रु समरथ नहिं कोई। भूषण वसन गदादि ग्रहन काहेको होई॥१९॥ सुरपति सेवा करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी। सो सलाघना लहै मिटै जगसों जगफेरी। तुम भवजलधि जिहाज तोहि शिवकंत उचरिये। तुहीं जगत-जनपाल नाथथुतिकी थुति करिये॥२०॥ वचन जाल जड़रूप आप चिन्मूरति झांई। तातैं थुति

आलाप नाहिं पहुंचै तुम तांई॥ तो भी निर्फल
नाहिं भक्तिरसभीने वायक। संतनको सुरतरु
समान वांछित वरदायक॥२१॥ कोप कभी नहिं
करो प्रीति कबहू नहिं धारो। अति उदास बे-
चाह चित्त जिनराज तिहारो। तदपि आन जग
बहै बैर तुम निकट न लहिये। यह प्रभुता जग
तिलक कहां तुम विन सरदहिये॥२२॥ सुर-
तिय गावैं सुरज सर्वगति ज्ञानस्वरूपी। जो
तुमको थिर होहिं नमैं भविआनँदरूपी। ताहि
छेमपुर चलनवाट बाकी नहिं हो है। श्रुतके
सुमरनमाहिं सो न कबहूं नर मोहै॥२३॥
अतुल चतुष्टयरूप तुमैं जो चितमैं धारै। आद-
रसों तिहुंकालमाहिं जगथुति विस्तारै॥ सो
सुकृत शिवपंथ भक्तिरचना कर पूरै! पंचक-
ल्यानक ऋद्धिपाय निहचै दुख चूरै॥२४॥ अहो
जगतपति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि हारै। तुम
गुनकीर्तनमाहिं कौन हम मंद विचारै॥ थुति
छलसों तुमविषै देव आदर विस्तारै! शिवसुख

पूरनहार कलपतरु यही हमारे॥ २५॥ वादि-
राज मुनितैं अनु, वैयाकरणी सारे। वादिराज
मुनितैं अनु तार्किक विद्यावारे॥ वादिराज
मुनितैं अनु हैं काव्यनके ज्ञाता। वादिराज
मुनितैं अनु हैं भविजनके त्राता॥ २६॥
मूल अर्थ बहुविधिकुसुम, भाषा सूत्र मँझार।
भक्तिमाल भूधर करी करो कंठ सुखकार॥१॥

श्रीधनंजयकविप्रणीतं।

विषापहार स्तोत्रं।

स्वात्मस्थितः सर्वगतः समस्त व्यापारवेदी
विनिवृत्तसंगः। प्रवृद्धकालोप्यजरो वरेण्यः पा-
यादपायात्पुरुषः पुराणः॥ ॥१॥ परैरचिंत्यं युग-
भारमेकः स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः। स्तु-
त्योद्य मेसौ वृषभो न भानोःकिमप्रवेशो विशति
प्रदीपः॥ २॥ तत्याज शक्रः शकनाभिमानं
नाहं त्यजामि स्तवनानुबंधं। स्वल्पेन बोधेन
ततोधिकार्थं वातायनेनेव निरूपयामि॥ ३॥
त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो विद्वानशेषं निखि-

लैरवेद्यः । वक्तुं कियान्कीदृशमित्यशक्यः स्तु-
तिस्ततो शक्तिकथा तवास्तु ॥ ४ ॥ व्यापीडितं
बाल मिवात्मदोषैरुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वं ।
हिताहितान्वेषणमांद्यभाजः सर्वस्य जंतोरसि
बालवैद्यः ॥ ५ ॥ दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा
नद्यश्व इत्यच्युतदर्शिताशः । सव्याजमेवं गमय-
त्य शक्तः क्षणेन दत्सेभिमतं नताय ॥६॥ उपैति
भक्त्या सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च
दुःखं । सदावदातद्युतिरेकरूपस्तयोस्त्वमादर्श
इवावभासि ॥७ ॥ अगाधताब्धेः स यतः पयो
धिर्मेरोश्च तुंगाप्रकृतिः स यत्रः । द्यावा पृथिव्यो
पृथुता तथैव व्याप त्वदीया भुवनांतराणि ॥८॥
तवानवस्था परमार्थतत्त्वं त्वया न गीतः पुनरा-
गमश्च । दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीर्विरुद्धवृत्तोऽपि
समंजसस्त्वं ।९॥ स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्नु-
द्धूलितात्मा यदि नाम शंभुः।अशेत वृंदोपहतोपि
विष्णुः किं गृह्यते येन भवानजागः ॥१०॥ स नीर-
जाः स्यादपरोघवान्वा तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वं

स्वतोंबुराशेर्महिमा न देव स्तोकापवादेन जला-
शयस्य ॥ ११ ॥ कर्मस्थितिं जंतुरनेकभूमिं नय-
त्यमुं सा च परस्परस्य । त्वं नेतृभावं हि तयो-
र्भवाब्धौ जिनेंद्र नौनाविकयोरिवाख्यः ॥ १२ ॥
सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्धर्माय पापानि
समाचरंति । तैलाय बालाः सिकतासमूहं निपी-
डयंति स्फुटमत्वदीयाः ॥१३॥ विषापहारं मणि-
मौषधानि मंत्रं समुद्दिश्य रसायनं च । भ्राम्यंत्यहो
न त्वमतिस्मरंति पर्यायनामानि तवैव तानि
॥१४॥ चित्ते न किंचित्कृतवानसि त्वं देवः कृत-
श्चेतसि येन सर्वं । हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं
सुखेन जीवत्यपि चित्तवाह्यः ॥१५॥ त्रिकालतत्त्वं
त्वमवैस्त्रिलोकीस्वामीति संख्यानियतेरमीषां ।
बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यंस्तेन्येपि चेद्व्याप्स्य-
दमूनपीदं ॥१६॥ नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं
नागम्यरूपस्य तवोपकारि । तस्यैव हेतुः स्वसुख-
स्य भानोरुद्बिभ्रतश्छत्रमिवादरेण ।१७। क्वोपेक्ष-
कस्त्वं क्व सुखोपदेशः स चेत्किमिच्छाप्रतिकूल-

वादः। क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वं तन्नो यथात
थ्यमवेविजं ते ॥१८॥ तुंगात्फलं यत्तदकिंचनाच्च
प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः। निरंभसोप्युच्चतमा-
दिवाद्रेर्नैकापि निर्याति धुनीपयोधेः ॥ १९ ॥
त्रैलोक्यसेवानियमाय दंडं दध्रे यदिंद्रो विनयेन
तस्य। तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं तत्कर्मयोगा-
द्यदि वा तवास्तु ॥ २० ॥ श्रिया परं पश्यति
साधु निःस्वः श्रीमान्नकश्चित्कृपणं त्वदन्यः।
यथा प्रकाशस्थितमंधकारस्थायीक्षतेऽसौ न तथा
तमःस्थं ॥ २१ ॥ स्व वृद्धिनिःश्वासनिमेषभाजि
प्रत्यक्षमात्मानुभवेपि मूढः। किं चाखिलज्ञेयविव
र्तिबोधस्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः॥२२॥ तस्या-
त्मजस्तस्य पितेति देव त्वां येवगायंति कुलं प्रका-
श्य। तेद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं पाणौ कृतं हेम
पुनस्त्यजंति ॥ २३ ॥ दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोभि-
भूताः सुरासुरास्तस्य महान्स लाभः। मोहस्य
मोहस्त्वयि को विरोद्धुर्मूलस्य नाशो बलवद्वि-
रोधः ॥ २४ ॥ मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेश्चतु

गतीनां गहनं परेण। सर्वं मया दृष्टिमिति स्मयेन त्वं मा कदाचिद्भुजमालु लोके ॥ २५ ॥स्वर्भानुरर्कस्य हविर्भुजोंभः कल्पांतवातोंबुनिधेर्विघात संसारभोगस्य वियोगभावो विपक्षपूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये ॥२६॥ अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्त ज्जानतोन्यं न तु देवतेति। हरिन्मणिं काचधिया दधानस्तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ॥२७॥ प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैर्दग्धस्य देवव्यवहारमाहुः। गतस्य दीपस्य हि नंदितत्वं दृष्टं कपालस्य च मङ्गलत्वं ॥२८॥ नानर्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः। निर्दोषतां के न विभावयंति ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ॥ २६ ॥ न क्वापि वाञ्छां ववृते च वाक्ते काले क्वचित्कोपि तथा नियोगः। न पूरयाम्यंबुधिमित्यदंशुः स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ॥ ३० ॥ गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना बहुप्रकारा बहवस्त वेति। दृष्टोयमंतः स्तवने न तेषां गुणो गुणानां किमतः परोस्ति ॥ ३१ ॥ स्तुत्या परं नाभिमतं

हि भक्त्या स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि। स्म-
रामि देवं प्रणमामि नित्यं केनाप्युपायेन फलं हि
साध्यं ॥ ३२॥ ततस्त्रिलोकीनगराधिदेवं नित्यं
परं ज्योतिरनंतिशक्तिं। अपुण्यपापं परपुण्य-
हेतुं नमाम्यहं वंद्यमवंदितारं ॥ ३३ ॥ अशब्द-
मस्पर्शमरूपगंधं त्वां नीरसं तद्विषयावबोधं।
सर्वस्यमातारममेयमन्यौर्जिनेंद्रमस्मार्यमनुस्मरामि
॥ ३४ ॥ अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं निष्किंचनं
प्रार्थितमर्थवद्भिः। विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं पतिं
जिनानां शरणं व्रजामि ॥ ३५॥ त्रैलोक्यदीक्षा
गुरवे नमस्ते यो वर्द्धमानोपि निजोन्नतोभूत्।
प्राग्गंडशैलः पुनद्रिरकल्पः पश्चान्न मेरुः कुलप-
र्वतोभूत्॥३६॥ स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा न
बाध्यता यस्य न बाधकत्वं। न लाघवं गौरव-
मेकरूपं वंदे विभुं कालकलामतीतं ॥३७॥ इति
स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्वरं न याचे त्वमुपेक्षको-
सि। छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्कश्छायया
याचितयात्मलाभः ॥ ३८ ॥ अथास्ति दित्सा

यदि वोपरोधस्त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिं। करिष्यते देव तथा कृपां मे को वात्म पोष्ये सुमुखो न सूरिः ॥३९॥ वितरति विहिता यथाकथंचिज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः। त्वयि नुति विषया पुनर्विशेषाद्दिशति सुखानि यशो 'धनंजयं' च ॥४०॥ इति ॥

। विषापहार भाषा ।

दोहा—नमो नाभिनंदन बली, तत्त्वप्रकाशनहार।
तुर्यकालकी आदिमें, भये प्रथम अवतार ॥१॥

काव्य वा रोलाछंद।

निज आतममें लीन ज्ञानकरि व्यापत सारे।
जानत सब व्यापार संग नहिं कछू तिहारे॥
बहुत कालके हो पुनि जरा न देह तिहारी।
ऐसे पुरुष पुरान करहु रछ्या जु हमारी॥ १॥
परकरिकैं जु अचिंत्य भार जुगको अतिभारे।
सो एकाकी भयो वृषभ कीनों निसतारो॥
करि न सके जोगिंद्र तवन मैं करिहौं ताको।

१ स्तवन।

भानु प्रकाश न करै दीप तमहरै गुफाको ॥२॥
स्तवनकरनको गर्भ तज्यो सक्री बहु ज्ञानी।
मैं नहिं तजौं कदापि स्वल्पज्ञानी शुभध्यानी ॥
अधिक अर्थकों कहूं यथाविधि बैठि झरोकै।
जालांतरधरि अक्ष[1] भूमिधरकों[2] जु विलोकै॥३॥
सकल जगतकों देखत अर सबके तुम ज्ञायक।
तुमकों देखत नाहिं नाहिं जानत सुखदायक॥
हौ किसाक तुम नाथ और कितनाक बखानै।
तातैं थुति नहिं बनै असक्ती भये सयानै ॥४॥
बालकवत निजदोषथकी इहलोक दुखी अति।
रोगरहित तुम कियो कृपाकरि देव भुवनपति॥
हित अनहितकी समझिमांहि हैं मंदमती हम।
सब प्राणिनके हेत नाथ तुम बालवैद सम॥५॥
दाता हरता नाहिं भानु सबको बहकावत।
आजकालके छलकरि नितप्रति दिवस गुमा-
वत॥ हे अच्युत जो भक्त नमें तुम चरनकमल
कों। छिनक एकमें आप देत मनवांछित फल-

---

१ आंख। २ पहाड़को।

कों ॥६॥ तुमसों सन्मुख रहै भक्तिसौं सो सुख पावै। जो सुभावतैं विमुख आपतैं दुखहि बढावै। सदा नाथ अवदात एकद्युतिरूप गुसांईं। इन दोन्योंके हेत स्वच्छ दरपणवत झांईं ॥७॥ है अगाध जलनिधी समुद्जल है जितनौ ही। मेरू तुंगसुभाव सिखरलौं उच्च भन्यो ही॥ वसुधा अर सुरलोक एहु इसभांति सई है। तेरी प्रभुता देव भुवनिकूं लंघि गई है ॥ ८ ॥ है अनवस्थाधर्म परम सो तत्त्व तुमारे। कह्यो न आवागमन प्रभू मतमांहिं तिहारे॥ दृष्ट पदारथ छांडि आप इच्छति अदृष्टकों। विरुधवृत्ति तव नाथ समंजस होय सृष्टकों ॥ ९॥ कामदेवको किया भस्म जगत्राता थे ही। लीनी भस्म लपेटि नाम संभू निजदेही॥ सूतो होय अचेत विष्णु वनिताकरि हार्‍यो। तुमकों काम न गहै आप घट सदा उजार्‍यो ॥ १० ॥ पापवान वा पुन्यवान सो देव बतावै। तिनके औगुन कहै नाहिं तू गुणी कहावै॥ निज सुभावतैं अंबुराशि

निज महिमा पावैं । स्तोक सरोवर कहे, कहा उपमा बढि जावै ॥ ११ ॥ कर्मनकी थिति जंतु अनेक करै दुखकारी । सो थिति बहु परकार करै जीवनकी ख्वारी ॥ भवसमुद्रके मांहि देव दोन्योंके साखी । नाविक नाव समान आप वा-णीमैं भाखी ॥१२॥ सुखकौं तो दुख कहै गुण-नकूं दोष विचारै । धर्मकरनके हेत पाप हिरदै-विच धारै ॥ तेल निकासन काज धूलिकों पेलै घानी । तेरे मतसों बाह्य इसे जे जीव अज्ञानी ॥१३॥ विष मोचै ततकाल रोगकौं हरै ततच्छन । मणि औषधी रसांण मंत्र जो होय सुलच्छन ॥ ए सब तेरे नाम सुबुद्धी यों मन धरिहैं । भ्रमत अपरजन वृथा नहीं तुम सुमिरन करिहैं ॥१४॥ किंचित भी चितमाहिं आप कछु करो न स्वामी । जे राखैं चितमाहिं आपकों शुभपरिणामी ॥ हस्तामलवत लखैं जगतकी परिणति जेती । तेरे चितके बाह्य तोउ जीवैं सुखसेती ॥ १५ ॥ तीनलोक तिरकालमाहिं तुम जानत सारी ।

स्वामी इनकी संख्या थी तितनीहिं निहारी ॥ जो लोकादिक हुते अनंते साहिब मेरा। तेऽपि झलकते आनि ज्ञानका ओर न तेरा ॥ १६ ॥ है अगम्य तवरूप करै सुरपति प्रभु सेवा। ना कछु तुम उपकार हेत देवनके देवा ॥ भक्ति निहारी नाथ इंद्रके तोषित मनको। ज्यों रवि सन्मुख छत्र करै छाया निज तनको ॥१७॥ वीत रागता कहां कहां उपदेश सुखाकर। सो इच्छाप्रतिकूल वचन किम होय जिनेसर। प्रतिकूली भी वचन जगतकूं प्यारे अतिही। हम कछु जानी नाहिं तिहारी सत्यासतिही ॥ १८ ॥ उच्चप्रकृति तुम नाथ संग किंचित न धरनतें। जो प्रापति तुमथकी नाहिं सो धनेसुरनतें ॥ उच्चप्रकृति जलविना भूमिधर धुनी प्रकासै। जलधि नीरतें भन्यो नदी ना एक निकासै ॥१९॥ तीनलोकके जीव करो जिनवरकी सेवा। नियमथकी करदंड धन्यो देवनके देवा ॥ प्रातिहार्य तौ बनै इंद्रके बनै न तेरे। अथवा तेरे बनें तिहारे निमित

परेरे ॥ २० ॥ तेरे सेवक नाहिं इसे जे पुरुषहीन धन। धनवानोंकी ओर लखत वे नाहिं लखतपन जैसें तमथिति किये लखत परकासथितीकूं। तैसें सूझत नाहिं तमथिति मंदमतीकूं ॥२१॥ निज वृध स्वासोच्छ्वास प्रगट लोचन टमकारा। तिनकों वेदत नाहिं लोकजन मूढ विचारों॥ सकल ज्ञेय ज्ञायक जु अमूरति ज्ञान सुलच्छन। सो किमि जान्यो जाय देव तव रूप विचच्छन ॥२२॥ नाभिरायके पुत्र पिता प्रभु भरततने हैं। कुलप्रकाशिकैं नाथ तिहारो तवन भनै हैं॥ ते लघुधी असमान गुननकौं नाहिं भजे हैं। सुवरन आयो हाथि जानि पाषान तजे हैं॥२३॥ सुरासुरनको जीति मोहने ढोल बजाया। तीनलोकमें किये सकल वशि यों गरभाया॥ तुम अनंत बलवंत नाहिं ढिग आवन पाया। करि विरोध तुमथकी मूलतैं नाश कराया॥२४॥ एक मुक्तिका मार्ग देव तुमने परकास्या। गहन चतुरगतिमार्ग अन्य देवनकूं भास्या॥ 'हम सब देखनहार' इसीविधि

भाव सुमिरिकैं। भुज न विलोको नाथ कदाचित गर्भ जु धरिकैं ॥२५॥ केतुविपच्छी अर्कतनो फुनि अग्नितनो जल। अंबुनिधीअरि प्रलय कालको पवन महाबल ॥ जगतमांहिं जे भोग वियोग विपच्छी हैं निति। तेरो उदयो है विपंच्छतैं रहित जगतपाति ॥ २६ ॥ जाने विन हू नवत आपकों जो फल पावै। नमत अन्यको देव जानि सो हाथ न आवै ॥ हरित मणीकूं काच, काचकूं मणी रटत है ॥ ताकी बुधिमें भूल, मूल्य माणिको न घटत है ॥२७॥ जे विवहारी जीव वचनमैं कुशल सयाने। ते कषायकरि दग्ध नरनकों देव बखानैं॥ ज्यों दीपक बुझि जाय ताहि कह 'नांदि' भयो है। भग्न घडेको कहैं कलस ए मँगल गयो है ॥ २८ ॥ स्यादवाद संजुक्त अर्थको प्रगट बखानत। हितकारी तुम वचन श्रवनकरि को नहिं जानत॥ दोषरहित ए देव शिरोमणि वक्ता जगगुरु। जो ज्वरसेती मुक्त भयो सो कहत सरल सुर॥

॥२९॥ विन वांछा ए वचन आपके खिरैं कदाचित । है नियोग ए कोपि जगतको करत सहजहित ॥ करै न वांछा इसी चंद्रमा पूरों जलनिधि । सीतरश्मिकूं पाय उदधि जल बढ़ै स्वयंसिधि ॥ ३० ॥ तेरे गुण गंभीर परम पावन जगमाईं । बहुप्रकार प्रभु हैं अनंत कछु पार न पाई ॥ तिन गुणानको अंत एक याही विधि दीसै। ते गुण तुझ ही मांहि औरमैं नाहिं जगीसै ॥ ॥३१॥ केवल थुति ही नाहिं भक्तिपूर्वक हम ध्यावत । सुमरन प्रणमन तथा भजनकर तुम गुण गावत ॥ चितवन पूजन ध्यान नमनकरि नित आराधैं । को उपावकरि देवसिद्धिफलको हम साधैं ॥ ३२ ॥ त्रैलोकी नगराधि देव नित ज्ञानप्रकाशी । परमज्योति परमातमशक्ति अनंती भासी ॥ पुन्य पापतें रहित पुन्यके कारण स्वामी । नमों नमों जगवंद्य अवंद्यक नाथ अकामी ॥ ३३ ॥ रस सुपरस अर गंध रूप नहिं शब्द तिहारे । इनिके विषय विचित्र भेद सब

जाननहारे। सब जीवनप्रतिपाल अन्यकरि हैं अगम्यगन। सुमरनगोचर नाहिं करौं जिन तेरो सुमिरन ॥ ३४ ॥ तुम अगाध जिनदेव चित्तके गोचर नाहीं। निःकिंचन भी प्रभू धनेश्वर जाचत साँईं ॥ भये विश्वके पार दृष्टिसों पार न पावै। जिनपति एम निहारि संतजन सरनै आवै ॥ ३५ ॥ नमों नमों जिनदेव जगतगुरु शिक्षादायक। निजगुणसेती भई उन्नती महिमा लायक ॥ पाहनखंड पहार पछैं ज्यों होत और गिर। त्यों कुलपर्वत नाहिं सनातन दीर्घ भूमिधर ॥ ३६ ॥ स्वयं प्रकाशी देव रैन दिनकूं नहिं बाधित। दिवस रात्रि भी छतें आपकी प्रभा प्रकाशित ॥ लाघव गौरव नाहिं एकसो रूप तिहारो। कालकलातें रहित प्रभूसूं नमन हमारो ॥ ३७ ॥ इहविधि बहु परकार देव तव भक्ति करी हम। जाचूं वर न कदापि दीन ह्वै रागरहित तुव ॥ छाया बैठत सहज वृक्षके नीचे ह्वै है। फिर छायाकों जाचत यामैं प्रापति कै है

॥ ३८ ॥ जो कुछ इच्छा होय देनकी तौ उप-
गारी। द्यो बुधि ऐसी करूं प्रीतिसौं भक्ति ति-
हारी। करो कृपा जिनदेव हमारे परि ह्वै तोषित।
सनमुख अपनो जानि कौन पंडित नाहिं पोषित
॥३९॥ यथाकथंचित भक्ति रचै विनयीजन केई
तिनकूं श्रीजिनदेव मनोवांछित फल देही ॥
फुनि विशेष जो नमत संतजन तुमको ध्यावै।
सो सुख जस 'धन-जय' प्रापति ह्वै शिवपद पावै
।४०। श्रावक माणिकचंद सुबुद्धी अर्थ बताया।
सो कवि 'शांतीदास' सुगमकरि छंद बनाया॥
फिरि फिरिकै ऋषिरूपचंदने करी प्रेरणा।
भाषास्तोतर विषापहारकी पढो भविजना।४१।
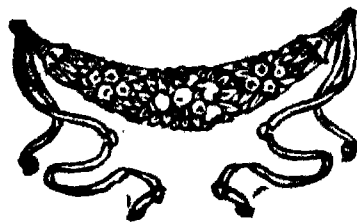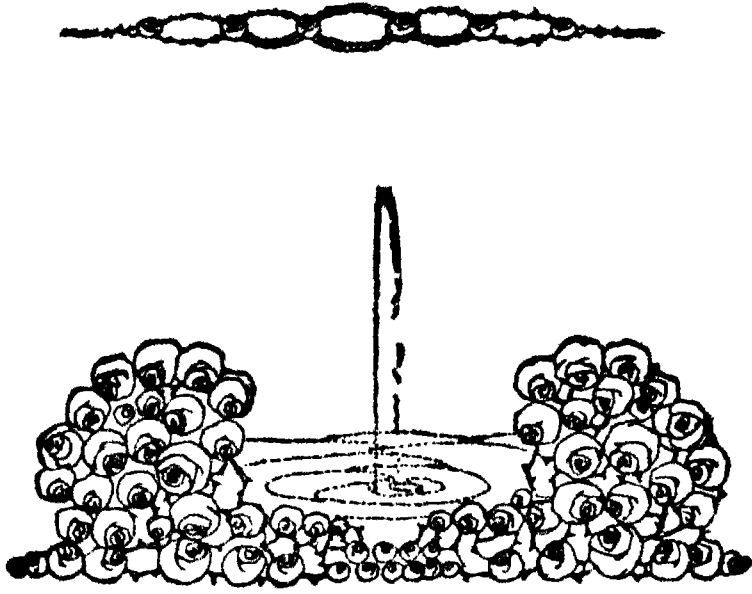
महावीराष्टकस्तोत्र।

शिखरिणी।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोंतरहिताः।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो महा-
वीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः)॥१॥
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं जनान्को-
पापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि। स्फुटं मूर्तिर्यस्य

प्रशमितमयी वातिविमला, महावीर० ॥ २ ॥
नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं लस-
त्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां । भवज्ज्वा-
लाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि, महावीर० ३
यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह क्षणादासी-
त्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः । लभंते सद्भ-
क्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा, महावीर० ॥४॥
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो विचि-
त्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः । अजन्मापि
श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर्, महावीर०
॥ ५ ॥ यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविम-
ला, वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता, महा-
वीर० ॥ ६ ॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम
सुभटः कुमारावस्थायामपि निजवलाद्येन
विजितः । स्फुरन्नित्यानंदप्रशमपदराज्याय स
जिनः महावीर० ॥७॥ महामोहातंकप्रशमनप-
राकस्मिकभिषङ् निरापेक्षो बंधुर्विदितमहिमा

मंगलकरः। शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तम-
गुणो, महावीर० ॥ ८ ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेंदुना कृतं।
यः पठेच्छ्रुणुयाच्चापि स याति परमां गतिं।९।

। मंगलाष्टकं ।

श्रीमन्नम्रसुरासुरेंद्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभाभास्व-
त्पादनखेंदवः प्रवचनांभोधींदवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः
स्तुत्या योगिजनैश्च पंचगुरवः कुर्वंतु ते मंगलम्
॥१॥ सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलंचैत्यालयश्चालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वंतु ते मंगलं।२।
नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशति
श्रीमंतो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश। ये
विष्णुप्रतिविष्णुलांगलधराः सप्तोत्तराः विंशतिः
त्रैकाल्ये प्रथितांस्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वंतु ते मंग-
लं ॥ ३ ॥ देव्योष्टौ च जयादिका द्विगुणिता वि-

द्यादिका देवताः श्रीतीर्थंकरमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा। द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा दिक्पाला दश चैत्यमी सुरगणाः कुर्वंतु ते मंगलं ॥ ४ ॥ ये सर्वौषधऋद्धय सुतपसो वृद्धिं गताः पंच ये ये चाष्टांगमहानिमित्तिकुशला येष्टाविधाश्चारणाः। पंचज्ञानधरास्त्रयोपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः। सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वंतु ते मंगलं ॥ ५ ॥ कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे चंपायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः संमेदशैलेर्हतां। शेषाणामपि चोर्जयंत शिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो। निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वंतु ते मंगलं ॥६॥ ज्योतिर्व्यंतरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा जंबूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु। इष्वाकारगिरौ च कुंडलनगे द्वीपे च नंदीश्वरे शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वंतु ते मंगलं ॥७॥ यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो यो जातः परिनिष्क्र-

मेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् । यः कैवल्यपुर-
प्रवेशमहिमा संभाविनः स्वर्गिभिः कल्याणानि
च तानि पंच सततं कुर्वंतु ते मंगलं ॥ ८ ॥

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसंप-
त्प्रदं कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणा-
मुषः । ये शृण्वंति पठंति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थका-
मान्विता लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाण
लक्ष्मीरपि ॥११॥ इति मंगलाष्टकं ॥

अकलंकस्तुति ।

शार्दूलविक्रीडितछंदः ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालो-
कितं साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं
सांगुलि । रागद्वेषभयामयांतकजरालोलत्वलो-
भादयो नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया
वंद्यते ॥१॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभवा तीव्रा-
र्चिषा वह्निना, यो वा नृत्यति मत्तवात्पितृवने य-
स्मात्मजो वागुहः । सोयं किं मम शंकरो भय-
तृषारोषार्तिमोहक्षयं कृत्वा यः स तु सर्वविज्ञनु-

भृतां क्षेमंकरः शंकरः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येंद्रवक्षःस्थलं सारथ्येन धनंजयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान्। नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतं विश्वं व्याप्य विजृंभते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥ ३ ॥ उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः पात्रीदंडकमंडलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिं। आविर्भावयितुं भवंति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशां क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोषरहितो ब्रह्माकृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥ यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्, कर्ता कर्मफलं न भुंक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथं। यज्ज्ञानं क्षणवर्तिवस्तुसकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धो मम ॥ ५ ॥

स्रग्धरा छंदः।

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यान् नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च। आर्द्राजः

किंत्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मां-
तरायं संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपपशुः
कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री-
सुरयुवतिरसावेशविभ्रांतचेताः शंभुः खट्वां-
गधारी गिरिपतितनयापांगलीलानुविद्धः । वि-
ष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्य मो-
हादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोयमेष्वा-
प्तनाथः ॥ ७ ॥ एको नृत्यति विप्रसार्य कुकुभां
चक्रे सहस्रान्भुजानेकः शेषभुजंगभोगशयनेव्या-
दाय निद्रायते । द्रष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादे-
कश्चतुर्वक्त्रतामेते मुक्तिपथं वदंति विदुषामि-
त्येतदत्यद्भुतं ॥ ८ ॥ यो विश्वं वेद वेद्यं जनन
जलनिधेर्भंगिनः पारदृश्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वच-
नमनुपमं निष्कलंकं यदीयं । तं वंदे साधुवंद्यं
सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषंतं बुद्धं वा वर्द्धमानं
शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥ माया
नास्ति जटाकपालमुकुटं चंद्रो न मूर्द्धावली,
खट्वांगं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं

मुखं । कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः सोऽस्मान्पातु निरंजनो जिनपतिः सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः ॥१०॥ नो ब्रह्मांकितभूतलं न च हरेः शंभोर्न मुद्रांकितं नो चंद्रार्ककरांकितं सुरपतेर्वज्रांकितं नैव च । षड्वक्त्रांकितबौद्धदेवहुतभुग्यक्षोरगैर्नांकितं नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेंद्रमुद्रांकितं ॥ ११ ॥ मौंजीदंडकमंडलुप्रभृतयो नो लांछनं ब्रह्मणो । रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कोपीनखट्वांगना । विष्णोश्चक्रगदादिशंखमतुलं बुद्धस्य रक्तांबरं नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेंद्रमुद्रांकितं ॥१२॥ खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लंबते मुंडमाला भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं । चंद्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषगमनं नैव कंठे फणींद्रः तं वंदे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ॥१३॥ नाहंकारवशी कृतेनमनसा न द्वेषिणा केवलं नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया । राज्ञः श्रीहिम-

शीतलस्य सदासि प्रायोविदग्धात्मनो बौद्धौघा न्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः ॥ १४ ॥ किं वाद्यो भगवानमेयमहिमा देवोऽकलंकः कलौ काले यो जनतासुधर्मनिहितो देवोऽकलंको जिनः। यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरीजालेप्रमेयाकुला निर्मग्ना तनुतेतरां भगवतीतारा शिरःकंपनं ॥ १५ ॥ सा तारा खलु देवता भगवती मन्यापि मन्यामहे षण्मासावधिजाड्यसांख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभोः। वाक्कल्लोलपरंपराभिरमते नूनं मनोमज्जनव्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः संताडितेतस्ततः ॥ इति ॥

पार्श्वनाथस्तोत्र ।

भुजंगप्रयात छंद ।

नरेंद्रं फणींद्रं सुरेंद्रं अधीसं। शतेंद्रं सु पूजें भजें नाय शीशं ॥ मुनींद्रं गणेंद्रं नमों जोडि हाथं नमो देवदेवं सदा पार्श्वनाथं ॥१॥ गजेंद्रं मृगेंद्रं गह्यो तू छुडावे। महा आगतें नागतें तू बचावे ॥ महावीरतें युद्धमें तू जितावे। महा

रोगतैं बंधतैं तू छुडावे ॥ २ ॥ दुखीदुःखहर्ता सुक्खीसुक्खकर्ता। सदासेवकोंको महानंदभर्ता हरे यत्त राक्षस्स भूतं पिशाचं। विषं डांकिनी विघ्नके भय अवाचं। ३। दरिद्रीनको द्रव्यके दान दीने। अपुत्रीनकौं तू भले पुत्र कीने॥ महासंकटोंसे निकारै विधाता। सबै संपदा सर्व को देहि दाता ॥ ४ ॥ महाचोरको वज्रका भय निवारै। महापौनके पुंजतैं तू उबारै ॥ महाक्रोधकी अग्निको मेघ धारा। महालोभ शैलेशको वज्र मारा। ५। महामोह अंधेरको ज्ञान भानं। महाकर्मकांतारको दौं प्रधानं ॥ किये नाग नागिनं अधोलोकस्वामी। हरयो मान तू दैत्यको हो अकामी ॥६॥ तुही कल्पवृत्तं तुही कामधेनं तुही दिव्य चिंतामणी नाग एनं। पशू नर्कके दुःखतैं तू छुडावे। महास्वर्गतैं मुक्तिमैं तू बसावै ॥७॥ करै लोहको हेमपाषाण नामी। रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी॥ करै सेव ताकी करैं देवसेवा। सुनै वैन सोही लहै ज्ञान

मेवा ॥ ८ ॥ जपै जाप ताको नहीं पाप लागै। धरै ध्यान ताके सबै दोष भागै ॥ विना तोहि जाने धरे भव घनेरे। तुम्हारी कृपातैं सरैं काज मेरे ॥ ९ ॥

दोहा—

गणधर इंद्र न कर सकैं, तुम विनती भगवान। 'द्यानत' प्रीति निहारकैं, कीजै आप समान ।१।

भूधरकृत पार्श्वनाथ स्तोत्र ।

दोहा—कर जिनपूजा अष्टविधि, भावभक्ति जिन भाय। अब सुरेश परमेश थुति, करौं शीश निज नाय ॥ १ ॥

चौपाई ॥

प्रभु इस जग समरथ ना कोय। जासों तुम यश वर्णन होय ॥ चार ज्ञानधारी मुनि थकैं। हमसे मंद कहा कर सकैं ॥२॥ यह उर जानत निश्चय हीन। जिनमाहिमावर्णन हम कीन ॥ पर तुम भक्ति थकी वाचाल। तिसवस होय कहूं गुणमाल ॥३॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवन धनी। जय चंद्रोपम चूडामनी ॥ जय जय परम धाम

दातार । कर्मकुलाचल चूरनहार ॥४॥ जय शि-
वकामिनिकंत महंत । अतुल अनंत चतुष्टयवंत ॥
जय जय आशभरण बडभाग । तपलक्ष्मीके
सुभग सुहाग ॥५॥ जय जय धर्मध्वजाधर धीर ।
स्वर्गमोक्ष दाता वरवीर ॥ जय रत्नत्रयरत्नक-
रंड । जय जिन तारण तरण तरंड ॥ ६ ॥ जय
जय समवशरणश्रृंगार । जय संशयवनदहन
तुषार ॥ जय जय निर्विकार निर्दोष । जय अ-
नंत गुणमाणिक कोष ॥ ७ ॥ जय जय ब्रह्म-
चर्यदल साज । काम सुभट विजयी भटराज ॥
जय जय मोहमहातरु-करी । जय जय मदकुं-
जर-केहरी ॥ ८ ॥ क्रोधमहानल-मेघप्रचंड ।
मानमोहधर दामिनिदंड ॥ माया-बेल-धनंजय-
दाह । लोभ सलिलशोषण-दिननाह ॥९॥ तुम
गुणसागर अगम अपार । ज्ञानजहाज न पहुंचै
पार ॥ तट ही तटपर डोलै सोय । कारन सिद्धि
तहां हीं होय ॥१०॥ तुमरी कीर्तिबेल बहु व-
ढी । यत्न विना जगमंडप चढी ॥ अवर कुदेव

सुयस निज चहैं। प्रभु अपने थल ही यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमै विन ज्ञान। कीना मोहमहाविष पान॥ तुम सेवा विषनाशक जरी। तिह मुनिजन मिल निश्चय करी ॥१२॥ जन्म-जरा मिथ्या-मत-मूल। जन्म मरण-लागे तहँ फूल। सो कबहूँ विन भक्ति कुठार। कटै नहीं दुखफलदातार ॥ १३ ॥ कल्पसरोवर चित्रा बेल। कामपोरवा नवनिधि मेल ॥ चिंतामणि पारस पाषान। पुण्यपदारथ और महान ॥१४॥ ये सब एकजन्म-संयोग। किंचित सुखदातार नियोग ॥ त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव, जन्म जन्म सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम जगबांधव तुम जगतात। अशरणशरण विरद विख्यात॥ तुम सब जीवनके रखवाल। तुम दाता तुम परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान। तुम समदर्शी तुम सब जान॥ जय मुनि-यज्ञ-पुरुष परमेश। तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ १७ ॥ तुम जगभर्त्ता तुम जग जान।

स्वामि स्वयंभू तुम अमलान ॥ तुम विन तीन काल तिहुं लोय। नाहीं शरण जीवकों होय ॥ १८ ॥ यातें अब करुणानिधि नाथ। तुम सन्मुख हम जोडें हाथ ॥ जबलों निकट होय निर्वान। जगनिवास छूटै दुखदान ॥१९॥ तबलों तुम चरणांबुज बास। हम उर होय यही अरदास ॥ और न कछु बांछा भगवान। हे दयालु दीजे वरदान ॥ २० ॥

दोहा—इहिविध इंद्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान। निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान ॥ २१ ॥ जीति कर्मरिपु जे भये, केवल लब्धि निवास। सो श्रीपार्श्वप्रभू सदा, करो विघ्नघन नाश ॥
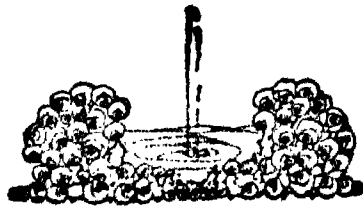
। देवपूजा भाषा ।

प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ॥
तुम-पद-पूजा करत हूं, हमपै करुना होहि ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्र भगवन्! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं अष्टादशदोष-रहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्रभगवन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजि-नेन्द्रभगवन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

बहु तृषा सतायो अति दुख पायो, तुमपै आयो जल लायो। उत्तम गंगाजल, शुचि अतिशीतल प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥ प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो। यह अरज सुनीजे, [illegible]ल न कीजे, न्याय करीजे दया धरो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभग-वद्भ्योजन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

अघ जपत निरंतर, अगनिपटंतर, मो उर अं-

तार खेद करयो। लै बावन चंदन, दाहनिकंदन तुमपदवंदन हरष धरयो॥ प्रभु० ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो चंदनं

औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता बहुत करै। तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीति धरै॥ प्रभु० ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो अक्ष०

सुरनरपशुको दल, काम महाबल, बातकहत छल मोह लिया। ताके शर लाऊं फूल चढाऊं, भक्ति बढ़ाऊं खोल हिया॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो:पुष्पं

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं भूख सदाही, मो लागै। सद घेवर बावर, लाडू बहुधर, थार कनक भर, तुम आगै॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योनैवेद्यं

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावैं। तम मेटनहारा, तेज अपारा. दीप सँवारा. जस गावैं॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योदीपं०

इह कर्म महावन. भूल रह्यो जन. शिवमारग नहिं पावत है। कृष्णागरुधूपं. अमलअनूपं. सिद्धस्वरूपं ध्यावत है॥ प्रभु०॥ ७॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषटचत्वारिंसद्गुणसहितजिनेभ्योऽष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥

सबतैं जोरावर. अंतराय अरि. सुफल विघ्नकरि डारत हैं। फलपुंज विविध भर. नयन मनोहर श्रीजिनवरपद धारत हैं॥ प्रभु॥ ८॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोक्ष-फलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों दुखदानी. आठ निशानी· तुम ढिंग आनि निवारन हो। दीननानिस्तारन. अधम उधारन. 'द्यानत' तारन. कारन हो॥ प्रभु०॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगव-द्भ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ ९॥

जयमाला। दोहा।

गुण अनंत को कहिसकै. छियालीस जिनराय प्रगट सुगुन गिनती कहूं तुम ही होहु सहाय।१।

चौपाई (१६ मात्रा)

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी। दो आगम अ-

ध्यातम नामी ॥ तीन काल विधि परगट जा-
नी । चार अनंतचतुष्टय ज्ञानी ॥२॥ पंच पराव-
र्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥
सातभंगवानी-परकाशक। आठों कर्म महारिपु-
नाशक ॥ ३ ॥ नवतत्त्वनके भाखनहारे । दश
लक्षनसों भविजनतारे ॥ ग्यारह प्रतिमाके उ-
पदेशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥
तेरहविध चारितके दाता । चौदह मारगनाके
ज्ञाता ॥ पंद्रह भेद प्रमाद निवारी। सोलह
भावन फल अविकारी ॥ ५ ॥ तारे सत्रह अंक
भरत भुव । ठारै थान दान दाता तुव ॥ भाव
उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंक गणधर-
जीकी धुन ॥६॥ इकइस सर्वघातविधि जानै ।
बाइस बंध नवम गुणथानै ॥ तेइस निधि अरु
रतन नरेश्वर । सो पूजै चौवीस जिनेश्वर ॥७॥
नाश पचीस कषाय करी हैं। देशघाति छब्बीस
हरी हैं। तत्त्व दरव सत्ताइस देखे । मति विज्ञान
अठाइस पेखे ॥ ८ ॥ उनतिस अंक मनुष सब

जाने । तीस कुलाचल सर्व बखाने । इकतिस
पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समायिक
टारे ॥९॥ तेतिस सागर सुखकर आये । चौंति-
स भेद अलब्धि बताये ॥ पैंतिस अच्छर जप
सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥ १० ॥
सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद
लहि नरक अपुन मैं ॥ उनतालीस उदीरन तेरम ।
चालिस भवन इंद्र पूजें नम ॥ ११॥ इकतालीस
भेद आराधन । उदै वियालिस तीर्थंकर भन ॥
तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवालिस नर
चौथेमहिं ॥ १२ ॥ पैंतालीस पल्यके अच्छर ।
छियालीस विन दोष मुनीश्वर ॥ नरक उदै न
छियालिस मुनिधुन । प्रकृत छियालिस नाश द-
शमगुन ॥१३॥ छियालीस घन राजु सात भुव
अंक छियालिस सरसों कहि कुव । भेद छिया-
लिस अंतर तपवर । छियालीस पूरन गुन जिन-
वर ॥ १४ ॥

आडिल्ल—मिथ्यातपन निवारन चंद समान हो ।

मोहतिमिर वारनको कारन भानु हो ॥
कामकषाय मिटावन मेघ मुनीश हो।
'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो।१५।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

। सरस्वतीपूजा ।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति।
भवसागरसों ले तिरै, पूजे जिनवचप्रीति ॥१॥

ओंह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

छीरोदधिगंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा। भरि कंचन झारी, धार निकारी तृषा निवारी, हितचंगा॥ तीर्थंकरकी धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानमई॥ सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा ।१।

करपूर मँगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी। शारदपद बंदों मन अभिनंदों, पाप-निकंदों. दाह हरी ॥ तीर्थंकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।२।

सुखदास कमोदं. धारकमोदं. अति अनुमोदं चंदसमं। बहुभक्ति बढ़ाई. कीरति गाई. होहु सहाई. मात ममं ॥ तीर्थंकरकी० ॥

ओंह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुफूलसुवासं. विमलप्रकाशं. आनँदरासं लाय धरे। मम काम मिटायो. शील बढायो. सुखउप-जायो दोष हरे ॥ तीर्थंकरकी० ॥

ओं ह्रींश्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पंनिर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

पकवान बनाया. बहुघृतलाया. सब विध भाया. मिष्टमहा। पूजूं थुति गाऊं. प्रीति बढ़ाऊं. क्षुधा नशाऊं. हर्ष लहा ॥ तीर्थंकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दीपक-जोतं. तमछय होतं. ज्योति उदोतं. तुमहिं चढ़े। तुम हो परकाशक. भरमविनाशक

हम घट भासक. ज्ञान बढ़ै ॥ तीर्थंकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर. धूप मनोहर खेवत हैं। सब पाप जलावें, पुण्य कमावें, दास कहावें सेवत हैं॥ तीर्थंकरकी० ॥७॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।७।

बादाम छुहारी- लोंग सुपारी. श्रीफल भारी. ल्यावत हैं। मनवांछित दाता. मेट असाता. तुम गुन माता. ध्यावत हैं॥ तीर्थंकरकी० ॥८॥

ओंह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

नयननसुखकारी. मृदुगुनधारी. उज्ज्वलभारी. मोलधरें। शुभगंधसम्हारा. वसन निहारा. तुम-तन धारा ज्ञान करै॥ तीर्थंकरकी० ॥९॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

जलचंदन अच्छत. फूल चरू चत दीप धूप अति फल लावें। पूजाको ठानत. जो तुम जानत. सो नर द्यानत. सुख पावें॥ तीर्थंकरकी० ।१०।

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१०।

अथ जयमाला । सोरठा—

ओंकार धुनिसार. द्वादशांगवाणी विमल ।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जडता हरै ॥

पहलो आचारांग बखानो । पद अष्टादश सहस प्रमानो । दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं । पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥१॥ तीजो ठाना अंग सुजानं । सहस वियालिस पदसरधानं ॥ चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस लाख इकधारं ॥२॥ पंचम व्याख्याप्रज्ञपति दरसं । दोय लाख अट्ठाइस सहसं ॥ छट्ठो ज्ञातृकथा विसतारं । पांचलाख छप्पन हज्जारं ॥३॥ सप्तम उपासका-ध्ययनंगं । सत्तर सहस ग्यारलख भंगं । अष्टम अंतकृतं दस ईसं । सहस अठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥ नवम अनुत्तरदश सुविशालं । लाख बानवै सहस चवालं ॥ दशम प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानव सोल हजारं ॥ ५ ॥ ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोड चौरासी लाखं ॥ चार कोडि अरु पंद्रह लाखं । दो हजार

सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥ द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोडि पन वेदं ॥ अडसट लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥ इक सौ बारह कोडि बखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो ॥ ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥ कोडि इकावन आठ हि लाखं सहस चुरासी छहसौ भाखं ॥ साढ़े इकीस सिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥ घत्ता—

जा वानीके ज्ञानमैं, सूझे लोक अलोक ।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हों धोक ॥

ओंह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

गुरुपूजा ।

दोहा—चहुंगति दुख सागरविषैं, तारनतरनजिहाज । रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् । ओं ह्रीं श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधु गुरु समूह ! अत्र

तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

शुचि नीर निर्मल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढाइया । तिहुँधार तिहुँ गदटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥ भवभोगतनवैराग्य धार, निहार शिवतप तपत हैं। तिहुं जगतनाथ अधार साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्म० जलं निर्वपामी०

करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करौं। सब पापताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ॥ भवभोग० ॥२॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवातापविनाशनायचंदनं०

तंदुल कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं। गुनकार औगुनहार स्वामी, वंदना हम करत हैं ॥ भवभोग० ॥३॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०

शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरु पायनि परत हों। निरवार मारउपाधि स्वामी, शील दृढ उर धरत हों ॥ भवभोग० ॥ ४ ॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं

पकवान मिष्ट सलौन सुंदर. सुगुरु पायनि प्रीति सौं। धर छुधारोग विनाश स्वामी. सुथिर कीजे रीतिसौं ॥ ५ ॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवे०

दीपकउदोत सजोत जगमग. सुगुरुपद पूजों सदा। तमनाश ज्ञानउजास स्वामी. मोहि मोह न हो कदा ॥ भवभोग० ॥ ६ ॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योमोहान्धकारविनाशनाय दीपं

बहु अगर आदि सुगंध खेऊं. सुगुण पद पद्महिं खरे। दुखपुंजकाठ जलाय स्वामी. गुण अछय चितमैं धरे ॥ भवभोग० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्म दहनाय धूपं नि०

भर थार पूग बदाम बहुविध. सुगुरुक्रम आगें धरों। मंगल महाफल करो स्वामी. जोर कर विनती करों ॥ भवभोग० ॥ ८ ॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०.

जल गंध अक्षत फूल नेवज. दीप धूप फलावली।

द्यानत सुगुरुपद देहु स्वामी. हमहिं तार उतावलो ॥ भवभोग० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि०

अथ जयमाला ।

दोहा—कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुनभंडार ॥१॥
तीन घाटि नवकोड सब, बंदौं सीस नवाय ।
गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूं आरती गाय ॥२॥
बेसरी छंद—एक दया पालैं मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं । तीनोंलोक प्रगट सब देखें, चारों आराधन निकरं ॥ पंच महाव्रत दुद्धर धारैं, छहों दग्ब जानैं सुहितं । सात भंगवानी मन लावें, पावें आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥ नवों पदारथ विधिसों भाखें, बंध दशों चूरन करनं । ग्यारह शंकर जानैं मानैं, उत्तम बारह व्रत धरनं ॥ तेरह भेद काठिया चूरैं, चौदह गुनथानक लखियं । महाप्रमाद पंचदश नाशैं, सोलकषाय सबै नशियं ४ ॥ बंधादिक सत्रह सब चूरैं, ठारह जन्मन

मरन मुनं। एक समय उनईस परीसह, बीस प्ररू पनिमें निपुणं। भाव उदीक इकीसों जानें, बाइस अभखन त्याग करं। अहिमिंदर तेईसों वंदें, इंद्र सुरग चौवीस वरं ॥५॥ पच्चीसों भावन नित भावें, छब्बिस अंग उपंग पढें। सत्ताईसों विषय विनाशें, अठ्ठाईसों गुण सु पढें। शीत समय सर चौहटवासी, ग्रीषमगिरिशिर जोग धरं। वर्षा वृक्ष तरें थिर ठाढे, आठ करम हनि सिद्ध वरं ॥६॥

दोहा—कहों कहालों भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति करो भरपूर ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

। अकृतिम चैत्यालयपूजा ।

आठ किरोड रु छप्पन लाख। सहस सत्यावण चतुशत भाख॥ जोड इक्यासी जिनवर थान। तीनलोक आह्वान करान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचासल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृतिमजिनचैत्यालयानि अत्र अवतरत अवतरत।सं-वौषट्।

क्षीरोदधिनीरं उज्ज्वल सारं. छान सुचीरं. भरि झारी। अति मधुर लखावन. परम सु पावन. तृषा बुझावन गुण भारी॥ वसुकोटि सु छप्पन लाख सत्ताणव. सहस चारसत इक्यासी। जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजगभीतर. पूजत पद ले अविनाशी॥ १॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

मलयागिर पावन. चंदन बावन. तापबुझावन घसि लीनो। धरि कनक कटोरी द्वै करजोरी. तुमपद ओरी चित दीनो॥ वसु०॥ २॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥

बहुभांति अनोखे. तंदुल चोखे. लखि निरदोखे हम लीने। धरि कंचनथाली. तुमगुणमाली. पुंजविशाली करदीने॥ वसु०॥ ३॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

शुभ पुष्प सुजाती है बहुभांती. अलि लिप-

टाती लेय वरं । धरि कनकरकेबी. करगह लेवी. तुमपद जुगकी भेट धरं ॥ वसु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

खुरमा जु गिंदौडा, बरफी पेडा, घेवर मोदक भरि थारी। विधिपूर्वक कीने, घृतपयभीने. खँड में लीने, सुखकारी ॥ वसु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम, निजभव परणाति. नहिं सूझै । इहकारण पाकैं दीप सजाकैं, थाल धराकैं. हम पूजें ॥ वसु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा

दशगंध कुटाकैं, धूप बनाकैं, निजकर लेकैं धरि ज्वाला । तसु धूम उडाई, दशदिश छाई, बहु महकाई, अति आला ॥ वसु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्योधूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ताप्यारे, द्राख वरं। इन आदि अनोखे लखि निरदोखे, थापलजोखे, भेट धरं ॥ वसु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुश्शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल चंदन तंदुल कुसुम रु नेवज, दीप धूप फल, थाल रचौं ॥ जयघोष कराऊं, बीन बजाऊं, अर्घ चढाऊं खूब नचौं ॥ वसु० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ प्रत्येक अर्घ। चौपाई।

अधोलोक जिन आगमसाख। सात कोडि अरु बहतर लाख ॥ श्रीजिनभवनमहा छवि देइ। ते सब पूजों वसुविध लेइ ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अधोलोकसंबंधिसप्तकोटिद्विसप्ततिलक्षाकृत्रिम श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मध्यलोकजिनमंदिरठाठ। साढे चारशतक अरु आठ॥ ते सब पूजौं अर्घ चढ़ाय। मनवच तन त्रयजोग मिलाय ॥ २ ॥

ओंह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत् श्रीजिनचैत्यालयेभ्योअर्घं

आडिल्ल—ऊर्ध्वलोकके मांहि भवनजिनजानिये।
लाखचुरासी सहस सत्याणव मानिये॥
तापै धरि तेईस जजों शिर नायकैं।
कंचन थाल मझार जलादिक लायकैं।

ओं ह्रीं ऊर्ध्वलोकसंबंधिचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं ॥ ३ ॥

वसुकोटि छप्पनलाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये। सतच्यारपै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये॥ तिहुँलोकभीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करैं। तिन भवनकों हम अर्घ लेकैं, पूजि हैं जगदुख हरैं॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तवतिसहस्रचतुः शतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्यंनिर्वपामीतिस्वाहा

दोहा—अब वरणों जयमालिका सुनो भव्य चितलाय। जिनमंदिर तिहुंलोकके, देहु सकल दरसाय॥ १ ॥

पद्धरि छंद।

जय अमल अनादि अनंत जान। अनिमित

सु अकीर्तम अचल थान ॥ जय अजय अखंड अरूपधार । षटद्रव्य नहीं दीसै लगार ॥ २ ॥ जय निराकार अविकार होय । राजत अनंत परदेश सोय ॥ जे शुद्ध सुगुण अवगाह पाय । दशदिशामांहिं इहविध लखाय ॥ ३ ॥ यह भेद अलोकाकाश जान । तामध्य लोक नभ तीन मान ॥ स्वयमेव बन्यो अविचल अनंत । अविनाशि अनादि जु कहत संत ॥ ४ ॥ पुरषा ऊकार ठाढो निहार । कटि हाथ धारि द्वै पग पसार ॥ दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर । राजू जु सात भाख्यो निचोर ॥ ५ ॥ जय पूर्व अपर दिश घाटबाधि । सुन कथन कहूं ताको जु साधि ॥ लखि श्वभ्रतलैं राजू जु सात । मधिलोक एक राजू रहात ॥ ६ ॥ फिर ब्रह्मसुरग राजू जु पांच । भूसिद्ध एक राजू जु सांच ॥ दश चार ऊंच राजू गिनाय । षट्द्रव्य लये चतुकोण पाय ॥ ७ ॥ तसु वातवलय लपटाय तीन । इह निराधार लखियो प्रवीन ॥ त्रसनाड़ी तामधि

जान खास । चतुकोन एक राजू जु व्यास ॥८॥
राजू उतंग चौदह प्रमान । लखि स्वयंसिद्ध
रचना महान ॥ तामध्य जीव त्रस आदि देय ।
निज थान पाय तिष्ठैं भलेय ॥९॥ लखि अधो
भागमैं श्वभ्रथान । गिन सात कहे आगम प्रमान॥
षट थानमाहिं नारकि बसेय । इक श्वभ्रभाग
फिर तीन भेय ॥ १० ॥ तसु अधोभाग नारकि
रहाय । फुनि ऊर्ध्वभाग द्वय थान पाय ॥ बस
रहे भवन व्यंतर जु देव । पुर हर्म्य छजै रचना
स्वमेव ॥ ११ ॥ तिंह थान गेह जिनराज भाख ।
गिन सातकोटि बहतरि जु लाख ते भवन नमों
मन वचन काय । गति श्वभ्रहरनहारे लखाय
॥ १२ ॥ पुनि मध्यलोक गोला अकार । लखि
दीप उदधि रचना विचार ॥ गिन असंख्यात
भाखे जु संत । लखि संभुरमन सबके जु अंत
॥ १३॥ इक राजुव्यासमैं सर्व जान । मधिलोक
तनों इह कथन मान ॥ मबमध्यदीप जंबू गिनेय
त्रयदशम रुचिक्कवर नाम लेय ॥१४॥ इन तेरहमें

जिनधाम जान । शतचार अठावन है प्रमान ॥
खग देव असुर नर आय आय । पद पूज जांय
शिर नाय नाय ॥ १५ ॥ जय उर्ध्वलोकसुर
कल्पवास । तिहँ थान छजें जिन भवन खास ॥
जय लाख चुरासीपै लखेय । जय सहससत्याणव
और ठेय ॥ १६ ॥ जय वीसतीन फुनि जोड
देय । जिनभवन अकीर्तम जान लेय ॥ प्रति-
भवन एक रचना कहाय । जिनविंब एकसत
आठ पाय ॥१७॥शतपंच धनुष उन्नत लसाय।
पदमासनजुत वर ध्यान लाय ॥ शिर तीनछत्र
शोभित विशाल। त्रय पादपीठ मणिजडित लाल
॥ १८ ॥ भामंडलकी छवि कौन गाय । फुनि
चँवर ढुरत चौसठि लखाय ॥ जय दुंदुभिरव
अदभुत सुनाय । जय पुष्पवृष्टि गंधोदकाय ॥
॥ १९ ॥ जय तरु अशोक शोभा भलेय । मंगल
विभूति राजत अमेय । घट तूप छजे मणिमाल
पाय । घटधूम्र धूम दिग सर्व छाय ॥२०॥ जय-
केतुपंक्ति सोहै महान। गंधर्वदेवगन करत गान ॥

सुर जनमलेत लखि अवधि पाय। तिहँ थान प्रथम पूजन कराय॥ जिनगेहतणो वरनन अ-पार। हम तुच्छबुद्धि किम लहत पार॥ जय देव जिनेसुर जगत भूप। नमि 'नेम' मंगै निज देहरूप॥ २२॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिअकृत्रिमश्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा॥

दोहा-तिनलोकमें सासते श्रीजिनभवन विचार।
भनव भननकरि शुद्धता पूजों अरत उतार॥

तिहुं जग भीतर श्रीजिनमंदिर, बने अकी-र्त्तम अति सुखदाय। नगसुर खग करि वंदनीक जे तिनको भविजन पाठ कराय॥ धनधान्यादिक संपति तिनके, पुत्रपौत्र सुखहोत भलाय॥ चक्री सुर खग इंद्र होयके, करम नाश शिवपुर सुख थाय॥ २४॥

सिद्धपूजा।

अडिल्ल छंद।

अष्टकरमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकैं।
अष्टमवसुधामाहिं विराजे जायकैं॥
ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकैं।
संवौषट् आह्वान करूं हरषायकैं॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र ममसन्निहितो भव भव। वषट्।

छंद त्रिभंगी।

हिमवनगतगंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा। आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करि मनचंगा भरि भृंगा॥ त्रिभुवनके स्वामी त्रिभुवननामी, अंतरजामी अभिरामी। शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्धजजामी सिरनामी।

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहुमहकायो मनभायो। जलसंगघसायो रंगसुहायो, चरनचढ़ायो हरषायो॥ त्रिभु०॥२॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तंदुल उजियारे शशिदुतिहारे, कोमल प्यारे अनियारे। तुषखंडनिकारे जलसु पखारे, पुंज तुमारे ढिग धारे ॥ त्रिभु० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुरतरुकी बारी, प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी गुलजारी। भरि कंचन थारी फूल सँवारी, तुम पदढारी अति सारी ॥ त्रिभु० ॥४॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अम्रत लाजे क्षुत भाजे। बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन काजे करि ताजे ॥ त्रिभु० ॥५॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

आपापरभासै ज्ञानप्रभासै, चित्तविकासै तम नासै। ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम पासे उल्लासे ॥ त्रिभु० ॥६॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रामय सर्वकर्मविनिर्मुक्तायसिद्धचक्राधिपतये दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चुंबक अलिमाला गंधविशाला, चंदनकाला गुरु बाला । तस चूर्ण रसाला करि ततकाला अग्निज्वालामें डाला ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्व कर्म विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिप नये धूपं निर्वपामीनि स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुहारा सहकारा । ऋतु ऋतुका न्यारा सत्फलसारा, अपरंपारा लैधारा ॥ त्रि० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल वसुवृंदा अरघअमंदा, जजत अनंदा के कंदा । मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, 'हीराचंदा' तुव बंदा ॥ त्रि० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहत पराक्रमाय सर्वकर्म विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—ध्यानदहनविधिदारुदहि, पायो पद निरवान । पंचभावजुतथिर थये, नमों सिद्ध भगवान ॥

धवलसेठको एक देव गदासे मार रहा है।

(श्रीपाल पुराण)

मैनासुन्दरी पितासे कर्मोंकी प्रधानता पर विवाद कर रही हैं।
(श्रीपाल पुराण)

त्रोटकछंद—सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा ।
अगुरू-लघु सूक्षमवीर्य महा । अवगाह अबाध
अघायक हो । सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥२॥
असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजैं । भुवनेन्द्र खगेन्द्र
गणेन्द्र भजैं ॥ जर जामनमर्ण मिटायक हो ।
सब० ॥ ३ ॥ अमलं अचलं अकलं अकुलं ।
अछलं असलं अरलं अतुलं ॥ अरलं सरलं
शिवनायक हो । सब० ॥ ४ ॥ अजरं अमरं
अधरं सुधरं । अडरं अहरं अमरं अधरं ॥ अपरं
असरं सब लायक हो । सब० ॥ ५ ॥ वृषवृंद
अमंद न निंद लहैं । निरदंद अफंद सुछंद रहैं ॥
नितआनँदवृंद विधायक हो । सब० ॥ ६ ॥
भगवंत सुसंत अनंत गुणी । जयवंत महंत
नमंत मुनी ॥ जगजंतु तणे अघघायक हो ।
सब० ॥७॥ अकलंक अटंक शुभंकर हो । निर
डंक निशंक शिवंकर हो ॥ अभयंकर शंकर
क्षायक हो । सब० ॥ ८ ॥ अतरंग अरंग
असंग सदा । भवभंग अभंग उतंग सदा ॥

सरवंग अनंग नसायक हो । सब० ॥ ९ ॥ बह
मंड जु मंडलमंडन हो । तिहुँदंडप्रचंड विहंडन
हो। चिद पिंड अखंड अकायक हो। सब०॥१०॥
निरभोग सुभोग वियोग हरे। निरजोग अरोग
अशोग धरे ॥ भ्रमभंजन तीक्षण सायक हो ।
सब० ॥ ११ ॥ जय लक्ष अलक्ष सुलक्ष्यक हो ।
जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ॥ पण अक्ष प्रतक्ष
खपायक हो। सब० ॥ १२ ॥ निरभेद अखेद
अछेद सही । निरवेद अवेदन वेद नहीं ॥ सब
लोक अलोकहि ज्ञायक हो । सब० ॥१३॥ अम
लीक अदीन अरीन हने । निजलीन अधीन
अछीन बने ॥ जमको घनधात बचायक हो ।
सब० ॥ १४ ॥ न अहार निहार विहार कबै ।
अविकार अपार उदार सबै ॥ जगजीवनके मन
भायक हो । सब० ।॥ १५ ॥ असमंध अधंद
अरंध भये । निरबंध अखंध अगंध ठये । अमनं
अतनं निरवायक हो । सब० ॥ १६ ॥ अविरुद्ध
अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू । अति शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध

विभू ॥ परमातम पूरन पायक हो । सब० ॥१७॥ सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू । उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू ॥ शिवतिष्टत सर्व सहायक हो । सब० ॥ १८ ॥ जय श्रीधर श्रीवर श्रीवर हो । जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ॥ जय रिद्धि सुसिद्धि-बढायक हो । सब० ॥ १९ ॥

दोहा—सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभमान । 'हिराचंद' तातैं जजै, करहु सकल कल्यान ॥ २० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(यहांपर विसर्जन भी करना चाहिये)

अडिल्ल—सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा । पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख संपदा ॥ इंद्र चंद्र धरणेंद्र नरेन्द्र जु होयकैं । जावैं मुकतिमझार करम सब खोयकैं ॥ २४ ॥

(इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्) समाप्त ।

। समुच्चयचौबीसी पूजा ।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपास जिनराय। चंद पुहुप शीतल श्रियांस नमि, वासुपूज्य पूजितसुरराय ॥ विमल अनंत धर्मजसउज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय । मुनिसुव्रत नमि नेमि पासप्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढाय ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिन-समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

मुनिमनसम उज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनकटोरी धीर दीनी धार धरा ॥
चौवीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी। जिनचरनन देत चढाय, भवआताप हरी। चौवीसों०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं नि० ।२।

तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे । मुक्-
ताफलकी उनमान, पुंज धरों प्यारे ।। चौवीसों०
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥३॥

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे । जिन
अग्र धरौं गुनमंड, कामकलंक हरे । चौवीसों०।
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने । रस-
पूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ।चौ०
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥५॥

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगें । सब
तिमिर मोहक्षयजाय, ज्ञानकला जागै ।। चौवी०
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि०॥६

दशगंध हुताशनमांहि, हे प्रभु खेवत हों । मिस
धूमकरम जरिजांहि, तुमपद सेवत हों । चौवी०
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥

शुचि पक्क सुरस फल सार, सबऋतुके ल्यायो ।
देखत दृगमनकों प्यार, पूजत सुख पायो ।चौ०।
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

जलफलआठोंशुचिसार, ताको अर्घ करों तुमकों अरपों भवतार, भवतरि मोच्छ वरों।।चौवीसों०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति

जयमाला। दोहा-

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हित हेत।
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपददेत ॥१॥

घत्ता।

जय भवतमभंजन जनमनकंजन, रंजन दिन-मनि स्वच्छ करा। शिवमगपरकाशक अरिगन नाशक, चौवीसों जिनराज वरा ॥२॥

पद्धरि छंद।

जय ऋषभदेव रिषिगन नमंत। जय अजित जीत वसुअरि तुरंत। जय संभव भवभय करत चूर। जय अभिनंदन आनंदपूर ॥ ३ ॥ जय सुमति सुमतिदायक दयाल। जय पद्मपद्म-दुतितनरसाल ॥ जय जय सुपास भवपासनाश जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ॥ ४ ॥ जय पुष्प-दंत दुतिदंत सेत। जय शीतल शीतलगुन-निकेत ॥ जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज। जय

वासवपूजित वासुपुज्ज ॥ ५ ॥ जय विमल विमलपद-देनहार । जय जय अनंत गुनगन अपार ॥ जय धर्म धर्म शिवशर्म देत । जय शांति शांति पुष्टी करेत ॥ ६ ॥ जय कुंथु कुंथु वादिक रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय-करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल । जय मुनि सुव्रत व्रतशल्ल दल्ल ॥७॥ जय नमि नित वासवनुत सपेम । जय नेमनाथ बृषचक्रनेम ॥ जय पारसनाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥८॥

घत्तानंद छंद ।

चौवीस जिनंदा आनँदकंदा पापनिकंदा सुखकारी । तिनपदजुगचंदा उदय अमंदा, वासव वंदा हितकारी ॥९॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा

सोरठा–भुक्तिमुक्तिदातार, चौवीसों जिनराजवर । तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥

इत्याशीर्वादः । (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ श्रीआदिनाथजिन पूजा ।

नाभिराय मरुदेविके नंदन, आदिनाथ स्वामी महाराज । सर्वारथसिद्धितैं आप पधारे, मध्यम-लोकमांहिं जिनराज ॥ इंद्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज । आह्वानन सब विधि मिलकरके, अपने कर पूजें प्रभु पांय ॥

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अथ अष्टक ।

क्षीरोदधिको उज्वल जल ले, श्रीजिनवर पद पूजन जाय । जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढाऊं प्रभुजीके पांय ॥ श्रीआदिनाथके चरण कमलपर, वलि वलि जाऊं मनवचकाय । हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों प्रभु पांय ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

मलयागिरि चंदन दाह निकंदन, कंचन झारी मैं भर ल्याय । श्रीजीके चरण चढावो भविजन,

भव आताप तुरत मिटि जाय ॥ श्री आदि० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

सुभशालि अखंडित सौरभमंडित, प्रासुक जलसों धोकर ल्याय। श्रीजीके चरण चढावो भविजन अक्षयपदकों तुरत उपाय।श्रीआदि०।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपा०

कमल केतुकी बेल चमेली, श्रीगुलाबके पुष्प मंगाय। श्रीजीके चरण चढावो भविजन, कामवाण तुरत नासिजाय ॥ श्रीआदि० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

नेवज लीना तुरत रस भीना, श्री जिनवर आगे धरवाय। थाल भराऊं क्षुधा नसाऊं ल्याऊं प्रभुके मंगल गाय ॥ श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्व०

जगमग जगमग होत दशोदिस,ज्योति रही मंदिरमें छाय। श्रीजीके सन्मुख करत आरती, मोहतिमिर नासै दुखदाय। श्रीआ० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्रायमोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व०

अगर कपूर सुगंध मनोहर चंदन कूट सुगंध

मिलाय। श्रीजीके सन्मुख खये धुपायन, कर्म जरे चहुंगति मिटि जाय। श्रीआदि०।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय। महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढाऊं प्रभुजिके पांय। श्रीआदि०।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

शुचि निरमल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरषाय। दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय। श्रीआदि०।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०

पंचकल्याणक।

सर्वारथसिद्धितें चये, मरुदेवी उर आय।
दोज असित अषाढकी, जजूं तिहारे पाय॥

ओं ह्रीं श्रीआषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

चैतबदी नौमी दिना, जन्म्या श्रीभगवान।
सुरपति उत्सव अति कर्‍या, मैं पूजों धरध्यान॥

ओंह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय अर्घं

तृणवत् ऋधि सब छांडिके, तप धार्यो वनजाय।
नौमी चैत्र असेतकी, जजूं तिहारे पाय।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाय-अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान।
इंद्र आय पूजा करी, मैं पूजों यह थान॥

ओं ह्रीं फाल्गुणकृष्ण एकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदि-जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ चतुर्दशि कृष्णकी, मोक्ष गये भगवान।
भवि जीवोंको बोधिके, पहुंचे शिवपुर थान॥

ओ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदि-जिनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मैं विनती तुमसे करूं। चारों गतिके मांहिं मैं दुखपायो सो सुनो। अष्टकर्म मैं हूं एकलौ, यह दुष्ट महादुख देत हो। कबहूं इतर निगोदमें मोकूं पटकत करत अचेत हो॥ म्हारी दीनतणी सुन वीनती॥ १॥ प्रभु कब-हुंक पटक्यो नरकमें, जठै जीव महादुख पाय

हो। नित उठि निरदई नारकी. जठे करत पर-
स्पर घात हो ।म्हारी०॥२॥ प्रभु नरकतणा दुख
अब कहूं जठै करै परस्पर घात हो।कोइयक बांध्यो
खंभसों, पापी दे मुद्गरकी मार हो । कोइयक
काटें करोतसों, पापी अंगतणी दोय फाड हो ।
म्हारी० ॥३॥ प्रभु यह विधि दुख भुगत्या घणा.
फिर गति पाई तिरयंच हो । हिरणा बकरा
बाछला पशु दीन गरीब अनाथ हो ।म्हारी०।४॥
प्रभु मैं ऊंट बलद भैंसा भयो, ज्यांपै लदियो
भार अपार हो। नहिं चाल्यो जठै गिर पर्‌यो,
पापी दे सोटनकी मार हो ॥म्हारी० ॥५॥ प्रभु
कोइयक पुण्यसंजोगसूं मैं तो पायो स्वर्गनिवास
हो। देवांगना संग रमि रह्यो जठै भोगनिको
परिताप हो ॥म्हारी० ॥ ६ ॥ प्रभु संग अप्सरा
रमि रह्यो कर कर अति अनुराग हो। कबहुंक
नंदनवन विषैं प्रभु कबहुँक वन-गृह मांहि हो।
म्हारी० ॥७॥ प्रभु यह विधि काल गमायकै,
फिर माला गई मुरझाय हो। देव थिती सब घट

गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो । सोच क-
रंता तन खिर पड्यो, फिर उपज्यो गरभमें जाय
हो ।म्हारी० ॥८॥ प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूं,
जठै सकडाईकी ठौर हो ॥ हलन चलन नहिं
करसक्यो जठै सघन कीच घनघोर हो।म्हारी०।९।
माता खावै चरपरो फिर लागै तन संताप हो।
प्रभु जो जननी तातो भखै, फेर उपजै तन सं-
ताप हो॥म्हारी०।१०॥ औंधे मुख झूल्यो रह्यो
फेर निकसन कौन उपाय हो ॥ कठिन कठिन
कर नीसर्‌यो, जैसे निसरै जंतीमैं तार हो।म्हारी०
॥११॥ प्रभु फिर निकसतही धरत्यां पड्यो फिर
लागी भूख अपार हो। रोय रोय विलख्यो घणो
दुख वेदनको नहिं पार हो ॥ म्हारी० ॥ १२ ॥
प्रभु दुख मेटन समरथ धनी, यातैं लागूं तिहारे
पांय हो। सेवक अरज करै प्रभू ! मोकूं भवो-
दधि पार उतार हो ॥ म्हारी० ॥ १३ ॥
श्रीजीकी महिमा अगम है. कोइ न पावै पार।
मैं मति अल्प अज्ञान हो. कौन करै विस्तार॥

इति श्रीआदिनाथ जिनेंद्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विनती ऋषभ जिनेशकी. जो पढसी मनलाय।
सुरगोंमें संशय नहीं निश्चै शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वादः । समाप्त ।

श्रीचंद्रप्रभजिनपूजा ।

छप्पय—अनौष्ठय यमकालंकार तथा शब्दालंकार शांतरस ।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरनचिहनचर ।
चंदचंदतनचरित, चंदथल चहत चतुर नर ॥
चतुक चंड चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर।
चंचल चलितसुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ॥
चरअचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिर-
नंद शुचि । जिनचंदचरन चरच्यो चहत,
चितचकोर नचि रच्चि रुचि ॥ १ ॥

दोहा—धनुष डेढसौ तुंग तन, महासेन नृपनंद ।
मातुलछमनाउर जये, थापों चंदजिनंद ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट् ।

अष्टक।

चाल द्यानतरायकृत नंदीश्वराष्टककी अष्टपदी तथा होलीकी तालमें, तथा गरवा आदि अनेक चालोंमें।

गंगाह्रदनिरमल नीर, हाटकभृंगभरा।
तुम चरन जजों वरवीर, मेटो जनमजरा॥
श्रीचंदनाथदुति चंद, चरनन चंद लगै।
मनवचतन जजत अमंद, आतमजोति जगै॥१॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०॥

श्रीखंडकपूर सुचंग, केशररंग भरी। घसि प्रासुकजलके संग, भवआताप हरी॥श्रीचंद्र०॥२॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्व०।

तंदुलसित सोमसमान, समलय आनियारे।
दिय पुंज मनोहर आन, तुमपदतर प्यारे।श्री०।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामी०

सुरद्रुमके सुमन सुरंग. गंधित अलि आवे।
तासों पद पूजत चंग. कामविथा जावे॥ श्री०

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपा०

नेवज नानापरकार. इंद्रियबलकारी।
सो लै पद पूजों सार. आकुलता हारी॥श्री०।५।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपा०

तमभंजन दीप सँवार. तुम ढिग धारतु हों।
मम तिमिरमोह निरवार. यह गुण धारतु हों।श्री०।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व०

दसगंधहुतासनमांहिं. हे प्रभु खेवतु हों।
मम करम दुष्ट जरि जांहिं. यातैं सेवतु हों।श्री०।।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति०

अति उत्तम फल सु मँगाय. तुम गुण गावतु हों।
पूजों तनमन हरषाय. विघन नशावतु हों।श्री०।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

सजि आठों दरब पुनीत. आठों अंग नमों।
पूजों अष्टमजिन मीत. अष्टम अवनि गमों।श्री०

ओं ह्रीं श्रीचन्प्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति०

पंचकल्याणक। छंद तोटक (वर्ण १२)

कलि पंचमचैत सुहात अली। गरभागममंडल
मोद भरी ।। हरि हर्षित पूजत मातु पिता।
हम ध्यावत पावत शर्मसिता ।।१।।

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यांगर्भमंगलप्राप्तायश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं

कलि पौष इकादशि जन्म लयो। तब लोकविषै

दुखथोक भयो ॥ सुरईस जजैं गिरशीश तबैं। हम पूजत हैं नुत शीस अबैं ॥२॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा। कलिपौष इग्यारसि पर्व वरा ॥ निजध्यानविषै लवलीन भये। धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥३॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

वर केवल भानु उद्योत कियो। तिहुँलोकतणों भ्रम मेट दियो ॥ कलि फाल्गुणसप्तमि इंद्र जजैं हम पूजहिं सर्व कलंक भजैं ॥४॥

ओं ह्रीं फाल्गुणकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सित फाल्गुन सप्तमि मुक्ति गये ॥ गुणवंत अनंत अबाध भये ॥ हरि आय जजे तित मोदधरें। हम पूजत ही सब पाप हरे ॥५॥

ओं ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा--हे मृगांकअंकित चरण. तुम गुण अगम अपार । गणधरसे नहिं पार लहिं. तौ को वरनत सार ॥ १ ॥ पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै अति उमगाय । तातें गाऊं सुगुण तुम. तुम ही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धरि (१६ मात्रा)

जय चंद्र जिनेंद्र दयानिधान । भवकाननहानन दौं प्रमान ॥ जय गरभजनममंगल दिनंद । भवि-जीवविकाशन शर्मकंद ॥ ३ ॥ दशलक्षपूर्वकी आयु पाय । मनवांछित सुख भोगे जिनाय ॥ लखि कारण ह्वै जगतैं उदास । चिंत्यो अनुप्रेक्षा सुख निवास ॥ ४ ॥ तित लौकांतिक बोध्यो नियोग । हरि शिविका साजि धरियो अभोग। तापै तुम चढि जिनचंदराय । ताछिनकी शोभा को कहाय ॥५॥ जिनअंग सेत सित चमर ढार । सित छत्र शीस गलगुलकहार ॥ सित रतन जडित भूषण विचित्र । सित चंद्रचरण चरचैं

पवित्र ॥६॥ सित तनद्युति नाकाधीस आप। सित शिविका कांधे धरि सुचाप॥ सित सुजस सुरेश नरेश सर्व। सित चितमैं चिंतत जात पर्व ॥ ७ ॥ सित चंद्रनगरतैं निकसि नाथ। सित वनमैं पहुंचे सकल साथ ॥ सितशिलाशिरोमणि स्वच्छछाँह। सित तप तित धार्‌यो तुम जिनाह ॥ ८ ॥ सित पयको पारण परमसार। सित चंद्रदत्त दीनों उदार॥ सित करमैं सो पयधार देत। मानों बांधत भवसिंधु सेत।९। मानों सुपुण्य धारा प्रतच्छ। तित अचरज पन सुर किय ततच्छ ॥ फिर जाय गहन सित तपकरंत सित केवलज्योति जग्यो अनंत ॥१०॥ लहि समवसरनरचना महान। जाके देखत सब पाप हान॥ जहँ तरु अशोक शोभै उतंग। सब शोकतनो चूरै प्रसंग॥ ११ ॥ सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहात। मनु मन्मथ तज हथियार जात॥ बानी जिनमुखसौं खिरत सार। मनु तत्त्वप्रकाशन मुकुर धार ॥ १२ ॥ जहँ चौसठ

चमर अमर ढुरंत। मनु सुजस मेघ झरि लगिय तत ॥ सिंहासन है जँह कमल जुक्त। मनु शिव-सरवरको कमलशुक्त ॥ १३ ॥ दुंदुभि जित बाजत मधुर सार। मनु करमजीतको है नगार ॥ शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण। मनु रतन तीन त्रयताप हर्ण ॥ १४ ॥ तनप्रभातनों मंडल सुहात। भवि देखत निजभव सात सात ॥ मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय। भविजन भव मुख देखत सु आय ॥ १५ ॥ इत्यादि विभूति अनेक जान। बाहिज दीसत महिमा महान ॥ ताको वरणत नहिं लहत पार। तौ अंतरंग को कहै सार ॥१६॥ अनअंत गुणनिजुत करि विहार। धरमोपदेश दे भव्य तार ॥ फिर जोगनिरोधि अघाति हान। सम्मेदथकी लिय मुकतिथान ॥१९ वृन्दावन वंदत शीश नाय। तुम जानत हो मम उर जु भाय ॥ तातें का कहौं सु बार बार। मन-वांछित कारज सार सार ॥१८॥

छन्द घत्तानन्द।

जय चंदजिनंदा, आनँदकंदा, भवभयभंजन राजै हैं। रागादिक द्वंदा, हरि सब फंदा, मुकति माहिं थिति साजै हैं॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द चौबोला।

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन जिनचंद जजें। ताके भवभवके अघ भाजें मुक्तसारसुख ताहि सजें॥ २०॥ जमके त्रास मिटै सब ताके, सकल अमंगल दूर भजें। वृंदावन ऐसो लखि पूजत, जातें शिवपुरि राज रजें।

इत्याशीर्वादः। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्। इतिश्री चन्द्रजिनपूजा॥

श्रीवासुपूज्य जिनपूजा।

छंद रूपकवित्त।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवरपद, पूजनहेत हिये उमगाय। थापों मनवचतन शुचि करिकै, जिनकी पाटलदेव्या माय॥ महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लाल वरन तन समतादाय। सो करु-

नानिधि कृपादिष्टकरि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ आय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्॥

अष्टक।

छंद जोगीरासा। आंचलीबंध "जिनपदपूजों लवलाई।"

गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गंध मिलाई। करम कलंक विनाशन कारन, धार देत हरपाई ॥ जिनपद० ॥ वासुपूज वसुपूजतनुजपद, वासव सेवत आई। बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ॥जिन०॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

कृष्णागरु मलयागिर चंदन, केशरसंग घसाई। भवआताप विनाशनकारण, पूजों पद चित लाई ॥ वासु० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपा०

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरनथार भराई। पुंजधरत तुम चरननआगें, तुरिय अखय पदपाई ॥ वासु० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामी०

पारिजात संतानकल्पतरु,-जनित सुमन बहु लाई । मीनकेतुमदभंजनकारन, तुम पदपद्म चढाई ॥ वासु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपा०

नव्यगव्यआदिकरसपूरित, नेवज तुरित उपाई । छुधारोग-निवारनकारन, तुम्हें जजों शिरनाई ॥ वासु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिशमें छवि छाई । तिमिरमोहनाशक तुमको लखि, जजों चरन हरषाई ॥ वासु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व०

दशविध गंधमनोहर लेकर, वातहोत्रमें डाई । अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उडाई ॥ ॥ वासु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति०

सुरस सुपक्व सुपावन फल लै, कंचनथार भ-

राई। मोच्छ महाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरों गुनगाई ॥ वासु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई। शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई ॥ वासु० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामी०

पंचकल्याणक। छंद पाईता (मात्रा १४)

कलि छट्ट असाढ़ सुहायो। गरभागम मंगल पायो ॥ दशमें दिवितें इत आये। शतइंद्र जजे सिर नाये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कलि चौदश फागुन जानों। जनमें जगदीश महानों। हरि मेर जजे तब जाई। हम पूजत हैं चितलाई ॥ २ ॥

ओं ह्रीं फाल्गुणकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्य-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तिथि चौदस फागुन श्यामा। धरियो तप

श्रीआभिरामा ॥ नृप सुंदरके पय पायो । हम पूजत अतिसुख थायो ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

वदि भादव दोइज सोहै । लहि केवल आतम जो है ॥ अनअंत गुनाकर स्वामी । नित वंदों त्रिभुवन नामी ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां केवलज्ञानमंडिताय श्रीवासुपूज्य जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सितभादव चौदशि लीनों । निरवान सुथान प्रवीनों ॥ पुर चंपाथानकसेती । हम पूजत निजहित हेती ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

चंपापुरमें पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।
सत्तर धनु तन शोभनो, जै जै जै जिनराय ॥१॥

छंद मोतियदाम (वर्ण १२)

महासुखसागर आगर ज्ञान । अनंत सुखामृतभुक महान ॥ महादलमंडित खंडितकाम । रमाशिवसंग सदा विसराम ॥ २ ॥ सुरिंद फनिंद खगिंद नरिंद । मुनिंद जजैं नित पादरविंद ॥ प्रभू तुव

अंतरभाव विराग। सुबालहितैं व्रतशीलसों राग ॥ ३ ॥ कियो नहिं राज उदाससरूप। सुभावन भावतआतमरूप। अनित्य शरीर प्रपंच समस्त। चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ॥ ४ ॥ अशर्न नहीं कोउ शर्न सहाय। जहां जिय भोगत कर्मविपाय ॥ निजातम के परमेसुर शर्न। नहीं इनके बिन आपदहर्न ॥ ५ ॥ जगत्त जथा जल-बुदबुद येव। सदा जिय एक लहै फलमेव ॥ अनेक प्रकार धरी यह देह। भमें भवकानन आनन नेह ॥ ६ ॥ अपावन सात कुधात भरीय। चिदातम शुद्धसुभाव धरीय ॥ धरै इनसों जब नेह तबेव। सुआवत कर्म तवै वसुमेव ॥ ७ ॥ जबै तनभोग जगत्तउदास। धरै तब संवर निर्जरआस ॥ करै जब कर्मकलंक विनाश। लहै तब मोक्ष महासुखराश ॥ ८ ॥ तथा यह लोक नराकृत नित्त। विलोकिये षटद्रव्यविचित्त ॥ सुआतम जानन बोधविहीन। धरै किन तत्वप्रतीत प्रवीन ॥ ९ ॥ जिनागमज्ञानरु संजमभाव। सबै निज-ज्ञान विना विरसाव ॥ सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल। सुभाव सबै जिहतें शिव हाल ॥ १० ॥ लयो सब जोग सुपुण्य वशाय। कहो किमि दीजिय ताहि गंवाय ॥ विचारत यों लवकांतिक आय। नमे पदपंकज पुष्प चढ़ाय ॥ ११ ॥ कह्यो प्रभु धन्य कियो सुवि-चार। प्रबोधि सु येम कियो जु विहार ॥ तवै सौधर्मतनों हरि आय रच्यौ शिविका चढ़ि आप जिनाय ॥ १२ ॥ धरे तप पाय सुकेवलबोध। दियो उपदेश सुभव्य सँबोध ॥ लयो फिर मोच्छ महासुखराश। नमैं नित भक्त सोई सुखआस ॥ १३ ॥

घत्तानन्द।

नित वासव वंदत, पापनिकंदत, वासुपुज्य व्रत ब्रह्मपती।
भवसंकलखंडित आनँदमंडित जै जै जै जैवंत जती ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१४॥

सोरठा।

वासपूजपद सार, जजौं दरबविधि भावसों।

सो पावे सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम ॥१५॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलि क्षिपेत्।

इति श्रीवासुपूज्यजिनपूजा समाप्त ॥

श्रीअनंतनाथ जिनपूजा।

अडिल्ल–बाह्रि अभ्यंतर त्यागि परिग्रह जति भये। बहुजन हित शिवपंथ दिखायो हरि नये॥ ऐसे अनंत जिनेश पाय नमि हूं सदां। आह्वाननविधि करूं त्रिविध करिके मुदा॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

नाराच छंद

क्षीर नीर हीर गौर सोम शीत धारया। मिश्र गंध रत्न भृंग पाप नाश कारया॥ अनंतनाथ पाय सेव मोख्य सौख्य दाय है। अनंतकाल भ्रमज्वाल पूजतैं नसाय है॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०

कुंकुमादि चंदनादि गंध शीत कारया। सं-
भ्रमेन अंतकेन भूरि ताप हारया॥ अनंतनाथ०
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०

स्वेत इंदु कुंद हार खंड ना अखिलही। दुर्ति
खंडकार पुंज धारिये पवित्त ही॥अनंतनाथ०॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

सरोपुनीत पुष्पसार पंथ वर्ण ल्यावही। गंध
लुब्ध भृंगवृंद शब्द धारि आवही॥ अनंत०॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥

मोदकादि घेवरादि मिष्ट स्वादसार ही। हेम-
थाल धारि भव्य दुष्ट भूख टारही॥ अनंत०॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥

रत्न दीप तेज भान हेमपात्र धारिये। भवांध-
कार दुःखभार मूलतैं निवारिये॥अनंतनाथ०॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि० ॥

देवदारु कृष्ण सार चंदनादि ल्यावही। दशांग
धूप धूम्रगंध भृंगवृंद धावही॥ अनंतनाथ०॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० स्वाहा ॥

श्रीफलादि खारिकादि हेमथालमें भरे। सुष्ट

मिष्ट गंधसार चक्खि नासिका हरे ॥ अनंत० ॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० स्वाहा ॥

छप्पय ।

सलिल शीत अति स्वच्छ मिष्ट चंदन मलयागर । तंदुल सोम समान पुष्प सुरतरुके लावर ॥ चरु उत्तम अति मिष्टपुष्ट रसना मनभावन । मणि दीपक तमहरन धूप कृष्णागर पावन ॥ लहि फल उत्तम कनथाल भरि, अरघ 'रामचंद' इम करै । श्रीअनंतनाथके चरण जुग, बहुविधि अरचै शिव वरै ॥
ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामी०

पंचकल्याणक ।

दोहा--पुष्पोत्तरतें चय लियो, 'सूर्यादे' उर आय ।
कातिक पडिवा कृष्ण ही, जजहूं तूर बजाय ॥१॥
ओं ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमङ्गलमंडिताय श्रीअनंत०अर्घं०॥

जेठ असित द्वादशिविषैं, जनम सुराधिप जान ।
सनपन करि सुरगिर जजे, जजहूं जनमकल्यान ॥
ओं ह्रीं जेष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

जगतराज्य तृणवत तज्यो, द्वादशि जेठ असेत ।

लौकांतिक सुरपति जजे, मैं जजहूं शिवहेत ॥३॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

चैत अमावासि अरि हने, घातिकर्म दुखदाय।
कह्यो धर्म केवलि भये, जजूं चरण सुखदाय ॥४॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

चैत अमावासि शिव गये, हानि अघाति भगवान।
सुरनरखगपति मिलि जजे, जजहुं मोक्षकल्यान ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

जयमाला।

दोहा--काल अनंतानंत भव, जीव अनंतानंत।
जिन उतपाति व्यय ध्रुव कही, नमूऽनंत भगवंत

(चाल—त्रिभुवनगुरु स्वामीजीकी)

जय अनन्त जिनेश्वरजी, पुष्पोत्तरतैं स्वरजी, सिंघसेन नरसुरके वय सुत भये जी ॥ 'सूर्यादे' माताजी जग पुण्य विख्याताजी, तिनके जगत्राता गर्भविषैं थयेजी ॥२॥ कातिक अंधियारीजी, परिवा अविकारीजी, साकेत मझारि कल्याणक हरि कियोजी। षटमास अगारेजी, मणि स्वर्ण घनेरेजी, वरषे नृपकेरे मंदिर धन जयोजी ॥३॥ द्वादशि अंधियारीजी, जनमे हितकारीजी, प्रभु जेठ-मझारि सुरासुर आयकैंजी। सुरगिरि ले आयेजी, भव मंगल गायेजी, अभिषेक रचाये पूजे ध्यायकैंजी ॥४॥ फिर पितुघर आयेजी, नचि तूर बजायेजी, ... अंक नमाये मातपिता तबैजी।

तन हेम महा छबिजी, पंचास धनू रविजी, लखि तीस कहे कवि आयु भई सबैजी ॥५॥ नृपपदवी धारीजी, लखि पणदह सारीजी, सब अनीति विचारि तपोवनकूं गयेजी, वदि जेठ दुवादसिजी, तप देखि स्वरा रिषिजी, पद पूजि नये नसि पाप सबै गयेजी ॥६॥ षष्ठम करि पूरोजी, भोजन हित सूरोजी, पुर धर्म सनूरो आवत देखिकैंजी, नव भक्तिथकी पयजी, विसाख तहां द्वयजी, मणिविष्टि अखय करि सुरगण पेखिकैंजी ॥७॥ धरि ध्यान सुकल सबजी, चउ घाति हनै जबजी, सुर आय मिले सब ज्ञान कल्याण ही जी। वदि चैत अमावसिजी, जखि भुक्ति तुहे वसिजी, समवादि रच्यौ तसु उपमा भी नहींजी। समवादि जिते भविजी, सुनि धर्म तिरे सबजी, प्रभु आयु रही जब मास तणी तबै जी। संमेद पधारेजी, सब जोग संघारेजी, समभाव विथारि वरी शिवतिय जबैजी ॥ वसु गुण जुत भूषितजी, भव छारि बसे तितजी, सुख मगन भये जित मावस चैतकीजी। सुर सब मिलि आयेजी, शिव मंगल गायेजी, बहु पुण्य उपाय चले तुम गुणत कीजी ॥१०॥ गुणवृन्द तुम्हारेजी, बुध कान उचारेजी, गणदेव निहारे पै वचना कहैजी। "चन्दराम" करै थुतिजी, वसु अंगथकी नुतिजी, गुण पूरन द्यो मति मर्म तुहे लहैजी ॥११॥ प्रभु अरज हमारीजी, सुनिज्यो सुखकारीजी, भवमें दुखभारी निवारो हो धणीजी। तुम सरन सहाईजी, जगके सुखदाईजी शिवदे पितुमाई कहो कबलौं धणीजी ॥१२॥

घत्ता—इति गुणगण सारं, अमल अपारं, जिय अनंतके हिय धरई।
हनि जरमरणावलि, नासिभवावलि, सिवसुन्दरि ततछिन वरई ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथ जिनेंद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीशांतिनाथजिनपूजा।

मत्तगयन्द छन्द (तथा जमकालंकार)

या भवकाननमें चतुरानन पापपनानन घेरि हमेरी। आतमजानन मानन ठानन, बानन होन दई सठ मेरी। तामद्भानन आपहि हो, यह छानन आन न आननटेरी। आन गही शरनागतको अब, श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक।

छन्द त्रिभंगी अनुप्रासक। (मात्रा ३२ जगनवर्जित)

हिमगिरिगतगंगा, धार अभंगा प्रासुक संगा, भरि भृंगा। जरमरनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशांतिजिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं। हनि अरिचक्रेशं हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं ॥ १ ॥

श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥

वर बावनचंदन, कदलीनंदन, घनआनंदन सहित घसों। भवतापनिकंदन, एरानंदन, वंदि अमंदन, चरनबसों ॥ श्रीशांति० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ।

हिमकरकरिलज्जत, मलयसुसज्जत, अच्छत-जज्जत भरि थारी। दुखदारिद गज्जत सदपद-सज्जत, भवभय भज्जत अति भारी ॥श्री०॥३॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

मंदार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं, मलयभरं। भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदनविदारी धीरधरं। श्रीशांति० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ।

पकवान नवीने, पावन कीने, षटरसभीने, सुखदाई। मनमोदनहारे, छुधाविदारे, आगैं धारे गुनगाई ॥ श्रीशांति० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।

तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयविकाशे सुखरासे। दीपक उजियारा यातैं धारा, मोह-निवारा निजभासे ॥ श्रीशांति० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नर्वि० ।

चंदन करपूरं, करि वरचूरं, पावक भूरं, माहि जुरं । तसु धूम उडावै नाचत जावै, अलि गुंजावै मधुरसुरं ।। श्रीशांति० ।। ७ ।।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ।

बादाम खजूरं, दाडिम पूरं, निंबुक भूरं, ले आयो । तासों पद जज्जों शिवफल सज्जों, निजरसरज्जों उमगायो । श्रीशांति० ।। ८ ।।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा ।

वसुद्रव्य सँवारी, तुमढिगधारी, आनँदकारी दृगप्यारी । तुम हो भवतारी करुनाधारी, यातैं थारी शरनारी ।। श्रीशांति० ।। ९ ।।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति० ।

पंचकल्याणक । सुन्दरी तथाद्रुतविलंबितछंद ।

असित सातयँ भादव जानिये । गरभमंगल तादिन मानिये ।। सचि कियो जननी पद चर्चनं । हम करैं इत ये पद अर्चनं ।। १ ।।

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है। सकलइद्र सुआगत धाम है॥ गजपुरे गज साजि सबै तबैं। गिरि जजे इत मैं जजिहों अबैं॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

भवशरीर सुभोग असार हैं। इमि विचार तबैं तप धार हैं॥ भ्रमर चौदशि जेठ सुहावनी। धरमहेत जजौं गुन पावनी॥ ३॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुकलपौष दशैं सुखराश है। परम-केवल-ज्ञान प्रकाश है॥ भवसमुद्र-उधारन देवकी। हम करैं नित मंगल सेवकी॥ ४॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

असित चौदस जेठ हने अरी। गिरि समेद-थकी शिवतियवरी। सकल इंद्र जजैं तित आयकैं। हम जजैं इत मस्तक नायकैं॥ ५॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द रथोद्धता; इन्द्रवत्सा तथा चन्द्रवर्त्म (वर्ण११, लाटानुप्रास)

शांतिशांतिगुण-मंडिते सदा । जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ॥ मैं तिन्हें भगतिमंडिते सदा । पूजि हों कलुषहंडिते सदा ॥१॥ मोच्छहेत तुम ही दयाल हो । हे जिनेश गुनरत्नमाल हो । मैं अबै सुगुनदाम ही धरों । ध्यावतें तुरित मुक्ति ती वरों ॥ २ ॥

छंद पद्धरि (१६ मात्रा)

जय शांतिनाथ चिद्रूपराज । भवसागरमैं अद-भुत जहाज ॥ तुम तज सरवारथसिद्ध थान । सर-वारथजुत गजपुर महान ।१॥ तित जनम लियो आनंदधार । हरि तताछिन आयो राजद्वार ॥ इंद्रानी जाय प्रसूति-थान । तुमको करमैं ले हरष मान ॥ २ ॥ हरि गोद देय सो मोद धार । सिर चमर अमर ढारत अपार ॥ गिरिराज जाय तित शिलापांड । तापैं थाप्यो अभिषेक मांड ॥३॥ तित पंचम उदधितनों सुवार । सुर कर कर करि ल्याये उदार ॥ तब इंद्र सहसकर करि

अनंद। तुम शिर धारा डाऱ्यो सुनंद॥ अघ
घघ घघ घघ धुनि होत घोर। भभ भभ भभ
धध धध कलशशोर॥ द्रमद्रम द्रमद्रम बाजत
मृदंग। झन नन नन नन नन नूपुरंग॥५॥ तन
नन नन नन नन तनन तान। घन नन नन
घंटा करत ध्वान॥ ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सु-
चाल। जुत नाचत नावत तुमहिं भाल॥ ६॥
चट चट चट अटपट नटत नाट। झट झट झट
हट नट शट विराट॥ इमि नाचत राचत भगत
रंग। सुर लेत जहां आनंद संग॥७॥ इत्यादि
अतुल मंगल सुठाट। तित बन्यौ जहां सुरगिरि
विराट॥ पुनि करि नियोग पितुसदन आय।
हरि सौंप्यो तुम तित वृद्ध थाय॥ ८॥ पुनि
राजमाहिं लहि चक्ररत्न। भोग्यो छखंड करि
धरमजत्न॥ पुनि तपधरि केवलरिद्धि पाय।
भविजीवनकों शिवमग बताय॥ ९॥ शिवपुर
पहुंचे तुम हे जिनेश। गुनमंडित अतुल अनंत
भेष॥ मैं ध्यावतु हौं नित शीशनाय। हमरी

भवबाधा हरि जिनाय ॥ १० ॥ सेवक अपनो निज जान जान। करुणाकरि भौभय भान भान॥ यह विघनमूलतरु खंड खंड। चितचिंतित आनँद मंड मंड ॥ ११ ॥

घत्तानन्द छन्द (मात्रा ३१)

श्रीशांतिमहंता, शिवतियकंता, सुगुनअनंता भगवंता। भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता दातारं तारनवंता ॥ १ ॥

ओं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

छंद रूपक सवैया (मात्रा ३१)

शांतिनाथ जिनके पदपंकज, जो भवि पूजें मनवचकाय। जनमजनमके पातक ताके, तत छिन तजिकें जाय पलाय॥ मनवांछितसुखपावै सोनर, वांचैभगतिभावअति लाय॥ तातैं वृंदावन' नित वंदैं, जातैं शिवपुरराजकराय ॥ १॥

इत्याशीर्वादः ॥ पुष्पांजलि क्षिपेत॥

श्रीपार्श्वनाथ जिनपूजा।

गीताछंद०-वर स्वर्गप्राणतकों विहाय, सुमात

वामा सुत भये। अश्वसेनके पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ॥ नवहाथ उन्नत तन विराजै,उरग लच्छन पद लसैं। थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो, करम मेरे सब नसैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्र अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्॥

अथाष्टक—छंद नाराच।

क्षीरसोमके समान अंबुसार लाइये। हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढाइये। पार्श्वनाथदेव सेव आपकी करूं सदा। दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये। आप चर्न चर्च मोहतापको हनीजिये। पार्श्व०॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायभवातापविनाशनाय चंदनंनिर्वपामी०

फेन चंदके समान अक्षतान् लाइकैं, चर्नके समीप सार पुंजको रचाईकैं ॥ पार्श्वनाथदेव०॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामी०

केवडा गुलाब और केतकी चुनायकैं, धार
चर्नके समीप कामको नसाइकैं ॥ पार्श्वनाथ० ॥
ओं ह्रींपार्श्वनाथजिनेन्द्रायकामवाणविध्वंसनाय पुष्पंनिर्वपामी ॥
घेवरादि बावरादि मिष्ट सद्यमैं सने, आप
चर्न चर्चते क्षुधादिरोगको हनै ॥ पार्श्वनाथ० ॥
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायक्षुद्रोगविनाशनायनैवेद्यं निर्वपामी॥
लाय रत्नदीपको सनेहपूरके भरूं, वातिका
कपूर बारि मोह ध्वांतकूं हरूं ॥पार्श्वनाथ०॥६॥
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि० ॥
धूपगंध लेयकैं सुअग्निसंग जारियें, तास धूप
के सुसंग अष्टकर्म वारिये ॥ पार्श्वनाथ०॥७॥
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामी ॥७॥
खारिकादि चिरभटादि रत्नथालमैं भरूं, हर्ष
धारिकैं जजूं सुमोक्ष सुक्खको वरूं ॥ पार्श्व०॥८॥
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामी ॥८
नीरगंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये, दीप
धूप श्रीफलादि अर्घतैं जजीजिये ॥पार्श्व०॥९॥
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामी ॥९

पंच कल्याणक । छंदचाल ।

शुभप्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये।
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजैं विघ्न निवारी॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णाद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वजि० अ०

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष वि-
ख्याता। श्यामा तन अद्भुत राजै, रवि कोटिक
तेज सु लाजै॥२॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ० अर्घं॥

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावन
भाई। अपने कर लोंच सु कीना, हम पूजैं चरन
जजीना॥३॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथ० अर्घं

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवनको सुख
दीना॥४॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णेचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ० अर्घं

सित सातैं सावन आई, शिवनारि वरी जिन-
राई। सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष
कल्याना॥५॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथ० अर्घं

अथ जयमाला । छंद ।

पारसनाथ जिनेंद्रतने वच, पौनभखी जरतें सुन पाये । कर्यो सरधान लह्यो पद आन भयो पद्मावति शेष कहाये ॥ नाम प्रताप टरै संताप सु, भव्यनको शिवशरम दिखाये । हैं विश्वसेनके नंद भले, गुणगावत हैं तुमरे हरखाये ॥१॥

दोहा—केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ । लक्षण उरग निहारपग, बंदों पारसनाथ ॥

पद्धरी छंद

रची नगरी छहमास अगार । बने चहुँ गोपुर शोभ अपार ॥ सु कोटतनी रचना छवि देत । कँगूरनपै लहकैं बहुकेत ॥ ३ ॥ बनारसकी रचना जु अपार । करी बहुभांति धनेश तयार । तहां विश्वसेन नरेंद्र उदार । करै सुख वाम सु दे पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो तुम प्रानत नाम विमान भये तिनके वर नंदन आन । तबै सुरइंद नियोगन आय । गिरिंद करी विधि न्हौन सु जाय ॥५॥ पिता-घर सौंपि गये निज धाम । कुंवेर

बढै वसु जाम सु काम ॥ बढै जिन दोज मयंक समान । रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥६॥ भये जब अष्टम वर्ष कुमार । धरे अणुव्रत्त महासुख-कार ॥ पिता जब आनकरी अरदास । करौ तुम ब्याह वरै मम आस ॥७॥ करी तब नाहिं रहे जगचंद । किये तुम काम कषाय जु मंद ॥चढे गजराज कुमारन संग। सु देखत गंगतनी सु तरंग ।८। लख्यो इक रंक करै तप घोर । चहूंदिशि अगनि बलै अति जोर ॥ कहै जिननाथ अरे सुन भ्रात । करै बहु जीवनकी मत घात ॥९॥ भयो तब कोप कहै कित जीव । जले तब नाग दिखाय सजीव॥लख्यो यह कारण भावन भाय। नये दिव ब्रह्मरिषीसुर आय ॥ १० ॥ तबहि सुर चारप्रकार नियोग । धरी शिविका निज कंध मनोग ॥ कियो वनमाहि निवास जिनंद। धरे व्रत चारित आनँद कंद ॥ ११ ॥ गहे तहँ अष्टमके उपवास। गये धनदत्त तने जु अवास॥ दयो पयदान महासुखकार। भयी पनवृष्टि तहां

तिहिं बार ॥ १२ ॥ गये तब काननमाहिं दयाल। धर्यो तुम योग सबहिं अघटाल॥ तबै वह धूम सुकेत अयान। भयो कमठाचरको सुर आन॥ १३ ॥ करै नभ गौन लखे तुम धीर। जु पूरब वैर विचार गहीर॥ कियो उपसर्ग भयानक घोर। चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥ १४ ॥ रह्यो दसहूं दिशिमें तप छाय। लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय॥ सुरुंडनके विन मुंड दिखाय। पडै जल मूसलधार अथाय॥१५॥ तबै पद्मावति-कंथ धनिंद। चले जुग आय जहां जिनचंद॥ भग्यो तब रंक सु देखत हाल। लह्यो तब केवल ज्ञान विशाल ॥ १६ ॥ दियो उपदेश महा हितकार। सुभव्यन बोधि समेद पधार॥ सुवर्णभद्र जहँ कूट प्रसिद्ध। वरी शिव नारि लही वसुरिद्ध ॥ १७ ॥ जजूं तुम चरन दुहूं कर जोर। प्रभू लखिये अब ही मम ओर॥ कहै बखतावर रत्न बनाय। जिनेश हमें भवपार लगाय ॥ १८ ॥ घत्ता—

जय पारस देवं सुरकृत सेवं, वंदत चर्न सुनागपती । करुणाके धारी परउपगारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥ १९ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—जो पूजै मनलाय भव्य पारस प्रभु नितही । ताके दुख सब जांय भीत व्यापै नहिं कितही ॥ सुख संपति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे । अनुक्रमसों शिव लहै, रतन इमि कहै पुकारे ॥ २० ॥ इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं)

दीपावली-श्रीवर्द्धमानजिनपूजा ।

मत्तगयंद ।

श्रीमतवीरहरैभवपीर, भरैसुखसीरअनाकुलताई । केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकति मौलि सु आई ॥ मैं तुमको इत थापतुहौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरखाई । हे करुणाधनधारक देव, इहां अव तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥

अष्टक।

(द्यानतरायकृत नंदीश्वराष्टकादिक अनेक रागोंमें बनती है)

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृंग भरों।
प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करों॥
श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो॥१॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ॥

मलयागिरचंदनसार, केसरसंग घसों। प्रभु
भवआतापनिवार, पूजत हिय हुलसों।श्रीवीर०।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चंदनं नि० ॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी। त-
सुपुंजधरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी।श्रीवीर०।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमनप्यारे। सो
मनमथभंजनहेत, पूजों पद थारे॥श्रीवीर०॥४॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी। पद
जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी।श्रीवीर०।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हों। तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों ।।श्रीवीर०
ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ॥

हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगंध करा । तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा।।श्रीवीर०।।
ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि० ॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरों। शिव-फलहित हे जिनराय, तुमढिग भेट धरों ।।श्री०।।
ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥

जलफल वसु साजि हिमथार, तनमनमोद धरों। गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरों। श्रीवीर०
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ॥

पंचकल्याणक। रागटप्पा।

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरा-यजी, मोहि राखो० ।। गरभ साढ सित छट्ठ लियो थिति, त्रिशलाउरअघ हरना। सुरसुरपति तितसेव करी नित, मैं पूजों भवतरना। मोहि०
ओं ह्रीं आषाढ़ शुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुंडलपुर कन-
चरना। सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों
भवहरना ॥ मोहिराखो हो० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मँगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप
आचरना। नृप कुमारघर पारन कीनों, मैं पूजों
तुम चरना। मोहिराखो हो० ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनें-द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुकलदशैं वैशाखदिवस अरि, घात चतुक
छयकरना॥ केवललहि भवि भवसर तारे. जजों
चरन सुख भरना। मोहि० ॥

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतें
वरना। गनफनिवृंद जजे तित बहुविध, मैं
पूजों भयहरना। मोहि० ॥५॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णामावश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पांचों पाण्डवोंका घोर परीषह द्वारा निर्वाण गमन।

(पांडव पुराण)

रानी केतुमती अंजनाके संबन्धमें बसन्तमाला पर वार कर रही है। (अंजना नाटक)

जयमाला। छंद हरिगीता २८ मात्रा।

गनधर अशनिधर, चक्रधर, हरधर, गदाधर वरवदा। अरु चापधर, विद्यासुधर तिरसूलधर सेवहिं सदा॥ दुखहरन आनँदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं। सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत,-भालकी जयमाल हैं॥ १॥

छंद घत्तानन्द।

जय त्रिशलीनंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन, चंदवरं। भवतापनिकंदन, तनकनमंदन, रहित सपंदन नयन धरं॥ २॥

छंद त्रोटक।

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशन कंदवनं॥ जगजीतमहारिपुमोहहरं। रज ज्ञानदृगावरचूरकरं॥१॥ गर्भादिकमंगलमंडित हो। दुखदारिदकोनितखंडित हो॥ जगमाहिंतुमी सतपंडित हो। तुमहीभवभाव-विहंडितहो॥२॥ हरिवंशसरोजनकों रविहो। बलवंतमहंततुमी कवि हो॥ लहि केवलधर्मप्रकाशकियो। अबलों

सोइमारगराजति यो ॥३॥ पुनि आपतने गुण माहिंसही। सुरमग्नरहैंजितनेसबही॥ तिनकी वनिता गुनगावत हैं। लयमाननिसों मनभावत हैं ॥४॥ पुनि नाचत रंग उमंग-भरी। तुअ भक्ति विषै पग एम धरी॥ झननं झननं झननं झननं। सुरलेत तहां तननं तननं ॥ ५ ॥ घननं घननं घनघंट बजै। दृमदं दृमदं मिरदंग सजै॥ गगनांगनगर्भगता सुगता। ततता ततता अतता वितता ॥६॥ धृगतां धृगतां गति बाजत है। सुर-ताल रसाल जु छाजत है॥ सननं सननं सननं नभमें। इकरूप अनेक जु धारि भ्रमें ॥७॥ कइ नारिसुवीनबजावति हैं। तुमरो जस उज्जल गावति हैं॥ करतालविषै करताल धरैं। सुर-ताल विशाल जु नाद करैं ॥ ८ ॥ इन आदि अनेक उछाह भरी। सुरभक्ति करै प्रभुजी तुमरी॥ तुमही जगजीवनके पितु हो। तुमही विनकारनतैं हितु हो ॥ ९ ॥ तुमही सब विघ्न विनाशन हो। तुमही निज आनँदभासन हो॥

तुमही चितचिंततदायक हो, जगमाहिं तुमी सब लायक हौ ॥ १० ॥ तुमरे पनमंगलमाहिं सही। जिय उत्तमपुन्यलियो सब ही ॥ हमको तुमरी सरनागत है। तुमरे गुनमैं मन पागत है ॥११॥ प्रभु मोहिय आप सदा बसिये। जबलों वसुकर्म नहीं नसिये ॥ तबलों तुम ध्यान हिये वरतों। तबलों श्रुतचिंतन चित्तरतो ॥ १२ ॥ तबलों व्रत चारित चाहतु हों। तबलों शुभ-भाव सुगाहतु हों ॥ तबलों सतसंगति नित्त रहौ। तबलों मम संजम चित्त गहो ॥ १३ ॥ जबलों नहिं नाश करों अरिको। शिवनारिवरों समता धरिको ॥ यह द्यो तबलों हमको जिनजी। हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥

घत्तानंद।

श्रीवीरजिनेशा नमित सुरेशा, नागनरेशा भगति भरा। 'वृंदावन' ध्यावै विघन नशावै वांछित पावै शर्म वरा ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीति।
वृंदावन सो चतुर नर लहै मुक्ति नवनीत ॥१६॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

निर्वाणक्षेत्र पूजा।

सोरठा—परम पूज्य चौवीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये। सिद्धभूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरतअवतरत संवौषट्। ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः। ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत। वषट्।

गीता छंद।

शुचि छीरदधि सम नीर निरमल, कनकझारीमैं भरौं। संसारपारउतारस्वामी, जोरकर विनती करौं॥ संमेदगढ गिरनार चंपा, पावापुरि कैलासकों। पूजों सदा चौवीसजिननिर्वाण भूमिनिवासकों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्व० स्वाहा ।१।

केशर कपूर सुगंध चंदन सलिल शीतल

विस्तरौं । भवतापको संताप मेटो, जोरकर वि-
नती करौं ॥ संमेद० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं निर्म० ॥ २ ॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनँद-
धरि तरौं ॥ औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर-
कर विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् नि० ॥ ३ ॥

शुभ फूलरास सुवासवासित, खेद सब मनकी
हरौं । दुखधामकामविनाश मेरो, जोरकर
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति० ॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय
परिहरौं । यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोरकर
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दीपकप्रकाशउजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं
डरौं । संशयविमोहविभरम तमहरु, जोरकर
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्व० ॥ ६ ॥

शुभधूप परमअनूप पावन, भानपावन आचरौं। सब करमपुंज जलाय दीज्यौ, जोरकर विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्व० ॥ ७ ॥

बहुफलमँगाय चढाय उत्तम, चारगतिसों निरवरौं। निहचै मुकति फल देहु मोकौं जोरकर विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल गधं अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं। 'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोरकर विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपा० ॥९॥

अथ जयमाला।

सोरठा—श्रीचौवीसजिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों। तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ॥

चौपाई १६ मात्रा।

नमों ऋषभ कैलासपहारं। नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥ वासुपूज्य चंपापुर वंदौं। सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥ बंदौं आजितअजितपद-

दाता। बंदौं संभव भवदुखघाता ॥ बंदौं अभि-
नंदन गणनायक। बंदौं सुमति सुमतिके दायक॥
बंदौं पदममुकति पदमाकर। बंदु सुपास आश-
पासाहर। बंदौं चंद्रप्रभ प्रभुचंदा। बंदौं सुविधि
सुविधिनिधि कंदा ॥४॥ बंदौं शीतल अघतप-
शीतल। बंदु श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ बंदौं
विमल विमल उपयोगी। बंदु अनंत अनँत सुख
भोगी ॥५॥ बंदौं धर्म धर्म-विस्तारा। बंदौं शांति
शांतिमनधारा॥ बंदौं कुंथु कुंथु-रखवालं। बंदौं
अर अरिहर गुणमालं ॥६॥ बंदौं मल्लि काम-
मलचूरन। बंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन ॥ बंदौं
नमि जिन नमितसुरासुर। बंदौं पास पासभ्रम-
जगहर॥७॥ बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर। शिखर
सम्मेदमहागिरि भूपर। एकबार बंदै जो कोई।
ताहि नरकपशुगति नहिं होई ॥ ८ ॥ नरपति-
नृप सुरशक्र कहावै। तिहुंजग भोगभोगिशिव
पावै॥ विघनविनाशन मंगलकारी। गुणविलास
बंदौं भवतारी ॥ ९ ॥

घत्ता—जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करै । ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरै ॥ १० ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामी० ॥

। निर्वाणकांड [गाथा]

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो । उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्बुदो महावीरो ॥१ वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुर वंदिदा धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरि सिहरे णिव्वाण० ॥२॥ वरदत्तो य वरंगोसायरदत्तोय तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण० ॥३॥ णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । वाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुआ वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावागिरिवरसिहरे णिव्वाण०॥५॥ पंडुसुआतिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ । सत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाण० ॥ ६ ॥ संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ । गजपंथे गिरि

सिहरे णिव्वाण० ॥७॥ रामहणू सुग्गीओ गव-
यगवाक्खो य णीलमहणीलो। णवणवदीको-
डीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥ णंगाणंग-
कुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया। सुवण्ण-
गिरिवरसिहरे णिव्वाण० ॥ ९ ॥ दहमुहरायस्स
सुआ कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया। रेवाउहयत-
डग्गे णिव्वाण० ॥१०॥ रेवाणइए तीरे पच्छिम-
भायम्मि सिद्धवरकूडे। दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठ
य कोडिणिव्वुदे वंदे॥ ११ ॥ वडवाणीवरण-
यरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंद-
जीदकुंभयणो णिव्वाण० ॥ १२ ॥ पावागिरि-
वरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चिउरो ।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाण० ॥१३॥ फलहोडी-
वरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे। गुरु-
दत्ताइमुणिंदा णिव्वाण० ॥१४॥ णायकुमारमु-
णिंदो बालि महाबालि चेव अज्झेया। अट्ठावय-
गिरिसिहरे णिव्वाण० ॥१५॥ अच्चलपुरवरणयरे
ईसाणे भायमेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडीओ

णिव्वाण० ॥१६॥ वंसत्थलवणणियरे पच्छिम भायम्मि कुंथुगिरिसिहरे। कुलदेसभूषणमुणी णिव्वाण० ॥१७॥ जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि। कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाण० ॥१८॥ पासस्स, समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच। रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं॥ १९॥

अथ अइसयखेत्तकंडं—अतिशयक्षेत्रकांडं।

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे। अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥ १ ॥ बाहूबलि तह वंदामि पोयणपुरहत्थिणापुरे वंदे। सांति कुंथव अरिहो वाणारसिए सुपासपासं च ॥ २ ॥ महुराए अहिछित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि। जंबुमुणिंदो वंदे णिव्बुइपत्तोवि जंबुवणगहणे ॥ ३ ॥ पंचकल्लाणठाणइं जाणवि संजादमज्झलोयम्मि। मणवयणकायसुद्धी सव्वं सिरसा णमस्सामि ॥ ४ ॥ अग्गलदेवं वंदामि वरणयरे णिवडकुंडली वंदे। पासं सिवपुरि

वंदमि होलागीरिसंखदेवम्मि ॥ ५ ॥ गोमटदेवं वंदमि पंचसयं धणुहदेहउच्चंतं। देवा कुणंति वुट्टी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥६॥ णिव्वाण ठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए साहिया। संजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥७॥ जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए। भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइणिव्वाणं ॥

। अथ निर्वाणकांड भाषा ।

दोहा--वीतराग वंदौं सदा, भावसहित सिरनाय। कहूं कांड निर्वाणकी भाषा सुगमबनाय ॥ १ ॥

चौ०--अष्टापद आदीश्वरस्वामि । वासुपूज्य चंपापुरिनामि ॥ नेमिनाथस्वामी गिरनार। बंदौं भावभगतिउरधार ॥२॥ चरम तीर्थंकरचरम शरीर । पावापुरि स्वामी महावीर ॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस । भावसहित बंदौं निशदीस ॥ ३ ॥ वरदत्तराय रु इंद मुनिंद । सायरदत्त आदिगुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि उठकोडि । बंदौं भावसहित कर जोडि ॥ ४ ॥ श्रीगिरनार

शिखर विख्यात । कोडि बहत्तर अरु सौ सात
संबु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय। अनिरुध आदि नमूं
तसु पाय ॥ ५ ॥ रामचंद्रके सुत द्वै वीर। लाड-
नरिंद आदि गुणधीर ॥ पांचकोडि मुनि मुक्ति
मझार पावागिरि बंदौं निरधार ॥ ६ ॥ पांडव
तीन द्रविडराजान । आठकोडि मुनि मुकति
पयान ॥ श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस। भावसहित
बंदौं निशदीस ॥७॥ जे बलभद्र मुकतिमें गये।
आठकोडि मुनि औरहु भये ॥ श्रीगजपंथ
शिखर सुविशाल। तिनके चरण नमूं तिहुंकाल
॥८॥ राम हणू सुग्रीव सुडील । गवगवाख्य
नील महानील ॥ कोडि निन्याणव मुक्तिपयान।
तुंगीगिरि बंदौं धरिध्यान ॥ ९ ॥ नंग अनंग
कुमार सुजान। पांचकोडि अरु अर्ध प्रमान ॥
मुक्तिगये सोनागिरिशीश। ते बंदौं त्रिभुवनपति
ईस ॥ १० ॥ रावणके सुत आदिकुमार। मुक्ति
गये रेवातट सार ॥ कोटि पंच अरु लाख पचास
ते बंदौं धरि परम हुलास ॥ ११ ॥ रेवानदी

सिद्धवर कूट। पश्चिम दिशा देह जहँ छूट॥ द्वै चक्री दश कामकुमार। ऊंठकोडि बंदौं भव पार॥ १२॥ बडवानी बडनयर सुचंग। दक्षिण दिशि गिरिचूल उतंग॥ इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण। ते बंदौं भवसायरतर्ण॥ १३॥ सुवरण भद्र आदि मुनिचार। पावागिरिवर-शिखर-मँझार॥ चेलना नदीतीरके पास। मुक्तिगये बंदौं नित तास॥ १४॥ फलहोडी बडगाम अनूप। पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप॥ गुरु दत्तादि मुनीसुर जहां। मुक्ति गये बंदौं नित तहां॥ १५॥ बाल महाबाल मुनि दोय। नाग कुमार मिले त्रय होय। श्रीअष्टापद मुक्तिमँझार। ते बंदौंनित सुरत सँभार॥१६॥ अचलौ[2] पुरकी दिश ईसान। तहां मेढ़्रगिरि नाम प्रधान॥ साढे तीन कोडि मुनिराय। तिनके चरण नमूं चितलाय॥ १७॥ वंसस्थल वनके ढिग होय। पश्चिमदिशा कुंथुगिरि सोय॥ कूलभूषण

१ साढ़े तीन किरोड़। २ वर्त्तमान एलचपुर।

दिशिभूषण नाम । तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥१८॥ जसरथराजाके सुत कहे । देश कलिंग पांचसौ लहे ॥ कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान बंदन करूं जोर जुगपान ॥ १९ ॥ समवसरण श्री पार्श्वजिनंद । रेसिंदीगिरि नयनानंद ॥ वरदत्तादि पंच ऋषिराज । ते बंदौं नित धरम जिहाज ॥ २० ॥ तीनलोकके तीरथ जहां । नित प्रति बंदन कीजै तहां ॥ मनवचकायसहित सिर नाय । बंदन करहिं भविक गुणगाय ॥ २१ ॥ संवत सतरहसौ इकताल । आश्विन सुदि दशमी सुविशाल । 'भैया' वंदन करहिं त्रिकाल जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥२२॥ इति

। महावीराष्टक भाषा ।

जिन्होंकी प्रज्ञामें, मुकुरसम चैतन्य जड भी,
स्थिती ध्रौव्योत्पत्ती युत झलकते साथ सबही ।
जगत ज्ञाता ज्ञान प्रकटकरता सूर्यसम जो, महावीरस्वामी दरश हमको दें प्रगट वे ॥ १ ॥
जिन्होंके दो चक्षू पलक अरु लाली रहित हो,

जनोंको दर्शाते, हृदयगत क्रोधातिलयको।
जिन्होंकी शांतात्मा अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा,
महावीर०॥२॥ नमंते इंद्रोंके, मुकुटमणिकी कांति
धरता, जिन्होंके चर्णोंका युग, ललित, संतप्त
जनको भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल
है, महावीर० ॥३॥ जिन्होंकी पूजासे, मुदित-
मन हो मेंढक जबै, हुआ स्वर्गी ताही, समय
गुणधारी अतिसुखी। लहैं जो मुक्तीके सुख
भगत तो विस्मय कहा ? महावीर० ॥ ४ ॥ तपे
सोने ज्योंभी, रहित वपुसे, ज्ञानगृह हैं, अकेले
नाना भी, नृपतिवर सिद्धार्थ सुत हें। न जन्मे
भी श्रीमान्, भवरत नहीं अद्‌भुतगती, महा-
वीर० ॥५॥ जिन्होंकी वाग्गंगा, अमल नयक-
ल्लोल धरती, न्हवाती लोगोंको, सुविमल महा
ज्ञानजलसे। अभी भी सेते हैं, बुधजन महाहंस
जिसको, महावीर० ॥ ६ ॥ त्रिलोकीका जेता
मदनभट जो दुर्जय महा, युवावस्थामें भी, वह
दलित कीना स्वबलसे। प्रकाशी मुक्तीके, अति-

सुसुखदाता जिनविभू, महावीर० ॥७॥ महा-
मोहव्याधी, हरण करता वैद्य सहज, विना
इच्छा बंधू, प्रथितजगकल्याण करता। सद्दारा
भव्योंको सकलजगमें उत्तम गुणी, महावीर
स्वामी दरश हमको दें प्रगट वे ॥ ८ ॥
संस्कृत वीराष्टक रच्यो, भागचंद रुचिवान।
तस भाषा अनुवाद यह, पढि पावै निर्वान॥

अथ सप्तर्षि पूजा।

छप्पय।

प्रथम नाथ श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुंदर चौथो वर॥
पंचम श्री जयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि॥
ये सातों चारणऋद्धिधर, करूं तासपदथापना।
मैं पूजूं मनवचनकायकरि, जो सुख चाहूं आपना

ओं ह्रीं चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वर ! अत्र अवतरत अवतरत। संवौषट् अत्र तिष्ठतः तिष्ठतः। ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम मिष्ट शीतल लायकैं ॥ भवतृषा कंदनिकंदकारण, शुद्ध घट भरवायकैं ॥ मन्वादिचारणऋद्धिधारक, मुनिन-की पूजा करूं । ता करें पातिक हरें सारे, सकल आनँद विस्तरूं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयवानविनयलालसजय-मित्रर्षिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१ ॥

श्रीखंड कदलीनंद केशर, मंद मंद घिसायकैं। तसगंध प्रसरित दिगदिगंतर, भरकटोरी ला-यकैं । मन्वादि० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अति धवल अक्षत खंड-वर्जित, मिष्ट राजन भोगके ॥ कलधौत थारा भरत सुंदर चुनित शुभ उपयोगके ॥ मन्वादि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बहुवर्णसुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुला-बके । केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निजकर चावके ॥ मन्वादि० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पकवान नानाभांति चातुर, रचित शुद्ध नये नये। सदामिष्टलाडूआदिभरबहु, पुरटके थारा लये ॥ मन्वादि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

कलधौत दीपक जडित नाना, भरित गोघृतसा रसों। अति ज्वलितजगमगज्योतिजाकी, तिमि रनाशनहार सों ॥ मम्वादि० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश अंगी कही। सो लाय मनवचकाय-शुद्ध. लगायकर खेऊं सही ॥ मन्वादि० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

वर दाख खारक अमिति प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायकैं। द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर लायकैं ॥ मन्वादि० ॥

ओं ह्रीं मन्वादिसप्तर्षिभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलगंधअक्षतपुष्पचरुवर, दीप धूप सु लावना

फल ललित आठों द्रव्यमिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥ मन्वादि० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो: अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला । छंद त्रिभंगी ।

बंदूं ऋषिराजा, धर्मजहाजा, निजपरकाजा, करत भले। करुणाके धारी, गगनविहारी, दुखअपहारी, भरम दले॥ काटत जमफंदा, भविजन वृंदा, करत अनंदा चरणनमैं। जो पूजें ध्यावें मंगल गावें, फेर न आवै भववनमैं ॥ १ ॥

छंद पद्धरी—जय श्रीमनु मुनिराजा महंत। त्रस थावरकी रक्षा करंत॥ जय मिथ्यातमनाशक पतंग। करुणारसपूरित अंग अंग ॥ २ ॥ जय श्रीस्वरमनु अकलंकरूप। पदसेवकरत नित अमर भूप॥ जय पंच अक्ष जीते महान। तप तपत देह कंचनसमान ॥ ३ ॥ जय निचय सप्त तत्त्वार्थभास। तप-रमातनों तनमैं प्रकाश॥ जय विषयरोध संबोध भान। परणतिके नाशन अचल ध्यान ॥४॥ जय जयहिं सर्वसुंदर दयाल।

लखि इंद्रजालवत जगतजाल ॥ जय तृष्णा-
हारी रमण राम । निज परणतिमें पायो विराम
॥ ५ ॥ जय आनँदघन कल्याणरूप । कल्याण
करत सबको अनूप ॥ जय मद नाशन जयवान
देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥ ६ ॥
जय जयहिं विनयलालस अमान । सब शत्रु
मित्र जानत समान ॥ जय कृशितकाय तपके
प्रभाव । छवि छटा उडति आनंददाय ॥ ७ ॥
जयमित्र सकल जगके सुमित्र । अनगिनत
अधम कीने पवित्र ॥ जग चंद्रवदन राजीव-नैन ।
कबहूं विकथा बोलत न बैन ॥ ८ ॥ जय सातौं
मुनिवर एकसंग । नित गगन-गमन करते
अभंग ॥ जय आये मथुरापुरमँझार । तँह मरी
रोगको अति प्रचार ॥ ९ ॥ जय जय तिन
चरणनिके प्रशाद । सब मरी देवकृत भई बाद ॥
जय लोक करै निर्भय समस्त । हम नमत सदा
नित जोड हस्त ॥ १० ॥ जय ग्रीषनऋतु परवत
मँझार । नित करत अतापन योगसार ॥ जय

तृषापरीषह करत जेर। कहुं रंच चलत नहिं मनसुमेर॥११॥ जय मूलअठाइसगुणनधार। तप उग्र तपत आनंदकार॥ जय वर्षाऋतुमें वृक्षतीर। तहँ अति शीतल झेलत समीर।१२। जय शीतकाल चौपटमँझार। कै नदी सरोवर तट विचार॥ जय निवसत ध्यानारूढ़ होय। रंचक नहिं मटकत रोम कोय॥ १३ ॥ जय मृतकासन वज्रासनीय। गोदूहन इत्यादिक गनीय॥ जय आसन नाना भांति धार। उपसर्ग सहत ममता निवार॥१४॥ जय जपत तिहारो नाम कोय। लख पुत्रपौत्र कुलवृद्धि होय॥ जय भरे लक्ष अतिशय भँडार। दारिद्र तनो दुख होय छार॥ १५ ॥ जय चोर अग्नि डाकिन पिशाच। अरु ईति भीति सब नसत सांच॥ जय तुम सुमरत सुख लहत लोक। सुर असुर नवत पद देत धोक॥ १६ ॥

छंद रोला—ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी। परम पूज्य पद धरे, सकल जगके हित-

कारी। जो मन वचतन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै सो जन मनरँगलाल अष्टऋद्धिनकौं पावै ॥१७॥

दोहा—नमन करत चरनन परत. अहो गरीब निवाज। पंच परावर्तननितैं. निरवारो ऋषि-राज ॥ १८ ॥

ओं ह्री श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ पंचमेरुपूजा।

गीता छंद।

तीर्थंकरोंके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरनकी सदा॥
दो जलधि ढाईदीपमैं सब, गनत मूल विराजही।
पूजों असीजिनधामप्रतिमा, होहि सुख दुख भाजही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरु संबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट्। ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओंह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

चौपाई आंचलीबद्ध (१५ मात्रा)

सीतलमिष्टसुवास मिलाय, जलसों पूजों श्रीजिन

राय। महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पांचों मेरु असी जिनधाम, सबप्रतिमाकोकरों प्र-
नाम। महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो जलं नि० ॥१॥
जलकेशरकरपूर मिलाय, गंधसों पूजों श्री-
जिनराय। महासुख होय, देखे नाथ परमसुख
होय॥ पांचों० ॥ २॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो चंदनं नि० ।२।
अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसौं पूजौं
जिनराय। महासुख होय, देखे नाथ परम सुख
होय॥ पांचों० ॥ ३॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्योऽक्षतान् नि० ॥
वरन अनेक रहे महकाय, फूलनसौं पूजौं
जिनराय। महासुख होय, देखे नाथ परम सुख
होय॥ पांचों० ॥ ४॥
ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो पुष्पं नि० ॥४॥
मनबांछित बहु तुरत बनाय, चरुसौं पूजों
श्री जिनराय। महासुख होय, देखे नाथ परम
सुख होय॥ पांचों० ॥ ५॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो नैवेद्यं नि० ।५।

तुमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसों पूंजों श्री जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पांचों० ।। ६ ।।

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो दीपं नि० ।।६।।

खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूपसों पूजौं श्रीजिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।। पांचों० ।। ७ ।।

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो धूपं नि० ।।७ ।।

सुरस सुवर्ण सुगंध सुहाय, फलसों पूजों श्री-जिनराय । महा सुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचों० ।। ८ ।।

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्यो फलं नि० ।।८।।

आठ दरबमय अरघ बनाय, द्यानत पूजौं श्री जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचों० ।। ९ ।।

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

अथ जयमाला । सोरठा ।

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मंदर कहा ।

विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥१॥
प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन भूपर छाजै। चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवच तन वंदना हमारी ॥ २ ॥ ऊपर पांचशतकपर सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै ॥ चैत्यालय०।३। साढे बासठ सहस उंचाई, वन सुमनस सोभै अधिकाई ॥ चै० ॥४॥ ऊंचा योजन सहस छतीसं, पांडुकवन सोहै गिरिसीसं । चै०॥५॥ चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने। चैत्यालय सोलह सुखकारी, मदवचतन वंदना हमारी ॥ ६ ॥ ऊंचो पांच शतकपर भाखे, चारों नंदनवन अभिलाखे। चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥ ७॥ साढे पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ॥ चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥८॥ उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक चारों वन शुभ गाये। चैत्यालय सोलह सुखकारी मनवचतन वंदना हमारी॥ ९॥ सुरनर चारन

वदनं आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन वंदना हमारी ॥ १० ॥

पंचमेरुकी आरती, पढै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

ओं ह्रीं पंचमेरु संबंधि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं ॥

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये)

नंदीश्वर पूजा संस्कृत।

स्थानासनार्घ्यप्रतिपत्तियोग्यं, सद्भावसन्मान जलादिभिश्च। लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुदर्भगर्भैः संस्थापयामि भुवनाधिपतिं जिनेंद्रं ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

तीर्थोदकैर्मणिसुवर्णघटोपनीतैः पीठे पवित्रवपुषि प्रविकल्पितार्थैः। नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वर द्वीपे पूर्वदिग्भागे एक अंजनगिरि-चतुर्दधिमुखाष्टरतिकरेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा। ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा। ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंडकर्पूरसुकुंकुमाद्यैर्गंधैः सुगंधीकृतादिग्विभागैः। नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि०॥चंदनं॥साल्यक्षतैरक्षतदीर्घगात्रैः सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः। नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि० अक्षतान्॥ अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरुप्रसूतैः। नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि०॥पुष्पं॥ नैवेद्यकैः कांचनपात्रसंस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिनासुहस्तैः॥ नंदीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः० ॥ नैवेद्यं ॥ दीपोत्करैर्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषपदार्थजातैः॥नंदीश्वर द्वीपजिनालयार्चाः० ॥द्वीपं॥ कर्पूरकृष्णागरुचंदनाद्यैर्धूपैर्विचित्रैर्वरगंधयुक्तैः।नंदी० ॥ धूपं ॥ लवंगनारिंगकपित्थपूगश्रीमोचचोचादिफलैः पवित्रैः । नंदी० ॥ फलं ॥ श्रीचंदना

व्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभ-क्त्या । यजे त्रिकालोद्भवजैनबिंबान् भक्त्या स्वकर्मक्षयहेतवेऽहं ॥ अर्घं ॥ श्रीचंदनाव्याक्ष-ततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या । सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ।

ओं ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाव्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-लिना सुभक्त्या । जंब्वाख्यद्वीपस्थजिनालय-स्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं जम्बूद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाव्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-लिना सुभक्त्या । श्रीधातकीखंडजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाव्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशि पुष्पांज-लिना सुभक्त्या । श्रीपुष्करद्वीपजिनालयस्थान् जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीपस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-
लिना सुभक्त्या। सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान्
जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कुंडलगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-
लिना सुभक्त्या। श्रीमन्नगे वै रुचिके हि संस्थान्
जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-
लिना सुभक्त्या। सद्व्यंतराणां निलयेषुसंस्थान्
जिनेंद्रबिंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं अष्टप्रकारव्यन्तरदेवानां गृहेषु जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व०।

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-
लिना सुभक्त्या। चंद्रार्कताराग्रतऋक्षज्योति-
ष्काणां यजे वै जिनबिंबयान् ॥

ओं ह्रीं पंचप्रकारज्योतिष्काणां देवानां जिनालयबिंबेभ्योऽर्घं निर्व०॥

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिन-

देवबिंबान् । सन्नीरगंधाक्षतमुख्यद्रव्यैर्यजे मनोवाक्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीगतान् । वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावासगान् ॥ सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलै–द्रव्यैर्नीरमुखैर्नमामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमजिनालयस्थजिनबिंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ।

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु । यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानां ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ जम्बूधातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवाश्चंद्राम्भोजशिखंडिकंठकनकप्रावृड्घनाभाजिनाः । सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेंधना । भूतानागत-

वर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ श्रीम-
न्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे।
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुंडले मानुषांके
इष्वाकारेंजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्ग-
लोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि
चैत्यालयानि ॥ द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वा-
विंद्रनीलप्रभौ द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ
च प्रियंगुप्रभौ । शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः
संतप्तहेमप्रभास्ते संज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सि-
द्धिं प्रयच्छंतु नः । नोकोडिसया पणवीसा तेप-
णलक्खाण सहससत्ताईसा । नौसेते पडियाला
जिणपडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा बंदे ॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

निर्वाणसागरराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः ।
शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभुः ।१।
उद्धराह्वोग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः । पु-
ष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥ २ ॥

उत्साही ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः ।
विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥ ३ ॥
कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान-मतिः शुद्धमतिस्तथा । श्री-
भद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥ ४ ॥
नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरर्चिताः । वंदिता
धरणेंद्राद्यैः संतु नः सिद्धिहेतवे ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अतीतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरनामानि ।

ऋषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः ।
सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥१॥
चन्द्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।
श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमल द्युतिः॥२॥
अनन्तो धर्मनामा च शांतिकुंथौ जिनोत्तमौ ।
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३॥
हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । ध्वंस्तो-
पसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः ॥४॥ कर्मा-
तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः । एते सुरा-
सुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पूजिता

भरताद्यैश्च भूपेंद्रैर्भूरिर्भूतिभिः । चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वंतु शाश्वतीं ॥६॥

ओं ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अनागततीर्थंकरनामानि ।

तीर्थकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः । सुपार्श्वनामधेयोऽन्योयथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥१॥ सर्वात्मभूतइत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः । उदयः प्रश्नकीर्तिश्चजयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥ अरश्च पुण्यमूर्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः । विमलो निर्मलाभिख्यश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥३॥ समाधिगुप्तनामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः । जयो विमलसंज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥४॥ चरमोऽनतवीर्योऽमीवीर्यधैर्यादिसद्गुणाः । चतुर्विंशतिसंख्याता भविष्यत्तीर्थकारिणः ॥५॥

ओं ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कंपिल्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स । आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ ॥

छंद—अमररमणीउ णच्चंति जिणमंदिरं । विविहवरतालतूरहिं सुचंगमपुरं ॥ जडियबहुरय-

चामीयरं पत्तयं। जोइयं सुंदरं जिणघ आर-
त्तियं ॥२॥ रुणझुंकाररणेवरघचलणुट्ठिया। मो-
तियादाम वच्छच्छले संठिया॥ गीय गायंति
णच्चंति जिणमंदिरं। जोइयं सुंदरं ॥ ३ ॥ केश-
भरिकुसुमपय सरसढोलंतिया। वयण छणइंद
समकंतवियसंतिया कमलदलणयणाजिणवयण
पेखंतिया। जोइयं सुंदरं० ॥४॥ इंदधारिणिंदज
क्खेंदवोहंतिया। मिलिव सुर असुर घणरासि
खेलंतिया। के वि सियचमर जिणविंब ढोलं-
तिया। जोइयं०।
गाथा—णंदीसुरम्मि दीवे वावण्णाजिणालयेसु
पडिमाणं। अट्ठाहिवरपव्वे इंदो आरत्तियं कुणई॥
छंद--इद्र आरत्तियं कुणइ जिणमंदिरं, रयण-
मणिकिरणकमलेहि वरसुंदरं। गीय गायंति
णच्चंति वरणाडियं, तूर वज्जंति णाणाविहप्पाडियं
गाथा—एक्केक्कम्मि य जिणहरे चउचउ सोलहवा-
बीओ। जोयणलक्खपमाणं अट्ठमणंदीसुरं
दीवे ॥ ८ ॥

अट्ठमं दीवणंदीसुरं भासुरं चैत्यचैत्यालये बंदि अमरासुरं। देवदेवीउ जइ धम्मसंतोसिया, पंचमं गीय गायंति रसपोसिया ॥

गाथा--दिव्वेहिं खीरणीरेहिं गंधइढाइहिं कुसुममालाहिं। सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरंभए इंदो ॥ १० ॥

इंदसोहम्मिसग्गावबज्जोसयं, आयऊसाज्जि ऐरावयं वरगयं। सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा, मिलिव पडिवक्खया तस्स तिहु देसया।

गाथा--कंसालतालतिवली, झल्लरभर भेरिवेणुविण्णाओ। वज्जांति भावसहिया भव्वेहिं णउज्जिया सव्वे ॥

छंद--सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं करताडियं, सद्दए संझिगणझिगणाणिद्धाडयं। गिझिनिझं झिगिनिझं वज्जये झल्लरी, णच्चये इंदइंदायणी सुंदरी। णयणकज्जलसलायामयं दिण्णयं, हेमहीरालयं कुंडलं, कंकणं ॥ झंझणं झंकरं तं पिये णेवरं, जिणघआरत्तिय जोइयं सुंदरं ॥ दिट्ठिणासत्रि

अंगुलियदावंतिया, खिणहिं खिण खिंणहिं जिण- विंब जोइत्तिया ॥ णारिणच्चंति गायंति कोइल- सुरं, जिणघ० ॥ रुणुझुणंकारणे वरघकरकंकणं णाइ जंपंति जिणणाहवे बहुगुणं ॥ जुवइ ण- च्चंति सुमरंति ण उ णियघरं जिणघआरत्तियं जोइयं सुंदरं ॥ कंठकदलीह मणिहार झुल्लंतऊ, जिणइ थुइ थुई सो णाय संतुट्ठऊ ॥ विविहको- ऊहलं रयहि णारीधरं, जिणघ आरत्तियं जोइयं सुंदरं ॥ १७ ॥

घत्ता—आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गा- वग्ग हलहु लहइ । जं जं मण भावइ तं सुह पावइ, दीणु वि कासुण भासुणइ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिना- लयेभ्यो अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥

यावंति जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहं ॥

(इत्याशीर्वादः)

सरब पर्वमें वडो अठाई परब है। नंदीश्वर सुर जांहिं लेय वसु दरव है॥ हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना। पूजें जिनमह प्रतिमा है हित आपना॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वर द्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे द्विपंचास-ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। ओं ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

कंचनमणिमय भृंगार, तीरथ नीरभरा।
तिहुं धार दयी निरवार, जामन मरन जरा॥
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करों।
वसुदिनप्रति मैं अभिराम, आनँदभावधरों॥१।

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपेपूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचासज्जिनाल-यस्थजिनप्रतिमाभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति०

भवतपहर शीतल वाच, सो चंदन नाहीं। प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठांहीं।नंदी०। चंदनं०॥२॥ उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे

सोहै। सब जीते अक्षसमाज, तुमसम अरु को है ॥नंदी०॥ अक्षतान् ॥३॥ तुम काम विनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं। लहुं शीललच्छमी एव, छूटों सूलनसौं॥ नंदी०॥पुष्पं०॥४॥ नेवज इंद्रियबलकार. सो तुमने चूरा। चरु तुम ढिग सोहै सार. अचरज है पूरा॥नंदी०॥ नैवेद्यं ।५। दीपककी ज्योति प्रकाश. तुम तन मांहि लसै। टूटै करमनकी राशि. ज्ञानकणी दरसै॥ नंदी० ॥दीपं॥ ६ ॥ कृष्णागरुधूपसुवास. दशदिशि नारि वरै। अति हरषभाव परकाश. मानों नृत्य करै॥ नंदी०॥ धूपं॥ ७॥ बहुविधिफल ले तिहुंकाल. आनँद राचत हैं॥ तुम शिवफल देहु दयाल.तुहि हम जाचत हैं॥ नंदी०॥ फलं॥ ॥८। यह अरघ कियो निजहेत. तुमको अरपतु हों। 'द्यानत' कीज्यो शिवखेत. भूमि समरपतु हों॥ नंदी० अर्घं ॥९॥

अथ जयमाला।

दोहा—कातिक फागुन साढके. अंत आठदिन

माहिं । नंदीश्वर सुरजात हैं-हम पूजैं इह ठाहिं।
एकसौ त्रेसठ कोडि जोजनमहा। लाख चौरासि
एक एक दिशमैं लहा ॥ अट्ठमों दीप नंदीश्वरं
भास्वरं । भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ।२।
चार दिशि चार अंजनागिरि राजहीं। सहस
चौरासिया एकदिश छाजहीं ॥ ढोलसम गोल
ऊपर तले सुंदरं ॥ भौन० ॥ ३ ॥ एक इक चार
दिशि चार शुभ बावरी । एक इक लाख जोजन
अमल जलभरी ॥ चहुंदिशि चार वन लाख
जोजन वरं । भौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमधि
सोल गिरि दधिमुखं । सहस दश महा जोजन
लखतही सुखं । बावरीकौन दोमांहि दो रति
करं । भौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तीस इक सहस
जोजन कहे । चार सोलै मिलैं सर्व बावन लहे ॥
एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं भौन० ॥ ६॥
बिंब अठ एकसौ रतनमयी सोहही। देवदेवी
सरव नयनमनमोहही ॥ पांचसै धनुष तन
पद्म-आसन परं । भौन०॥७॥ लाल नख मुख

नयन स्याम अरु स्वेत हैं। स्यामरंग भौंह सिर केश छविदेत हैं॥ वचन बोलत मनों हँसत कालुषहरं। मौन० ॥ ८ ॥ कोटि शशि-भान-दुति तेज छिप जात है। महा वैराग परिणाम ठहरात है॥ बयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक धरं ॥ मौन० ॥ ९ ॥

सो०--नंदीश्वर जिनधाम. प्रतिमा महिमाको कहै। द्यानत लीनो नाम. यही भगति शिवसुखकरै ॥

। अथ सोलहकारण पूजा।

सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये। हरषे इंद्र अपार मेरुपै ले गये ॥ पूजाकरिनिजधन्यलख्यौ बहु चावसों। हमहू षोडशकारन भावैं भावसौं ।१।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्। ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः। ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि !

कंचनझारी निरमल नीर, पूजौं जिनवर गुन-गंभीर। परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो॥ दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थं-

पददाय । परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योजन्ममृत्युविनाशनायजलं

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥२॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योसंसारतापविनाशनाय चं०

तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजौं जिनवर तिहुं जगभूप । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशविशुद्धि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०

फूल सुगंध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जग आधार । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशवि० ॥४॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामवाणविध्वंसनायपु०

सदनेवज बहुविध पकवान । पूजौं श्रीजिनवर गुणखान । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरशवि० ॥५॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नै०

दीपकजोति तिमिर छयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार। परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि० ॥६॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः मोहांधकारविनाशनायदी०

अगर कपूर गंध शुभखये। श्रीजिनवर आगैं महकेय। परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश० ॥७॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजों जिन वांछितदातार। परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरशवि० ॥८॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०

जल फल आठों दरव चढाय। 'द्यानत' वरत करों मनलाय। परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो॥ दरश० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०

अथ जयमाला।

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास।

पाप पुण्य सब नाशकैं, ज्ञानभानपरकास ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा।

दरशविशुद्धि धरै जो कोई ताको आवागमन न होई ॥ विनय महा धारै जो प्रानी। शिव वनिताकी सखी बखानी।२। शीलसदादिढ जो नर पालैं। सो अवरनकी आपद टालैं ॥ ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं। ताके मोहमहातम नाहीं ॥३॥ जो संवेगभाव विस्तारै। सुरगमुकतिपद आप निहारै ॥ दान देय मन हरष विशेखै। इह भव जस परभव सुख देखै ॥४॥ जो तप तपै खपै अभिलाषा। चूरै करमशिखर गुरु भाषा ॥ साधु समाधि सदा मनलावै। तिहुंजगभोग भोगि शिव जावै ॥५॥ निशिदिन वैयावृत्य करैया। सो निहचै भवनीर तिरैया ॥ जो अरहंतभगति मन आनै। सो जन विषय कषाय न जानै।६। जो आचारज भगति करै है। सो निरमल आचार धरै है ॥ बहुश्रुतवंतभगति जो करई। सोनर संपूरन श्रुत धरई ॥ ७ ॥ प्रवचन भगति करै जो

ज्ञाता। लहै ज्ञान परमानंददाता॥ षट्आवश्यक नित जो साधै। सो ही रत्नत्रय आराधै॥ ८॥ धरमप्रभाव करै जे ज्ञानी। तिन शिवमारग रीति पिछानी॥ वत्सल अंग सदा जो ध्यावै। सो तीर्थंकर पदवी पावै॥ ९॥ दोहा—

एही सोलहभावना, सहित धरै व्रत जोय।
देव इन्द्र नरवंद्यपद, द्यानत, शिवपद होय॥१०॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा

अथ दशलक्षणधर्मपूजा।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं। सौच सत्य संजम तप त्याग उपाव हैं॥ आकिंचन ब्रमचरज धरम दश सार हैं। चहुंगतिदुखतैं काढि मुकति करतार हैं॥ १॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि।
भवआताप निवार, दसलच्छन पूजौं सदा॥१॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्य-
ब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्मेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदन केशर गार, होय सुवास दशोंदिशा। भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा

अमल अखंडितसार, तंदुल चंद्रसमान शुभ। भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरधलोकलों ॥ भव०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षटरससंजुगत। भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता ॥ भव०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

फलकी जाति अपार, घ्राननयतमनमोहने। भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८

आठोंदरव सँवार, द्यानत अधिक उछाहसों। भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अंग पूजा। सोरठा।

पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं।

धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीता छंद।

उत्तमछिमा गहोरे भाई। इहभव जस परभव सुखदाई॥ गाली सुनि मन खेद न आनो। गुनको औगुन कहै अयानो॥ कहि है अयानो वस्तु छीनै, बांध मार बहुविध करै। घरतैं निकारै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै॥ तैं करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा। अति क्रोधअगानि बुझाय प्रानी, साम्यजल ले सीयरा

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

मान महाविषरूप, करहिं नीचगति जगतमें। कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्रानी सदा॥२॥ उत्तम मार्दवगुन मनमाना। मानकरनका कौन ठिकाना। वस्यो निगोदमाहितैं आया। दमरी रूकन भाग बिकाया॥ रूकन बिकाया कर्मवशतैं, देव इकइंद्री भया। उत्तम मुआ चांडाल हूवा, भूप कीडोंमें गया॥ जीतव्य-जोबन धन-गुमान कहा करै जलबुदबुदा। करि विनय बहु

श्रीपालको गिरफ्तार करके पहरेदार लिये जा रहे हैं, गुणमाला विलाप कर रही है। (श्रीपाल पुराण)
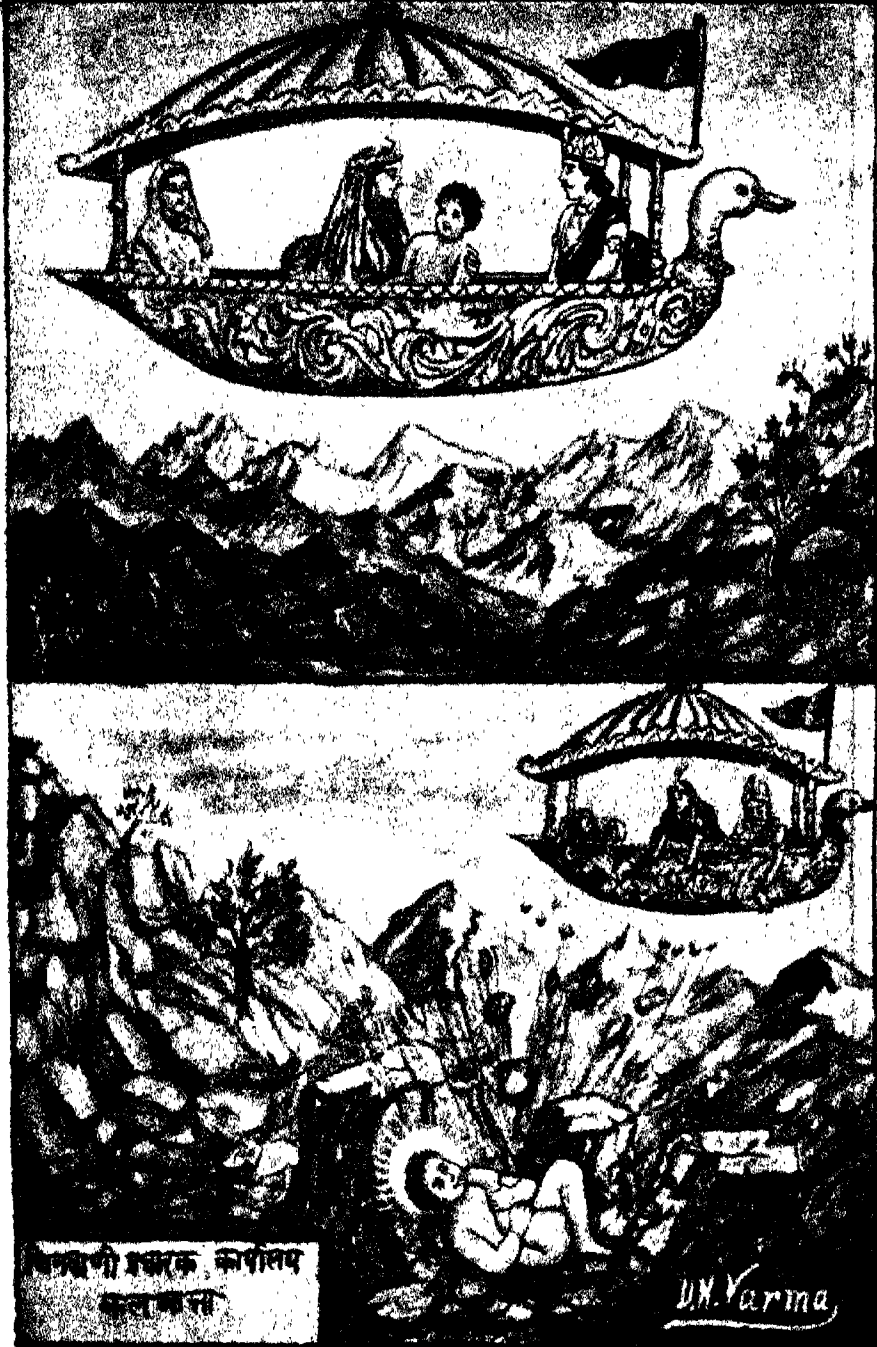
हनुमान जन्म—गिरते ही शिला चूर्ण की।

गुणि बडे जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥ २ ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कपट न कीजे कोय, चोरनके पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥३॥

उत्तम आर्जवरीति बखानी। रंचक दगा बहुत दुखदानी। मनमें है सो वचन उचारिये। वचन होय सो तनसों करिये॥ करिये सरल तिहुं जोग अपने, देख निरमल आरसी। मुख करै जैसा लखै तैसा कपटप्रीति अँगारसी॥ नहिं लहै लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विशेषता। भयत्याग दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घंनिर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥४॥

उत्तम सत्यवरत पालीजै परविश्वासघात नहिं कीजै॥ सांचे झूठे मानव देखो, आपनपूत स्वपास न पेखो॥ पेखो तिहायत पुरुष सांचेको

दरब सब दीजिये। मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा सांचगुण लख लीजिये॥ ऊंचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरमका भूपति भया। वसु झूठसेती नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया॥४॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥४॥

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसौं। शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसारमें॥४॥

उत्तम शौच सर्व जग जाना। लोभपापको बाप बखाना। आसापास महादुख दानी। सुखपावै संतोषी प्रानी॥ प्रानी सदा शुचि शीलजपतप ज्ञानध्यानप्रभावतें। नित गङ्गजमुन समुद्र न्हाये, अशुचि दोष सुभावतें॥ ऊपर अमल मल भर्‍यो भीतर, कौनाविध घट शुचि कहै। बहु देह सुगुन थैली, शौच गुन साधू लहै॥५॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेंद्री मन वश करो। संजमरतन सँभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं॥६॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे। भवभवके भागें अघ

तेरे ॥ सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं, आलसहरन करन सुख ठांहीं ॥ ठांहीं पृथी जल आग मारुत रूख त्रस करुना धरो। सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो। जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जगकीचमें। इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुख बीचमें ॥

ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहैं सुरराय, करमसिखरको वज्र है। द्वादसविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥ ७ ॥ उत्तम तप सबमांहिं बखाना। करमशैलको वज्र समाना ॥ वस्यो अनादिनिगोदमँझारा भूविकलत्रय पशुतन धारा। धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता ॥ श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता ॥ अति महादुरलभ त्याग विषय कषाय जो तप आदरै ॥ नरभवअनूपमकनकघरपर माणिमयी कलसा धरै ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति

दान चार परकार, चारसघंको दीजिये।
धन विजुरी उनहार, नरभवलाहो लीजिये ॥८॥
उत्तमत्याग कह्यो जगसारा। औषध शास्त्र अभय आहारा॥ निहचै रागरोष निरवारै। ज्ञाता दोनों दान सँभारै दोनों सँभारै कूपजल सम, दरब घरमें परिनियां॥ निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया। धनि साध शास्त्र अभय दिवैया, त्याग राग विरोधकों॥ विन दाम श्रावक साध दोन्यों, लहैं नाहीं बोधकों ॥८॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्माय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

परिगह चौविस भेद त्याग करैं मुनिराजजी।
त्रिसनाभाव उछेद घटती जान घटाइये ॥९॥
उत्तम आकिंचन गुण जानो। परिगहचिंता दुख ही मानो॥ फांस तनकसी तनमें सालै। चाह लँगोटीकी दुख भालै॥ भालै न समता सुख कभी नर बिना मुनिमुद्रा धरे। धनि नगनपर तन-नगन ठाडे-सुर असुर पायनि परैं॥ घर माहिं त्रिसना जो घटावै रुचि नहीं संसारसों।

बहुधन बुरा हू भला कहिये. लीनपरउपगारसौं ॥
ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

शीलबाड नौ राख. ब्रह्मभाव अन्तर लखो ।
करि दोनों अभिलाख. करहु सफल नरभव सदा ॥
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ । माता बहिन सुता पहिचानौ ॥ सहैं बानवरषा बहु सूरे । टिकै न नैन-वाण लखि कूरे ॥ कूरे तियाके अशुचितनमैं कामरोगी रति करै । बहु मृतक सडहिं मसान-माहीं. काक ज्यों चौंचें भरैं ॥ संसारमें विषबेल नारी. तजि गये जोगीश्वरा । 'द्यानत' धरमद-शपौंडि चढिकैं. शिवमहलमैं पग धरा ॥ १० ॥
ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

अथ समुच्चय जयमाला । दोहा ।

दोहा—दशलच्छन बंदों सदा. मन वांछित फल दाय । कहूं आरती भारती. हमपर होहु सहाय ॥

बेसरी छंद ।

उत्तमछिमा जहां मन होई. अंतरबाहिर शत्रु न कोई । उत्तममार्दव विनय प्रकासै. नानाभेद

ज्ञान सब भासै ॥२॥ उत्तमआर्जव कपट मिटावै। दुरगति त्यागि सुगति उपजावै॥ उत्तम शौच लोभपरिहारी, संतोषी गुणरतन भंडारी। उत्तम सत्यवचन मुख बोलै। सो प्रानी संसार न डोलै ॥ ३ ॥ उत्तमसंजम पालै ज्ञाता। नरभव सफल करै, ले साता ॥ ४ ॥ उत्तम तप निरवांछित पालै। सो नर करमशत्रुकों टालै। उत्तमत्याग करै जो कोई। भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई।५। उत्तमआकिंचनव्रत धारै। परमसमाधि दशा विसतारै ॥ उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै। नरसुर सहित मुकतिफल पावै ॥ ६ ॥

दोहा-करै करमकी निरजरा, भवपींजरा विनाशि
अजरअमरपदको लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

। संस्कृत स्वयंभूस्तोत्र ।

येन स्वयंबोधमयेन लोका आश्वासिता केचन चित्तकार्ये। प्रबोधिना केचन मोक्षमार्गे तमादि

नाथं प्रणमामि नित्यं ॥ १ ॥ इंद्रादिभिः क्षीरस-
मुद्रतोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेंद्रः । यः
कामजेता जनसौख्यकारी तं शुद्धभावादजितं
नमामि ॥ २ ॥ ध्यानप्रबंधप्रभवेन येन निहत्य
कर्मप्रकृतीः समस्ताः । मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे
तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥३॥ स्वप्ने यदीया
जननी क्षपायां गजादिवह्न्यंतमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोयं नौमि प्रमोदादभिनं-
दनं तं ॥ ४ ॥ कुवादिवादं जयता महांतं नयप्र-
माणैर्वचनैर्जगत्सु । जैनंमतं विस्तरितं च येन तं
देवदेवं सुमतिं नमामि ॥ ५ ॥ यस्यावतारे सति
पितृधिष्ण्ये ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् । धना-
धिपः षण्णवमासपूर्वं पद्मप्रभं तं प्रणमामि
साधुं ॥ ६ ॥ नरेंद्रसर्पेश्वरनाकनाथैर्वाणी भवती
जगृहे स्वचित्ते । यस्यात्म बोधः प्रथितः सभाया-
महं सुपार्श्वं ननु तं नमामि ॥७॥ सत्प्रातिहार्या-
तिशयप्रपन्नो गुणप्रवीणो हतदोषसंगः । यो लोक-
मोहांधतमः प्रदीपश्चंद्रप्रभं तं प्रणमामि भावात्

॥ ८ ॥ गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि पंचोपदिष्टा समितिश्च येन। बभाण यो द्वादशधा तपांसि तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥ ९ ॥ ब्रह्मव्रतांतो जिन नायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापि धर्मः। येन प्रयुक्तो व्रतवंधबुद्ध्या तं शीतलं तीर्थकरं नमामि ॥१०॥ गणे जनानंदकरे धरांते विध्वस्तकोपे प्रशमैकचित्तं। यो द्वादशांगं श्रुतमादिदेश श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशं ॥११॥ मुक्त्यंगनाया रचिता विशाला रत्नत्रयीशेखरता च येन। यत्कंठमासाद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात् ॥ १२ ॥ ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी ध्यानी व्रती प्राणिहितोपदेशी। मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥ १३ ॥ आभ्यंतरं बाह्यमनेकधा यः परिग्रहं सर्वमपाचकार। यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां वंदे जिनं तं प्रणमाम्यनंतं ॥ १४ ॥ सार्द्धं पदार्था नव सप्त तत्वैः पंचास्तिकायाश्च न कालकायाः ॥ षड्द्रव्यनिर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदिता तं प्रण-

मामि धर्मं ॥ १५ ॥ यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमो-
भूच्छ्रीनंदनो द्वादशको गुणानां। निधिप्रभुः
षोडशको जिनेंद्रस्तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात्
॥१६॥ प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं विराधितो
यो न करोति रोषं। शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतो
यस्तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥ १७॥ यः सं-
स्तुतो यः प्रणतः सभायां यः सेवितोंतर्गणपूर-
णाय। पदच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य देवाधिदेवं
प्रणमाम्यरं तं ॥ १८ ॥ रत्नत्रयं पूर्वभवांतरे यो
व्रतं पवित्रं कृतवानशेषं। कायेन वाचा मनसा
विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥१९॥
ब्रुवन्नमः सिद्धपदाय वाक्य,-मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव
लोचं। लौकांतिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वंदे जि-
नेशं मुनिसुव्रतं तं ॥ २० ॥ विद्यावतं तीर्थकरा-
य तस्मा,-याहारदानं ददतो विशेषात्। गृहे नृ-
पस्याजनि रत्नवृष्टिः स्तौमि प्रणामान्नयतो नमिं
तं ॥२१॥ राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं
चकारापुनरागमाय। सर्वेषु जीवेषु दयां दधान-

स्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥ २२ ॥ सर्पा-
धिराजाः कमठारितोयै,-र्ध्यानास्थितस्यैव फणा-
वितानैः। यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं
महतादरेण ॥ २३ ॥ भवार्णवे जंतुसमूहमेन,-
माकर्षयामास हि धर्मपोतात्। मज्जंतमुद्वीक्ष्य य
एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहंतं ॥ २४ ॥
यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरणव्यापारशुद्ध्यानिशं ।
भव्यानां जयमालया विमलया पुष्पांजलिं दापय-
न्नित्यं संश्रियमातनोति सकलं स्वर्गापवर्गास्थितिं।

स्वयंभू स्तोत्र भाषा ।

चौपाई ।

राजविषै जुगलनि सुख कियो। राज त्याग भुवि
शिवपद लियो॥ स्वयंबोध स्वंभू भगवान। बंदौं
आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥ इंद्र छीरसागरजल
लाय। मेरु न्हवाये गाय बजाय॥ मदनविना-
शक सुख करतार। बंदौं अजित अजितपदकार
२ ॥ शुकल ध्यानकरि करमविनाशि। घाति

अघातिसकल दुखराशि। लह्यो मुकतिपदसुख अधिकार। बंदौं संभव भवदुख टार ॥ ३ ॥ माता पच्छिम रयनमंझार। सुपने सोलह देखे सार ॥ भूप पूछि फल सुनि हरषाय। बंदौं अभिनंदन मनलाय ॥४॥ सब कुवादवादी सरदार। जीते स्यादवादधुनिधार ॥ जैनधरमपरकाशक स्वाम। सुमतिदेवपद करहुं प्रनाम ॥ ५ ॥ गर्भ अगाऊ धनपति आय। करी नगर शोभा अधिकाय ॥ बरसे रतन पंचदश मास। नमों पदमप्रभु सुखकी रास ॥६॥ इंद फनिंद नरिंद त्रिकाल। बानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल ॥ द्वादशसभा ज्ञानदातार। नमों सुपारसनाथ निहार ॥ ७ ॥ सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं। दोष अठारह कोऊ नाहिं ॥ मोह महातमनाशक दीप। नमों चंद्रप्रभ राख समीप ॥ ८ ॥ द्वादश विध तप करम विनाश। तेरहभेद चरित परकाश ॥ निज अनिच्छ भवि इच्छकदान। बंदौं पहुपदंत मनआन ॥ ९ ॥ भविसुखदाय सुरगतैं

आय । दशविध धरम कह्यो जिनराय ॥ आप समान सबनि सुख देह । बंदौं शीतल धर्मसनेह ॥१०॥ समता सुधा कोपविष नाश । द्वादशांग वानी परकाश ॥ चारसंघ-आनँद-दातार । नमौं श्रियांस जिनेश्वर सार ॥ ११ ॥ रतनत्रयचिर-मुकुटविशाल । सोभै कंठ सुगुन मनिमाल ॥ मुक्तिनार भरता भगवान । वासुपूज्य वंदौं धर ध्यान ॥ १२ ॥ परम समाधि-स्वरूप जिनेश । ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश ॥ कर्मनाशि शिवसुख विलसंत । वंदौं विमलनाथ भगवंत ॥ १३ ॥ अंतर बाहिर परिगह डारि । परम दिगंबरव्रत को धारि ॥ सर्वजीवहित-राह दिखाय । नमों अनंत वचनमनलाय ॥ १४ ॥ सात तत्त्व पंचा-सतिकाय । अरथ नवों छदरब बहुभाय ॥ लोक अलोक सकल परकास । वंदौं धर्मनाथ अवि-नाश ॥ १५ ॥ पंचम चक्रवराति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शांतिकरन सोलम जिनराय । शांतिनाथ बंदौं हरखाय ॥ १६ ॥

बहुथुति करे हरष नहिं होय। निंदे दोष गहैं नहिं कोय। शीलवान परब्रह्मस्वरूप। बंदौं कुंथु न।थ शिवभूप॥१७॥ द्वादशगण पूजैं सुखदाय थुति बंदना करैं अधिकाय॥ जाकी निजथुति कबहुं न होय। वंदौं अरजिनवर-पद दोय॥१८॥ परभव रतनत्रय-अनुराग। इह भव ब्याहसमय वैराग॥ बालब्रह्मपूरनव्रतधार। वंदौं मल्लिनाथ जिनसार॥ १९ ॥ विन उपदेश स्वयं वैराग। थुति लोकांत करै पगलाग॥ नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं। वंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं॥ २० ॥ श्रावक विद्यावंत निहार। भगतिभाव सों दियो अहार॥ बरसी रतनराशि ततकाल। बंदौं नमिप्रभु दीनदयाल॥ २१ ॥ सब जीवन की बंदी छोर। रागरोष द्वै बंधन तोर॥ रज-माति ताजि शिवातियसों मिले। नेमिनाथ वंदौं सुखनिले॥ २२ ॥ दैत्यकियो उपसर्ग अपार। ध्यान देखि आयो फनिधार॥ गयो कमठ शठ मुख कर श्याम। नमों मेरुसम पारसस्वाम॥२३॥

भवसागरतैं जीव अपार। धरमपोतमैं धरे निहार॥ डूबत काढे दया विचार। वर्द्धमान वंदौं बहुबार॥ २४॥

दोहा—चौवीसौं पदकमलजुग, वंदौं मनवचकाय
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय॥

॥ अथ रत्नत्रयपूजा भाषा॥

दोहा।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि दुखपावकजलधार।
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार॥१॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयधर्म! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक सोरठा।

चीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो।
जनमरोगानिरवार, सम्यकरत्नत्रय भजूं॥ १॥

ओं ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय जन्म रोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति०

चंदनकेसरगारि, परिमलमहासुरंगमय। जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनायचन्दन निर्वपामीति। २।

तंदुलअमलचितार, वासमतीसुखदासके। जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति । ३ ।

महकैं फूलअपार, अलिगुंजैंज्योंथुतिकरैं । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयायकामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति । ४ ।

लाडूबहु विस्तार चीकनमिष्टसुगंधयुत । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति।५।

दीपरतनमयसार जोतप्रकाशैजगतमैं । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयायमोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति । ६ ।

धूपसुवासविथार चंदनअगर कपूरकी । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति ॥ ७ ॥

फलशोभाअधिकार लौंगछुहारेजायफल। जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति ॥ ८ ॥

आठदरबनिरधार उत्तमसोंउत्तमलिये । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति ॥ ९ ॥

सम्यकदरशनज्ञान व्रतशिवमगतीनोंमयी । ज०

पारउतारनयान द्यानत पूजोंव्रतसहित । ज०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

दर्शन पूजा ।

दोहा—सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट मुक्तजीवसोपान

ज्ञानचरित जिहँविन अफल सम्यकदर्शप्रधान ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा-नीर सुगंध अपार त्रिषाहरै मलछय करै ॥
सम्यकदर्शनसार आठ अंग पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसर घनसार तापहरै सीतलकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अछतअनूपनिहार दारिदनाशैसुखभरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवासउदार खेदहरैमनशुचिकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवजविविधिप्रकार छुधाहरैथिरताकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपज्योतितमहार घटपटपरकाशैमहा । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रानसुखकार रोगविघनजडताहरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफलआदिविथारं निहचैसुरशिवफलकरै । स०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलगंधाक्षतचारु, दीपधूपफलफूलचरु । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जयमाला ।

दोहा--आप आप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार ।
रहितदोष पच्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछंद

सम्यकदरशनरतन गहीजै । जिनवचमें संदेह न कीजै । इहभव विभवचाह दुखदानी । पर-भवभोग चहै मत प्रानी ॥ प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ॥ परदोष ढकिये धरम डिगतेको, सुथिर कर हरखिये ॥ चहुँसंघको वात्सल्य कीजै, धरमकी परभावना । गुन आठसों गुन आठ लहिकैं, इहां फेर न आवना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टंगसहितपंचविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनायपूर्णार्घ्यंनि०

ज्ञान पूजा ।

दोहा--पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशनभान ।
मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।

सोरठा ।

नीरसुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।
सम्यकज्ञान विचार, आठभेद पूजों सदा ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसरघनसार, तापहरै शीतलकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अक्षत अनुप निहार, दारिद नाशै सुख करै ।स०

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवासउदारखेदहरैमनशुचिकरै ।स० पुष्पं
नेवजविविधप्रकार,छुधाहरैथिरता करै।स० नै०
दीपजोतितमहार,घटपटपरकाशैमहा। स० दीपं
धूपघ्रानसुखकार,रोगविघनजडता हरै।स० धूपं
श्रीफलआदिविथारनिहचैसुरशिवफलकरै।स० फ
जलगंधाक्षतचारु,दीपधूपफलफूलचरु। स० अर्घं

अथ जयमाला ।

दोहा—आपआपजानै नियत, ग्रंथपठन व्यौहार ।
संसय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ॥१॥

सम्यकज्ञानरतनमनभाया, आगम तीजा नैन बताया। अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर अरथ उभय सँग जानो॥ जानो सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये। तपरीति गहि बहु मौन देकैं, विनयगुन चितलाइये॥ ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञान दर्पन देखना। इसज्ञान-हीसों भरत सीझा और सब पटपेखना॥ २॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

चारित्र पूजा।

दोहा-विषयरोग औषध महा, दवकषायजलधार। तीर्थंकर जाकौ धरै, सम्यकचारितसार॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र! अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा।

नीरसुगंधअपार, तृषा हरै मल छय करै। सम्यक चारितसार, तेरहविध पूजौं सदा॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।१।

जलकेशरघनसार, तापहरैशीतलकरै। सम्यक०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥

अंछतअनूपनिहार, दारिदनाशैसुखभरै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पहुपसुवासउदार, खेदहरैमनशुचिकरै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।४।

नेवजविविधप्रकार, छुधाहरै थिरता करै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दीपजोति तमहार, घटपटपरकाशैमहां । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।६।

धूप घ्रान सुखकार, रोगविघनजडताहरै । स०॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफलआदिविथार, निहचैसुरशिवफलकरै । स०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

जलगंधाक्षतचारु, दीपधूपफलफूलचरु । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

अथ जयमाला ।

दोहा-आपआपथिरनियतनय, तपसंजम व्योहार
स्वपरदया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछंद ।

सम्यकचारित रतन सँभालौ, पांचपाप तजि

के व्रत पालो। पंचसमिति त्रयगुपति गहीजे, नरभव सफल करहु तन छीजे॥ छीजै सदा तनको जतन यह एक संजम पालिये। बहु रुल्यो नरक निगोदमाहीं, विषकषायनि टालिये॥ शुभकरमजोग सुघाट आयो, पार हो दिन जात है 'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है॥२॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविध सम्यकचारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।५॥

अथ समुच्चय जयमाला। दोहा—

सम्यकदरशन-ज्ञानव्रत, इन विन मुकति न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दवलोय।१।

चौपाई १६ मात्रा।

जापै ध्यान सुथिर बन आवै। ताके करमबंध कट जावै॥ तासों शिवातिय प्रीति बढावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥२॥ ताको चहुंगतिके दुख नाहीं। सो न परै भवसागरमाहीं॥ जनम जरामृत दोष मिटावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै॥३॥ सोई दशलच्छनको साधै। सो सोलह कारण आराधै॥ सो परमातमपद उपजावै। जो

सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥ सोई शक्रचक्रिपद लेई। तीनलोकके सुख विलसेई॥ सो रागादिक भाव बहावै। जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥५॥ सोई लोकालोक निहारै। परमानंददशा विस-तारै॥ आप तिरै औरन तिरवावै। जो सम्यक रतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥

एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय।
तीन भेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय।७।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्वपामी० ॥

(अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये)

। श्रीसम्मेदाचल पूजा ।

दोहा-सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उतकृष्टसुथान
शिखरसमेद सदा नमों, होयपापकी हान ॥१॥
अगणित मुनि जहँतें गये.लोकशिखरके तीर।
तिनके पदपंकज नमूं.नाशैं भवकी पीर ॥ २ ॥

अडिल्ल-है उज्वल वह क्षेत्र सुअति निरमलसही।
परम पुनीत सुठौर महा गुणकी मही।
सकल सिद्धिदातार महा रमणीक है।

वंदों निज सुखहेत अचल पद देत है ॥३॥
सोरठा-सिखरसमेद महान, जगमें तीर्थप्रधान है।
महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किमि कहों ॥
सुंदरी छंद--सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है। अति सु उज्वल तीर्थ महान है ॥ करहिं भक्ति सु जे गुण गायकें। वरहिं सुर शिवके सुख जायकें ॥
अडिल्ल--सुर हरि नर इन आदि और वंदन करें। भवसागरतें तिरें, नहीं भवमें परें। सफल होय तिन जन्म शिखर दरशान करैं, जनमजनमके पाप सकल छिनमैं टरैं ॥ ६ ॥
पद्धरीछंद--श्रीतीर्थंकर जिनवर जु बीश। अरु मुनि असंख्य सब गुणन ईश ॥ पहुँचे जहँतैं कैवल्य धाम। तिनकों अब मेरी है प्रणाम ॥ ७॥

गीतिका छंद

सम्मेदगढ है तीर्थ भारी सबहिकों उज्वल करै। चिरकालके जे कर्म लागे दर्शतें छिनमैं टरै ॥ है परमपावन पुण्यदायक अतुलमहिमा जानिये। अरु है अनूप सरूप गिरिवर तास पूजन ठानिये ॥८॥

दोहा-श्रीसम्मेदशिखर सदा, पूजौं मनवचकाय।
हरत चतुर्गतिदुःखकों, मनवांछित फलदाय ॥
ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र अत्र । तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः। ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक।

अडिल्ल-क्षीरोदधिसम नीर सुनिरमललीजिये।
कनक कलशमें भरकें धारा दीजिये ॥
पूजौं शिखरसमेद सुमनवचकाय जी।
नरकादिक दुख टरैं अचलपद पायजी ॥

ओं ह्रीं विंशतितीर्थंकराद्यसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यो सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामी० ॥

पयसों घसि मलयागिरिचंदन लाइये। केसरि आदि कपूर सुगंध मिलाइये ॥ पूजों शिखरसमेद० ॥ नरका० चंदनं ॥ २ ॥ तंदुल धवल सुवासित उज्वल धोयकै। हेमरतनके थार भरों शुचि होयकै ॥ पूजों शिखरसमेद०। अक्षतान्। ॥ ३ ॥ सुरतरुके सम पुष्प अनूपम लीजिये। कामदाहदुखहरणचरण प्रभु दीजिये ॥ पूजौं शिखरसमेद० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ कनकथार नैवेद्य सु

षटरसतैं भरे। देखत क्षुधा पलाय सुजिन आगैं धरे॥ पूजों शिखरसमेद०। नरकादि०। नैवेद्यं० ॥५॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति प्रकाश है। पूजत होत सुज्ञान मोहतम नाश है॥ पूजौंशिखरसमेद०। नरका०। दीपं ॥६॥ दशविध धूप अनूप अगनिमैं खेवहूं। अष्टकर्मको नाश होत सुख लेवहूं॥ पूजौं शिखरसमेद०॥ नरका०॥ धूपं॥७॥ एला लौंग सुपारी श्रीफल ल्याइये। फल चढाय सुख वांछ मोक्षफल पाइये। पूजौं शिखर०। नरकादि०। फलं० ॥८॥ जल गंधाक्षतपुष्प सुनेवज लीजिये। दीप धूप फल लेकर अर्घ सुदीजिये॥ पूजौंशि- खरसमेद॥ नरका०। अर्घ्यं॥९॥

पद्धरि छंद।

श्रीविंशति तीर्थंकर जिनेंद्र। अरु असंख्यात जहँतैं मुनेंद्र॥ तिनकों करजोरि करौं प्रणाम। जिनको पूजों तजि सकल काम॥ महार्घं०॥ अडिल्ल—जे नर परम सुभावनतैं पूजा करैं।

हरि हलि चक्री होंय राज छह खंडकरैं फेरि होंय धरणेंद्र इंद्रपदवी धरैं। नानाविध सुखभोगि बहुरि शिवतिय वरैं ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिंक्षिपेत्) छंद जोगीरासा।

श्रीसम्मेदशिखरगिरि उन्नत, शोभा अधिक प्रमानों। विंशति तिहिंपर कूट मनोहर, अदभुत रचना जानो ॥ श्रीतीर्थंकर बीस तहांतैं, शिवपुर पहुंचे जाई। तिनके पदपंकज जुग पूजौं, अर्घ प्रत्येक चढाई ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नं० २४ अजितनाथ सिद्धवरकूट।

प्रथम सिद्धिवरकूट सुजानों, आनँद मंगलदाई। अजितनाथ जहँतैं शिव पहुंचे पूजोंमनवचकाई कोडि जु अस्सी एक अरब मुनि, चौवन लाख जु गाई। कर्म काटि निर्वाण पधारे, तिनकों अर्घ चढाई ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसिद्धवरकूटतें, अजितनाथजिनेंद्रादि मुनि एक अर्ब अस्सीकोटि चौवनलाख सिद्धपद प्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १४ संभवनाथ धवलकूट।

धवलदत्त है कूट दूसरो, सब जियको सुखकारी। श्रीसंभवप्रभु मुक्ति पधारे पापतिमिरकों टारी॥ धवलदत्त दे आदि मुनी, नवकोडाकोडी जानो लाख बहत्तरि सहस वियालिस, पंचशतक ऋषि मानो॥ कर्मनाशकरि शिवपुर पहुंचे, बदों शीशं नवाई। तिनके पदजुग जजहुं भावसों, हरषि २ चितलाई॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रधवलकूटतें सम्भवनाथजिनेंद्रादि मुनि नौकोडाकोडीबहत्तरलाखब्यालीसहजारपांचसौसिद्धपदप्राप्तेभ्यःसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

नं० १६ अभिनंदननाथ आनन्दकूट।

चौपाई—आनँदकूट महासुखदाय। अभिनंदन प्रभु शिवपुर जाय॥ कोडाकोडि बहत्तरजान। सत्तर कोडि लखछत्तिस मान॥ सहस वियालिस शतक जु सात। कहे जिनागममें इह भांत॥ ये ऋषि कर्म काटि शिवगये। तिनके पदजुग पूजत भये॥

ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रे आनंदकूटतैंश्रीअभिनंदनजिनेंद्रादि

मुनि बहत्तरकोडाकोडीसत्तरकोडिछत्तीसलाखब्यालीसहजार सा-
तसौसिद्धपद प्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १६ सुमतिनाथ अविचलकूट। अडिल्ल।

अविचल चौथो कूट महासुख धामजी। जहँतैं सुमतिजिनेश गये निर्वाणजी॥ कोडाकोडी एक मुनीश्वर जानिये। कोटि चुरासी लाख बहत्तरि मानिये॥ सहस इक्यासी और सातसौं गाइये। कर्म काटि शिवगये तिन्हें शिर नाइये सो थानक मैं पूजूं मनवचकायजी। पाप दूर हो जांय अचलपदपायजी॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रअविचलकूटतैंसुमतिनाथजिनेंद्रादि मुनि एक कोडाकोडी चौरासीकोड़ि बहत्तरलाख इक्यासीहजार सातसौ सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीतिस्वाहा।

नं० ८ पद्मप्रभ मोहनकूट। अडिल्ल—

मोहन कूट महान परम सुंदर कह्यो। पद्मप्रभ जिनराज जहां शिवपुर लह्यो॥ कोटि निन्यानवे लाख सतासी जानिये। सहस तियालिस और मुनीश्वर मानिये॥ सप्त सैंकरा सत्तर ऊपर वीस जू। मोक्ष गए मुनि तिन्हें नमूं नित

शीस जू ॥ कहै जवाहरलाल दोयकर जोरिकै
अविनाशी पद दे प्रभु कर्मन तोरिकै ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रमोहनकूटतैं पद्मप्रभजिनेंद्रादिमुनि निन्यानवे कोडि सतासीलाख तेतालोसहजार सातसौ नब्बे सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० २२ सुपार्श्वनाथ प्रभासकूट । सोरठा—

कूट प्रभास महान, सुंदर जनमन-मोहनो ।
श्रीसुपार्श्वभगवान, मुक्ति गये अघ नाशिकैं ॥
कोडाकोडि उनचास, कोडि चुरासी जानिये ।
लाख बहत्तर खास, सात सहस हैं सात सौ ॥
और कहे ब्यालीस, जहँतैं मुनि मुक्ती गए ।
तिनहिं नमैं नित शीश, दासजवाहर जोरकर ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रप्रभासकूटतैं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेंद्रादिमुनि उनचास कोडाकोडि चौरासीकोडि बहत्तरलाख सात हजार सातसौ बियालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० ६ चंद्रप्रभ ललितकूट ।

दोहा—पावन परम उतंग है, ललितकूट है नाम
चंद्रप्रभ शिवकों गये, बंदौं आठों जाम ॥
कोडाकोडी जानिये, चौरासी ऋषिमान ।

कोडि बहत्तर अरु कहे, अस्सीलाख प्रमान ॥
सहस चुरासी पंचशत, पचपन कहे मुनिंद ।
बसुकरमनको नाशकर, पायो सुखको कंद ।
ललितकूटतें शिवगये, बंदौं शीश नवाय ।
जिनपद पूजौं भावसों, निजहित अर्घ चढाय ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रललितकूटतैं चंद्रप्रभजिनेंद्रादि मुनि चौरासीकोडाकोडीबहत्तरकोडिअसीलाख चौरासीहजार पांचसौ पचपन सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति०

नं० ७ पुष्पदंत सुप्रभकूट । पद्धरी छंद ।

श्री सुप्रभकूट सु नाम जान । जहँ पुष्पदंतको मुकति थान ॥ मुनि कोडाकोडि कहे जु भाख । नव ऊपर नवधर कहे लाख ॥ शतचारि कहे अरु सहससात । ऋषिअस्सी और कहे विख्यात ॥ मुनि मोक्षगए हानि कर्मजाल । वंदौं करजोरि नमाय भाल ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुप्रभकूटतैं पुष्पदन्तजिनेंद्रादि मुनि एककोडाकोडीनिन्यानवेलाख सातहजार चारसौ अस्सी सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

न० १२ शीतलनाथ विद्युतकूट । सुन्दरी छंद—

सुभग विद्युतकूट सु जानिये । परम अद्भुत

तापर मानिये ॥ गये शिवपुर शीतलनाथजी। नमहुँ तिन इह करधर माथजी ॥ मुनि जु कोडा कोडि अठारहू। मुनि जु कोडि वियालिस जानहू ॥ कहे और जु लाखबत्तीस जू। सहसब्यालिस कहे यतीश जू ॥ अवर नौसौ पांच जु जानिये। गए मुनि शिवपुरको मानिये ॥ करहिं जे पूजा मन लायकैं। धरहिं जन्म न भवमें आयकैं ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रविद्युतकूटतैं श्रीशीतलनाथजिनेंद्रादि मुनि अठारहकोडाकोडी ब्यालीसकोडि बत्तीसलाखब्यालीसहजार नौसौ पांच सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं०।

नं० ६ श्रेयांसनाथ संकुलकूट। जोगीरासा—

कूट जु संकुल परममनोहर, श्री श्रेयान् जिनराई। कर्मनाशकर शिवपुर पहुंचे, वंदों मनवच काई ॥ छ्यानव कोडाकोडी जानो, छ्यानवकोडि प्रमानो ॥ लाख छ्यानवे सहस मुनीश्वर, साढे नव अब जानो ॥ ता ऊपर ब्यालीस कहे हैं श्रीमुनिके गुण गावैं ॥ त्रिविधयोग करि जो कोइ पूजे, सहजानँद तहँ पावैं ॥ सिद्ध नमों मुख

दायक जगमें, आनँदमंगलदाई। जजों भावसों चरण जिनेश्वर, हाथजोड शिरनाई॥ परम मनोहर थान सु पावन, देखत विघन पलाई॥ तीन काल नित नमत जवाहर मेटो भवभटकाई। जहँतें जे मुनिसिद्ध भये हैं, तिनको शरण गहाई। जापदको तुम प्राप्त भए हो सो पद देहु मिलाई ॥११॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसंकुलकूटतें श्रीश्रेयांसनाथजिनेंद्रादिमुनिछ्यानवेकोडाकोडी छ्यानवेकोडि छ्यानवेलाखनवहजार पांचसौवियालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्योअर्घं०

नं० २३ विमलनाथ सुवीरकुलकूट। कुसुमलताछंद।

श्रीसुवीरकुलकूट परम सुंदर सुखदाई, विमलनाथ भगवान जहां पंचमगति पाई। कोडि सु सत्तर सातलाख षटसहस्र जु गाई, सात सतक मुनि और वियालिस जानो भाई॥ दोहा—

अष्टकर्मको नष्टकर, मुनि अष्टमछिति पाय।
तिनप्रति अर्घ चढावहू, जनम मरण दुखजाय॥
विमलदेव निरमल करण, सब जीवन सुखदाय।
मोतीसुत वंदत चरण, हाथ जोर शिरनाय॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुवीरकुलकूटतें श्रीविमलनाथजिनेंद्रादि मुनि सत्तरकोडि सातलाख छहहजार सातसौब्यालीस सिद्ध पदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १३ अनंतनाथ स्वयंभूकूट। अडिल्ल—

कूट स्वयंभू नाम परम सुंदर कह्यो। प्रभु अनंत जिननाथ जहां शिवपद लह्यो॥ मुनि जु कोडाकोडि छ्यानवे जानिये। सत्तर कोडि जु सत्तरलाख प्रमानिये॥ सत्तर सहस जु और मुनीश्वर गाइये। सात सतक ता ऊपर तिनको ध्याइये॥ कहैं जवाहरलाल सुनो मनलायकें। गिरिवरकों नित पूजो अति सुखपायकें॥

सो०—पूजत विघन पलाय, ऋद्धिसिद्धि आनँद करै। सुरशिवको सुखदाय, जो मनवच पूजा करै॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रस्वयंभूकूटतें अनंतनाथजिनेंद्रादि मुनि छ्यानवेकोडाकोडी सत्तरकोडि सत्तरलाख सत्तरहजार सातसौ सिद्धपद प्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति०।

नं १८ धर्मनाथ सुदत्तकूट। चौपाई—

कूट सुदत्त महाशुभ जान। श्रीजिनधर्मनाथको थान॥ मुनि कोडाकोडी उनईस। और कहे ऋषि कोडि उनीश॥ लाखजु नव नवसहस सु-

जान । सात शतक पंचावन मान ॥ मोक्ष गये वे कर्मनचूर । दिवसरु रयन नमों भरपूर ॥ महिमा जाकी अतुल अनूप । ध्यावत वर इंद्रादिक भूप ॥ शोभत महा अचलपद पाय । पूजों आनँद मंगलगाय ॥ दोहा—परमपुनीत पवित्र अति, पूजत शत सुरराय । तिह थानकको देख कर, मोतीसुत गुणगाय ॥ पावन परम सुहावनो, सब जीवन सुखदाय । सेवत सुरहरि नर सकल मनवांछित पद पाय ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुदत्तकूटतैंधर्मनाथजिनेंद्रादिमुनि उनीस कोडाकोडी उन्नीसकोडि नौलाख नौहजार सातसौ पंचानवे सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० २० शान्तिनाथ-शांतिप्रभकूट । सुगीतिका छंद ।

श्रीशांतिप्रभ है कूट सुंदर आति पवित्र सुजानिये । श्रीशांतिनाथ जिनेंद्र जहँतैं, परमधाम प्रमानिये ॥ नवजु कोडाकोडि मुनिवर लाख नव अब जानिये । नौ सहस नवसै मुनि निन्यानव,हृदयमें धर मानिये ॥ दोहा—कर्मनाश शिवको गए, तिन प्रति अर्घ चढाय ।

त्रिविधयोग करि पूज हैं मनवांछित फलपाय ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रशांतिप्रभकूटतैं शांतिनाथजिनेन्द्रादिमुनि नौकोडाकोड़ी नोलाख नोहजार नौसै निन्यानवे सिद्धपद्प्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नं० २ कुन्थुनाथ ज्ञानधरकूट। गीतिका छंद।

ज्ञानधर शुभकूट सुंदर, परम मनमोहन सही
जहँतैं प्रभु श्रीकुंथु स्वामी, गये शिवपुरकी मही
कोडा सु कोडि छ्यानवें, मुनि कोडिछ्यानव
जानिये। अर लाखबत्तिस सहसछ्यानव, शतक
सात प्रमानिये ॥
और कहे व्यालीस मुनि, सुमिरों हिये मझार।
तिनपद पूजों भावसों, करै जु भवदधिपार ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रज्ञानधरकूटतैं श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्रादिमुनि छ्यानवे कोड़ाकोड़ी छ्यानवे कोडि बत्तीसलाखछ्यानवे हजार सातसौ बियालीस सिद्धपद्प्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं०

नं० ४ अरनाथ नाटककूट। दोहा–

कूट जु नाटक परमशुभ, शोभा अपरंपार।
जहंतें अराजिनराजजी, पहुंचे मुक्ति-मझार ॥
कोडिनिन्यानव जानि मुनि लाखनिन्यानव और
कहे सहस निन्यानवे वंदौं कर जुग जोर ॥ आठ

कर्मको नष्टकरि, मुनि अष्टमक्षिति पाय। तेगुरु मो हिरदै बसो, भवदधि पार लगाय ॥

सोरठा–तारणतरण जिहाज, भवसमुद्रके बीचमें। पकरो मेरी बांह, डूबतसे राखो मुझे ॥ अष्टकरम दुख दाय, ते तुमने चूरे सबै। केवलज्ञान उपाय, अविनाशी पद पाइयो ॥ मोती सुत गुणगाय, चरणन शीश नवायकै। मेटो भवभटकाय, मांगत अब बरदान यो ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनाटककूटतैं अरनाथजिनेन्द्रादिमुनि निन्यानवैकोडि निन्यानवेलाख निन्यानवै हजार सिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० ५ मल्लिनाथ सम्बलकूट। सुन्दरी छंद।

कूट सम्बल परमपवित्र जू। गये शिवपुर मल्लिजिनेश जू ॥ मुनि जु छ्यानवकोडि प्रमानिये। पदजजतहिरदय सुख आनिये ॥ मोतीदामछंद–भजों प्रभुनाम सदा सुखरूप, जजों मनमेंधरभाव अनूप। टरैं अघपातिक जाहिंसुदूर, सदा जिनको सुख आनँदपूर ॥ डरै ज्यों नाग गरुडको देखि, भजे गजजुत्थ जु सिंहहि पेखि।

तुमनाम प्रभू दुखहरण सदा, सुखपूर अनूप होय मुदा ॥ तुमदेव सदा अशरणशरणं, भट मोहबली प्रभुजी हरणं । तुम शरणगही हम आय अबैं, मुझ कर्मबली दिढ चूर सबैं ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसम्बलकूटतै श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्रादि छ्यानवैकोडि मुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रभ्योऽर्घंनिर्व०

नं० ६ मुनिसुव्रतनाथ निर्जरकूट। मदअवलिप्तकपोलछंद—

मुनिसुव्रत जिननाथ सदा आनँदके दाई। सुंदर निर्जरकूट जहांतैं शिवपुर जाई। निन्यानवकोडाकोडि कहे मुनि कोडि सत्याना ॥ नवलख जोडि मुनिंद कहे नौसौ निन्न्याना ॥

सोरठा-कर्मनाशि ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहे। तारणतरणजिहाज, मो दुख दूर करो सकल।

भुजंगप्रयात।

बली मोहकी फौज प्रभुजी भगाई, जग्यो ज्ञानपंचम महासुक्खदाई। समोशरण धरणेंद्रने तब बनायो, तबै देव सुरपाति सबै शीसनायो ॥ जयो जय जिनेंद्र सुशब्दं उचारी, भए आज दरशन सबै सुक्खकारी। गए सर्व पातिक प्रभू

दूरहीतैं, जबै दर्श कीने प्रभू दूरहीतैं ॥ सुनी नाथ श्रवनो जु तेरी बड़ाई, गही शरण हमने तुम्हारी सुहाई। बली कर्म नाशे जबै मुक्ति पाई तिन्हें हाथ जोरें सदा शीश नाई ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनिर्जरकूटतैं मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्रादिमुनि निन्यानवैकोड़ाकोड़ी सत्तानवे कोडि नौलाख नौसौ-निन्यानवे सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति० ॥

नं० ३ नमिनाथ मित्रधरकूट। जोगीरासा।

कूट मित्रधर परममनोहर, सुंदर अति छविदाई। श्रीनमिनाथ जिनेश्वर जहतैं, अविनाशी पदपाई ॥ नौसौ कोडाकोडी मुनिवर, एक अरब ऋषि जानो। लाख पैंतालिस सात सहस अरु, नौसै ब्यालिस मानो ॥ दोहा—

वसु करमनको नाश कर, अविनाशी पदपाय।
पूजों चरणसरोजकों, मनवांछितफलदाय ।२०।

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रमित्रधरकूटतैं नमिनाथजिनेन्द्रादिमुनि नौसौकोड़ाकोड़ी एकअरब पैंतालिसलाख सातहजार नौसौ ब्यालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

नं० २६ पार्श्वनाथ। सुवर्णभद्रकूट।

दोहा-सुवरणभद्र जु कूटपै, श्रीप्रभुपारसनाथ।

जहँतैं शिवपुरको गये, नमोंजोरिजुगहाथ ॥

त्रिभंगीछंद--मुनि कोडिबियासी लाख चुरासी, शिवपुरवासी सुखदाई । सहसहि पैंतालिस सात सौ व्यालिस, तजिके आलस गुणगाई ॥ भवद-दधितैं तारण पतित उधारण, सबदुखहारण सुख कीजे । यह अरज हमारी सुनित्रिपुरारी शिवपदभारी मो दीजे ॥

छंद--यह दर्शनकूट अनंतलह्यो । फलषोडशकोटि उपास कह्यो । जगमैं यह तीर्थ कह्यो भारी । दर्शन करि पाप कटैं सारी ॥

मोतीदाम छंद--टरैं गति वंदत नर्क तिर्यंच । कबहुं दुखको नहिं पावै रंच ॥ यही शिवको जगमैं है द्वार । अरे नर वंदो कहत 'जवार' ॥

दोहा-पारशप्रभुके नामतैं, विघन दूरि टरि जाय । ऋद्धिसिद्धिनिधितासको, मिलिहैनिसिदिनआय

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुवर्णकूटतैं श्रीपार्श्वनाथादिमुनि बियासी करोड़ चुरासीलाखपैंतालिसहजारसातसौबियालीस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल-जे नर परमसुभावनतैं पूजा करें। हरि हलि चक्री होंय राज्य षटखँड करें॥ फेरि होंय धरणेंद्र इंद्रपदवी धरैं, नानाविधि सुख भोगि बहुरि शिवतिय वरैं॥

अथाशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)
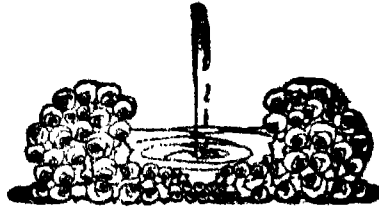
। श्रीगिरनारक्षेत्र पूजा ।

दोहा-वंदों नेमि जिनेश पद, नेमि-धर्म-दातार
नेम धुरंधर परम गुरु, भविजन सुख कर्तार॥

जिनवाणीको प्रणमिकर गुरु गणधर उरधार॥
सिद्धक्षेत्र पूजा रचौं, सब जीवन हितकार।
उर्जयंत गिरिनाम तस, कह्यो जगत विख्यात।
गिरिनारी तासों कहत, देखत मन हर्षात ॥३॥

द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी छंद।

गिरिसुउन्नत सुभगाकार है। पंचकूट उत्तंग सुधार है॥ वन मनोहर शिला सुहावनी। लखत सुंदर मनको भावनी। अवर कूट अनेक बने तहां। सिद्ध थान सु अति सुंदर जहां॥ देखि भविजन मन हर्षावते। सकल जन वंदनको आवते ॥ ५ ॥

त्रिभंगी छंद।

तहँ नेमकुमारा व्रत धारा, कर्म विदारा शिव पाई। मुनि कोडि बहत्तर सात शतक धर तागिरिऊपर सुखदाई ॥ है शिवपुरवासी गुणके राशी विधिथिति नाशी ऋद्धिधरा। तिनके गुणगाऊं पूज रचाऊं मन हर्षाऊं सिद्धिकरा ॥६॥

दोहा—ऐसे क्षेत्र महान तिहिं, पूजों मनवचकाय।
थापना त्रयबार कर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्रीं श्री गिरनारसिद्धक्षेत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक कवित्त ।

लेकर नीर सुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक लाई। दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्म जरा दुखदाई॥ नेमिपती तज राजमती भये बालयती तहँतैं शिवपाई॥ कोडि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सु जजों हरषाई॥१॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारसिद्धक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

चंदनगारि मिलाय सुगंध सु, ल्याय कटोरीमें धरना। मोहमहातममेटनकाज सु चर्चतु हों तुम्हरे चरना॥नेम०॥चंदनं॥ अक्षत उज्वल-ल्याय धरों, तहँ पुंज करो मनको हर्षाई। देहु अखयपद प्रभु करुणाकर, फेर न या भववास कराई।नेमि०॥अक्षतान्॥ फूल गुलाब चमेली बेल कदंब सु चंपक बीन सु ल्याई। प्राशुकपुष्प लवंग चढाय सु गाय प्रभू गुणकाम नशाई॥ नेम०॥ पुष्पं॥ नेवज नव्य करों भरथाल सुकंचन भा-

जनमे धर भाई। मिष्ट मनोहर चेपत हों यह रोग चुधा हरियो जिनराई ॥ नेम० ॥ नैवेद्यं ॥ धूप दशांग सुगंधमई कर खेवहु अग्निमझार सुहांई। शीघ्रहि अर्ज सुनो जिनजी मम कर्म महाबन देउ जराई ॥नेम०॥धूपं॥ ले फल सार सुंगधमई रसनाहृद नेत्रनको सुखदाई। क्षेपत हों तुम्हरे चरणा प्रभु देहु हमैं शिवकी ठकुराई नेम० ॥ फलं ॥ ले वसु द्रव्यसु अर्घ करों धर थाल सुमध्य महा हरषाई। पूजत हों तुमरे चरणा हरिये वसुकर्मबली दुखदाई। नेम०॥ अर्घं॥ दोहा—पूजत हों वसुद्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय निजहितहेतु सुहावनो, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥ पूर्णार्घं ॥ १० ॥

पंच कल्याणक अर्घ। छंद पाइता।

कार्तिक सुदिकी छठि जानो। गर्भागम तादिन मानो ॥ उत इंद्र जजैं उस थानी। इत पूजत हम हरषानी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां गर्भमंगल प्राप्ताय नेमिनाथजिनेंद्रायअर्घं

श्रावणसुदि छठि सुखकारी। तब जन्म महो-

त्सव धारी । सुरराज सुमेर न्हवाई । हम पूजत इत सुखपाई ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लाषष्ट्यांजन्ममंगलमंडितायनेमिनाथजिनें०अर्घं

सित सावनकी छठि प्यारी । तादिन प्रभु दीक्षा धारी ॥ तपघोर वीर तहँ करना । हम पूजत तिनके चरणा ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठीदिने दीक्षामंगलप्राप्तायनेमिनाथजिनें०अर्घं

एकम सुदि आश्विन भाषा । तब केवल ज्ञान प्रकाशा ॥ हरि समवसरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आश्विनशुक्लाप्रतिपदि केवलज्ञानप्राप्तायनेमिनाथजिनें०अर्घं

सित अष्टमि मास अषाढा । तब योग प्रभूने छाडा । जिन लई मोक्ष ठकुराई । इत पूजत चरणा भाई ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय नेमिनाथजिनें० अर्घं

अडिल्ल--कोडि बहत्तरि सप्त सैकडा जानिये । मुनिवर मुक्ति गये तहँतैं सु प्रमाणिये ॥ पूजों तिनके चरण सु ननबचकायकैं । वसुविध द्रव्यमिलायसुगायबजायकैं ॥ पूर्णार्घं० ॥

जयमाला । दोहा ।

सिद्धक्षेत्र गिरनार शुभ, सब जीवन सुखदाय ।
कहों तासु जयमालिका, सुनतहि पाप नशाय ॥

पद्धरी छंद ।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सुगिरि उन्नत बखान ॥ तहं झूनागढ़ है नगर सार । सौराष्ट्रदेशके मधिविथार ॥२॥ तिस झूनागढ से चले सोइ । समभूमि कोस वर तीन होइ ॥ दरवाजेसे चल कोस आध । इक नदी बहत है जल अगाध ॥३॥ पर्वत उत्तरदक्षिण सु दोय । मधि बहत नदी उज्वल सु तोय ॥ ता नदीमध्य कइ कुंड जान । दोनों तट मंदिर बने मान ॥४॥ तहं वैरागी वैष्णव रहाय । भिक्षाकारण तीरथ कराय ॥ इक कोस तहां यह मच्यो ख्याल । आगें इक वरनदि बहत नाल ॥ ५ ॥ तहं श्रावकजन करते सनान । धो द्रव्य चलत आगें सुजान ॥ फिर मृगीकुंड इक नाम जान । तहँ वैरागिनके बने थान ॥ ६ ॥ वैष्णव तीरथ जहँ र-

च्यो सोइ । वैष्णव पूजत आनंद होइ ॥ आगैं चल डेढ सु कोस जाव । फिर छोटे पर्वतको चढाव ॥ ७ ॥ तहँ तीन कुंड सोहैं महान । श्रीजिनके युग मंदिर बखान ॥ मंदिर दिगंबरी दोय जान । श्वेतांबरके बहुते प्रमान ॥८॥ जहँ बनी धर्मशाला सु जोय । जलकुंड तहां निर्मल सु तोय ॥ तहँ श्वेतांबरगण दिशां जाय । ताकुंडमाहिं नितही नहाय ॥ ९ ॥ फिर आगैं पर्वत पर चढाउ । चढि प्रथम कूटको चले जाउ ॥ तहँ दर्शन कर आगैं सु जाय । तहँ दुतिय टोंकके दर्श पाय ॥१०॥ तहं नेमनाथके चरण जान फिर है उतार भारी महान ॥ तहं चढकर पंचम टोंक जाय । अति कठिन चढाव तहां लखाय ॥११॥ श्रीनेमनाथका मुक्ति थान । देखत नयनों अति हर्षमान ॥ इक विंब चरनयुग तहां जान । भवि करत वंदना हर्ष ठान ॥१२॥ कोउ करते जय जय भक्ति लाइ । कोऊ थुति पढ़ते तहँ सुनाय ॥ तुम त्रिभुवनपति त्रैलोक्यपाल ।

मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥ १३ ॥ तुम राज-
ऋद्धि भुगती न कोइ । यह अथिररूप संसार
जोइ ॥ तज मातपिता घर कुटुम द्वार । तज
राजमतीसी सती नार ॥ १४ ॥ द्वादशभावन
भाई निदान । पशुबंदि छोड दे अभय दान ।
शेसावनमैं दीक्षा सुधार । तप करके कर्म किये
सुछार ॥१५॥ ताही बन केवल ऋद्धि पाय ।
इंद्रादिक पूजे चरण आय ॥ तहँ समवसरण रचि-
यो विशाल । मणिपंच वर्णकर अति रसाल ।१६।
तहँ वेदी कोट सभा अनूप । दरवाजे भूमि बनी
सुरूप ॥ वसुप्रातिहार्य छत्रादि सार । वर द्वादश
सभा बनी अपार ॥ १७ ॥ करके विहार देशों
मझार । भवि जीव करे भवसिंधु पार ॥ पुन
टोंक पंचमीको सुजाय । शिव नाथ लह्यो आनंद
पाय ॥१८॥ सो पूजनीक वह थान जान । वंदत
जन तिनके पाप हान ॥ तहँतैं सु बहत्तर कोडि
और । मुनि सातशतक सब कहे जोर ॥ १९ ॥
उस पर्वतसौं सब मोक्ष पाय । सब भूमि सु पूजन

योग्य थाय ॥ तहँ देश देशके भव्य आय ।
वंदन कर बहु आनंद पाय ॥ २० ॥ पूजन कर
कीने पाप नाश । बहु पुण्यबंध कीनो प्रकाश ॥
यह ऐसो क्षेत्र महान जान । हम करी वंदना
हर्ष ठान ॥ २१ ॥ उनईस शतक उनतीस जान ।
संवत अष्टमि सित फाग मान ॥ सब संग सहित
वंदन कराय । पूजा कीनी आनंद पाय ॥२२॥
अब दुःख दूर कीजे दयाल । कहै 'चंद्र' कृपा
कीजे कृपाल ॥ मैं अल्पबुद्धि जयमाल गाय ।
भवि जीव शुद्ध लीज्यो बनाय ॥ २३ ॥

घत्ता—तुम दयाविशाला सब क्षितिपाला, तुमगु-
णमाला कंठ धरी। ते भव्य विशाला तज जग-
जाला, नावत भाला मुक्तिवरी ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । समाप्त ।

। श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्र पूजा ।

उत्सव किय पनवार जहँ,सुरगणयुत हरि आय।
जजों सुथल वसुपूज्यसुत, चंपापुर हर्षाय ॥१॥

ओं ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्रावतरावतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक । चाल नंदीश्वरपूजनकी ।

सम आमिय विगतत्रस वारि, लै हिम कुंभ भरा
लख सुखद त्रिगदहरतार, दै त्रय धार धरा ॥
श्रीवासुपूज्य जिनराय, निर्वृतिथान प्रिया ।१।
चंपापुर थल सुखदाय, पूजों हर्ष हिया ॥
ओं ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥
कश्मीरी केशर सार, अति ही पवित्र खरी ।
शीतल चंदनसँग सार लै भव तापहरी ॥ श्री०
॥ चंदनं ॥ मणिद्युतिसम खंडविहीन, तंदुल लै
नीके । सौरभ युत नव वर बीन, शालि महानीके
॥ श्रीवासुपूज्य० ॥ अक्षतान् ॥ ३ ॥ अलि
लुभन सुभन दृग घ्राण, सुमन जु सुरद्रुमके ।
लै वाहिम अर्जुनवान, सुमन दमन झुमके ॥
श्रीवासुपूज्य० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरित तुरित
पकवान, पक्व यथोक्त घृती । क्षुधगदमदप्रद-
मन जान, लै विध युक्तकृती ॥ श्रीवासुपूज्य० ॥
नैवेद्यं ॥ ५ ॥ तमअन्नभ्रमनाशक सूर, शिवमग-

परकाशी । लै रत्नद्वीप द्युतिपूर, अनुपम सुख-
राशी ॥ श्रीवासुपूज्य जिन० ॥ दीपं ॥ ६ ॥
बर परिमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी।
तस चूरण कर कर धूप, लै विधिकुंज हरी॥ श्री
वासुपूज्य०॥ धूपं ॥७॥ फल पक्क मधुररसवान,
प्रासुक बहुविधके। लखि सुखद रसनदृगघ्रान,
ले मद पद सिधके ॥ श्रीवासु० ॥ फलं ॥ ८ ॥
जलफलवसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ॥
वसुअंग धरापर ल्याय, प्रमुदित चितधारी।श्री-
वासुपूज्य० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला।

दोहा-भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर निर्वान।
तिनगुणकी जयमाल कछु,कहों श्रवण सुखदान॥१

पद्धरि छंद।

जय जय श्रीचंपापुर सुधाम। जहँ राजत नृप
वसुपूज नाम॥ जय पौन पल्यसे धर्महीन। भव
भ्रमन दुःखमय लख प्रवीन।१। उर करुणाधर
मो तम विडार। उपजे किरणावलिधर अपार॥

श्री वासुपूज्य तिनके जु बाल। द्वादशम तीर्थ-
कर्त्ता विशाल॥२॥ भवभोग देहतैं विरत होय।
वय बालमाहिं ही नाथ सोय॥ सिद्धन नमि
महाव्रत भार लीन। तप द्वादशविध उग्रोग्र
कीन॥ ३ ॥ तहँ मोक्ष सप्तत्रय आयु येह। दश
प्रकृति पूर्व ही क्षय करेह॥ श्रेणीजु क्षपक आ-
रूढ होय। गुण नवम भाग नवमाहिं सोय॥४॥
सोलह वसु इक इक षट इकेय। इक इक इक
इम इन क्रम सहेय॥ पुनि दशमथान इक लोभ
टार। द्वादशमथान सोलह विडार॥ ५ ॥ ह्वै
अनँत चतुष्टय युक्त स्वाम। पायो सब सुखद
सयोग ठाम॥ तहँ काल त्रिगोचर सर्व ज्ञेय।
युगपत हि समय इकमहि लखेय॥ ६ ॥ कछु
काल दुविध वृष अमिय वृष्टि। कर पोषे भवि
भुविधान्यसृष्टि॥ इक मास आयु अवशेष जान॥
जिन योगनकी सुप्रवृत्ति हान॥७॥ ताहीथल
तृतिशितध्यान ध्याय। चतुदशमथान निवसे
जिनाय॥ तहँ दुचरम समयमझार ईश। प्रकृती

जु बहत्तर तिनहि पीस ॥ ८ ॥ तेरह नठ चरम समयमझार ! करके श्रीजगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि अवनी इक समयमद्ध । निवसे पाकर निज अचल रिद्ध ॥९॥ युत गुण वसु प्रमुख अमित गुणेश । ह्वै रहे सदा ही इमहि वेश ॥ तबहीतें सो थानक पवित्र । त्रैलोक्यपूज्य गायो विचित्र ॥१०॥ मैं तसु रज निज मस्तक लगाय। बंदों पुन पुन भुवि शीश नाथ ॥ ताही पद बांछा उरमझार । धर अन्य चाहबुद्धी विडार ॥ ११ ॥

दोहा--श्रीचंपापुर जो पुरुष, पूजै मन वच काय ।
वर्णि 'दौल' सो पाय ही, सुख संपति अधिकाय ।

इत्याशीर्वादः ।

श्रीपावापुर-सिद्धक्षेत्र पूजा ।

जिहिं पावापुर छित अघति, हत सन्मति जगदीश
भये सिद्ध शुभथान सो, जजों नाय निज शीश ॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीपावापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट

शुचि सलिल शीतौ कलिलरीतौ श्रमन चीतो लै जिसो॥ भर कनक झारी त्रिगद हारी दै त्रिधारी जिततृषो॥ वर पद्मवन भर पद्मसरवर बहिर पावाग्राम हो। शिवधाम सन्मत स्वामि पायो, जजों सो सुखदा मही॥ १॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथजिनेन्द्रस्य जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भ्रमन भ्रमत अशर्म तपकी, तपन कर तप ताइयो। तसु बलयकंदन मलय-चंदन, उदक सँग घिस ल्याइयो॥ वरपद्म० ॥चंदनं०॥तंदुल नवीन अखंड लीने, ले महीने ऊजरे। मणिकुंद इंदु तुषार द्युति-जित, कनरकाबीमें धरे॥ वर० ॥ अक्षतान्॥ मकरंदलोभन सुमन शोभन सुरभि चोभन लेय जी। मद समर हरवर अमर तरुके, घ्रान-दृग हरखेय जी॥वरपद्म०॥पुष्पं०॥ नैवेद्य पावन छुध मिटावन सेव्य भावन युत किया। रस मिष्ट पूरति इष्ट सूरति लेयकर प्रभु

हित हिया ॥ वरपद्म० ॥ नैवेद्यं० ॥ तमअज्ञ नाशक स्वपरभाशक ज्ञेय परकाशक सही। हिमपात्रमें धर मौल्यविन वर द्योतधर मणि दीपही ॥वर०॥दीपं॥ आमोदकारी वस्तुसारी विध दुचारी-जारनी। तसु तूप कर कर धूप ले दश दिश-सुरभि-विस्तारनी ॥वरपद्म०॥धूपं॥ कल भक्र पक्र सुचक्य सोहन, सुक्र जनमन मोहने वर सुरस पूरित त्वरित मधुरत लेयकर अति सोहने ॥ वरपद्म० ॥ फलं ॥ जल गंध आदि मिलाय वसुविध थारस्वर्ण भरायकें। मन प्रमुद भाव उपाय कर ले आय अर्घ बनायकें ॥ वरपद्म० ॥ अर्घं ॥ १ ॥

अथ जयमाला।

दोहा—चरम तीर्थंकरतार श्री-वर्द्धमान जगपाल।
कलमलदलविधविकल है, गाऊं तिन जयमाल॥

पद्धरि छंद।

जयजय सुवीर जिन मुक्तिथान पावापुरवनसर शोभवान ॥ जे सित अषाड छट स्वर्गधाम। तज पुष्पोत्तर सुविमान ठाम ॥ १ ॥ कुंडलपुर

सिद्धारथ नृपेश। आये त्रिशला जननी उरेश॥ सित चैत्र त्रयोदशि युत त्रिज्ञान। जनमे तम अज्ञ-निवार भान॥ २॥ पूर्वाह्न धवल चउदिश दिनेश। किय नह्वन कनकगिरि-शिर सुरेश॥ वय वर्ष तीस पद कुमरकाल। सुख दिव्य भोग भुगतेविशाल॥३॥ मारगसिर अलि दशमी पवित्र। चढ चंद्रप्रभा शिविका विचित्र॥ चलि पुरसों सिद्धन शीशनाय। धार्‍यो संजम वर शर्मदाय।४। गतवर्ष दुदश कर तप-विधान। दिन शित वैशाख दशैं महान॥ रिजुकूला सरिता तट स्व सोघ। उपजायो जिनवर चरम बोध॥ ५॥ तब ही हरि आज्ञा शिर चढाय। रचि समवसरण वर धनदराय॥ चउसंघ प्रभृति गौतम गनेश। युत तीस वरष विहरे जिनेश॥ ॥ ६॥ भविजीवदेशना विविध देत। आये वर पावानगर खेत॥ कार्तिक अलि अंतिम दिवस ईश। कर योग निरोध अघातिपीस॥ ७॥ है अकल अमल इक समयमाहिं। पंचम गति

पाई श्रीजिनाह ॥ तब सुरपति जिनरवि अस्त जान । आये तुरंत चढि निज विमान ॥ ८ ॥ कर वपु अरचा थुति विविध भाँत । लै विविध द्रव्य परिमल विख्यात ॥ तब ही अगनींद्र नवाय शीश । संस्कार देहकी त्रिजगदीश ।९। कर भस्म वंदना निज महीय । निवसे प्रभु गुन चिंतवन स्वहीय । पुनि नर मुनि गनपति आय आय । बंदी सो रज शिर नाय नाय ।१०। तब हीसों सो दिन पूज्य मान । पूजत जिनगृह जन हर्ष मान ॥ मैं पुन पुन तिस भुवि शीशधार । वंदौं तिन गुणधर उर मझार ॥ ११ ॥ तिनही का अब भी तीर्थ एह । बरतत दायक अति शर्म गेह ॥ अरु दुखमकाल अवसान ताहि । वर्तैगो भवतिथिहर सदाहि ॥ १२ ॥

कुसुमलता छंद ।

श्रीसन्मति जिन अंघ्रिपद्म युगजजैं भव्य जो मन वच काय । ताके जन्म जन्म संचित अघ जावहिं इक छिन माहिं पलाय ॥ धनधान्यादिक शर्म

इंद्रपद लहै सो शर्म अतीन्द्री थाय। अजर अमर अविनाशी शिवथल वर्णों दौल रहै शिर नाय ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

आरती-संग्रह।

पंचपरमेष्ठी आदिकी आरती।

इहविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद भज सुख लीजै ॥टेक॥ पहली आरती श्रीजिनराजा। भव-दधिपारउताराजिहाजा॥ इहविध० ॥ १ ॥ दूसरि आरति सिद्धनकेरी। सुमरन करत मिटै भवफेरी ॥ इहविध० ॥ २ ॥ तीजी आरति सूर मुनिंदा। जनममरनदुख दूर करिंदा ॥ इहविध० ॥ ३ ॥ चौथी आरति श्रीउवझाया। दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४ ॥ पांचमि आरति साधु तिहारी। कुमति-विनाशन शिव-अधिकारी ॥ इहविध० ॥ ५ ॥ छट्ठी ग्यारहप्रतिमा धारी। श्रावक वंदों आनँदकारी ॥

इहविध० ॥ ६ ॥ सातमि आरति श्रीजिनवानी 'द्यानत' सुरगमुकति सुखदानी ॥ इहविध० ।७।

। आरती श्रीजिनराजकी ।

आरति श्रीजिनराज तिहारी, करमदलन संतन हितकारी ॥ टेक ॥ सुरनरअसुर करत तुम सेवा । तुमही सब देवनके देवा ॥ आरति श्री० ॥ १ ॥ पंचमहाव्रत दुद्धर धारे । रागरोष परिणाम विदारे ॥ आरति श्री० ॥२॥ भवभय भीत शरन जे आये । ते परमारथपंथ लगाये ॥ आरति श्री० ॥ ३ ॥ जो तुम नाथ जपै मन-माहीं । जनममरनभय ताको नाहीं ॥ आरति श्री० ॥ ४ ॥ समवसरनसंपूरन शोभा । जीते क्रोधमानछललोभा ॥ आरति श्री० ॥५॥ तुम गुण हम कैसे करि गावैं । गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥ आरति० ॥६॥ करुणासागर करुणा कीजे । 'द्यानत' सेवकको सुख दीजे ॥ आ० ॥

आरती श्रीमुनिराजकी ।

आरति कीजै श्रीमुनिराजकी, अधमउधारन

आतमकाजकी ॥ आरति कीजै० ॥ टक ॥ जा लच्छीके सब अभिलाखी । सो साधन करदम-वत नाखी ॥ आरति कीजै० ।१। सब जग जीत लियो जिन नारी । सो साधन नागनिवत छारी ॥ आरति० ॥ २ ॥ विषयन सब जगजिय वश कीने । ते साधन विषवत तज दीने ॥ आरति० ॥ ३ ॥ भुविको राज चहत सब प्रानी । जीरन तृणवत त्यागत ध्यानी ॥ आरति० ॥ ४ ॥ शत्रु मित्र दुखसुख सम मानै । लाभ अलाभ बराबर जानै ॥ आरति० ॥ ५ ॥ छहोंकायपीहरव्रत धारें सबको आप समान निहारें ॥ आरति० ॥ ६ ॥ इह आरती पढै जो गावै । 'द्यानत' सुरगमुक-ति सुख पावै ॥ आरति कीजै० ॥ ७ ॥

निश्चय आरती ।

इहविध आरति करौं प्रभु तेरी । अमल अवा-धित निज गुणकेरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अविनाशी । लोकालोक सकल परकाशी ॥ इहविध० ॥ १ ॥ ज्ञानदरससुखबल गुणधारी ।

परमातम अविकल अविकारी ॥इहविध०॥२॥ क्रोधआदि रागादि न तेरे। जनम जरामृत कर्म न नेरे ॥इहविध०॥३॥ अवपु अबंध करणसुख-नासी ॥ अभय अनाकुल शिवपद्वासी ॥इह० ॥४॥ रूप न रेख न भेख न कोई । चिन्मूरति प्रभु तुम ही होई ॥इहविध०॥५॥ अलख अनादि अनंत अरोगी । सिद्ध विशुद्ध सुआतमभोगी इहविध० ॥६॥ गुन अनंत किम वचन बतावें। दीपचंद भवि भावन भावें ॥ इहविध० ॥ ७ ॥

आत्माकी आरती

करौं आरती आतम देवा, गुणपरजाय अनंत अभेवा ॥ करौं० ॥ टेक ॥ जामें सब जग जो जगमाहीं। वसत जगतमें जगसम नाहीं ॥करौं० ॥ १ ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावें। साधु सकल जिहँको गुण गावें। करौं ॥२॥ विन जाने जिय चिरभव डोले। जिहँ जाने ते शिवपट खोले ॥ करौं० ॥ ३ ॥ व्रती अविरती विधव्योहारा। सो तिहुँकालकरमसों न्यारा ॥ करौं० ॥ ४ ॥

गुरुशिख उभय वचनकरि कहिये। वचनातीत दशा तस लहिये ॥ करौं० ॥ ५ ॥ स्वपरभेदको खेद उछेदा। आप आपमें आप निवेदा। करौं० ॥ ६ ॥ सो परमातम शिव-सुखदाता। होहि 'विहारीदास' विख्याता ॥ करौं० ॥ ७ ॥

आरती श्रीवर्द्धमानजीकी।

करौं आरती वर्द्धमानकी। पावापुर निरवान थानकी। करौं० ॥ टेक ॥ राग-विना सब जग जन तारे। द्वेष विना सब करम विदारे ॥ करौं० ॥ १ ॥ शील-धुरंधर शिव-तियभोगी। मनवच-कायन कहिये योगी ॥ करौं० ॥ २ ॥ रतनत्रय निधि परिगह-हारी। ज्ञानसुधाभोजनव्रतधारी ॥ करौं० ॥ ३ ॥ लोक अलोक व्याप निजमाहीं। सुखमय इंद्रिय सुखदुख नाहीं ॥ करौं० ॥ ४ ॥ पंचकल्याणकपूज्य विरागी। विमलदिगंबर अंबर-त्यागी ॥ करौं० ॥ ५ ॥ गुनमनि-भूषन भूषित स्वामी। जगतउदास जगंतरस्वामी ॥ करौं० ॥ ६ ॥ कहै कहां लौं तुम सब जानौ।

'द्यानत' की अभिलाष प्रमानौं ॥ ७ ॥

। आरती निश्चयआत्माकी ।

चौपाई ।

मंगलिआरती आतमराम। तनमंदिर मन उत्तम ठान॥ मंगल० ॥ टेक ॥ समरसजलचंदन आनंद । तंदुल तत्त्वस्वरूप अमंद ॥ मंगल० ॥ ॥ १ ॥ समयसारफूलनकी माल। अनुभव-सुख नेवज भरि थाल ॥ मंगल० ॥ २ ॥ दीपकज्ञान ध्यानकी धूप । निरमलभाव महाफलरूप ॥ मं० ॥ ३ ॥ सुगुण भविकजन इकरँगलीन । निहचै नवधा भक्ति प्रवीन ॥ मंगल० ॥ ४ ॥ धुनि उतसाह सु अनहद गान । परम समाधिनिरत परधान ॥ मंगल० ॥ ५ ॥ बाहिज आतमभाव बहावै । अंतर ह्वै परमातम ध्यावै ॥ मंगल० ॥ ॥ ६ ॥ साहब सेवकभेद मिटाय । 'द्यानत' एक-मेक होजाय । मंगल० ॥ ७ ॥

उपर्युक्त आरतियोंमेंसे इच्छानुसार एक या दो आरती बोलकर नीचे लिखा श्लोक, दोहा और मन्त्र पढ़कर आरतीको मस्तकपर चढ़ावे ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघात दीपान्। दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्र-सिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ दोहा—

स्वपरप्रकाशनज्योति अति, दीपक तमकर हीन
जासों पूजौं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥१॥

ओं ह्रीं मोहतिमिरविनाशनाय देवशास्त्रगुरुभ्यो दीपंनिर्वपा० स्वाहा

धूप चढ़ाते समय अथवा धूपकी आशिका लेते समय नीचे लिखा श्लोक, दोहा और मंत्र बोलना चाहिये।

दुष्टाष्टकर्मेन्धनपुष्टज्वालसंधूपने भासुरधूमकेतून् धूपैर्विधूतान्य सुगंधिगंधैर्जिनेंद्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ दोहा—

अग्निमाहिं परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजौं परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टकर्मविनाशनाय देवशास्त्रगुरुभ्यो धूपं निर्वपा० स्वाहा ॥
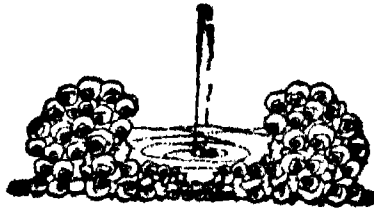
तुम परमपावन देव जिन अरि,-रजरहस्य विनाशनं। तुम ज्ञान-दृग जलवीच त्रिभुवन कमलवत प्रतिभासनं॥ आनंद निजज अनंत अन्य, अचिंत संतत परनये। बल अतुलकलित स्वभावतैं नहिं, खलितगुन अमिलित थये॥ सब रागरुषहन परम श्रवन, स्वभावघननिर्मल दशा। इच्छारहित भविहित खिरत वच,सुनत ही भ्रमतमनशा। एकांतगहनसुदहन स्यात्पद बहनमय निजपर दया। जाके प्रसाद विषाद विन मुनिजन सपदि शिवपद लहा॥ २॥ भूषनवसनसुमनादिविनतन, ध्यानमयमुद्रा दिपै। नासाग्रनयन सुपलक हलय न, तेज लखि खगगन छिपै॥ पुनि वदननिरखत प्रशमजल,वरखत सुहरखतउर धरा! बुधि स्वपर परखत पुन्य आकर, कलिकलिल दरखत जरा॥ ३॥ इत्यादि बहिरंतर असाधरन, सुविभव निधान

जी। इंद्रादिवंदपदारविंद, अनिंद तुम भगवान जी॥ मैं चिरदुखी परचाहतैं, तवधर्म नियत न उर धर्यो॥परदेव सेवकरी बहुत, नहिं काज एकहु तहँ सर्यो ॥ ४ ॥ अब भागचंद उदय भयौ मैं शरन आयो तुम-तनी। इक दीजिये बरदान तुम जस, स्वपददायक बुधमनी ॥ पर-माहिं इष्ट-अनिष्ट-मति-तजि, मगन निजगुनमें रहौं। दृग-ज्ञान-चरन समस्त पाऊं, 'भागचंद' न पर चहौं ॥ ५ ॥

४

त्रिभुवनगुरुस्वामीजी, करुणानिधिनामीजी सुनि अंतरजामी, मेरी वीनतीजी ॥ १ ॥ मैं दास तिहाराजी, दुखिया बहु भाराजी। दुख मेटनहारा तुम जादौंपतीजी ॥ २ ॥ भरम्यौ संसाराजी, चिरविपति-भँडाराजी। कहिं सार न सार, चहूँगति डोलियाजी ॥ ३ ॥ दुखमेरु समानाजी, सुख सरसों-दानाजी। अब जान धरि ज्ञानतराजू तोलियाजी ॥ ४ ॥ थावर-तन

पायाजी, त्रस नाम धरायाजी । कृमि कुंथु कहा-
या, मरि भँवरा हुवाजी ॥ पशुकाया सारीजी,
नानाविधधारीजी । जलचारी थलचारी, उडन
पखेरुवाजी ॥६॥ नरकनके माहींजी, दुखओर
न कहींजी । अग्नि घोर जहां है, सरिता खार
कीजी ॥ ७ ॥ पुनि असुर सहाँरैजी, निज वैर
विचारैजी । मिल बांधै अरु मारै, निरदय नार
कीजी ॥८॥ मानुष अवतारैजी, रह्यो गरभ मझा-
रैजी । रटि रोयो जनमत, बिरियां में घनोजी
॥९॥ जोबन तन रोगीजी, कै विरह वियोगी
जी । फिर भोगी बहुविध, विरधपनाकी वेदना
जी ॥१०॥ सुरपदवी पाईजी, रंभा उरलाईजी ।
तहां देखि पराई, संपति झूरियोजी ॥११॥ माला
मुरझानीजी, जब आरति ठानीजी । थिति पूरन
जानी, मरत विसूरियोजी ॥१२॥ यौं दुख भव
केरा जी, भुगते बहुतेराजी । प्रभु ! मेरे कहते
पार न है कहींजी ॥ १३ ॥ मिथ्यामदमाता जी
चाही नित साताजी । सुखदाता जगत्राता, तुम

जाने नहींजी ॥१४॥ प्रभु भागनि पायेजी, गुन श्रवण सुहायेजी। तकि आया सब सेवककी, विपदा हरौजी॥ १५ ॥ भववास बसेराजी, फिर होय न फेराजी। सुख पावै जन तेरा, स्वामी सो करौंजी ॥ १६ ॥ तुम शरन सहाईजी, तुम सज्जन भाईजी। तुम माई तुम्हीं बाप दया मुझ लीजियेजी ॥ १७ ॥ भूधर करजोरै जी ठाढो प्रभु ओरै जी। निजदास निहारौ, निरभय कीजियेजी ॥ १८ ॥

५। ढाल—परमादी।

अहो जगतगुरु एक, सुनियो अरज हमारी। तुम हो दीनदयाल मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भववनमें बादि, काल अनादि गमायो। भ्रम्यो चहूंगतिमांहि, सुख नाहिं दुख बहु पायो ॥२॥ कर्म महारिपु जोर, एक न कान करैजी। मनमाने दुख देहिं, काहूसों न डरैजी ॥३॥ कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावै। सुरनरपशु गतिमांहिं बहुविधि नाच नचावै ॥ ४ ॥ प्रभु

इनको परसंग भवभवमाहिं बुरोजी जे दुख देखे देव तुमसों नाहि दुरोजी ॥५॥ एक जनमकी बात कहि न सकों सुनि स्वामी। तुम अनंत परजाय जानतु अंतरजामी॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे। कियो बहुत बेहाल सुनियो साहिब मेरे ॥७॥ ज्ञान महानिधि लूटि रंक निबलकरि डार्‌यो। इनही तुम मुझ मांहिं हे जिन अंतर पार्‌यो॥८॥ पाप पुन्य मयि दोय पायनि बेड़ी डारी। तनकाराग्रहमाहिं मोहि दियो दुख भारी ॥९॥ इनको नेक विगार मैं कछु नाहिं कियोजी। विनकारन जगवंद्य बहुविध वैर लियोजी॥ १० ॥ अब आयौ तुम पास सुन जिन सुजस तिहारौ। नीतिनिपुन जगराय, कीजै न्याव हमारो ॥११॥ दुष्टन देहु निकाल साधनकौं रखि लीजे। विनवै "भूधरदास" हे प्रभु ढील न कीजे॥ १२ ॥

६ । चौपाई ।

प्रभु इस जग समरथ ना कोय। जासौं तुम

जस वर्णन होय ॥ चार ज्ञानधारी मुनि थकैं। सो मतिमंद कहा कहि सकैं ॥ १ ॥ यह उर जानत निश्चय कीन । जिनमहिमा वर्णन हम हीन ॥ पर तुम भक्तिथकी वाचाल । तिस वस हो, गाऊं गुणमाल ॥ २ ॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवनधनी । जय चंद्रोपम चूडामनी ॥ जय जय परम धरमदातार । कर्मकुलाचल-चूरनहार ॥ ३ ॥ जय शिवकामिनिकंत महंत । अतुल अनंत चतुष्टयवंत ॥ जय जय आश-भरन बडभाग । तपलछमीके सुभग सुहाग ॥ ४ ॥ जयजय धर्मध्वजाधर धीर । स्वर्ग-मोक्षदाता वर वीर ॥ जय रत्नत्रय रतनकरंड । जय जिन तारन-तरन तरंड ॥ ५ ॥ जय जय समवसरनश्रृंगार । जय संशयवन-दहन-तुषार ॥ जयजय निर्विकार निर्दोष । जय अनंतगुणमाणिककोष ॥ ६ ॥ जय जय ब्रह्मचर्य दल साज । कामसुभटविजयी भटराज ॥ जय जय मोहमहातरु करी । जय जय मदकुंजर केहरी ॥ ७ ॥ क्रोधमहानलमेघ प्रचंड । मान-

हीधर दामिनिदंड ॥ मायाबेलि धनंजय-दाह
लोभसलिलशोषण-दिननाह ॥ ८ ॥ तुम गुण-
सागर अगम्य अपार । ज्ञान-जहाज न पहुंचै
पार ॥ तट ही तट पर डोलै सोय । कारज सि-
द्ध तहां नहिं होय ॥९॥ तुम्हरी कीर्तिबेल बहु
बढी । यत्न विना जगमंडप चढी ॥ और कु-
देव सुयस निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश
लहैं ॥ १० ॥ जगत जीव घूमें विन ज्ञान । की-
नों मोहमहा विषपान ॥ तुम सेवा विषनाशक
जरी । यह मुनिजन मिलि निश्चय करी ॥११॥
जन्म-लता मिथ्यामत मूल । जन्म मरण लागें
तहँ फूल ॥ सो कबहूँ विन भक्ति कुठार । कटै
नहीं दुखफलदातार ॥१२॥ कल्पतरूवर चित्रा-
वेलि । कामपोरषा नवनिधि मेलि ॥ चिंतामणि
पारस पाषान । पुण्य पदारथ और महान ॥१३॥
ये सब एक जन्म संजोग । किंचित सुखदातार
नियोग ॥ त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव । जन्म
जन्म सुखदायक देव ॥ १४ ॥ तुम जगबांधव

तुम जगतात। अशरण शरण विरद विख्यात॥ तुम सब जीवनके रखवाल। तुम दाता तुम परम दयाल॥१५॥ तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान तुम समदर्शी तुम सब-जान॥ जय जिन यज्ञ पुरुष परमेश। तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश।१६। तुम जगभर्ता तुम जगजान। स्वामि स्वयंभू तुम अमलान॥ तुम विन तीन काल तिहुँ लोय। नाहीं शरण जीवको कोय॥ १७॥ यातें अब करुणानिधि नाथ। तुम सन्मुख हम जोडैं हाथ॥ जबलौं निकट होय निर्वान। जगनिवास छूटै दुखदान॥१८॥ तबलौं तुम चरणांबुज बास। हम उर होउ यही अरदास॥ और न कछु बांछा भगवान। हो दयाल दीजे वरदान॥ १९॥

७ शेर

हे दीनबंधु श्रीपति करुणानिधानजी। यह मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी॥टेक॥ मालिक हो दो जहानके जिनराज आपही।

ऐबो हुनर हमारो कुछ तुमसे छिपा नहीं ॥ बे-
जानमें गुनाह मुझसे बन गया सही । ककरीके
चोरको कटार मारिये नहीं ॥ हो० ॥ १ ॥ दु-
खदर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही । मु-
श्किल कहर बहरसे लिया है भुजा गही ॥ जस
वेद औ पुरानमें प्रमान है यही । आनंदकंद
श्रीजिनंद देव है तुही ॥ हो० ॥ २ ॥ हाथीपै
चढी जाती थी सुलोचना सती । गंगामें ग्राहने
गही गजराजकी गती ॥ उस वक्तमें पुकार
किया था तुम्हें सती । भय टारकें उबार लिया
है कृपापती ॥ हो० ॥ ३ ॥ पावक प्रचंड कुंडमें
उमंड जब रहा । सीतासे शपथ लेनेको तब
रामने कहा ॥ तुम ध्यानधार जानकी पग धार-
ती तहां । तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कौंल ल-
हलहा ॥ हो० ॥ ४ ॥ जब चीर द्रौपदीका दुःशास-
नने था गहा । सबही सभाके लोग थे कहते हहा
हहा ॥ इस वक्त भीर पीरमें तुमने करी सहा ।
परदा ढका सतीका सुजस जक्तमें रहा ॥ हो०

॥५॥ श्रीपालको सागरविषै जब सेठ गिराया। उनकी रमासे रमनेको आया वो बेहया ॥ उस वक्तके संकटमें सती तुमको जो ध्याया। दुख-दंदफंद मेटके आनंद बढाया ॥ हो० ॥ ६ ॥ हरिषेनकी माताको जहां सौत सताया। रथ जैनका तेरा चलै पीछैं यों बताया ॥ उस वक्तके अनसनमें सती तुमको जो ध्याया। चक्रीस हो सुत उसकेने रथजैन चलाया ॥ हो० ॥ ७ ॥ सम्यक्तशुद्ध शीलवति चंदना सती। जिसके नगीच लगती थी जाहिर रती रती। बेरीमें परी थी तुम्हें जब ध्यावती हती। तब वीर धीरने हरी दुखदंदकी गती ॥ हो० ॥ ८ ॥ जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा। तब सासने कलंक लगाकर घरसे निकारा॥ वनवर्गके उपसर्गमें तब तुमको चितारा। प्रभुभक्त व्यक्त जानिके भय देव निवारा ॥ हो० ॥ ९ ॥ सोमासे कहा जो तु सती शील विशाला। तो कुंभतें निकाल भलाँ नाग जु काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके

सति हाथ जब डाला। तत्काल ही वह नाग हुआ फूलकी माला ॥ हो० ॥ १० ॥ जब कुष्ट रोग था हुआ श्रीपालराजको। मैना सती तब आपको पूजा इलाजको ॥ तत्काल ही सुंदर किया श्रीपाल राजको। वह राजरोग भाग गया मुक्तराजको ॥ हो० ॥ ११ ॥ जब सेठ सुदर्शनको मृषा दोष लगाया। रानीके कहे भूपने सूलीपै चढाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने निज ध्यानमें ध्याया। सूलीसे उतारुस्को सिंहासनपै बिठाया ॥ हो० ॥ १२ ॥ जब सेठ सुधन्नाजीको वापीमें गिराया। ऊपरसे दुष्ट फिर उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपनेमैं ध्याया। तत्कालही जंजालसे तब उस्को बचाया ॥ हो० ॥१३॥ इक सेठके घरमें किया दारिद्रने डेरा। भोजनका ठिकाना भि न था साँझ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यानमें घेरा। घर उसकेमें तब कर दिया लक्ष्मीका सेरा ॥ हो० ॥ १४ ॥ बलि वादमें मुनिराज

सों जब पार ना पाया। तब रातको तलवार ले शठ मारने आया। मुनिराजने निजध्यानमें मन लीन लगाया। उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० ॥ १५॥ जब रामने हनुमंत को गढ़लंक पठाया। सीताकी खवर लेनेको सह सैन्य सिधाया ॥ मग बीच दो मुनिराजकी लख आगमें काया। झट वारि मूसलधारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० ॥ १६ ॥ जिननाथहीको माथ नवाता था उदारा। घेरेमें पडा था वह कुलिश करण विचारा ॥ उसवक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें चितारा। रघुवीरने सव पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० ॥ १७॥ रणपाल कुंवरके पडीथी पांवमें बेरी। उसवक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरी ॥ तत्काल ही सुकुमालकी सब झड़ पडी बेरी। तुम राजकुँवरकी सभी दुखदंद निवेरी ॥हो०॥ ॥ १८ ॥ जब सेठके नंदनको डसा नाग जु कारा। उसवक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥ ततकाल ही उस बालका विष भूरि उतारा ॥

वह जाग उठा सोके मानों सेज सकारा ॥हो०॥
॥१९॥ मुनि मानतुंगको दई जब भूपने पीरा।
तालेमें किया बंद भरी लोहजंजीरा ॥ मुनिईश
ने आदीशकी थुति की है गंभीरा। चक्रेश्वरी
तब आनिके झट दूर की पीरा ॥ हो० ॥ २० ॥
शिवकोटिने हट था किया सामंतभद्रसों ॥शिव
पिंडकी बंदन करौं शंकों अभद्रसों ॥ उस वक्त
स्वयंभू रचा गुरु भावभद्रसों। जिनचंद्रकी
प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों ॥ हो० ॥ २१ ॥
सूवेने तुम्हें आनिके फल आम चढाया। मेंडक
ले चला फूल भरा भक्तिका भाया ॥ तुम दोनों
को अभिराम स्वर्गधाम बसाया हम आपसे
दातारको लख आज ही पाया ॥ हो० ॥२२॥
कपि स्वान सिंह नेवला अज बैल विचारे। तिर्यंच
जिन्हें रंच न था बोध चितारे॥ इत्यादिको सुर
धाम दे शिवधाममें धारे। हम आपसे दातारको
प्रभु आज निहारे ॥ हो० ॥ २३ ॥ तुम ही
अनंत जंतुका भय भीर निवारा। वेदोपुराणमें

गुरू गणधरने उचारा। हम आपकी सरनाग-तीमें आके पुकारा। तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा ॥हो०॥२४॥ प्रभु भक्त व्यक्त भक्त जक्त मुक्तके दानी। आनंद कंद वृंदको हो मुक्तके दानी ॥ मोहि दीन जान दीनबंधु पातक भानी। संसार विषम खार तार अंतर जामी॥ ॥ हो०॥२५॥ करुणानिधान वानकी अब क्यों न निहारो। दानी अनंतदानके दाता हो सँभारो। वृषचंदनंद बृंदका उपसर्ग निवारो। संसार विषम खारसे प्रभु पार उतारो॥ हो दीन बंधु श्रीपति करुणानिधानजी। अब मेरी विथा क्यों ना हरो बार क्या लगी॥ २६॥

८

दोहा—जासुधर्मपरभावसों, संकट कटत अनंत।
मंगलमूरति देव सो, जैवंतौ अरहंत ॥ १ ॥
हे करुणानिधि सुजनको, कष्टविषें लखिलेत।
ताजि विलंब दुखनष्ट किय, अब विलंब किहहेत।

तब विलंब नहिं कियो, दियो नमिको रजता
चल । तब विलंब नहिं कियो मेघवाहन लंका-
थल ॥ तब विलंब नहिं कियो, शेठसुत दारिद
भंजे । तब विलंब नहिं कियो, नागजुग सुरपद
रंजे ॥ इमि चूरि भूरि दुख भक्तके,सुख पूरे शिव-
तियवरन । प्रभु मोर दुःख नाशनविषै,अब विलं-
ब कारन कवन ॥३॥ तब विलंब नहिंकियो,सिया
पावक जल कीन्हौं । तब विलंब नहिं कियो,
चंदना शृंखल छीन्हौं । तब विलंब नहिं कियो,
चीर द्रौपदिको बाढ्यो । तब विलंब नहिं कियो
सुलोचन गंगा काढ्यो ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ४ ॥
तब विलंब नहिं कियो, सांप किय कुसुम सु
माला । तब विलंब नहिं कियो, उर्मिला सुरथ
निकाला ॥ तब विलंब नहिं कियो शीलबल
फाटक खुल्ले । तब विलंब नहिं कियो अंजना
वन मन फुल्ले । इमि० । प्रभु० ॥ ५ ॥ तब वि-
लंब नहिं कियो शेठ सिंहासन दीन्हौं । तब

विलंब नहिं कियो, सिंधु श्रीपाल कढीन्हौं ॥
तब विलंब नहिं कियो, प्रतिज्ञा वज्रकर्ण पल।
तब विलंब नहिं कियो, सुधन्ना काढि वापि थल
॥ इमि० । प्रभु० ॥ ६ ॥ तब विलंब नहिं कियो
कंस भय त्रिजुग उबारे । तब विलंब नहिं कियो,
कृष्णसुत शिलाउधारे ॥ तब विलंब नहिं कियो
खड्ग मुनिराज बचायो । तब विलंब नहिं कियो
नीरमातंग उचायो ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ७ ॥ तब
विलंब नहिं कियो, शेठ सुत निरविष कीन्हौं ।
तब विलंब नहिं कियो, मानतुँगबंध हरीन्हौं ॥
तब विलंब नहिं कियो, वादिमुनिकोढ़ मिटायो ।
तब विलंब नहिं कियो, कुमुद निजपास
कटायौ ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ८ ॥ तब विलंब
नहिं कियो अंजना चोर उबारयो । तब
विलंब नहिं कियो पूरवा भील सुधारयो ॥
तब विलंब नहिं कियो, गृद्धपक्षी सुंदर
तन । तब विलंब नहिं कियो, भेक दिय सुर
अद्भुत धन ॥ इमि० । प्रभु० ॥९॥ इहविधि दुख

निरवार, सारसुख प्रापति कीन्हों। अपनो दास निहारि, भक्तवत्सल गुन चीन्हों॥ अब विलंब किहिं हेत, कृपाकर इहां लगाई। कहा सुनो अरदास नाहिं, त्रिभुवनके राई॥ जनवृंद सु मन-वचतन अबै, गही नाथ तुम पदशरन। सुधि लै दयाल मम हालपै, कर मंगल मंगलकरन॥

पुकारपच्चीसी।

दोहा—जे या भव संसारमें, भुगतैं दुःख अपार।
तिन पुकारपच्चीसिका, करौं कवित इक ढार॥

तेईसा छंद।

श्रीजिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सबै सुखदाई। दीनदयाल बडे प्रतिपाल दया

गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुर्गति टारन पाप निवारन हो भवितारनको भवताई। बारहिंबार पुकारतु हों जनकी विनती सुनिये जिनराई।१। जन्मजरामरणो त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई। तासु नसावनको तुम नाम सुन्यो हम वैद्य महासुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारन को तुम्हरेपद सेवतु हौं चितल्याई। बारहि।२। जो इक द्वै भवको दुख होय तो राख रहों मनको समुझाई। यह चिरकाल कुहाल भयो अबलों कहुँ अंत पर्‍यो न दिखाई ॥ मोपर या जगमांहिं कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई। बारहिबार० ॥ ३ ॥ देख दुखीपर होत दयाल सु है इक ग्रामपती शिरनाई। हो तुम नाथ त्रिलोकपती तुमसे हम अर्ज करैं शिरनाई ॥ मो दुख दूर करो भवके वसु कर्मनतैं प्रभु लेहु छुडाई ॥बार० ॥ ४ ॥ कर्म बडे रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई। दुःख अनंत दिये हमको हर भांतिन भांतिन दोष लगाई ॥ मैं इन वैरिनके

वश ह्वै करिके भटक्यो सु कह्यो नहिं जाई।
बारहिं० ॥५॥ मैं इस ही भव काननमैं भटक्यो
चिरकाल सुहाल गमाई। किंचित ही तिलसे
सुखको बहुभांति उपाय करे ललचाई॥ चार
गतें चिर मैं भटक्यो जंहँ मेरु समान महा
दुखदाई। बारहि० ॥६॥ नित्य निगोद अनादि
रह्यो त्रसके तनकी जहँ दुर्लभताई। ज्यों क्रम
सों निकस्यो तिहँतें त्यों इतर निगोद रह्यो चिर
छाई॥ सूक्षम बादर नाम भयो जबही इहभाँति
धरी परजाई। बारहि० ॥७॥ जबही पृथिवी
जल तेज भयो पुनि मारुत होय वनस्पतिकाई।
देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर
दीरघताई ॥ एक उदै परतेक भयो साधा-
रण एक निगोद बसाई। बारहि० ॥८॥
इंद्रिय एक रही चिर, मैं कब लब्धि उदै स्वउप-
शमताई। वे त्रय चार धरी जब इंद्रिय देह उदय
विकलत्रय आई॥ पंचन आदि किधौं पर्यंत
धरी इन इंद्रियके त्रसकाई। बारहि० ॥९॥

काय धरी पशुकी बहुबार भई जलजंतुनकी परजाई। जो पलमांहिं आकाश रह्यो चिर होय पखेरू पंख लगाई॥ मैं जितनी परजाय धरीं तिनके बरणे कहुं पार न पाई। बारहि०।१०।नर्क मझार लियो अवतार पर्‌यो दुखभार न कोई सहाई। जो तियके सुखहेत किये अघ ते सबनरकनमें सुधि आई॥ ते तियके तिनकी पुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई॥बारहि० ॥११॥ रत्न-प्रभा सु मही जहँ है अरु शर्कर रेत उन्हार बताई। पंकप्रभा जु धुआंवत है तमसी सु प्रभासु महातमताई॥ जोजन लाख जु आयसपिंड तहां इकही छिनमें गलजाई॥ बारहि०॥१२॥ जे अघ घात महा-दुखदायक मैं विषयारसके फल पाई। काटत हैं जबही निर्दय तबही सरिता महि देत बहाई॥ देवअदेवकुमार जहाँ विच पूरव वैर चितावत जाई॥ बारहि०॥१३॥ जो नरदेह मिली क्रमसों करि गर्भ कुवास महादुखदाई। जे नवमास कलेश सहे मलमूत्र अहार

महा जयताई ॥ ये दुख देखि जबै निकस्यो पुनि रोवत बालपने दुखदाई । बारहि० ॥१४॥ यौवनमैं तनरोग भयो कबहूं विरहानल व्याकुलताई । मानविषै रसभोग चख्यो उन्मत्त भयो सुख मानत ताही । आय गयोछनमैं विरधापन यह नरभव इहभांति गमाई ॥बारहि०॥१५॥ देव भयो सुरलोकविषै तब मोहि रह्यो परियां उर लाई । पाय विभूति बढे सुरकी परसंपति देखत झूरत जाई ॥ माल जबै मुरझाय रही थिति पूरण जानि तबै विललाई ॥ बारहि० ॥१६॥ जे दुख मैं भुगते भवके तिनके वरणे कहुं पार न पाई । काल अनादिन आदि भयो तहँ मैं दुखभाजन हो अघमाहीं ॥ सो दुख जानत हो तुमही जब ही इहभांति धरी पर्यायी । बारहि० ॥ १७ ॥ कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई । मैं न विगाड़ कियो इनको विनकारण पाप भये अरि आई ॥ मात पिता तुमहो जगके तुम छांडि फिराद करों कहँ जाई । बारहि० ॥

॥१८॥ सो तुमसों सब दुःख कहों प्रभु जानत हो तुम पीर पराई। मैं इनको सत्संग कियो दिन हूं दिन आवत मोहि बुराई॥ ज्ञानमहानिधि लूट लियो इन रंक कियो इहभांति हराई। बा-रहि० ॥ १९ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सह्यो सब यह इन दुष्टनकी कुटिलाई। पाप रु पुन्य दुहूं निज मारगमैं हमको यह फाँसि लगाई। मोहि थकाय दियो जगसों विरहानल देह दहै न बुझाई॥ बारहि०॥२०॥ यह विनती सुन सेवककी निज मारगमैं प्रभु लेहु लगाई॥ मैं तुव दास रह्यो तुमरे सँग लाज करो शरणागति आई॥ मैं तुव दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई ॥बारहि०॥ २१॥ देर करो मत श्रीकरुणानिधि जू पतिराखनहार निकाई। योग जुरे क्रमसों प्रभुजी यह न्याय हजूर भयो तुम आई॥ आन रह्यो शरणागति हों तुमरी सुनके तिहुँलोक बड़ाई॥ बारहिबार० ॥२२॥ मैं प्रभुजी तुम्ह-री समझू इन अंतर पार कियो दुसराई। न्याय

न अंत कस्यो हमारो न मिली हमको तुमसी ठकुराई ॥ संतन राखि करो अपने ढिग दुष्टनि देहु निकास वहाई । वारहि० ॥ २३ ॥ दुष्टनकी जु कुसंगतिमें हमको कछु जान परी न निकाई । सेवक साहबको दुविधा न रहै प्रभुजी करिये जु भलाई ॥ फेर नमों जु करों अरजी जस । जाहिर जान परै जगताई ॥ बारहि० ॥ २४ ॥ यह विनती प्रभुके शरणागति जे नर चित्त लगाय करैंगे । जे जगमें अपराध करै अघ ते क्षणमात्रभरेमें हरैंगे ॥ जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधी स्वरलोक धरैंगे । देवीदास कहै क्रमसों पुनि ते भवसागर पार तरैंगे ।२५।

बारहभावना भगौतीदासकृत

चौपाई ।

पंच परमपद वंदन करों । मनवचभाव-सहित उर धरों ॥ बारहभावन पावन जान । भाऊं आतम गुण पहिचान ॥ १ ॥ थिर नहिं

दीखै नयनों वस्त । देहादिक अरु रूप समस्त ॥ थिर विन नेह कौनसों करों । अथिर देख ममता परिहरों ॥ २ ॥ अशरण तोहि शरण नहिं कोय । तीनलोकमें दृगधर जोय ॥ कोइ न तेरा राखनहार । कर्मनवश चेतन निरधार ॥ ३ ॥ अरु संसारभावना एह । परद्रव्यनसों करै जु नेह ॥ तू चेतन वे जड सरवंग । तातैं तजहु परायो संग ॥ ४ ॥ जीव अकेला फिरै त्रिकाल । ऊरध मध्यभुवन पाताल ॥ दूजा कोइ न तेरे साथ । सदा अकेलो भ्रमै अनाथ ॥ ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुदगलतैं रहै । भर्मबुद्धितैं जडता गहै ॥ वे रूपी पुदगलके खंध । तू चिनमूरति सदा अवंध ॥ ६ ॥ अशुचि देख देहादिक अंग । कौन कुवस्तु लगी ता संग ॥ अस्थी मांस रुधिरगदगेह । मल मूत्रनि लखि तजहु सनेह ॥७॥ आस्रव परसों करै जु प्रीत । तातैं बंध बढहि विपरीत ॥ पुदगल तोहि अपनपो नाहिं । तू चेतन वे जड सब आँहि ॥८॥ संवर

परको रोकन भाव । सुख होवेको यही उपाव । आवें नहीं नये जहँ कर्म । पिछले रुकि प्रगटै निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूरी ह्वै खिर खिर जाहिं । निर्जर भाव अधिक अधिकाहिं । निर्मल होय चिदानँद आप । मिटै सहस परसंग मिलाप ॥ १० ॥ लोकमांहि तेरो कछु नाहिं । लोक अन्य तू अन्य लखाहिं ॥ वह सब षटद्रव्यनको धाम । तू चिन्मूरति आतमराम ॥ ११ ॥ दुर्लभ परको रोकन भाव । सो तो दुर्लभ है सुनु राव । जो तेरो है ज्ञान अनंत । सो नहिं दुर्लभ सुनो महंत ॥ १२ ॥ धर्मस्वभाव आपही जान । आप स्वभाव धर्म सोइ मान । जब वह धर्म प्रगट तोहि होय । तब परमातम पद लख सोय ॥ येही बारह भावन सार । तीर्थंकर भावहिं निरधार ॥ ह्वै वैराग्य महाव्रत लेहि, तब भवभ्रमण जलांजुलि देहि ॥ १४ ॥ भैया भावहु भाव अनूप । भावत होहु तुरत शिवभूप ॥ सुख अनंत विलसो निश दीश । इम भाख्यो स्वामी जगदीश

इति बारहभावना भैया भगवतीदासकृत सम्पूर्ण ॥

बारह भावना भूधरदासकृत।

दोहा—

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबको एकदिन, अपनी अपनी बार॥

अपनी अपनी बार सर्व प्राणी जु अवशि मर जावै।
अन्य समस्त पदारथ जगमें कोऊ थिर न रहावै॥
ये परवस्तु मोहवश मनमैं रागरु द्वेष बढावै।
तातैं परमैं रागरोष तज जो उत्तम पद पावै॥ १॥

दलबलदेई देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियां जीवको, कोई न राखनहार॥

कोइ न राखनहार जीवके जब अंतिम दिन आवै।
औषध यंत्र मंत्रकी शरना गहे भि कोइ न बचावै॥
रत्नत्रय धर्म हि इक सरना यही सब जन गावै।
तातै सबकी सरन छार गहु धर्म मुक्तिपद पावै॥ २॥

दामविना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसारमें, सब जग देख्यो छान॥

सब जग देख्यो छान, सबहि प्राणी अति दुःख जु पावै।
कर्म बली नट चारु गतिमैं, बहु विध नाच नचावै॥
पद विन तन पावै तो धन नहिं, धन पा तुरत नसावै।
तातैं भवतन-भोग-राग तज शिवमग लहि शिव जावै॥ ३॥

आप अकेलो अवतरै, मरै अकेलो होय।
यूं कबहूं इस जीवको, साथी सगा न कोय॥

साथी सगा न कोइ मरनकर जब परभवमें जावै।
मात पिता सुत दारा प्रिय जन कोइ न साथी आवै ॥
पुण्य पाप या धर्म हि साथी, तन धन यही रहावै।
सुख दुख सबही इकला भुगतै इकला चहुंगति धावै ॥ ४ ॥

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय।
घर संपति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

पर हैं परिजन लोय होय नहिं वस्तु जाति कुल थारा।
मोहकर्मवश परको अपने समझै सोइ गँवारा ॥
तू है दर्शन ज्ञानमयो चैतन्य आतमा न्यारा।
तातैं पर जड़ त्याग आप गहि जो होवै निस्तारा ॥ ५ ॥

दिपै चामचादरमढी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगतमें, अवर नहीं घिनगेह ॥

अवर नहीं घिनगेह देहसम अशुचि पदारथ कोई।
अस्थिमांसमलमूत्र अशुचि सब याही तनतैं होई।
चंदन केशर आदि वस्तु तन परसत शुचिता खोवै।
ऐसे तनमें राचि रह्यो तब कैसे शिवमग जोवै ॥ ६ ॥

सोरठा।

मोहनींदके जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्मचोर चहुओर, सरबस लूटैं सुध नहीं ॥

गीता।

नहीं सुख या जीवको यह कर्म आस्रव नित करै।
मन वचन तनके योगतैं नित शुभ अशुभ कर्महि वरै ॥
तिन करमके बंधन भये तिन उदयतैं सुख दुख लही।
तातैं मिथ्यात प्रमाद आदिक तजहु जातैं शिव गही ॥ ७ ॥

सतगुरु देय जगाय, मोहनींद जब उपशमै।
तब कछु बनहिं उपाय, कर्मचोर आवत रुकै॥
रुकै तब ही कर्म आस्रव किये संवर चावसों॥
अरु महाव्रत पन समिति गुप्ती तीन दश वृष भावसों॥
परिषह सहन अरु भावना चित चिंतये नित ही सही।
तातैं जु होवै कर्म संवर यही जिनधुनिमैं कही॥ ८॥

दोहा।

ज्ञानदीपतपतेल घर, घर शोधै भ्रम छोर।
याविध विन निकसै नहीं, पैठे पूरब चोर॥
पैठे पूरब चोर कर्म सब रहे देह घरमाहीं।
बारह विध तप अग्नि जलाये कर्मचोर जल जाहीं॥
उदयभोग सविपाक निर्जरा पकै आम तरु डाली।
तपसों ह्वै अविपाक पकावै पालविषै जिम माली॥ ९॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इंद्री-विजय, धार निर्जरा सार॥
धार निर्जरा सार सार संवर पूर्वक जो हो है।
वही निर्जरा सार कही अविपाक निर्जरा सो है॥
उदय भये फल देय निजरै सो सविपाक कहावै।
तासों जियका काज न सरि है सो सब व्यर्थ हि जावै॥ १०॥

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामै जीव अनादितैं, भरमत हैं विन ज्ञान॥
भरमत हैं बिन ज्ञान लोकमें कभी न हित उपजाया।
पंच परावृत करते करते सम्यकज्ञान न पाया॥

अब तू मोहकर्मको हरकर तज सब जगकी आसा।
जिनपद ध्याय लोकशिर ऊपर करले निज थिर बासा ॥ ११ ॥

धनकनकंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान।
दुर्लभ है संसारमें, एक जथारथ ज्ञान ॥

एक जथारथ ज्ञान सु दुर्लभ है जगमैं अधिकाना।
थावर त्रस दुर्लभ निगोदतैं नरतन संगति पाना ॥
कुल श्रावक रत्नत्रय दुर्लभ अरु षष्ठम गुन थाना।
सबतैं दुर्लभ आतम ज्ञान सु जो जगमांहि प्रधाना ॥ १२ ॥

जाचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंतारैन।
विन जाचे विन चिंतये धर्म सकल सुख दैन ॥

धर्म सकल सुखदैन रैन दिन भवि जीवन मन भाता।
षट् दर्शन ईसा मूसा महमदका मत न सुहाता ॥
वीतराग सर्वज्ञ देव गुरु धर्म अहिंसा जानो।
अनेकांत सिद्धांत सप्त तत्वनको कर सरधानो ॥ १३ ॥
दोहा—भूधर कविकृत भावना, द्वादश जगपरधान।
तापर इक अल्पज्ञने छंद रचे हित जान ॥ १४ ॥

इति बारह भावना भूधरदासकृत।

बारहभावना बुधजनकृत।

गीता छंद।

जेती जगतमैं वस्तु तेती अथिर परणमती सदा। परणमनराखन नाहिं समरथ इंद्र चक्री मुनि कदा ॥ सुतनारि यौवन और तन धन जान दा-

मिनि दमकसा। ममता न कीजे धारि समता-
मानि जलमैं नमकसा ॥१॥ चेतन अचेतन स-
ब परिग्रह हुआ अपनी थिति लहैं। सो रहैं आ-
प करार माफिक अधिक राखे ना रहैं॥ अब
शरण काकी लेयगा जब इंद्र नाहीं रहत हैं।
शरण तो इक धर्म आतम जाहि मुनिजन गह-
त हैं ॥ २ ॥ सुर नर नरक पशु सकल हेरे कर्म
चेरे बन रहे। सुख शासता नहिं भासता सब
विपतिमें अतिसन रहे॥ दुख मानसी तो देवग-
तिमैं नारकी दुख ही भरै। तिर्यंच मनुज वियोग
रोगी शोक संकटमें जरै ॥ ३ ॥ क्यों भूलता
शठ फूलता है देख परिकर थोकको। लाया कहां
लेजायगा क्या फौज भूषण रोक को॥ जनमत
मरत तुझ एकलेको काल केता होगया।
सँग और नाहीं लगा तेरे सीख मेरी सुन भया
॥ ४ ॥ इंद्रीनतैं जाना न जावै तू चिदानंद अ-
लक्ष है। स्वसंवेदन करत अनुभव होत तब
परत्यक्ष है॥ तन अन्य जड जानो सरूपी तू

अरूपी सत्य है। कर भेदज्ञान सो ध्यान धर निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरै नाचा रूपसुंदरतन लहा। मलमूत्र भांडा भरा गाढा तू न जानैं भ्रम गहा ॥ क्यों सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरै। तुहि काल गटकै नाहिं अटकै छोड तुझको गिर परै ॥६॥ कोइ खरा अरु कोइ बुरा नहिं वस्तु विविध स्वभाव है। तू वृथा विकलप ठान उरमें करत राग उपाव है ॥ यूं भाव आस्रव बनत तू ही द्रव्य आस्रव सुन कथा। तुझ हेतुसे पुद्गल करम न निमित्त हो देते व्यथा॥७॥ तन भोग जगत सरूप लख डर भविक गुर शरणा लिया सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख भया॥ इंद्री अनिंद्री दाबि लीनी त्रस रु थावर बँध तजा। तब कर्म आस्रव द्वार रोकै ध्यान निजमैं जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनों बरत लीनो वाह्यभ्यंतर तपतपा। उपसर्ग सुरनर जड पशूकृत सहा निज आतम जपा ॥ तब कर्म

रसविन होन लगे द्रव्यभावन निर्जरा। सब कर्म हरकै मोक्ष वरकै रहत चेतन ऊजरा ॥६॥ विच लोक नंतालोक मांहीं लोकमैं द्रव सब भरा। सब भिन्नाभिन्न अनादिरचना निमितकारणकी धरा॥ जिनदेव भाषा तिन प्रकाशा भर्मनाशा सुन गिरा। सुर मनुष तिर्यक नारकी हुइ उर्ध्व मध्य अधोधरा॥ १०॥ अनँतकाल निगोद अटका त्रस थावर तनधरा। भू वारितेजबयार व्हैकै बेइँद्रिय त्रस अवतरा॥ फिर हो ति· इंद्री वा चौइंद्री पंचेंद्री मनविन बना। मनयुत मनुषगतिहोन दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना॥ ।११। जिय! न्हान धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जपजपा। तपनग्न रहना धर्म नाहीं धर्म नाहीं तपतपा॥ वर धर्म निज आतम स्वभावी ताहि बिन सब निष्फला। बुधजन धरम निज धार लींना तिनहिं कीना सब भला॥ दोहा—

अथिराशरणसंसार है एकत्वअनित्याहि जान। अशुचि आस्रव संवरा निर्जर लोक बखान॥

बोध रु दुर्लभ धरम ये, बारह भावन जान।
इनको भावै जो सदा, क्यों न लहै निर्वान।१४।

वैराग्यभावना।

वज्रनाभि चक्रवर्तीकी। दोहा—

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जगमाहिं
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं॥

जोगीरासा वा नरेंद्र छंद।

इहविध राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशा-
लो। सुखसागरमैं रमत निरंतर, जात न जान्यो
कालो॥ एक दिवस शुभ कर्मसँजोगे क्षेमंकर
मुनि बंदे। देखि सिरीगुरुके पदपंकज, लोचन
अलि आनंदे॥ २॥ तीन प्रदक्षिण दे शिर
नायो, कर पूजा थुति कीनी। साधुसमीप
विनय कर बैठ्यो, चरननमैं दिठि दीनी॥ गुरु
उपदेश्यो धर्मशिरोमणि, सुन राजा वैरागे।
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे
।३। मुनिसूरजकथनीकिरणावलि, लगत भरम
बुधि भागी। भवतन भोगस्वरूप विचार्‌यो, परम

धरम अनुरागी ॥ इह संसार महावन भीतर, भ्रमते ओर न आवै। जामन मरन जरा दों दाझै जीव महादुख पावै ॥ ४ ॥ कबहूं जाय नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी। कबहूं पशु परजाय धरै तहँ, बध बंधन भयकारी ॥ सुरगतिमैं परसंपति देखे राग उदय दुख होई। मानुषयोनि अनेक विपतिमय, सर्व सुखी नहिं कोई ॥५॥ कोई इष्ट वियोगी विलखै, कोइ अनिष्ट सँयोगी। कोई दीन दरिद्रि विगूचे, कोई तनके रोगी ॥ किसही घर कलिहारी नारी कै बैरी सम भाई। किसहीके दुख बाहिर दीखै, किस ही उर दुचिताई ॥ ६ ॥ कोई पुत्र विना नित झूरै, होय मरै तव रोवै। खोटी संततिसों दुख उपजे, क्यों प्रानी सुख सोवै ॥ पुण्य उदय जिनके तिनके भी नाहिं सदा सुख साता। यह जगवास जथारथ-देखे, सब दीखै दुखदाता ॥७॥ जो संसारविषै सुख होता, तीर्थंकर क्यों त्यागे। काहेको शिवसाधन करते, संजमसों

अनुरागै॥ देह अपावन अथिर घिनावन यामें सार न कोई। सागरके जलसों शुचि कीजे तो भी शुद्ध न होई ॥८॥ सात कुधातुभरी मलमूरत चाम लपेटी सोहै। अंतर देखत या सम जगमें अवर अपावन को है॥ नवमलद्वार स्रवें निशिवासर नाम लिये घिन आवै। व्याधि उपाधि अनेक जहां तहँ कौन सुधी सुख पावै ॥ ९ ॥ पोषत तो दुख दोष करै अति सोपत सुख उपजावै। दुर्जनदेहस्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढावै॥ राचनजोग स्वरूप न याको विरचनजोग सही है। यह तन पाय महातप कीजै यामें सार यही है।१०। भोग बुरे भवरोग बढावै बैरी हैं जग जीके। बेरस होंय विपाक समय अति सेवत लागै नीके॥ वज्रअगिनि विषसे विषधरसे ये अधिके दुखदाई। धर्मरतनके चोर चपल अति दुर्गतिपंथ सहाई॥ ११ ॥ मोहउदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जानै। ज्यों कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन मानै॥
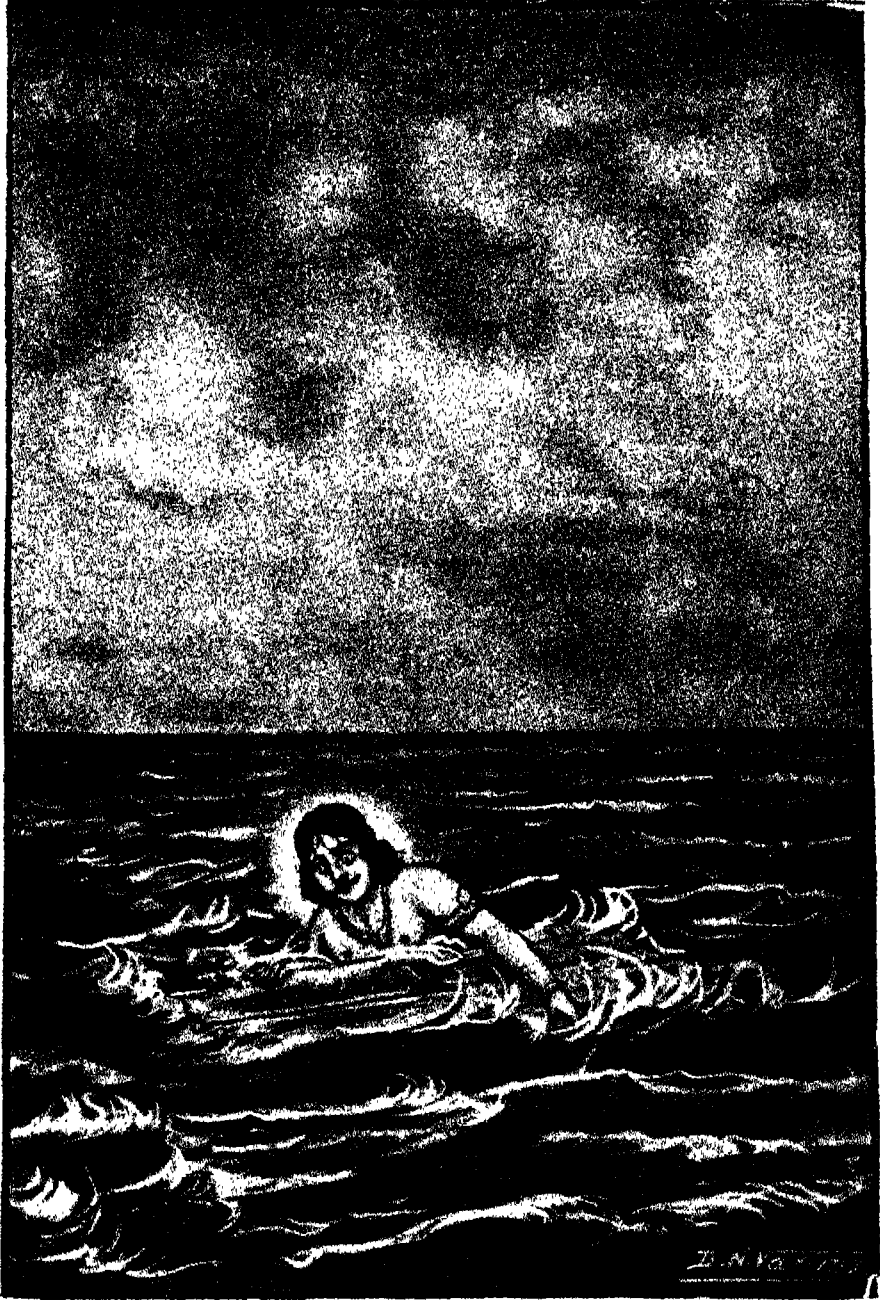
श्रीपाल समुद्रको भुजाओंसे तैर कर पार कर रहे हैं।

(श्रीपाल पुराण)

मैनासुन्दरी श्रीपालको परदेश जानेसे रोक रही है।

(श्रीपाल पुराण)

ज्यों ज्यों भोग सँजोग मनोहर मनवांछित जन
पावै। तृष्णा नागिन त्यों त्यों डंकै लहर जह-
रकी आवै॥ १२॥ मै चक्रीपद पाय निरंतर
भोगे भोग घनेरे। तौ भी तनक भये नहिं पूरन
भोग मनोरथ मेरे॥ राजसमाज महा अघका-
रण वैरबढावनहारा। वेश्यासम लछमी अति
चंचल याका कौन पत्यारा॥ १३॥ मोहमहा-
रिपु बैर विचार्यो जगजिय संकट डारे।
घरकारागृह वनिता बेडी परिजन जन रखवा-
रे॥ सम्यकदर्शन ज्ञानचरण तप ये जियके हि-
तकारी। येही सार असार और सब यह चक्री
चितधारी॥ १४॥ छोड़े चौदह रत्न नवोंनिधि
अरु छोड़े संग साथी। कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े
चौरासी लख हाथी॥ इत्यादिक संपति बहुतेरी
जीरणतृणसम त्यागी। नीति विचार नियोगी
सुतकों राज दियो बड़भागी॥ १५॥ होय
निशल्य अनेक नृपति संग भूषण वसन उतारे।
श्रीगुरु चरणधरी जिनमुद्रा पंच महाव्रत धार

धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह धीरजधारी। ऐसी संपति छोड बसे वन, तिन पद धोक हमारी ॥ १६ ॥ दोहा—

परिगहपोट उतार सब, लीनो चारित पंथ।
निज स्वभावमें थिर भये, वज्रनाभि निरग्रंथ ॥

इति श्री वज्रनाभि चक्रवर्तीकी वैराग्य भावना।
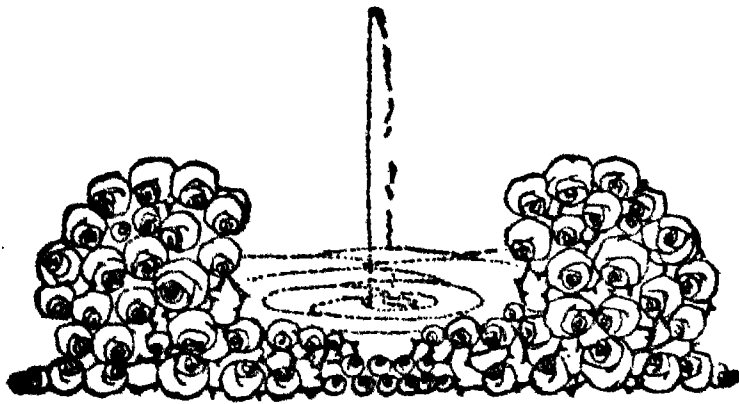
दोहा—द्रव्यरूपकरि सर्वथिर, परजय थिर है कौन। द्रव्यदृष्टि आपा लखो, पर्जय नयकरि गौन ॥ १ ॥ शुद्धातम अरु पंच गुरु, जगमें सरनौ दोय। मोह उदय जियके वृथा, आन कल्पना होय ॥ २ ॥ परद्रव्यनतें प्रीति जो, है संसार अबोध। ताको फल गति चारमें, भ्रमण कह्यो श्रुत शोध ॥३॥ परमारथतें आतमा, एक रूप ही जोय। कर्मनिमित विकलप घने, तिन नासे शिव होय ॥ ४ ॥ अपने अपने सत्वकूं, सर्व वस्तु विलसाय। ऐसें चितवै जीव तब, परतें ममत न थाय ॥ ५ ॥ निर्मल अपनी आतमा, देह अपावन गेह। जानि भव्य निज भावको, यासों तजो सनेह ॥६॥ आतम केवल ज्ञानमय, निश्चय-दृष्टि निहार। सब विभाव परिणाममय, आस्रव भाव विडार ॥ ७ ॥ निज स्वरूपमें लीनता, निश्चय संवर जानि। समिति गुप्ति संजम धरम, धरैं पापकी हानि ॥८॥

संवरमय है आतमा, पूर्व कर्म झड़ जाय। निज स्वरूपको पायकर, लोक शिखर जब थाय ॥९॥
लोकस्वरूप विचारिकैं, आतमरूप निहार। परमारथ व्यवहार मुणि, मिथ्याभाव निवारि ।१०।
बोधि आपका भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहिं। भवमैं प्रापति कठिन है, यह व्यवहार कहाहिं ।११
दर्शज्ञानमय चेतना, आतमधर्म बखानि। दयाक्षमादिक रतनत्रय, यामैं गर्भित जान ।१२।

सोलहकारण भावना।

चौपाई।

आठदोषमद आठ मलीन, छह अनायतन शठता तीन। ये पचीस मल वर्जित होय, दर्शविशुद्धिभावना सोय ॥ १ ॥ रत्नत्रयधारी मुनिराय, दर्शनज्ञान चारित समुदाय। इनकी विनय विषै परवीन, दुतिय भावना सो अमलीन ॥२॥ शीलधारि धारै समचेत, सहस अठारह अंग समेत। अतीचार नहिं लागै जहां, तृतिय भावना कहिये तहां ॥ ३ ॥ आगमकथित अरथ अव-

धार, यथाशक्ति निजबुधि अनुसार। करै निरं-
तर ज्ञान अभ्यास, तुरिय भावना कहिये तास।४
दोहा—धर्म धर्मके फलविषै, परतैं प्रीति विशेख।
यही भावना पंचमी, लिखी जिनागम देख।५।

चौपाई।

औषधि अभय ज्ञान आहार, महादान ये चार
प्रकार। शक्ति समान सदा निर्वहै, छठी भावना
धारक वहै ॥६॥ अनसन आदि मुक्ति दातार,
उत्तम तप बारह परकार। बल अनुसार करै जो
कोय, सो सातमी भावना होय ॥७॥ यतीवर्ग
को कारन पाय, विघन होत जो करै सहाय।
साधु समाधि कहावै सोय, यही भावना अष्टमि
होय ॥८॥ दशविध साधु जिनागम कहे, पथ
पीडित रागादिक गहे। तिनकी जो सेवा सत-
कार, यही भावना नौमी सार ॥९॥ परमपूज्य
आतम अरहंत, अतुल अनंत चतुष्टयवंत।
तिनकी थुति नित पूजा भाव, दशमि भावना
भवजलनाव ॥१०॥ जिनवरकथित अर्थ अव-

तार, रचना करै अनेक प्रकार। आचारजकी भक्ति विधान, एकादशमि भावना जान ॥११॥ विद्यादायक विद्यालीन, गुणगरिष्ठ पाठक परवीन। तिनके चरन सदा चित रहै बहु श्रुत भक्ति बारमी यहै ॥१२॥ भगवतभाषित अरथ अनूप, गणधरग्रंथित ग्रंथ स्वरूप। तहां भक्ति बरतै अमलान, प्रवचनभक्ति तेरमी जान ॥ १३ ॥ षट आवश्यक क्रिया विधान, तिनकी कबहूँ करै न हान। सावधान वरतै थित चित्त, सो चौदहवीं परम पवित्त ॥ १४ ॥ कर जपतप पूजाव्रत भाव. प्रगट करै जिनधर्मप्रभाव। सोई मारगपरभावना. यही पंचदशमी भावना ।१५। चार प्रकार संघसों प्रीति. राखै गाय वत्सकी रीति। यह सोलहमी सब सुखदान. प्रवचन वातसल्य अभिधान ॥ दोहा—

सोलह कारन भावना. परम पुण्यको खेत।
भिन्न भिन्न अरु सोलहों. तीर्थंकरपद देत ॥
बंध प्रकृति जिनमतविषै. कही एक सो बीस।

सौ सतरह मिथ्यातमैं. बांधत हैं निशदीस ॥
तीर्थंकर आहार द्विक. तीन प्रकृति ये जान ।
इनको बंध मिथ्यातमैं. कह्यो नहीं भगवान ॥
तातैं तीर्थंकर प्रकृति. तीनों समकित माहिं ।
सोलहकारणसों बंधैं. शिवको निश्चय जाहिं ॥

सोरठा ।

पूज्यपाद मुनिराय. श्री सरवारथ सिद्धिमैं ।
कह्यो कथन इस न्याय. देख लीजिये सुबुधिजन ॥

बारहभावना मंगतराय कृत ।

दोहा छंद ।

वंदूं श्री अरहंतपद, वीतराग विज्ञान ।
वरणूं बारह भावना, जगजीवनहित जान ॥१॥

विश्नुपद छंद ।

कहां गये चक्री जिन जीता, भरतखंड सारा ।
कहां गये वह राम रु लछमन, जिन रावन मारा ॥
कहां कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सग-
री । कहां गये वह रंगमहल अरु, सुवरनकी
नगरी ॥ २ ॥ नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ

मरे रनमें। गये राज तज पांडव वनको, अगिन लगी तनमें ॥ मोहनींदसे उठ रे चेतन, तुझे जगावनको। हो दयाल उपदेश करें गुरु, बारह भावनको ॥ ३ ॥

१ । अथिर भावना ।

सूरज चांद छिपै निकलै ऋतु, फिर फिर कर आवै। प्यारी आयू ऐसी बीतै, पता नहीं पावै ॥ पर्वतपतितनदी सरिता जल बहकर नहिं हटता, स्वास चलत यों घटै काठ ज्यों, आरेसों कटता ॥ ४ ॥ ओसबूंद ज्यों गलै धूपमें, वा अंजुलि पानी। छिन छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्रानी ॥ इंद्रजाल आकाश नगर सम जगसंपति सारी। अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी ॥ ५ ॥

२ । अशरण भावना ।

कालसिंहने मृगचेतनको. घेरा भव वनमें।
नहीं बचावनहारा कोई. यों समझो मनमें ॥
मंत्र यंत्र सेना धन संपति, राज पाट छूटै।

वश नहिं चलता काल लुटेरा. काय नगरि लूटै।
चक्ररतन हलधरसा भाई. काम नहीं आया।
एक तीरके लगत कृष्णकी विनश गई काया॥
देव धर्म गुरु शरण जगतमें. और नहीं कोई।
भ्रमसे फिरै भटकता चेतन. युँही उमर खोई॥

३। संसार भावना।

जनममरन अरु जरारोगसे. सदा दुखी रहता।
द्रव्य क्षेत्र अरु कालभावभव. परिवर्तन सहता॥
छेदन भेदन नरक पशूगति. बध बंधन सहना।
रागउदयसे दुखसुरगतिमें. कहां सुखी रहना॥
भोगि पुण्यफल हो इकइंद्री. क्या इसमें लाली।
कुतवाली दिनचार वही फिर. खुरपा अरु जाली
मानुषजन्म अनेक विपतिमय. कहीं न सुख देखा
पंचमगति सुख मिलै शुभाशुभको मेटो लेखा॥

४। एकत्व भावना।

जन्मै मरै अकेला चेतन. सुखदुखका भोगी।
और किसीका क्या इक दिन यह. देह जुदी होगी॥ कमला चलत न पैंड जाय मरघट तक

परिवारा। अपने अपने सुखको रोवैं. पिता पुत्र दारा ॥ १० ॥ ज्यों मेलेमैं पंथीजन मिलि नेह फिरै धरते। ज्यों तरवरपै रैन वसेरा पंछी आ करते॥ कोस कोई दोकोस कोई उड फिर थक थक हारै। जाय अकेला हंस संगमें. कोइ न पर मारै॥ ११ ॥

५। भिन्न भावना।

मोहरूप मृगतृष्णा जगमैं मिथ्या जल चमकै।
मृग चेतन नित भ्रममैं उठ उठ, दौडैं थक थककै॥
जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता।१२।
तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड तू ज्ञानी।
मिलेअनादि यतनतैं विछुडैं, ज्यों पय अरु पानी॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना।
जौलों पौरुष थकै न तौलों उद्यमसों चरना॥

६। अशुचि भावना।

तू नित पोखै यह सूखै ज्यों, धोवै त्यों मैली।
निश दिन करै उपाय देहका, रोगदशा फैली॥

मातपितारज वीरज मिलकर, बनी देह तेरी।
मांस हाड नश लहू राधकी, प्रघट व्याधि घेरी॥
काना पौंडा पड़ा हाथ यह चूसै तौ रोवै।
फलै अनंत जु धर्म ध्यानकी, भूमिविषै बोवै।
केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी॥

७। आस्रव भावना।

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मनको।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब पुदगल भरमनको॥
भावित आस्रवभाव शुभाशुभ, निशदिन चेतनको।
पाप पुण्यके दोनों करता, कारण बंधनको।१८।
पन मिथ्यात योग पंद्रह द्वादश अविरत जानो।
पंचरु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो॥
मोहभावकी ममता टारै, पर परणत खोते।
करै मोखका यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होते॥

८। संवर भावना।

ज्यों मोरीमें डाट लगावै, तब जल रुक जाना।
त्यों आस्रवको रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाना॥

पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर वचन काय मनको
दशविधधर्म परीषहबाइस, बारह भावनको।१८।
यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रवको खोते
सुपन दशामे जागो चेतन, कहां पडे सोते ॥
भाव शुभाशुभ रहित शुद्धभावनसंवर पावै।
डांट लगत यह नाव पडी मझधार पार जावै ॥

९। निर्ज्जराभावना।

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पडे भारी।
संवर रोकै, कर्म निर्जरा, ह्वै सोखनहारी ॥
उदयभोग सविपाकसमय, पक जाय आम डाली।
दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥
पहली सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा।
दूजी करै जु उद्यम करके, मिटै जगत फेरा ॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुकत रानी।
इस दुलहिनकी यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥

१०। लोक भावना।

लोक अलोक अकाश माहिं थिर, निराधार जानो।
पुरुषरूप कर कटी भये षट, द्रव्यनसों मानों ॥

इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है।
जीवरु पुद्गल नाचै यामै, कर्म उपाधी है॥२३॥
पापपुन्यसों जीव जगतमें, नित सुखदुख भरता।
अपनी करनी आप भरै शिर, औरनके धरता॥
मोहकर्मको नाश मेटकर, सब जगकी आसा।
निज पदमें थिर होय लोकके, शीश करो बासा॥

११। बोधिदुरलभ भावना।

दुर्लभ है निगोदसे थावर, अरु त्रसगति पानी।
नरकायाको सुरपति तरसै सो दुर्लभ प्रानी॥
उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावककुल पाना।
दुर्लभ सम्यक दुर्लभ संयम, पंचम गुणठाना॥
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षाका धरना।
दुर्लभ मुनिवरको व्रत पालन, शुद्धभाव करना॥
दुर्लभसे दुर्लभ है चेतन, बोधिज्ञान पावै।
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर इस भवमें आवै॥

१२। धर्मभावना।

षट दरशन अरु बौद्ध रु नास्तिकने जगको लूटा
मूसा ईसा और मुहम्मदका मजहब झूटा॥

हो सुछंद सब पाप करै सिर, करताके लावै।
कोई छिनक कोई करतासे, जगमें भटकावै॥
वीतराग सर्वज्ञ दोष विन, श्रीजिनकी वानी।
सप्त तत्वका वर्णन जामें, सबको सुखदानी॥
इनका चितवन बार बार कर, श्रद्धा उर धरना।
मंगत इसी जतनतैं इकदिन, भवसागरतरना॥

॥ इति सुलतानपुरनिवासी मंगतरायजीकृत बारह भावना ॥
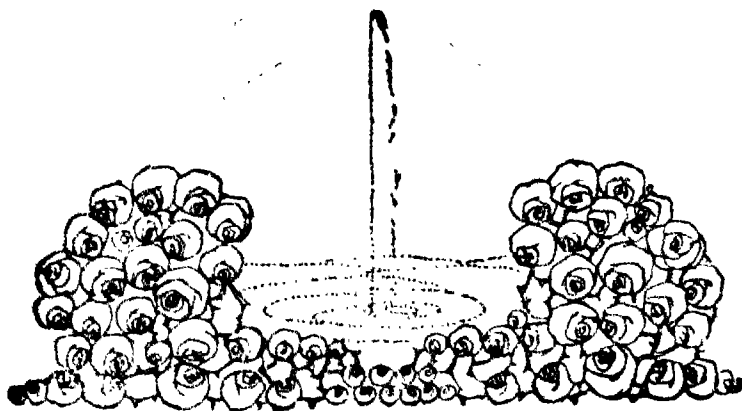
सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा-
परत्वं। मध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा
विदधातु देव ! ॥ १ ॥ शरीरतः कर्त्तुमनंतशक्तिं
विभिन्नमात्मानमपास्तदोषं । जिनेंद्र कोषादिव
खड्गयष्टिं तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥
दुःखे सुखे वैरिणि बंधुवर्गे योगे वियोगे भुवने
वने वा । निराकृताशेषममत्वबुद्धेः समं मनो मे-
स्तु सदापि नाथ ॥३॥ मुनीश ! लीनाविव की-
लिताविव स्थिरौ निखाताविव विंबिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा तमोधुना नौहृदि
दीपकाविव ॥ ४ ॥ एकेंद्रियाद्या यदि देव ! देहि
नः प्रमादतः संचरता इतस्ततः । क्षता विभिन्ना
मिलिता निपीडिता-स्तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं
तदा ॥ ५ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्त्तिना मया
कषायाक्षवशेन दुर्धिया । चारित्रशुद्धेर्यदकारि
लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ६ ॥
विनिंदनालोचनगर्हणैरहं, मनोवचःकायकषाय-

निर्मितं। निहन्मि पापं भवदुःखकारणं भिषग्विषं मंत्रगुणैरिवाखिलं ॥७॥ अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यति क्रमं जिनातिचारं सुचरित्रकर्म्मणः। व्यधामना-चारमपि प्रमादतः प्रतिक्रम तस्य करोमि शुद्धये ।८। क्षतिं मनःशुद्धिविधेरतिक्रमं व्यक्तिक्रमं शी-लवृतेर्विलंघनं। प्रभोऽचितारं विषयेषु वर्तनं वदं-त्यनाचारमिहातिसक्ततां ॥९॥ यदर्थमात्रापद-वाक्यहीनं मया प्रमादाद्यादि किंचनोक्तं। तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी सरस्वती केवलबोधल-ब्धिं ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः। चिंतामणिं चिंतितवस्तुदाने त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि ॥ ११ ॥ यः स्मर्यते सर्वमुनींद्रवृंदैर्यः स्तूयते सर्वनरामरेंद्रैः। यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः स देवदेवो हृदये ममास्तां ॥ १२ ॥ यो दर्शनज्ञान-सुखस्वभावः समस्तसंसारविकारबाह्यः। समा-धिगम्यः परमात्मसंज्ञः. स देवदेवो हृदये ममा-स्तां ॥१३॥ निषूदते यो भवदुःखजालं. निरीक्ष-

ते यो जगदंतरालं। योंतर्गतो योगिनिरीक्षणीयः स देवदेवो हृदये ममास्तां ॥१४॥ विमुक्तिमार्ग-प्रतिपादको यो. यो जन्ममृत्युव्यसनाद्यतीतः। त्रिलोकलोकी विकलोऽकलंकः,स देवदेवो हृदये ममास्तां ॥१५॥ क्रोडीकृताशेषशरीरिवर्गाः,रागादयो यस्य न संति दोषाः। निरिंद्रियो ज्ञान-मयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्तां ।१६। यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः. सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबंधः। ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्तां॥ १७॥ न स्पृश्यते कर्म कलंकदोषैः यो ध्वांतसंघैरिव तिग्मरश्मिः। निरंजनं नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १८ ॥ विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्य-माने भुवनावभासि। स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १९ ॥ विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विवक्तं शुद्धं शिवं शांतमनाद्यनंतं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥२०॥ येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा,विषाद-

निद्राभयशोकचिंता । क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपंचस्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१ ॥ न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी विधानतो नो फलको विनिर्मितः । यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥२२॥ न संस्तरोभद्र! समाधिसाधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनं । यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनां ॥ २३ ॥ न संति बाह्या मम केचनार्था भवामि तेषां न कदाचनाहं । इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै ॥ २४ ॥ आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः । एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र स्थितोपि साधुर्लभते समाधिं ॥ २५ ॥ एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा विनिर्मलः साधिगमस्वभावः बहिर्भवाः संत्यपरे समस्ता न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥ २६ ॥ यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः । पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः कुतो हि

तिष्ठंति शरीरमध्ये ॥ २७ ॥ संयोगतो दुःखम-
नेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी। ततस्त्रि-
धासौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनी-
नां ॥ २८ ॥ सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं संसार-
कांतारनिपातहेतुं। विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो
निलीयसे त्वं परमात्मतत्वे ॥ २९ ॥ स्वयं कृतः
कर्म यदात्मना पुरा फलं तदीयं लभते शुभाशुभं।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं स्वयंकृतं कर्म निर-
र्थकं तदा ॥३०॥ निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो
न कोपि कस्यापि ददाति किंचन। विचारयन्ने
वमनन्यमानसः परो ददातीति विमुच्य शेमुषीं
।३१। यैः परमात्मऽमितगतिवंद्यः सर्वविविक्तो
भृशमनवद्यः। शश्वदधीतो मनसि लभंते मु-
क्तिनिकेतं विभववरं ते ॥३२॥ इति द्वात्रिंशति-
वृत्तैः परमात्मानमीक्षते। योऽनन्यगतचेतस्को,
यात्यसौ पदमव्ययं ॥ ३२ ॥

मेरी भावना।

जिसने राग रोष कामादिक जीते, सबजग

जान लिया, सब जीवोंको मोक्षमार्गका निस्पृह हो उपदेश दिया। बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो, भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह चित्त उसीमें लीन रहो॥ १॥ विषयोंकी आशा नहिं जिनके साम्य-भाव धन रखते हैं, निजपरके हित-साधनमें जो निश-दिन तत्पर रहते हैं। स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या विना खेद जो करते हैं, ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुखसमूहको हरते हैं॥ २॥ रहै सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहै, उनही जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहै। नहीं सताऊँ किसी जीवको, झूठ कभी नहिं कहा करूं, परधन वनिता[1]पर न लुभाऊँ, संतोषा-मृत पिया करूँ॥ ३॥ अहंकारका भाव न रक्खूं, नहीं किसीपर क्रोध करूं। देख दूसरों-की बढतीको कभी न ईर्षा-भाव धरूं। रहै भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूं।

---

* १। स्त्रियां 'वनिता' की जगह 'परनर' पढ़ा करें।

बनै जहां तक इस जीवनमें औरोंका उपकार करूं ॥४॥ मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे नित्य रहै, दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणा-स्रोत बहै। दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतोंपर क्षोभ नहीं मुझको आवै, साम्यभाव रक्खूं मैं उनपर, ऐसी परिणति हो जावै ॥ ५ ॥ गुणीजनोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड आवै, बनै जहांतक उनकी सेवा करकै यह मन सुख पावै। होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवै, गुण-ग्रहणका भाव रहै नित दृष्टि न दोषोंपर जावै ।६। कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवै या जावै, अनेक वर्षों तक जीऊं या मृत्यु आज ही आ जावै। अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवै, तो भी न्यायमार्गसे मेरा कभी न पद डिगने पावै ॥ ७ ॥ होकर सुखमें मग्न न फूलै दुखमें कभी न घबरावै, पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक अटवीसे नहिं भय खावै। रहै अडोल-अकंप निरंतर यह मन दृढतर बन जावै, इष्टवि-

योग-अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावै।८।
सुखी रहैं सब जीव जगतके कोई कभी न घब-
रावैं। बैर-भाव-अभिमान छोड जग नित्य नये
मंगल गावैं। घर घर चर्चा रहै धर्मकी दुष्कृत
दुष्कर हो जावें, ज्ञान-चरित उन्नतकर अपने
मनुजजन्मफल सब पावें ॥९॥ ईति-भीत व्यापै
नहिं जगमें वृष्टि समयपर हुआ करै, धर्मनिष्ठ
होकर राजाभी न्याय प्रजाका किया करै। रोग
मरी दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांतिसे जिया करै,
परम अहिंसा-धर्म जगतमें फैल सर्वहित किया
करै ॥१०॥ फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरही
रहा करै, अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई
मुखसे कहा करै। बनकर सब 'युगवीर' हृदयसे
देशोन्नतिरत रहा करैं, वस्तुस्वरूपविचार खुशी-
से सब दुख-संकट सहा करैं ॥ ११ ॥

। जकड़ी रूपचंदकृत ।

राग गौड़ी ।

चेतन चिर भूल्यो भम्यौ देख्यौ चित न विचारि। करम कुसंगति बाहि परयो इह भव-गहन मझा-रि ॥ इह भवगहनमझारि मूरख दुखदवानल नित दह्यौ । मिथ्यातापितसौं दिष्टि छाई मुकति पंथ न तै लह्यौ ॥ तू पंच-इंद्री-सुखतृषा वसि विषय-खार-सलिल छम्यौ। निज सुख सुधार-सविमुख चहुंगति चेतन चिर भूल्यौ भम्यौ।१। चहुंगति चिर भ्रमतहिं गयौ रहियो कहुं न थि-राय। कर्मप्रकृतिपर्‌यो फिर्‌यो देख्यौ लोक शि-राय ॥ देखियौ लोकशिराय सबतैं ऊंच नीच परजै धरै । करम अरु नोकरमरूपी सकलपुद-गल आहरै ॥ परिनयौ परपरनति निरंतर काज कछु भूलि न भयौ। परम-रत्नत्रय-लबाधि बिनु चहुंगति चिर भ्रमतहिं गयौ ॥२॥ गाफिल ह्वैके कहा रह्यौ अपनी सुरत विसारि। विषय कषा-यनिरत भयौ दीने योग पसारि ॥ दीने नियोग

पसारि तीनौं, सुभासुभरसपरिनयौ। आश्रये संतत करम बहु विधि, तोहि तिनि आबरिलयो॥ जिय कछू सुधिबुधि तोहि नाहीं, मूढमोहग्रहानि गह्यौ। गुन सील सरवस खोय अपनौ गाफिल ह्वैकै कहा रह्यो॥ ३॥ चेति चतुरमति चेतना परपरनतिहिं निवारि। दर्शनज्ञानचारित्रमय अपनी वस्तु सँभारि॥ अपनी वस्तु सँभारि विसरी कहा इत उत भटकही। वहिरमुख भूल्यो भैया कत, छोडि कन तुष झटकही॥ निजवस्तु अंतरगत विराजित चिदानंदनिकेतना। स्वानुभव बुद्धि प्रजुंजि देखहि चेति चतुरमतिचेतना॥४। इह संसारकुवासतैं, दुख देखे चिरकाल। अब तू यातैं विरचकरि, छोडि सकल भ्रमजाल॥ छोडि सकल भ्रमजाल चेतन, रतनत्रय आराध ही॥ आपुने बलहिं सँभार अतिबल करम-वैरिनि साध हीं। समरसीभाव सुभावपरनति, सदारहहि

उदासतैं। रूपचंद, सहजहीं छूटहि- इह संसार-कुवासतैं ॥ ५ ॥

जकड़ी दौलतरामकृत।

अब मन मेरा बे- सीखबचन सुन मेरा। भजि जिनवर पद बे- ज्यौं विनसै दुख तेरा॥ विनसै दुख तेरा भववनकेरामनवचतन जिनचरन भजो पंचकरनवश राखे सुज्ञानी- मिथ्यामतमग-दौर तजौ। मिथ्यामतमग पगि अनादितैं-तैं चहुंगति कीन्हा फेरा। अबहू चेत अचेत होय मत, सीख वचन सुन मनमेरा।१। इस भववनमैं बे तैं साता नाहिं पाई। वसुविधिवश है बे, तैं निजसुधि विसराई॥ तैं निजसुधि विसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा। परपरनतिमैं मगन भया तू, जन्म जरा-मृत-दाह-दहा॥ जिनमत सारसरोवरकों अब,-गाहि लागि निजचिंतनमैं। तो दुखदाह नशै सब नातर, फेर फंसै इस भववनमैं ॥ २ ॥

संसाररूपी बनका। २ पांच इन्द्रियां। ३ आठ कर्मों के वश होकर।

इस तनमें तू बे, क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन बे, सतगुरु याहि बताया॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा। कृमिकुल कलित लखत घिन आवै, यासौं क्या कीजे नेहा॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमग-साधनमैं। तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमैं॥३॥ भोग भले न सही, रोग शोकके दानी। शुभगतिरोकन बे दुर्गतिपथ अगवानी॥ दुर्गतिपथ अगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी इनसौं। तिन नानाविध विपति सही है, विमुख भयौ निजसुख तिनसौं॥ कुंजर झख अलि शलभ हिरन इन, एक अक्षवश मृत्यु लही। यातैं देख समझ मनमांहीं, भवमैं भोग भले न सही॥४॥ काज सरै तब बे, जब निजपद आराधै। नशै भवावलि बे निराबाधपद लाधै॥ निराबाधपद लाधै तब तोहि, केवलदर्शनज्ञान

जहां । सुख अनंत अति इंद्रियमंडित, वीरज अचल अनंत तहां ॥ ऐसा पद चाहै तो भज निज बार बार अब को उचरै । दौल: मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥५॥

। जकड़ी दौलतरामकृत ।

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं शारद अंबा चित लाऊं । द्वैविधि-परिग्रह-परिहारी, गुरु नमहु स्व-पर हितकारी ॥ हितकारि ताकर देव श्रुत गुरु-परख निजउर लाइये । दुखदायकुपथविहाय शिवसुख-दाय जिनवृष ध्याइये । चिरतैं कुमग-पगि मोहठगकरि ठग्यौ भव-कानन पर्यौ । च्यांलीसाढिकलख जोनिमैं जर-मरन-जामनदव-जर्यौ ॥१॥ जब मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया तस-वश निगोदमैं परिया । तहां स्वास एककेमाहीं अष्टादश मरन लहाहीं ॥ लहि मरन अंतमुहूर्तमैं छयासठ सहस शत तीन ही । षटतीस काल

५ "जिन, भी पाठ है । ६ चौरासी लाख योनि । ७ वृद्धावस्था, और जन्मरूपी अग्निमें जला ।

अनंत यों दुख सहे उपमा ही नहीं॥ कबहू लही वर आयु छिति[5] जल-पवन-पावक तरुतणी। तस भेद किंचित कहूं सो सुन कह्यौ जो गौतमगणी ॥ २ ॥ पृथिवी द्वयभेद बखाना मृदु माटी-कठिन पखाना। मृदु द्वादशसहस बरसकी पाहन बाईस सहसकी ॥ पुनि सहस सात कही उदक[6] त्रय सहसवर्ष समीरकी। दिन तीन पावक दश सहस तरु प्रभृति नाश सुपीरकी॥ विनघात सूक्ष्म देहधारी घातजुत गुरुतन लह्यौ। तहँ खनन तापन जलन व्यंजन छेद-भेदन दुख सह्यौ।३। शंखादि दुइंद्री प्रानी थिति द्वादशवर्ष बखानी॥ यूकाँदि[7] तिइंद्री हैं जे वासर उनचास जैंय ते॥ जीवै छमास अलीप्रमुख व्यालीस सहसउरगतनी। खगकी बहत्तरसहस नवपूर्वांग सरिसृपकी भनी॥ नरमत्स्यपूरवकोटकी थिति करमभूमि बखानिये। जलचरविकलविन भोग-

---

५ पृथ्वी। ६ पानी। ७ जूं आदि।

भू[1]-नर.-पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥ अघवश
करि नरक वसेरा. भुगतैं तहँ कष्ट घनेरा। छेदैं
तिलतिल तन सारा. छेपैं द्रह[2]पूतिमझारा ॥
मझार वज्रानिल पचावैं. धरहिं शूली ऊपरैं।
सींचैं जु खारे वारिसौं दुठ. कहैं व्रण[3] नीके करैं ॥
वैतरणिसरिता समलजल अति दुखद तरुसेंवल
तने। अति भीमवन असि[4]क्रांत समदल[5]. लगत
दुख देवैं घने ॥५॥ तिस भूमैं हिम गरमाई.
सुरगिरिसम अंस[6] गल जाई। तामैं थिति सिंधु
तनी है. यों दुखदनरक अवनी[7] है ॥ अवनी त-
हांकी तैं निकसि. कबहू जनम पायौ नरौ। स-
र्वांग सकुचित अति अपावन.जठरजननीके प-
रौ ॥ तहँ अधोमुख जननीरसांश.-थकी जियौ
नव मास लौं। ता पीरमें कोउ सीर नाहीं.सहै आप
निकास लौं ॥ ६ ॥ जनमत जो संकट पायौ,
रसनातैं जात न गायौ। लहिबालपने दुखभारी.

---

१ भोगभूमिया मनुष्य और पशु। २ दुर्गंधिके भरे तालाब।
३ फोड़े। ४ तलवारकी धार। ५ पत्ते। ६ लोहा। ७ पृथ्वी।

तरुनापौ ल्यौ दुखकारी ॥ दुखकारि इष्ट वियोग अशुभ-सँयोग सोग सरोगता। परसेव[1] ग्रीषमसीतपावस. सहै दुख अतिभोगता ॥ काहू कुतिय[2] काहू कुबांधव. कहुं सुता व्यभिचारिणी। किसहू विसनै[3]-रत पुत्र दुष्ट. कलत्र[4] कोऊ पराणी ॥ ७ ॥ वृद्धापनके दुख जेते. लखिये सब नयननतैं ते। मुख लाल बहै तन हालै.विनशक्ति न वसन सँभाले ॥ न संभाल जाके देहकी तो कहो वृष[5]की का कथा। तबही अचानक आन जम गहै.मनुजजन्म गयौ वृथा॥ काहू जनम शुभ ठान किंचित.लह्यो पद चउ[6]-देवको। आँभियोग[7] किल्विष[8] नाम पायौ. सह्यौ दुख परसेवको ॥ ८॥ तहँ देख महा सुररिद्धी. झूर्यो विषयनकरि गृद्धी । कबहूं परिवार नसानौ. शोकाकुल है विललानौ ॥ विललाय अति जब मरन निकट्यौ. सह्यो संकट मानसी

---

१ दूसरोंकी सेवा नौकरी। २ दुष्ट स्त्री। ३ व्यसनी। ४ स्त्री। ५ धर्मकी। ६ चारप्रकारके देव। ७—८ देवोंमें अभियोग और किल्विष एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं।

सुरविभव दुखद लगी तबै जब, लखी मोल मलानसी[6] ॥ तबही जु सुर उपदेशहित समुझाइयौं समुझ्यौ न त्यों। मिथ्यात्वजुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों ॥९॥ यों चिर भव-अटवी गाही, किंचित साता न लहाही। जिन कथित धरम नहिं जान्यो, परमाहिं अपनपो मान्यो ॥ मान्यो न सम्यक त्रयातम आतम अनातममैं फँस्यो। मिथ्या-चरण दृग्ज्ञान रंज्यो जाय नवग्रीवक वस्यो ॥ पै लह्यो नहिं जिन-कथित शिवमग वृषा भ्रम भूल्यो जिया। चिद्भावके दरसावबिन सब गये अहले[7] तपकिया ॥१०॥ अब अद्‌भुत पुण्य उपायो, कुलजात विमल तू पायो। यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसौं रति मत ठाने ॥ ठाने कहा रतिविषयमें ये विषम विषधरसम लखो। यह देह मरत अनंत इनकौं—त्यागि आतमरस चखो ॥ या रसरसिकजन बसे शिव अब—वसैं पुनि बसि

[6] मुरझानी हुई। [7] व्यर्थ।

हैं सही। 'दौलत' स्वरचि परविरचि सतगुरु-सीख नित उर धर यही ॥

। जकड़ी भूधरकृत ।

अब मन मेरे बे, सुन सुन सीख सयानी। जिन-वर चरना बे, कर कर प्रीति सुज्ञानी ॥ करप्रीति सुज्ञानी शिवसुखदानी, धन जीतब है पंचदिना। कोटिबरसजीवौ किसलेखे, जिनचरणांबुज भक्ति विना ॥ नरपरजाय पायअति उत्तम गृहबसि यह लाहा लेरे। समझ समझ बोलैं गुरुज्ञानी, सीख सयानी मन मेरे ॥१॥ तू मति तरसै बे, संपति देख पराई। बोये लुनि ले बे, जो निज पूर्वक-माई ॥ पूर्वकमाई संपति पाई देखि. देखि मति झूर मरै। बोय बँबूल शूल तरु भोंदू, आमनकी क्यों आस करै ॥ अब कछु समझ-बूझ नर तासौं ज्यों फिर परभव सुख दरसै। कर निज-ध्यान दान तप संजम देखि विभवपर मत तरसै ॥२॥ जो जगदीसै बे, सुंदर अर सुखदाई। सो सब फलिया बे. धरम-कल्पद्रुम भाई ॥ सो सब धर्म

कल्पद्रुमके फल, रथ पायक बहु रिद्धि सही। तेज तुरंग तुंग गज नौ निधि, चौदह रतन छखंड मही ॥ रति उनहार रूपकी सीमा सहस छ्यानवै नारि वरै। सो सब जान धर्मफल भाई जो जग सुंदरि दृष्टि परै ॥३॥ लगैं असुंदर वे, कंटकबान घनेरे। ते रस फलिया वे, पापकनकतरुकेरे ॥ ते सब पापकनकतरुके फल, रोग सोग दुख नित्य नये। कुथित शरीर चीर नहिं तापर, घरघर फिरत फकीर भये ॥ भूख प्यास पीडै कन मांगै,होत अनादर पगपगमें। ये परतच्छ पापसंचितफल,लगैं असुंदर जे जगमें ।४। इस भववनमैं वे, ये दोऊँ तरु जाने। जो मन मानै वे, सोई सींच सयाने ॥ जो सींच सयाने जो मन मानें,बेर बेर अब कौन कहै। तू करतार तुही फल भोगी, अपने सुख दुख आप लहै ॥ धन्य धन्य जिनमारग सुंदर, सेवनजोग तिहूंपनमें। जासों समुझि परै सब 'भूधर' सदा शरण इस भववनमैं ॥ ५ ॥

। जकड़ी रामकृष्णकृत ।

अरहंतचरन चितलाऊं। पुन सिद्ध शिवंकर ध्याऊं॥ बंदौं जिनमुद्राधारी। निर्ग्रंथ यती अविकारी॥ अविकार करुणावंत वंदौं, सकललोकशिरोमणी। सर्वज्ञभाषित धर्म प्रणमूं, देय सुख संपति घनी। ये परममंगल चार जगमें, चारु लोकोत्तम सही। भवभ्रमत इस असहाय जियको, और रक्षक कोउ नहीं।१। मिथ्यात्व महारिपु दंड्यो। चिरकाल चतुर्गति हंड्यो॥ उपयोग-नयन-गुन खोयौ। भरि नींद निगोदे सोयौ। सोयौ अनादि निगोदमें जिय, निकर फिर थावर भयो। भू तेज तोय समीर तरुवर, थूल-सूच्छमतन लयौ॥ कृमि कुंथु अलि सैनी असैनी व्योम जल थल संचर्‌यौ। पशुयोनि बासठलाख इसविध, भुगति मर मर अवतर्‌यौ॥२॥ अति पाप उदय जब आयौ। महानिंद्य नरकपद पायौ। थिति सागरोंबंध जहां है। नाना विध कष्ट तहां है॥ है त्रास अति आताप वेदन, शीत-बहुयुत

है नहीं। जहं मार मार सदैव सुनिये, एक क्षण साता नहीं। मारक परस्पर युद्ध ठान, असुर-गण क्रीड़ाकरैं। इमविध भयानक नरकथानक, सहैं जी परवश परैं ॥३॥ मानुषगतिके दुख भूल्यो। बसि उदर अधोमुख भूल्यो॥ जनमत जो संकट सेयो। अविवेकउदय नहिं बेयो॥ बेयो नकछुलघुबालवयमैं, वंशतरुकोंपल लगी। दल-रूप यौवन वयस आयो, काम-दौं-तव उर जगी॥ जब तन बुढापो घट्यो पौरुष, पान पकि पीरो भयो। झडि पर्यौ काल-बयार बाजत, बादि नरभव यौं गयो ॥४॥ अमरापुरके सुख कीने। मनवांछित भोग नवीने॥ उरमाल जबै मुरझानी। विलप्यो आसन-मृतु जानी॥ मृतु जान हाहाकार कीनौं, शरण अब काकी गहौं। यह स्वर्गसंपति छोड अब मैं, गर्भवेदन क्यौं सहौं॥ तब देव मिलि समुझाइयो, पर कछु विवेक न उर बस्यो। सुरलोक-गिरिसों गिरि अज्ञानी, कुमति-कादों फिर फँस्यो॥ ५॥ इहविध इस

मोही जीनें। परिवर्तन पूरे कीनें ॥ तिनकी बहु कष्ट कहानी। सो जानत केवलज्ञानी ॥ ज्ञानी विना दुख कौन जानें. जगत-वनमें जो लह्यो। जरजन्ममरणस्वरूप तीछन, त्रिविध दावानल दह्यो ॥ जिनमतसरोवरशीतपर अब, बैठ तपन बुझाय हो। जिय मोक्षपुरकी बाट बूझौ, अब न देर लगाय हो ॥६॥ यह नरभव पाय सुज्ञानी। कर कर निजकारज प्रानी ॥ तिर्जंचयोनि जब पावै। तब कौन तुझे समझावै ॥ समुझाय गुरु उपदेश दीनो, जो न तेरे उर रहै। तो जान जीव अभाग्य अपनो, दोष काहूको न है ॥ सूरज प्रकाशै तिमिर नाशै, सकल जगको तम हरै। गिरि-गुफा-गर्भ-उदोत होत न, ताहि भानु कहा करै ।७। जगमाहिं विषयवन फूल्यो। मनमधुकर तिहिंबिच भूल्यो ॥ रसलीन तहां लपटान्यो। रस लेत न रंच अघान्यो ॥ न अघाय क्यों ही रमैं निशिदिन, एक छन भी ना चुकै। नहिं रहै वरज्यो बरज देख्यो,

बार बार तहां ढुकै ॥ जिनमतसरोज-सिधांतसुं-
दर,-मध्य याहि लगाय हो । अब 'रामकृष्ण'
इलाज याकौ, किये ही सुखपाय हो ॥ ८ ॥

शारदास्तवन प्रभाती ।

केवलिकन्ये वाङ्मय गंगे, जगदंबे अघ नाश हमारे।
सत्य स्वरूपे, मंगलरूपे मनमंदिरमें तिष्ठ हमारे
॥टेक॥ जंबूस्वामी गौतम गणधर, हुये सुधर्मा पुत्र
तुम्हारे । जगतैं स्वयं पार ह्वै करके दे उपदेश बहुत
जन तारे ॥ १ ॥ कुंदकुंद अकलंकदेव अरु, विद्या-
नंदिआदिमुनि सारे । तव कुलकुमुद चंद्रमा ये
शुभ, शिक्षामृत दे स्वर्ग सिधारे ॥२॥ तूने उत्तम
तत्त्व प्रकाशे, जगके भ्रम सब क्षयकर डारे । तेरी
ज्योति निरख लज्जा वश, रविशशि छिपते नित्य
विचारे ॥ भवभय पीडित व्यथित चित्त जन, जब जो
आये सरन तिहारे, छिनभरमें उनके तब तुमने, करु-
णाकरि संकट सब टारे ॥४॥ जबतक विषय कषाय
नशै नहिं, कर्मशत्रु नहिं जाय निवारे । तबतक
'ज्ञानानंद' रहै नित, सब जीवनतैं समता धारे ॥५॥

सुरनरतिरियगयोनिमैं.नरकनिगोदभमंत । महामोहकी नींदसों, सोये काल अनंत ॥१॥ जैसैं ज्वरके जोरसों, भोजनकी रुचि जाय । तैसैं कुकरमके उदय. धर्मवचन न सुहाय ॥ २ ॥ लगै भूख ज्वरके गये. रुचिसों लेय अहार । अशुभ गये शुभके जगे, जानै धर्म विचार ॥३॥ जैसैं पवनझकोरतें, जलमैं उठै तरंग । त्यों मनसा चंचल भई, परिगहके परसंग ॥४॥ जहां पवन- नहिं संचरै. तहां न जलकल्लोल । त्यों सब परिगह त्यागतें मनसा होय अडोल ॥ ५ ॥ ज्यों काहू विषधर डसै. रुचिसों नीम चबाय । त्यों तुम ममतासों मढे. मगन विषयसुख पाय ॥६॥ नीम रसन परसै नहीं, निर्विष तन जब होय । मोह घटै ममता मिटै. विषय न बांछै कोय ।७। ज्यों सछिद्र नौका चढै.बूडहि अंध अदेख । त्यों तुम भवजलमैं परे, विनविवेक धर भेख ॥ ८ ॥ जहां अखंडित गुण लगै, खेवट शुद्धविचार ।

आतमरुचिनौका चढे, पावहु भवजलपार ॥९॥ ज्यों अंकुश मानै नहीं. महामत्त गजराज। त्यों मन तृष्णामैं फिरै, गिनै न काज अकाज ।१०। ज्यों नर दाव उपायकैं, गहि आनै गज माधि। त्यों या मनवश-करनकों. निर्मल ध्यान-समाधि ॥११॥ तिमिररोगसों नैन ज्यों, लखै औरको और। त्यों तुम संशयमैं परे. मिथ्यामतिकी दौर ॥ १२ ॥ ज्यों औषध अंजन किये. तिमिर रोग मिट जाय। त्यों सतगुरुउपदेशतैं. संशय वेग विलाय ॥१३॥ जैसैं सब यादव जरे, द्वारावतिकी आगि। त्यों मायामैं तुम परे, कहां जाहुगे भागि ॥ १४ ॥ दीपायनसों ते बचे. जे तपसी निरग्रंथ। तजि माया समता गहो, यहै मुकतिको पंथ ॥ १५ ॥ ज्यों कुधातुके फंटसों घटबढ कंचनकांति। पापपुण्यकर त्यों भये, मूढातम बहुभांति ॥१६ ॥ कंचन निजगुण नहिं तजै. हीन बानके होत। घटघटअंतर आतमा. सहजस्वभाव उदोत ॥ १७ ॥ पन्नापीट पकाइये

शुद्ध कनक ज्यों होय। त्यों प्रघटै परमातमा. पुण्यपापमल खोय ॥१८॥ पवँराहुके ग्रहणसों सूरसोम छविछीन। संगति पाय कुसाधुकी. सज्जन होय मलीन ॥१९॥ निंबादिक चंदन करैं मलयाचलकी बास। दुर्जनतैं सज्जन भये, रहत साधुके पास ॥ २० ॥ जैसें ताल सदा भरै, जल आवै चहुंओर। तैसें आस्रवद्वारसों, कर्मबंधको जोर ॥ २१ ॥ ज्यों जल आवत मूंदिये. सूखै सरवरपानि। तैसें संवरके किये. कर्मनिर्जरा जानि ॥२२॥ ज्यों बूटीसंयोगतें. पारा मूर्छित होय। त्यों पुदगलसों तुम मिले. आतमशक्ति समोय ॥ २३ ॥ मेलिखटाई माजिये. पारा परघट रूप। शुक्लध्यान अभ्यासतैं. दर्शन ज्ञान अनूप ॥ २४ ॥ कहि उपदेश 'बनारसी' चेतन अब कछु चेत। आप बुझावत आपको, उदयकरनके हेत ॥ २५ ॥

कर्म छत्तीसी।

भव्यकमल रवि सिद्ध जिन, धर्मधुरंधर धीर।

नमूं सदा जगन्तमहरण, नमूं त्रिविध गुरुवीर ॥

चौपाई १५ मात्रा ।

मिथ्याविषयनमैं रत जीव । तातैं जगमैं भ्रमहिं सदीव ॥ विविधप्रकार गहै परजाय । श्रीजिन-धर्म न नेक सुहाय ॥ २ ॥ धर्मविना चहुंगतिमैं फिरै । चौरासी लख फिर फिर धरै ॥ दुखदावा-नलमांहिं तपंत । कर्म करैं सुख भोग लहंत ।३। अति दुरलभ मानुष परजाय । उत्तम धनकुल रो-ग न काय ॥ इस अवसरमैं धर्म न करै । फिर यह अवसर कब को वरै ॥ ४ ॥ नरकी देह पा-य रे ! जीव । धर्म विना पशु जान सदीव ॥ अर्थकाममैं धर्म प्रधान । ता विन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत । शु-भसंगम आवै कर प्रीत ॥ विघन हरै सब का-रज सरै । धनसों चारों कोने भरै ।६। जन्मज-रामृतके वश होय । तिहूंकाल जग डोलै सोय ॥ श्रीजिनधर्मरसायनपान । कबहुं न रुचि उपजै अज्ञान ॥ ७ ॥ जो कोई मूरखजन होय । गहै

हलाहल अमृत खोय ।। त्यों शठ धर्मपदारथ त्याग । विषयनमों ठानै अनुराग ।।८।। मिथ्या ग्रहगहिया जो जीव । छांडि धर्म विषयनचित दीव ।। ज्यों सठ कल्पवृक्षको तोड । वृक्ष धतूरे-के बहुजोड ।।९।। नरदेही जानो परधान । विसर विषय, कर धर्म सुजान ! ।। त्रिभुवनइंद्रतनै सु-खभोग । पूजनीक हो इंद्रनजोग ।। १० ।। चंद्र-विनानिश गजविनदंत । जैसैं तरुणनारि बिन-कंत ।। धर्मविना त्यों मानुषदेह । तातैं करिये धर्मसनेह ।।११।। हय गय रथ पायक बहुलोग । सुभट बहुतदल चमर मनोग ।। धुजा आदि रा-जाविन जान । धर्म विना त्यों नरभव मान ।१२। जैसैं गंध विना है फूल । नीरविहीन सरोवर धूल ।। ज्यों धनविन शोभित नहिं भौन । धर्म विना नर त्यों चिंतौन ।। १३।। अरचै सदा देव अरहंत । चरचै गुरुपद करुणावंत ।। खरचै दान धर्मसों प्रेम । न रचै विषय सकल नर ए[illegible] ।। १४ ।। कमला चपल रहै थिर नाय । यौवन

कांति जरा लपटाय ॥ सुत मित नारी नावसँजो-
ग । यह संसार सुपनका भोग ॥ १५ ॥ यह
लखि चितधर शुद्ध सुभाव । कीजे श्रीजिनधर्म
उपाव ॥ यथाभाव जैसी गति गहै । जैसी गत
तैसा सुख लहै ॥ १६ ॥ जो मूरख बुद्धी-
करहीन । विषयपंथरत व्रत नहिं कीन ॥
श्रीजिनभाषित धर्म न गहै ॥ जैसी गत
तैसा सुख लहै ॥ १७ ॥ आलसमंद बुद्धि है
जास । कपटी मगन-विषय सठ तास ॥ कायरता
नहिं परगुण ढकै । सो तिर्यंचजोन लहि थकै
॥१८॥ आरतरौद्रध्यान नित करै । क्रोधादिक
मच्छरता धरै ॥ हिंसक वैरभाव अनुसरै । सो
पापिष्ठ नरकगति परै ॥ १९ ॥ कपट हीन करु-
णा चितमाहिं । हेय उपादे भूलै नाहिं । भक्तिवंत
गुणवंत जु कोय । सरल सुभाव सुमानुष होय
॥ २० ॥ श्रीजिनवचनमगन तपदान । जिन-
पूजै दे पात्रहिं दान ॥ रहै निरंतर विषयउदास ।
सोही लहैं सुरग आवास ॥ २१ ॥ मानुषजोन

अंतकी पाय। सुन जिनवचन विषय विसराय॥ गहै महाव्रत दुर्द्धर वीर। शुक्लध्यानथिर लह शिव धीर॥२२॥ धर्म करत सुख होय अपार। पाप करत दुख विविधप्रकार॥ बालगुपाल कहैं नर नारि। इष्ट होय सोई अवधारि ॥ २३ ॥ श्रीजिनधर्म मुकतिदातार। हिंसाकर्म बढइ सं-सार ॥ यह उपदेश जान बडभाग। एक धर्मसों कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रतसंजम जिनपद थुति सार। निर्मल सम्यकभाव जु धार। अंतकषाय विषयकृष करो। जो तुम मुकतिकामिनी वरो ॥ २५ ॥ दोहा—

बुधकुमदनिशशिसुखकरन, भवदुखसागरजान
कहै ब्रह्म जिनदास यह, ग्रंथ धर्मकी खान।२६।
द्यानत जे बांचै सुनैं, मनमैं करैं उछाह।
ते पावैं सुखसास्वते, मनवांछित फललाह॥२७॥

। अध्यात्मपंचासिका ।

दोहा।

आठ कर्मके बंधतैं, बँधै जीव भववास। कर्म

हरे सब गुण भरे, नमों सिद्धि सुखरास ॥ १ ॥
जगतमाहिं चहुंगति विषै जन्ममरणवश जीव।
मुक्तिमाहिं तिहुंकालमैं. चेतन अमर सदीव।२।
मोक्षमाहिंसेती कभी, जगमैं आवै नाहिं। जगके
जीव सदीव ही. कर्मकाट शिवजाहिं।।३।। पूर्व
कर्मउद्योगतैं. जीव करैं परिणाम। जैसैं मदिरा
पानतैं, करै गहल नर काम ।।४।। तातैं बांधै कर्म
को, आठ भेद दुखदाय। जैसैं चिकने गातमैं
धूलिपुंज जमजाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मनके
उदय, करै जीव बहु भाय। फिरके बांधै कर्मको.
यह संसारसुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावनतैं पुण्य
है, अशुभभावतैं पाप। दुहूंअछादित जीव सो
जान सकै नहिं आप ।।७।। चेतनकर्मअनादि-
के, पावक काठ बखान। छीरनीर तिलतेल ज्यों
खान कनक पाखान।। ८ ॥ लाल बँध्यो गठड़ी-
विषै. भानु छिप्यो घनमाहिं। सिंह पींजरेमैं दि-
यो, जोर चलै कछु नाहिं ॥ ९ ॥ नीर बुझावै
आगको, जलै टोकनीमाहिं। देहमाहिं चेतन

दुखी. निज सुख पावैं नाहिं ॥ १० ॥ यदपि देहसों छुटत है, अंतर तन है संग । ताहि ध्यान अग्नी दहै, तव शिव होय अभंग ॥ ११ ॥ रागरोषतें आपही. पडै जगतके माहिं । ज्ञान भावतें शिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥१२॥ जैसें काहू पुरुषके द्रव्य गड्यो घरमाहिं । उदर भरै कर भीख ही. व्योरा जानें नाहिं ॥ १३ ॥ ता नरसों कि नहीं कही.तू क्यों मांगे भीख। तेरे घरमें निधि गड़ी, दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥ ताके बचनप्रतीतसों. वहै कियो मनमाहिं। खोद निकाले धन विना, हाथपरै कछु नाहिं ॥ १५॥ त्यों अनादिकी जीवकै. परजैबुद्धि बखान। मैं सुर नर पशु नारकी, मैं मूरख मतिमान ॥१६॥ तासों सतगुरु कहत हैं तुम चेतन अभिराम। निश्चय मुक्तिसरूप हो. ये तेरे नहिं काम ।१७। काललब्धि परतीतसों, लखत आपमें आप। पूरण ज्ञान भये विना, मिटै न पुन अरु पाप ॥ १८ ॥ पाप कहत है पुण्यको. जीव सकल

संसार । पुण्य कहत है पापको. ते विरले मति-
धार ॥१९॥ बंदीखानेमैं परे. जातैं छूटै नाहिं ।
विन उपाय उद्यम किये. त्यों ज्ञानी जगमाहिं
॥२०॥ साबुन ज्ञान विराग जल. कोरा कपडा
जीव । रजक दक्ष धोवै नहीं. विमल न होय स-
दीव ॥ २१ ॥ ज्ञानपवन तप-अगन विन. दहै
मूस जिय हेम । कोडवर्षलों राखिये. शुद्ध होय
मन केम ॥२२॥ दरब कर्म दोंकर्मतैं. भावकर्मतैं
भिन्न । बिकलप नहीं सुबुद्धिकै, शुद्ध चेतना
चिन्ह ॥ २३ ॥ चारौं नाहीं सिद्धकै, तू चारोंके
माहिं । चार विनासै मोक्ष है. और बात कछु
नाहिं ॥ २४ ॥ ज्ञाता जीवनमुक्त है, एक देश
यह बात । ध्यान-अग्नि-विन कर्मवन. जलै न
शिव किम जात ॥ २५ ॥ दर्पण काई अथिर
जल, मुख दीसै नाहिं कोय । मन निर्मल थिर
विन भये. आपदरश क्यों होय ॥२६॥ आदि-
नाथ केवल लह्यो. सहस वर्ष तप ठान । सोई
पायो भरतजी. एक मुहूरत ज्ञान ॥ २७ ॥ रा

रोप संकल्प है, नयके भेद विकल्प । दोषभाव मिटजाय जब, तब सुख होय अनल्प ॥ २८ ॥ रागविरागदुभेदसों, दोयरूपपरिणाम । रागी जगके भूमिया, वैरागी शिवधाम ॥२९॥ एक भाव है हिरनके भूख लगे तृण खाय। एकभाव मंजारके, जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध भावके जीव बहु, दीसत हैं जगमाहिं . एक कछू चाहै नहीं, एक तजे कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनंत है. मुक्ति अनादि अनंत। जीव अनादि अनंत हैं कर्म दुविध सुन संत ॥३२॥ सबके कर्म अनादिके, कर्म भव्यको अंत । कर्म अनंत अभव्यके, तीनकाल भटकंत ।३३। फरश बरन रस गंध स्वर पांचों जानै कोय। बोलै डोलै कौन है, जो पूछे है सोय ॥३४॥ जो जानैं सो जीव हैं, जो मानै सो जीव। जो देखै सो जीव है, जीवै जीव सदीव ॥ ३५ ॥ जातपना दो विध लसै. विषय-निर्विषय-भेद । निरविषयी संवर लसै, विषयी आस्रव वेद ॥ ३६ ॥ प्रथम

जीवश्रद्धानसों, कर वैराग्य उपाय॥ज्ञान किये-
सों मोक्ष है, यही बात सुखदाय ॥३७॥ पुद्गल
सों चेतन बँध्यो, यही कथन है हेय। जीव बँध्यो
निज भावसों, यही कथन आदेय ॥३८॥ बंध
लखै निज औरसे, उद्यम करै न कोय। आप
बँध्यो निजसों समझ, त्याग करै शिव होय
॥३९॥ यथा भूपको देखकै, ठौर रीतिको जान।
तब धनअभिलाषी पुरुष. सेवा करै प्रधान।४०।
तथा जीवसरधानकर, जानै गुणपरजाय।
सबै जु शिवधनआशधर, समतासों मिलजाय
॥४१॥ तीनभेद व्यवहारसों, सर्व जीव सबठाम।
श्रीअरहत परमात्मा, निश्चय चेतनराम॥४२॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म रति, अहंबुद्धि सब ठौर।
हित अनहित सरधै नहीं, मूढनमें शिरमौर।४३।
आपआप परपर लखै, हेयउपादे ज्ञान। अब
तो देशव्रती महा-व्रती सबै मतिमान।४४।जा
पदमें यह पद लसै-दर्पन ज्यों अविकार। सकल
निकल परमात्मा- नित्यनिरंजन सार ॥४५॥

बहिरातमके भाव तजि, अंतरआतम होय। पर-
मातम ध्यावैं सदा, परमातम सो होय।४६। बूंद
उदधि मिल होत दधि, बीती फरश प्रकाश (?)।
त्यों परमातम होत है, परमातम अभ्यास।४७।
सब आगमको सार ज्यों, सब साधनको धेव।
जाको पूजे इंद्र सो, सो हम पायो देव ॥ ४८ ॥
सोहं सोहं नित जपै, पूजा आगमसार। सत-
संगतिमैं बैठना, यहै करै व्यवहार ॥ ४९ ॥
अध्यातम पंचाशिका,-माहिं कह्यो जो सार। द्या-
नत ताहि लगे रहो, सबसंसार असार ॥५०॥

॥ इति अध्यात्मपंचासिका समाप्ता ॥

। सप्तव्यसनके चौढाले ।

सात व्यसन। दोहा—

सातविसन जगमें बुरे, बुरा इन्होंका संग।
जिसके सिर चढ जात हैं, केई दिखावत रंग॥
केई दिखावत रंग संगमें, नफा नहीं सुन भाई।
अपना तन धन धर्म गुमावै,जगबदनामी छाई॥

तात मात सुत नारी छोडै, मुँह न लगावै भाई।
हाय हाय किस नीच जीवने, इनकी चाल चलाई॥

झड़—

चालमें सब जग आया, ख्यालमैं जन्म गमाया।
पाप कर नरक सिधाया, बहुत पीछें पछताया॥
विसनकी सुनो कहानी, कही जैसें जिनवानी।
तज्या जिन्होंने विसन जिनेश्वर तिनकी शिक्षा मानी॥ १॥

(१) जूआखेलनव्यसन।

जुआ खेलकर जगतमैं, होय मुफ्त बदनाम।
मजा नहीं इस काममैं, सजावार वसु जाम॥
सजावार वसु जाम धाम, आराम कभी नहिं पाता। फिकरमंद मतिअंध वक्तपर, खानेको नहिं जाता॥ संग जुआरी कई रंगका, ढंग देख घबराता। मारपीट बहु माल खायकर, तौ भी नहीं लजाता॥

झड़—

लाज ज्वारीकें नाहीं, दया नहिं मनके माहीं।

सत्य नहिं कहै कदाही, राज्यका चोर सदाही॥
पांडुसुत खेल किया था, नारिका दाव दिया था।
तजा जिन्होंने जुआ जिनेश्वर तिन सब सुक्ख
लिया था॥ २॥

(२) मांसभक्षणव्यसन।

श्वास श्वासपर खैरको, चाहैं सकल जहान।
श्वास नःराकर होन है, मांस महा दुखदान॥
मांस महा दुखदान खानकी बात सुनत घिन
आवे। थरहर काँपै काय हाय पशु दीन बडा
घबरावे॥ बेकसूर पशुमांसलालची तनमें छुरी
चलावै। बडे निर्दयी जीव जगतमैं, आमिषभो-
जन खावैं॥

झड—

भावना हिरदै खोटी, छोंककर आमिस बोटी।
मनुप भी राक्षस जोटी, धरै सिर अघकी पोटी॥
मांसका नाम न लेना, असनके लायक है ना।
मांस असनको त्याग जिनेश्वर जगमें कीरति
लेना॥ ३॥

(३) मदिरासेवनव्यसन ।

जितने नशो जहाँनमें, सभी विनाशै ज्ञान । तिनमें मदिरा अति बुरी, सही गमावै प्रान ॥ सही गमावै प्रान ज्ञानका, नाम न रहने पावै । मदिरा पीके मनुष होशमें, कबहूं नाहिं रहावै ॥ जननी भगिनी नार न जानै, मदमातुर हो जावै । अति बेहोश पडा दुख भुगतै, मूरख प्रान गमावै ॥

झड—

प्रान बहु जीवन खोया, जादवां वंश डुबोया ।
ऋषीको क्रोध जगाया, द्वारिका दाह कराया ॥
तुच्छकी कौन कहानी, बड़ोंकी कालनिशानी ।
यातें मदिरा त्याग जिनेश्वर करो धर्म सुखपानी ॥

(४) शिकारव्यसन ।

अपने अपने प्रानकी सभी मनावै खैर । हाय सिकारी बनविषे, पशु मारै विन बैर ॥ पशु मारै विन बैर खैरकी दया हिये नाहिं लावै । शीत घाम सब सहै वनीमें, भोजन भी नहिं पावै ॥ नाम भजन हरनाम त्यागकें मार मार मुख गावै । कायर क्रूर कुरंग अंगमें भारी चोट लगावै ॥

झड—

चोटमें हिरन सताया, दयाका नाम मिटाया। भगेके पीछें धाया, वीरका नाम लजाया॥ मृगीपर हाथ चलाया, वृथा क्षत्री कहलाया। दुर्गतिपंथ शिकार त्यागकर, यही जिनेश्वर गाया॥

(५) चौरीव्यसन।

प्रानोंसे प्यारी गिनै, धनदौलत संसार। याके कारन नरपती, हाथ गहै तलवार॥ हाथ गहै तलवार समरमें सूरवीर शिर देते। नद सागर तिर जांय वणिक शिर बडी आपदा लेते॥ कठिन कठिनकर लछमी जोड़ैं सहैं सभी दुख जेते॥ हाय हाय ताको ठगता करि सहज चौर कर लेते॥ झड—

चौरकों राजा मारै. सजा दे देश निकारै। लोग सबही दुतकारै, बडी बेशरमी धारै॥ भूल मति चौरी करियो. चौरसंगतिसें डरियो। डरियो जगतमझार जिनेश्वर चौरी कबहुं न करियो।६।

(६) वेश्यासेवनव्यसन।

नीचनकी संगत रहै, करै नीच सब काम। मू-

रखजन फँसि जात हैं, देख ऊजरो चाम ॥ दे-
ख ऊजरो चाम दामकी, खातिर धरम गमावै।
ऊंच नीचका ख्याल करै ना, सबको अंग लगावै॥
जगकी झूंट जानि गनिकाको, मूरख मन लल-
चावै। हा धिक धिक ऐसे जीवनको, गनिका
संग रहावै॥ झड-
लगै जब गनिका प्यारी, बुद्धि नशि जाय अ-
गारी। क्रोडपति होय भिखारी, कर्मगति टरै
न टारी॥ भूल मति यारी करियो, देहदुरग-
तिसों डरियो। तजि गनिकाको नेह जिनेश्वर
धर्मविषै मन धरियो॥ ७॥

(७) परस्त्रीसेवनव्यसन।

कुलकलंकदायक सदा, परकामिनिको प्यार।
मूरखमन [illegible] हतनको, मृगनैनी तलवार॥ मृग-
नैनी तलवार कलेजा आरपार हो जावै। दृग-
कटाक्ष सर चोट लगै तब, ओट न कोई आवै॥
ऊपर घाव प्रगट नहिं दीखै, मनही मन पछतावै।
खानपान गृहवास खासका, मजा हाथसे जावै॥

(तज—भण्डा ऊंचा रहे हमारा)

जैन धर्मका झंडा प्यारा सबसे ऊंचा रहे हमारा
आओ प्यारे भाई आओ, घर घर में सब
इसे घुमाओ। एकदम सारी शक्ति लगाओ
तब हो सफल मनोरथ सारा॥ जैन धर्म॥
युवकोंका तो प्रान यही है, हम सबका
सन्मान यही है। जैन धर्मकी शान यही
है, यही करे उद्धार हमारा॥ जैन०॥ प्रेम
भाव दर्शानेवाला, सत्य बात दिखलाने
वाला। मनमे द्वेष हटाने वाला ये जीवन
आधार हमारा॥ जैन०॥ इस झण्डेके नीचे
आना, जैन धर्मकी महिमा गाना। इसकी
घर घर तान सुनाना, यही करे भवसागर
पारा॥ टेक॥ मनसे सकल विकार हटाकर
आपसमें सब प्रेम बढ़ाकर। वीतराग से नेह
लगाकर, बोलो जैन धर्म जयकारा। टेक।

गा० ४—(धम दशा)

जिन धर्मका झण्डा घर घर में फहरा
दिया केवल ज्ञानीने। इसकी महिमा को

कानोंमें समझा दिया केवल ज्ञानी ने॥ अज्ञान अंधेरी छाई थी, इस धर्मसे प्रीति हटाई थी। उस समय पुनः करके प्रचार दिखला दिया केवल ज्ञानीने ॥ जिन०॥ जब नैया डूबी जाती थी, नहीं कोई पार बसाती थी। बनके मल्लाह किनारे ला, संभला दिया केवल ज्ञानीने ॥ जिन० ॥ जब लोग हमें भड़काते थे, और श्रद्धा इसमे हटाते थे। फिर उस जागृति भावनाको, दिखला दिया केवल ज्ञानीने॥ जिन० ॥ जब धर्म वृक्ष मुरझाया था, आपसमें प्रेम बढ़ाया था। इस धर्मका डङ्का एक साथ, बजवा दिया केवल ज्ञानीने ॥ जिन० ॥

गायन—(देश दशा)

जमाना रंग बदलता है, कभी नहीं थिर वह रहता है। दिनको निकले सूर्य्य, रातको चांद निकलता है ॥ जमाना० ॥ एक समयमें जैन धर्म था, सबही का सिरताज। उसी धर्मकी दशा देख लो, कैसी हो रही आज

वक्त टाले नहीं टलता है ॥ जमाना० ॥ बड़े बड़े हो गये इसीमें धनी और विद्वान । इसी धर्म के लिये कर दिया, तन मन धन कुर्बान ॥ बिगड़ कर कोई संभलता है ॥ जमाना० ॥ राजा हो या चाहे रंक हो, चाहे अमीर कंगाल । अन्त समयमें पड़े जायकर, उसी काल के गाल ॥ यहां वस किसका चलता है ॥ जमाना० ॥ कुछ बिगड़े दिल धर्म कार्य में, करते विघ्न अपार । नहीं अमीरों को अवसर, जो देखें नजर पसार । किधरको सूर्य निकलता है ॥ जमाना० ॥ अब तो समय आगया हो जाओ कसकर कमर तैयार । इसी धर्म की खातिर सारा, तन मन धन दो वार ॥ गया फिर वक्त न मिलता है ॥ जमाना० ॥ करे बुराई चाहे भलाई रह जाता है नाम । "प्रेम" बढ़ाकर आपस में सब करे धर्मका काम ॥ धर्म परभवमें चलता है ॥ जमाना० ॥

फूलमाल पच्चीसी

दोहा—जैनधरम त्रेपन क्रिया, दयाधरम संयुक्त।
मदों वंश विषैं जिये, तीन ज्ञान करि युक्त॥१॥
भयो महोत्सव नेमिको, जूनागढ़ गिरनार।
जाति चुरासिय जैनमत, जुरै चोहनी चार॥२॥
माल भई जिनराजकी, गूंथी इंद्रन आय॥
देशदेशके भव्य जन, जुरै लेनकों धाय॥३॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चोड़ सोरठि बीजापुर। करनाटक काश्मीर मालवा अरु अमरेपुर॥ पानीपत हिंसार और वैराट महा-लघु। काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु॥ तंह बंग चंद बन्दर सहित, उदधि पारला जुरिया सब। आये जु चीन मह चीन लग, माल भई गिरनारि जब॥ नाराच छंद-
सुगन्ध पुष्प बेलि कुंदि केतकी मंगायके।
चमेली चंप सेवती जूहीगुही जु लायके।
गुलाब कंज रायची सबै सुगन्ध जाति के।
सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके॥५॥

सुवर्णतार पोई बीच मोती लाल लाइया।
सु हीर पन्न नील पीत पद्म जोति लाइया॥
शची रची विचित्र भांति चित्त देवनाइ है।
सुइन्द्रने उछाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है॥६॥
सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि वानिये।
जुरी तहां चुरासि जातिराव राज जानिये॥
अनेक और भूप लोग सेठ साहुको गने।
कहालुं नाम वर्णिए सु देखते सभा बनें॥७॥
खण्डेलवाल, जैसवाल, अग्रवाल, आइया।
बघेरवाल, पोरवाल, देशवाल, छाइया॥
सेहलवाल, दिल्लीवाल, सेतवाल जातिके।
बंढ़लवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पांतिके॥८॥
सु ओसवाल पल्लिवाल चूरुवाल चौसखा।
पद्मावतीय पोरवाल परवार अठे सखा॥
गंगेरवाल बन्धुराल तोणवाल सोहिला।
करिन्दवाल पल्लिवाल मेड़वाल खोंहिला॥९॥
लमेंचु और माहुरे महेसरी उदार हैं। सुगोल-
लार गोलपूर्व गोलहू सिंघार हैं॥ बंधनोर

मागधी विहारवाल गूजरा। सुखण्ड राग होय और जानराज बूसरा ॥ भुराल और सोरठ और मुराल चितौरिया। कपोल सोमराठ वूम हूँमड़ा नागौरिया। सीराग होड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया। मिवाड़ मलवान और जोधड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायबल नागरा रुधाकरा। सुकन्थ रारु जालराल बाल भीक भाकरा। परवारलाड़ चोड़कोड़ गोड़ मोड़ संभारा। सु खण्डिआत श्री खंटाचतुर्थ पंच मंभरा॥१२॥ सरत्नाकार भोजकार नरसिंह हे पुरी। सु जम्बूवाल और चेत्रब्रह्म वश्य लौं जुरी॥ आई हैं चुरासी जाति जैनधर्मकी घनी। सब विराज गोठियों जु इन्द्रकी सभा बनी।१३। सुमाल लेनेको अनेक भूप लोग आवहीं। सुएक एक तैं सुमांग मालको वढ़ावहीं॥ कहें जु नाथ जोरि-जोरि नाथ माल दीजिये। मंगाय देउं हेम रत्न सो भण्डार कीजिये ॥१४॥ बघेरवाल वां कड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पचास पर

वार फेरि लेत हैं। सु जैसवाल लाख देत माल लेत चोपसों। जु दिल्लीवाल दोय लाख देत हैं आगोपसों॥१५॥सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोहि दीजिये। दिनार देहुं एक लक्ष सो गिनाय लीजिये खंडेलवाल बोलियो जु दोय लाख देउंगो. सुबांटिके तमोल मैं जिनेंद्र माल लेउं-गो॥१६॥जसुंभरी कहैं सुमेरि खान लेउ जाय कैं। सुवर्ण खानि देत हैं चित्तौड़िया बुलायके॥ अनेक भूप गांव देत राय सों चंदेरिका।खजाना खोल कोठरी सु देत हैं अमेरिका॥१७॥ सु-गोड़वाल यों कहैं गयंद बीस लीजिये। मंगाय देव हेमदन्त माल मोहि दीजिये। परमारकेतुरंग साजि देत हैं विना गिनें। लगाम जीन पाहुडे जड़ाउ हेमके बने॥१८॥कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायके।सुहीरा मोति लाल देत ओस-वाल आयके॥ सु हूमड़ा हंकार ही हमें न माल देउगे। भराइये जहाजमें किनेक दाम लेउगे॥१९॥कितेक लोग आयके खड़ेथे हाथ

ओरिके। कितेक भूप देखिके चले जु बाग मोरिकें ॥कितेक सूमयों कहैं जु कसे लाजि देत हो। लुटाय माल आपनो सु फूलमाल लेत हो ॥२८॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्रको बधावहीं। कई सुकण्ठ रागसों खड़ी जु माल गावहीं। कई सु नृत्यकों करै लहैं अनेक भावहीं। कई मृदङ्ग तालपै सु अंगको फिरावहीं॥२१॥कहैं गुरु उदारधी सुयों न माल पाइये॥ कराइये जिनेन्द्र यज्ञ बिंबहू भराइये॥ चलाइये जु संघजात संघही कहाइये। तबै अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये ॥२२॥संबोधि सर्व गोटिसो गुरु उतारके लई। बुलायके जिनेन्द्र माल संघरायको दई। अनेक हर्षसों करैं जिनेन्द्रतिलक पाइये सुमाल श्री जिनेन्द्रकी विनोदीलाल गाइए।२३।
दोहा-माल भई भगवंतकी, पाई सिंघई नारिन्द।
लालविनोदी उच्चरै सबको जयति जिनन्द।२४।
माला श्री जिनराजकी, पावै पुण्य संयोग।
यश प्रगटै कीरति बढ़ै, धन्य कहैं सब लोग।२५।

छहढाला ।

स्वर्गीय पं० दौलतरामजी कृत—सोरठा ।

तीन भुवनमैं सार, वीतराग विज्ञानता ।
शिवस्वरूप शिवकार, नमौं त्रियोग सम्हारिकैं ।

पहली ढाल । चौपाई (१५ मात्रा) ।

जे त्रिभुवनमैं जीव अनंत । सुख चाहैं दुखतैं भयवंत ॥ तातैं दुखहारी सुखकारि । कहै सीख गुरु करुणा धारि ॥ २ ॥ ताहि सुनो भवि मन थिर आन । जो चाहो अपनो कल्यान ॥ मोह महामद पियो अनादि । भूलि आपको भरमत बादि ।३। तास भ्रमनकी है बहु कथा । पै कछु कहूं कही मुनि जथा ॥ काल अनंत निगोदमँझार । बीत्यो एकेंद्रिय-तन धार ॥ ४ ॥ एक स्वासमें अठदश बार । जन्म्यो मर्‌यो भर्‌यो दुखभार ॥ निकसि भूमि जल पावक भयो । पवन प्रतेक वनस्पति थयो ॥५॥ दुर्लभ लहि ज्यों चिंतामणी । त्यों परजाय लही त्रसतणी ॥ लट-

पिपीलि अलि आदि शरीर। धरधर मर्‍यो सही बहु पीर ॥६॥ कबहूं पंचेंद्रिय पशु भयो। मन-विन निपट अज्ञानी थयो ॥ सिंहादिक सेनी ह्वै क्रूर। निबल पशू हति खाये भूर ॥ ७ ॥ कबहूं आप भयो बलहीन। सबलनिकरि खायो अ-तिदीन ॥ छेदन भेदन भूखपियास। भारबहन हिम आतप त्रास ।८। बध-बंधन आदिक दुख घने। कोटि जीभतैं जात न भने ॥ अतिसंक्ले-श भावतैं मर्‍यो। घोर शुभ्रसागरमैं पर्‍यो ।९। तहां भूमि परसत दुख इस्यो। बीछू सहस डसैं तन तिस्यो ॥ तहां राधशोणितबाहिनी। कृमि-कुलकलित देह-दाहिनी ॥१०॥ समरतरुजुत द-लअसिपत्र। असि यों देह विदारैं तत्र ॥ मेरु समान लोह गलिजाय। ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ ११ ॥ तिलतिल करहिं देहके खंड। असुर भिडावैं दुष्टप्रचंड ॥ सिंधुनीरतैं प्यास न जाय। तो पण एक न बूंद लहाय ॥१२॥ तीनलोकको नाज जु खाय। मिटै न भूख कणा न लहाय ॥

ये दुख बहु सागरलौं सहै। कर्मजोगतैं नरतन लहै ॥१३॥ जननी उदर बस्यो नवमास। अंग सकुचतैं पाई त्रास॥ निकसत जे दुख पाये घोर। तिनको कहत न आवै ओर ॥१४॥ बालपनमें ज्ञान न लह्यो। तरुणसमय तरुणीरत रह्यो॥ अर्धमृतकसम बूढ़ापनो। कैसें रूप लखै आपनो ॥१५॥ कभी अकामनिर्जरा करै। भवनत्रिकमें सुरतन धरै॥ विषय-चाह-दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुख सह्यो॥ १६॥ जो विमान बासी हू थाय। सम्यकदर्शन विन दुख पाय॥ तहँतें चय थावरतन धरै। यों परिवर्तन पूरे करै॥ १७॥

दूसरी ढाल। पद्धरि छंद।

ऐसैं मिथ्या-दृगज्ञानचरण। वश भ्रमत भरत दुख जन्ममरण॥ तातैं इनको तजिये सुजान। सुन तिन संछेप कहूं बखान॥ १॥ जीवादि प्रयोजनभूत तत्व। सरधै तिनमांहिं विपर्ययत्व॥ चेतनको है उपयोगरूप। विन मूरति चिनमू-

रति अनूप ॥ २ ॥ पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल इनतैं न्यारी है जीवचाल ॥ ताकों न जान विपरीत मान। करि करै देहमें निज पिछान ॥३॥ मैं सुखी दुखी मैं रंक राव। मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥ मेरे सुत तिय मैं सबल दीन। बे रूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥ तन उपजत अपनी उपज जानि। तन नशत आपको नाश मान ॥ रागादि प्रगट जे दुःखदैन। तिनहीको सेवत गिनहि चैन ॥ ५ ॥ शुभअशुभबंधके फलमझार। रति अरति करै निजपद विसार ॥ आतमहितहेतु विराग ज्ञान। ते लखै आपको कष्ट दान ॥ ६ ॥ रोकी न चाह निज शक्ति खोय। शिवरूप निराकुलता न जोय। याही प्रतीतजुत कछुक ज्ञान। सो दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥ इनजुत विषयनिमैं जो प्रवृत्त। ताको जानो मिथ्याचरित्त ॥ या मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह। अब जे गृहीत सुनिये सु तेह ॥ ८ ॥ जो कुगुरु

कुधर्म सेव पोषैं चिर दर्शन मोह एव

अंतररागादिक धरैं जेह। बाहरधन अंबरतैं सनेह ॥ ९ ॥ धारैं कुलिंग लहि महतभाव। ते कुगुरु जनम-जल उपल-नाव ॥ जे रागरोषमल-करि मलीन। वनितागदादिजुत चिन्हचीन ॥ ॥ १० ॥ ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव। शठ करत न तिन भवभ्रमनछेव ॥ रागादिभाव हिंसा समेत। दर्वित त्रसथावर मरनखेत ॥ ११ ॥ जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म। तिन सरधै जीव लहै अशर्म ॥ याकौं गृहीतमिथ्यात जान। अब सुन गृहीत जो है कुज्ञान ॥ १२ ॥ एकांतवाद दूषित समस्त। विषयादिकपोषक अप्रशस्त ॥ कपिलादिरचित श्रुतको अभ्यास। सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥ जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह। धरि करत विविधविध देहदाह। आतम अनात्मके ज्ञानहीन। जे जे करनी तनकरन-छीन ॥ १४ ॥ ते सब मिथ्याचारित्र त्यागि। अब आतमके हित पंथ लागि ॥ जगजालभ्रमन को देय त्यागि। अब दौलत' निज आतम

सुपागि ॥ १५ ॥

तीसरी ढाल। नरेंद्रछंद (जोगीरासा।)

आतमको हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये। आकुलता शिवमांहिं न तातें शिवमग लाग्यो चाहिये। सम्यकदर्शन ज्ञान चरन शिव-मग सो दुविध विचारो। जोसत्यारथरूप सु निश्चय. कारन सो व्यवहारो ॥ १ ॥ परद्रव्यनितें भिन्न आपमें रुचि, सम्यक्त भला है आप रूपको जानपनो, सो सम्यकज्ञानकला है॥ आपरूपमें लीन रहे थिर, सम्यकचारित सोई। अब व्यवहार मोख मग सुनिये, हेतु नियतको होई ॥ २ ॥ जीव अजीव तत्व अरु आस्रव, बंध रु संवर जानो। निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्योंको त्यों सरधानो ॥ है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो। तिनको सुनि सामान्यविशेषै, दृढ प्रतीत उर आनौ ॥ ३ ॥ बहिरातम अंतरआतम परमातम जीव त्रिधा है। देह जीवको एक गिने, बहिरातमतत्व मुधा

है ॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके अंतरआत-
मज्ञानी। द्विविध संगविन शुधउपयोगी, मुनि
उत्तम निजध्यानी ॥ ४ ॥ मध्यम अंतर आतम
हैं जे देशव्रती आगारी। जघन कहे अविरत-
समदृष्टी तीनों शिवमगचारी॥ सकल निकल
परमातम द्वैविधि तिनमैं घाति निवारी। श्री
अरहंत सकल परमातम लोकालोकनिहारी ।५।
ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल-वर्जित सिद्ध महंता
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगैं शर्म अनंता
बहिरातमता हेय जानि तजि, अंतरआतम हूजै
परमातमको ध्याय निरंतर, जो नित आनँद
पूजै ॥ ६ ॥ चेतनता विन सो अजीव हैं, पंच
भेद ताके हैं पुद्गल पंच वरन, रसपन गंध दु
फरस वसू जाके हैं॥ जिय पुदगलको चलन
सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी। तिष्ठत होय अधर्म
सहाई, जिन विनमूर्ति निरूपी॥७॥ सकल द्रव्य
को वास जासमैं, सो आकाश पिछानो। नियत
वरतना निशिदिन सो व्यवहारकाल परिमानो

यों अजीव अब आस्रव सुनिये. मनवचकाय त्रियोगा। मिथ्या अविरत अरु कषायपरमादसहित उपयोगा ॥८॥ ये ही आतमके दुखकारन, तातैं इनको तजिये। जीवप्रदेश बँधै विधिसों सो, बंधन कबहुं न सजिये॥ शमदससों जो कर्म न आवें, सो संवर आदरिये। तपबलतैं विधि-झरन निरजरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥ सकल करमतैं रहित अवस्था, सो शिव थिरसुख कारी। इहिविधि जो सरधा तत्वनकी, सो समकित व्योहारी॥ देव जिनेंद्र गुरू परिग्रह विन, धर्म दयाजुत सारो। यहू मान समकितको कारन अष्टअंगजुत धारो ॥१०॥ वसुमद टारि निवारि त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो। शंकादिक वसु दोष विना, संवेगादिक[1] चित पागो। अष्ट-अंग अरु दोष पचीसों. अब संक्षेपहु कहिये। विन जानेतैं दोषगुननको, कैसे तजिये गहिये॥ ॥११॥ जिनवचमें शंका न धारि वृष. भवसुखवांछा

---

१ प्रशम संवेग अनुकंपा आस्तिक्य।

भानै। मुनितन मलिन न देख घिनावै. तत्व कुतत्व पिछानै। निजगुन अर पर अवगुन ढाकै, वा जिनधर्म बढावै। कामादिककर वृषतै[1] चिगते, निजपरको सु दृढावै ॥१२॥ धर्मीसों गउबच्छप्रीतिसम,कर जिनधर्म दिपावै। इन गुनतैं विपरीतदोष वसु, तिनको सतत खिपावै॥ पिता भूप वा मातुल[2] नृप जो, होय तो न मद ठानै। मद न रूपको मद न ज्ञानको, धन बलको मद भानै ॥ १३ ॥ तपको मद न मद जु प्रभुताको करै न सो निज जानै। मद धारै तौ येहि दोष वसु, समकितको मल ठानै॥ कुगुरुकुदेवकुवृषसेवककी नहिं, प्रशंस उचरै है। जिनमुनि जिनश्रुत विन कुगुरादिक, तिन्हैं न नमन करै है ॥१४॥ दोषरहित गुनसहित सुधी जे, सम्यकदरश सजे हैं। चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजे हैं॥ गेही पै गृहमें न रचै ज्यों, जलमें भिन्न कमल है। नगरनारिको प्यार

---

१ धर्मसे। २ मामा।

यथा, कादेमें हेम अमल है॥ १५॥ प्रथम नरक विन षट भू ज्योतिष, वान भवन षँढ[1] नारी। थावर विकलत्रय पशुमें नहिं, उपजत समकित-धारी॥ तीनलोक तिहुँकालमाहिं नहिं, दर्शनसम सुखकारी। सकलधरमको मूल यही इस, विन करनी दुखकारी॥ १६॥ मोहमहलकी परथम सीढ़ी, या विन ज्ञान चरित्रा। सम्यकता न लहै सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा॥ 'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै। यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक नहिं होवै॥ १७॥

चौथी ढाल। दोहा—

सम्यकश्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यकज्ञान।
स्वपरअर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रकटावन भान।१।

रोला छंद २४ मात्रा।

सम्यक्साथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधो। लक्षण श्रद्धा जान, दुहूमें भेद अबाधो॥ सम्यककारण

---

१ नपुंसक।

जान, ज्ञान कारज है सोई। युगपद होतैं हू,
प्रकाश दीपकतैं होई ॥ १ ॥ तास भेद दो हैं प-
रोक्ष, परतछ तिनमाहीं। मति श्रुत दोय परोक्ष,
अक्ष मनतैं उपजाहीं॥ अवधिज्ञानमनपर्जय, दो
हैं देशप्रतच्छा। द्रव्यक्षेत्रपरिमान लिये जानैं
जिय स्वच्छा ॥ ३ ॥ सकल द्रव्यके गुन अनंत,
परजाय अनंता। जानैं एकै काल, प्रगट केवलि
भगवंता॥ ज्ञान समान न आन, जगतमैं सुख-
को कारन। इह परमामृत जन्म, जरामृतरोग-
निवारन ॥४॥ कोटि जनम तप तपैं, ज्ञान विन
कर्म झरैं जे। ज्ञानीके छिनमांहिं गुप्तितैं सहज टरैं
ते॥ मुनिव्रत धार अनंतबार, ग्रीवक उपजायो।
पै निजआतमज्ञान विना सुख लेश न पायो।५।
तातैं जिनवरकथित, तत्त्व अभ्यास करीजे।
संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लखि लीजे।
यह मानुषपरजाय, सुकुल सुनिबो जिनवानी।
इहविधि गये न मिलै, सुमणि ज्यों उदधिसमानी
॥६॥ धन समाज गज बाज, राज, तो काज

न आवे। ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावे॥ तास ज्ञानको कारन. स्वपरविवेक बखान्यो। कोटि उपाय बनाय. भव्य ताको उर आन्यो ॥७॥ जे पूरब शिव गये. जांय अब आगें जै हैं। सो सब महिमा ज्ञानतनी. मुनिनाथ कहै हैं॥ विषयचाह-दव-दाह, जगतजन अरनि दझावै। तासु उपाय न आन ज्ञानघनघान बुझावै॥८॥ पुण्यपाप-फल मांहिं, हरष विलखौ मत भाई। यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसैं थिर थाई॥ लाख बातकी बात. यहै निश्चय उर लावो॥ तोरि सकल जगदंदफंद, निज आतम ध्यावो॥ ॥ ९ ॥ सम्यकज्ञानी होइ, बहुरि दृढ चारित लीजै। एक देश अरु सकलदेश, तस भेद कहीजै॥ त्रसहिंसाको त्याग वृथा, थावर न सँघारै। परवधकार कठोर निंद्य नहिं वयन उचारै॥१०॥ जल मृतिकाविन और नाहिं कछु गहै अदत्ता। निज वनिताविन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता॥ अपनी शक्ति विचार परिग्रह थोरो राखै। दश

दिशि गमनप्रमान, ठान तसु सीम न नाखै ॥
॥११॥ ताहूमें फिर ग्राम गली गृह बाग बजारा।
गमनागमन प्रमान ठान अन सकल निवारा॥
काहूके धनहानि, किसी जय हार न चीतैं। देय
न सो उपदेश, होय अघ बनिज कृषीतैं॥१२॥
कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै।
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहिं दे जस लाधै॥
रागरोषकरतारकथा, कबहूं न सुनीजै। और हु
अनरथदंड, हेतु अघ तिन्हें न कीजै ॥ १३ ॥
धर उर समताभाव सदा, सामायिक करिये।
पर्वचतुष्टयमाहिं पाप तजि प्रोषध धरिये॥ भोग
और उपभोग नियमकरि ममतु निवारै। मुनि-
को भोजन देय फेर, निज करहि अहारै॥१४॥
बारहव्रतके अतीचार, पन पन न लगावै। मरन
समय सन्यास धारि, तसु दोष नशावै ॥
यौं श्रावकव्रत पाल स्वर्ग, सोलम उपजावै।
तहँतें चय नरजन्म पाय मुनि ह्वै शिव
जावै ॥ १५ ॥

मुनि सकलवृती बडभागी। भवभोगनतैं वैरा-
गी॥ वैराग्य उपावन माई। चिंतो अनुवेक्षा
भाई ॥ १ ॥ इन चिंतत समरस जागै। जिमि
ज्वलन पवनके लागै॥ जबही जिय आतम
जानै। तबही जिय शिवसुख ठानै॥२॥ जोवन
गृह गोधन नारी॥ हय गय जन आज्ञाकारी॥
इंद्रीय भोग छिन थाई। सुरधनु चपला चपलाई
॥३॥ सुर असुर खगाधिप जेते। मृग ज्यों हरि
काल दले ते॥ मणि मंत्र तंत्र बहु होई। मरते
नबचावै कोई॥ ४ ॥ चहुंगतिदुख जीव भरै
हैं। परिवर्तन पंच करै हैं॥ सबविधि संसार
असारा। यामैं सुख नाहिं लगारा॥ ५ ॥ शुभ
अशुभ करमफल जेते। भोगै जिय एकहि तेते॥
सुत दारा होय न सीरी। सब स्वारथके हैं भीरी
॥ ६ ॥ जलपय ज्यों जियतन मेला। पै भिन्न
भिन्न नहिं भेला॥ तो प्रगट जुदे धन धामा।
क्यों ह्वै इक मिलि सुत रामा॥७॥ पल-रुधिर

राध-मल थैली । कीकस वसादितैं मैली ॥ नव द्वार बहै घिनकारी । अस देह करै किम यारी ॥८॥ जो जोगनकी चपलाई । तातैं है आस्रव भाई ॥ आस्रव दुखकार घनेरे । बुधिवंत तिन्हैं निरवेरे ॥ ९ ॥ जिन पुण्यपाप नहिं कीना । आतम अनुभव चितदीना ॥ तिन ही विधि आवत रोके । संवर लहि सुख अवलोके ।१०। निज काल पाय विधि झरना । तासौं निजकाज न सरना ॥ तप करि जो कर्म खपावै । सोई शिवसुख दरसावै ॥ ११ ॥ किन हू न कर्यो न धरै को । षटद्रव्यमयी न हरै को ॥ सो लोकमाहिं विन समता । दुख सहै जीव नित भ्रमता ।१२। अंतिम ग्रीवकलौंकी हद । पायो अनंतविरियां पद ॥ पर सम्यकज्ञान न लाध्यो । दुर्लभ निजमैं मुनि साध्यो ॥ १३ ॥ जे भाव मोहतैं न्यारे । दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ॥ सो धर्म जबै जिय धारै । तबही सुख सकल निहारै ॥ १४ ॥ सो धर्म मुनिनकरि धरिये । तिनकी करतूति उचँ-

रिये ॥ ताको सुनिके भवि प्रानी । अपनी अनु-
भूति पिछानी ॥ १५ ॥

छहढाल (हरिगीता छंद)

षटकाय जीव न हननतैं सबविधि दरबहिंसा
टरी । रागादि भाव निवारितैं हिंसा न भावित
अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न जलतृन
हू विना दीयो गहैं । अठदशसहस विधि
शीलधर चिदब्रह्ममें नित रमि रहैं ॥१॥ अंतर
चतुर्दश भेद बाहिर संग दशधातैं टलैं । परमाद
तजि चउकर मही लखि समिति ईर्यातैं चलैं ॥
जग सुहितकर सब अहितहर श्रुतिसुखद सब
संशय हरैं । भ्रमरोग-हर जिनके वचन मुख-
चंद्रतैं अमृत झरैं ॥ २ ॥ छ्यालीस दोष विना
सुकुल श्रावकतणे घर अशनको । लें तप बढा-
वन हेत नहिं तन पोषते तजि रसनको ॥ शुचि
ज्ञान संजम उपकरन लखिकैं गहैं लखिकैं धरैं ।
निर्जंतु थान विलोकि तन-मल मूत्र-श्लेषम परि-
हरैं ॥३॥ सम्यक प्रकार निरोधि मन-वच-काय

आतम ध्यावते। तिन सुथिर मुद्रा देखि मृग-गन उपल खाज खुजावते ॥ रसरूपगंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने। तिनमें न राग विरोध पंचेंद्रियजयन पद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारें थुति उचारें बंदना जिनदेवको। नित करें श्रुतरति धरें प्रतिक्रम तजें तन अह-मेवको ॥ जिनके न न्हौन न दंतधोवन लेश अंबर आवरन। भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु शयन एकाशन करन ॥५॥ इक बार दिनमें लें अहार खड़े अलप निज पानमें। कचलोंच करत न डरत परिषहसों लगे निज ध्यानमें। अरिमित्र महल मसान कंचन काच निंदन थुति करन। अर्घावतारन असिप्रहारन—में सदा स-मताधरन ॥ ६ ॥ तप तपै द्वादश धरें वृष दश रतनत्रय सेवें सदा। मुनि साथमें वा एक विचरें चहैं नहिं भवसुख कदा ॥ यों है सकल संजम चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब। जिस होत प्रगटै आपनी निधि मिटै परकी प्रवृति सब

॥७॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डारि अंतर भेदिया। वरनादि अरु रागादितैं निज भावको न्यारा किया॥ निजमाहिं निजके हेतु निजकर आपको आपै गह्यो। गुनगुनी ज्ञाता ज्ञानज्ञेय मझार कछु भेद न रह्यो॥८॥ जहँ ध्यान ध्याता ध्येयको न विकल्प वचभेद न जहां। चिद्भाव कर्म चिदेश करता चेतना किरिया तहां॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुध उपयोगकी निश्चल दशा प्रगटी जहां दृग ज्ञान व्रत ये तीनधा एकै लशा ॥९॥ परमान नय निक्षेपको न उदोत अनुभव मैं दिखै। दृग-ज्ञान-सुख-बलमय सदा नहिं आन भाव जु मोविखैं॥ मैं साध्य साधक मैं अबाधक कर्म अरु तसु फलनितैं। चितपिंड चंड अखंड सुगुन,–करंडच्युत पुनि कलनितैं॥१० ॥ यों चिंत्य निजमैं थिर भये तिन अकथ जो आनँद लह्यो। सो इंद्र नाग नरेंद्र वा अहमिंद्रकै नाहीं कह्यो॥ तबही शुकलध्यानाग्निकर चउघाति विधिकानन दह्यो। सब लख्यो केवलज्ञानकरि

भविलोकको शिवमग कह्यो ॥११॥ पुनि घाति
शेष अघाति विधि छिनमांहिं अष्टमभू बसैं।
वसुकर्म विनशै सुगुन वसु सम्यक्त्व आदिक सब
लसैं॥ संसार खार अपार पारावार तिर तीरहिं
गये। अविकार अकल अरूप शुध चिद्रूप
अविनाशी भये ॥१२॥ निजमांहि लोक अलोक
गुन परजाय प्रतिबिंबित थये। रहि हैं अनंता-
नंतकाल यथा तथा शिव परनये॥ धनि धन्य
हैं जे जीव नरभव पाय यह कारज किया।
तिनही अनादी भ्रमन पंचप्रकार तजि वर सुख
लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यों बडभागि
रत्नत्रय धरैं। अरु धरैंगे ते शिव लहैं तिन सुजस
जल जगमल हरैं॥ इमि जानि आलस हानि
साहस ठानि यह सिख आदरो। जबलों न रोग
जरा गहै तबलौं जगत निज हितकरो ॥१४॥
यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत सेइये।
चिर भजे विषय कषाय अब तो त्याग निजपद
बेइये॥ कहा रच्यो परपदमें न तेरो पद यहै

क्यों दुख सहै। अब 'दौल' होउ सुखी स्वपद् रचि दाव मत चूको यहै ॥ १५ ॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज शुकल वैशाख। कन्यो तत्व उपदेश यह, लखि बुधजन-की भाख ॥ १६ ॥ लघुधी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थकी भूल। सुधी सुधार पढो सदा, जो पावो भवकूल ॥ १७ ॥

इति श्री पं० दौलतरामजीकृत छहढाला समाप्त।

अथ बाईस परीषह।

छप्पय।

क्षुधा[1] तृषा[2] हिम[3] ऊश्न[4] डंसमंसक[5] दुख भारी।
निरावरण[6] तन अरति[7] वेद उपजावन नारी[8] ॥
चरया[9] आसन[10] शयन[11] दुष्ट वायक[12] बध बन्धन[13]।
याचैं[14] नहीं अलाभ[15] रोग[16] तृण[17] परस होय तन ॥
मल[18] जनित मान सनमान[19] वश प्रज्ञा[20] और अज्ञान[21] कर। दरशन[22] मलीन बाईस सब साधु परीषह जान नर ॥ १ ॥

दोहा।

सूत्र पाठ अनुसार ये कहे परीषह नाम। इन-

के दुख जो मुनि सहैं तिनप्रति सदा प्रणाम ।२।

(१) क्षुधापरीषह पोमावती छंद।

अनसन ऊनोदर तप पोषत पक्षमास दिन बीत गये हैं। जो नहिं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं। तब तहां दुस्सह भूखकी बेदन सहत साधु नहिं नेक नये हैं। तिनके चरणकमल प्रति प्रतिदिन हाथ जोड हम शीश नये हैं ॥ ३ ॥

(२) तृषापरीषह

पराधीन मुनिवरकी भिक्षा परघर लेंय कहैं कुछ नाहीं। प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढत प्यासकी त्रास तहांहीं ॥ ग्रीषमकाल पित्त अतिकोपै लोचन दोय फिरे जब जाहीं। नीर न चहैं सहैं ऐसे मुनि जयवन्ते वर्तो जगमाहीं।४।

(३) शीतपरीषह

शीतकाल सबही ¯¯न कम्पत खडे तहां वन वृक्ष डहे हैं। झंझा वायु चलै वर्षाऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं। तहां धीर तटनी तट चौपट

ताल पाल परकर्म दहे हैं। सहैं सँभाल शीतकी बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥ ५ ॥

(४) उष्णपरीषह

भूखप्यास पीडै उरअंतर प्रजुलै आंत देह सब दागै। अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषमकी ताती वायु झालसी लागै। तपैं पहाड़ ताप तन उपजति कोपै पित्त दाह ज्वर जागै। इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहैं साधु धीरज नहिं त्यागैं ॥ ६ ॥

(५) डन्सम शक परीषह

डन्स मश्क माखी तनु काटैं पीडैं बन पक्षी बहुतेरे। डसैं ब्याल विषहारे विच्छू लगैं खजूरे आन घनेरे॥ सिंह स्याल सुंडाल सतावैं रीछ रोझ दुख देहिं घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे॥ ७ ॥

(६) नग्न परीषह

अन्तर विषय वासना बरतै बाहरलोक लाज भय भारी। यातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नाहिं सकैं दीनसंसारी॥ ऐसी दुर्द्धर नगन परीषह

जीतें साधु शीलव्रतधारी । निर्विकार बालक-वत निर्भय तिनके चरणों धोक हमारी ॥ ८ ॥

(७) अरति परीषह

देशकालका कारण लहिकै होत अचैन अनेक प्रकारें । तब तहां छिन्न होत जग वासी कलमलाय थिरतापद छाडैं ॥ ऐसी अरति प-रीषह उपजत तहां धीर धीरज उर धारैं । ऐसे साधुनको उर अंतर बासो निरन्तर नाम हमारे ॥ ९ ॥

(८) स्त्री परीषह

जो प्रधान केहरिको पकडैं पन्नग पकड पान-से चाबैं जिनकी तनक देख भौं बांकी कोटिन सूर दीनता जापैं । ऐसे पुरुष पहाड़ उड़ावन प्रलय पवन त्रिय वेदपयापै । धन्य २ वे सूर साहसी मन सुमेर जिनका नाहिं कांपै ॥१०॥

(९) चर्या परीषह

चार हाथ परवान परख पथ चलत दृष्टि इत उत नाहिं तानैं । कोमल चरण कठिन धरतीपर धरत धीर बाधा नाहिं मानैं । नाग तुरंग पालकी

चढ़ते ते सर्वादियादि नहिं आनैं। यों मुनिराज सहैं चर्य्या दुख तब दृढ़कर्म कुलाचल भानैं ॥११॥

(१०) आसन परीषह

गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसैं जहां शुद्ध भूँ हेरैं। परमितकाल रहैं निश्चल तन बार बार आसन नहिं फेरैं। मानुषदेव अचेतन पशुकृत बैठे विपति आन जब घेरै। ठौर न तजैं भजैं थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥१२॥

(११) शयन परीषह

जो प्रधान सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवैं, ते अब अचल अंग एकासन कोमल कठिन भूमिपर सोवैं ॥ पाहनखंड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर नहिं होवैं। ऐसी शयन परीषह जीतें ते मुनि कर्मकालिमा धोवैं ॥

(१२) आक्रोश परीषह

जगत जीव जावन्त चराचर सबके हित सबको सुखदानी। तिन्हें देख दुर्वचन कहैं खल पाखंडी ठग यह अभिमानी। मारो याहि पकड़

पापीको तपसी भेष चोर है छानी। ऐसे वचन बाणकी वेला क्षमा ढाल ओढ़ें मुनि ज्ञानी ।१४।

(१३) वध बंधन परीषह

निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं। कोई खैंच खंभसे बांधै कोई पावकमैं परजारैं। तहां कोप करते न कदाचित पूरब कर्म विपाक विचारैं। समरथ होय सहै बध बंधन ते गुरु भव भव शरण हमारैं॥

(१४) याचना परीषह

घोर वीर तप करत तपोधन भयेक्षीण सूखी गल बाँहीं। अस्थि चाम अवशेष रहो तन नसाँजाल झलकैं तिसमाहीं॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जाउ पर जांचत नाहीं। दुर्द्धर अयाचीक व्रत धारैं करैं न मलिन धरम परछाहीं॥ १६ ॥

(१५) अलाभ परीषह

एकबार भोजनकी बेला मौनसाध बस्तीमें आवैं। जो न बनै योग्य भिक्षा विधि तो मह-

न्त मन खेद न लावैं ।। ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतैं तब तपवृद्धि भावना भावैं । यों अलाभ की परम परीषह सहैं साधु सो ही शिव पावैं ।।

(१६) रोग परीषह

वात पित्त कफ श्रोणित चारों ये जब घटैं बढ़ैं तनु माहीं, रोग संयोग शोक जब उपजत जगत जीव कायर होजाहीं ।। ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहीं । आतमलीन विरक्त देहसों जैनयती निज नेम निवाहीं ।। १८ ।।

(१७) तृणस्पर्श परीषह

सूखेतृण अरु तीक्षणकांटे कठिन कांकरीपांय विदारैं । रज उड़ आनपड़े लोचनमें तीर फांस तनु पीर विथारैं ।। तापर पर सहाय नहिं बांछत अपने करसैं काढ न डारैं । यों तृण परस परीषह विजयी ते गुरु भव २ शरण हमारैं ।। १९ ।।

(१८) मल परीषह

यावज्जीव जल न्हौन तजो जिन नग्नरूप

वन थान खड़े हैं। चलै पसेव धूपकी बेला उड़-
तधूल सब अंग भरे हैं। मलिन देहको देख महा-
मुनि मलिनभाव उर नाहिं करैं हैं। यों मल
जनित परीषह जीतैं तिनाहिं हाथ हम सीस
धरे हैं ॥ २० ॥

(१६) सत्कार पुरस्कार परीषह

जो महान विद्यानिधि विजयी चिर तपसी-
गुण अतुल भरे हैं, तिनकी विनय वचनसे अ-
थवा उठ प्रणाम जन नाहिं करैं हैं। तो मुनि
तहां खेद नाहिं मानत उर मलीनता भाव हरे
हैं। ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड हम
पांय परे हैं ॥ २१ ॥

(२०) प्रज्ञा परीषह

तर्क छंद व्याकरण कलानिधि आगम अलं-
कार पढ जानैं। जाकी सुमति देख परवादी वि-
लखत होंय लाज उर आनैं ॥ जैसे सुनत नाद
केहरिका वनगयंद भाजत भय मानैं। ऐसी म-
हाबुद्धिके भाजन पर मुनीश मद रंच न ठानैं।२२

(२१) अज्ञान परीषह ।

सावधान वर्ते निशिवासर संयमशूर परम वैरागी। पालत गुप्ति गये दीरघदिन सकल संग ममता परत्यागी ॥ अवधिज्ञान अथवा मन पर्य्यय केवलि ऋद्धि न अजहूं जागी। यों विकल्प नहिं करैं तपोनिधि सो अज्ञान विजयी बडभागी ॥ २३ ॥

(२२) अदर्शन परीषह

मैं चिरकाल घोर तपकीना अजों ऋद्धि अतिशय नहिं जागे । तपबल सिद्ध होत सब सुनियत सो कुछ बात झूठसी लागै। यों कदापि चितमें नहिं चिंतत समकित शुद्ध शांति रस पागैं। सोई साधु अदर्शन विजई ताके दर्शन से अघ भागें ॥ २४ ॥

किस किस कर्मके उदय कौन कौन परीषह होती हैं.

घनाक्षरी छन्द ।

ज्ञानावरणीतैं दोइ प्रज्ञा अज्ञान होइ एक महा मोहतें अदर्शन बखानिये। अन्तराय कर्म सेती उपजै अलाभ दुख सप्त चारित्र मोहनी केवल

जानिये ॥ नगन निषध्या नारि मान सन्मानगा-
रि यांचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये।
एकादश बाकी रहीं वेदना उदयसे कही बाईस
परीषह उदय ऐसे उर आनिये ॥२५॥

अडिल्ल छंद ।

एकबार इनमाहिं एकमुनिके कही। सब उनी-
स उत्कृष्ट उदय आवैं सही ॥ आसन शयन
बिहाय दोय इन माहिंकी । शीत उष्णमें एक
तीन ये नाहिंकी ॥२६॥

॥ इति बाईसपरीसह समाप्त ॥

पं० सूरजचन्दजी रचित । नरेन्द्र छन्द

समाधिमरण भाषा ।

बंदों श्रीअरहंत परमगुरु, जो सबको सुखदाई।
इस जगमें दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई॥
अब मैं अरज करूं प्रभु तुमसे, करसमाधि उर
माहीं। अंतसमयमें यह बर मांगूं सो दीजै जग
राई॥१॥ भवभवमैं तनधार नये मैं, भव भव
शुभ सँग पायो। भव भवमैं नृपरिद्धि लई मैं.

मात पिता सुत थायो ॥ भव भवमें तन पुरुष-तनों धर- नारी हू तन लीनो। भवभवमैं मैं भयो नपुसक, आतमगुण नहिं चीनों ॥ २॥ भवभव में सुरपदवीपाई, ताके सुख अति भोगे। भवभव में गति नरकतनी धर, दुख पाये विधि योगे॥ भव भवमैं तिर्यंच योनिधर, पायो दुख अति भारी। भवभवमें साधर्मीजनको, संग मिल्यो हितकारी ॥ ३ ॥ भवभवमैं जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहिं दीनो। भवभवमें मैं समवसरणमैं, देख्यो जिनगुण भीनो ॥ एती वस्तु मिली भव भवमैं सम्यकगुण नहिं पायो। ना समाधियुत मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ॥४॥ काल अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनो एकबार हूं सम्यक्युत मैं, निज आतम नहिं चीनो॥ जो निजपरको ज्ञान होय तो, मरण समय दुख कांई। देह विनासी मैं निजभासी, जोतिस्वरूप सदाई ॥ ५ ॥ विषयकषायनके वश होकर, देह आपनो जान्यो। कर मिथ्यासर-

धान हियेविच, आतम नाहिं पिछान्यो ॥ यों कलेश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो। सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदेमें नहिं लायो ॥ ६ ॥ अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगों। रोगजनित पीडा मत होवो, अरु कषाय मत जागो ॥ ये मुझ मरणसमय दुखदाता, इन हर साता कीजे। जो समाधि-युतमरण होय मुझ, अरु मिथ्यागद छीजे ।७। यह तन सात कुधातमई है, देखतही घिन आवै। चर्मलपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावै ॥ अतिदुर्गंध अपावनसों यह, मूरख प्रीति बढावै। देह विनासी, जियअविनासी नित्यस्वरूप कहावै ॥ ८ ॥ यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातैं प्रीति न कीजे। नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामें क्या छीजे॥ मृत्युहोनसे हानि कौन है, याको भय मत लावो। समतासे जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो ॥९॥ मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इसअवसरके माहीं। जीरनतनसे देत

नयो यह, या सम साहू नाहीं ॥ या सेती इस मृत्युसमयपर, उत्सव अति ही कीजे। क्लेशभाव-को त्याग सयाने समताभाव धरीजे ॥१०॥ जो तुम पूरव पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई। मृत्युमित्र विन कौन दिखावै, स्वर्गसंपदा भाई ॥ रागरोषको छोड सयाने, सात व्यसन दुखदाई। अंतसमयमें समता धारो, परभवपंथसहाई ।११। कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुख पावै। तन पिंजरमें बंध कियो मोहि, यासों कौन छुडावै॥ भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तनमें गाढै। मृत्युराज अब आय दयाकर, तनपिंजरसों काढै ॥१२॥ नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तनको पहराये। गंधसुगंधित अतर लगाये, पटरस असन कराये॥ रात दिना मैं दास होयकर, सेव करी तनकेरी। सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ॥ १३ ॥ मृत्युरायको शरन पाय तन- नूतन ऐसो पाऊं। जामें सम्यकरतन तीन लहि आठों कर्म खपाऊं ॥ देखो तन

सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाहीं। मृत्यु समयमें ये ही परिजन, सबही हैं दुखदाई॥१४॥ यह सब मोह बढ़ावनहारे, जियको दुर्गतिदाता। इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता॥ मृत्यु कल्पदुरुम पाय सयाने, मांगोइच्छा जेती। समता धरकर मृत्यु करो तो पावो संपति तेती॥१५॥ चौआराधन सहित प्राण तज, तौ ये पदवी पावो। हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर स्वर्गमुकतिमें जावो॥ मृत्युकल्पदुरुम सम नहिं दाता, तीनों लोक मझारे। ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे॥ १६ ॥इस तनमें क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन होहै। तेजकांति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है॥पांचों इंद्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नांहिं आवै। तापर भी ममता नहिं छोडै समता उर नहिं लावै॥ १७ ॥ मृत्युराज उपकारी जियको तनसों तोहि छुडावै। नातर या तनबंदीग्रहमें पर्‍यो पर्‍यो बिललावै। पुद्गु-

दासी द्वारा सुदर्शनको रनवासमें ले जानेका षड़यन्त्र।

(सुदर्शन चरित्र)
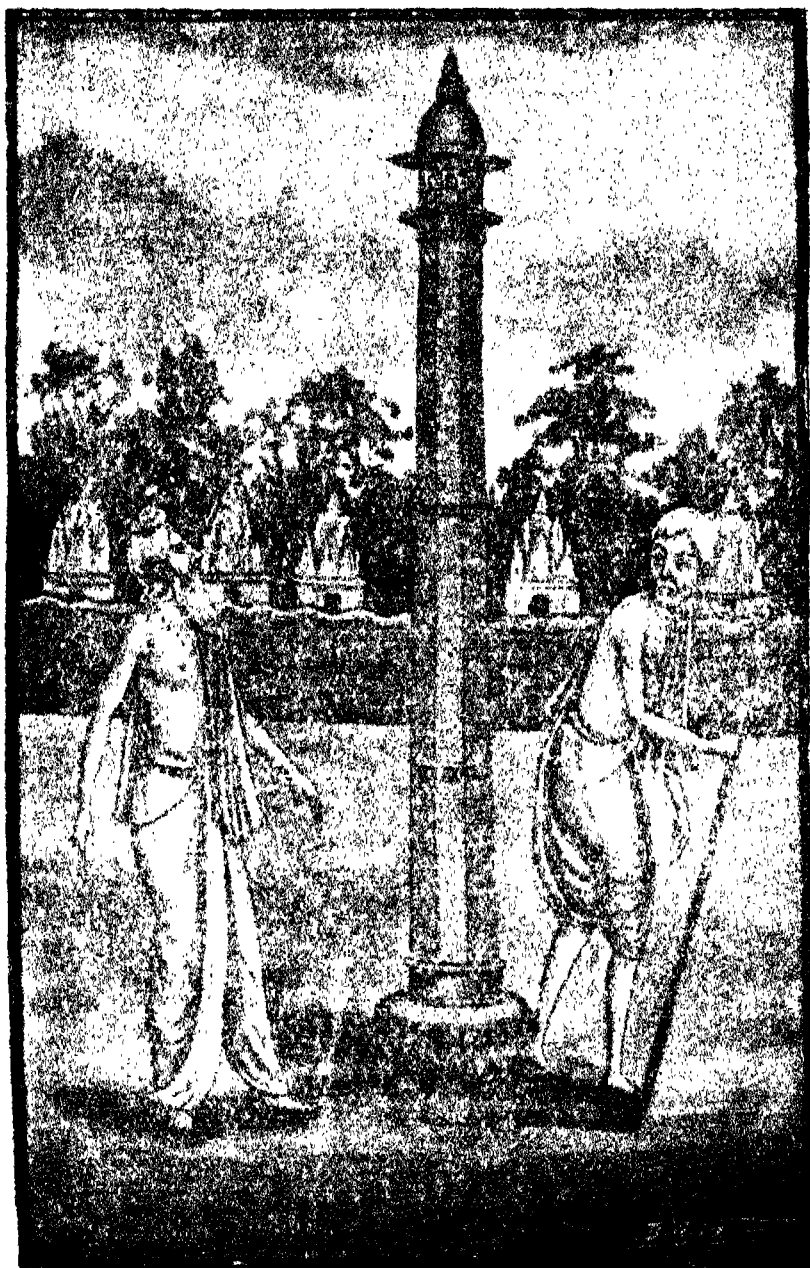
गौतम स्वामीका अभिमान मानस्तंभको देखकर चूर २ होगया।

(गौतम चरित्र)

लके परमाणू मिलकैं पिंडरूप [illegible] [illegible] [illegible]
मूरत मैं अमूरती ज्ञानजोति गुणखासी ॥१८॥
रोगशोक आदिक जो वेदन ते सब पुदगुल-
लारैं। मैं तो चेतन व्याधि विना नित हैं सो
भाव हमारे॥ या तनसों इस क्षेत्र संबंधी, कार-
ण आन बन्यो है। खान पान दे याको पोष्यो
अब सम भाव ठन्यो है॥१९॥ मिथ्यादर्शन
आत्मज्ञान विन यह तन अपना जान्यो। इंद्री-
भोग गिने सुख मैंने आपो नाहिं पिछान्यो॥
तन विनशनतैं नाश जानि निज यह अयान
सुखदाई। कुटुम आदिको अपनो जान्यो भूल
अनादी छाई॥२०॥ अब निज भेद जथारथ
समझ्यो मैं हूं ज्योतिस्वरूपी। उपजे विनसै सो
यह पुदगल जान्यो याको रूपी॥ इष्टऽनिष्ट जेते
सुख दुख हैं सो सब पुदगल सागे। मैं जब
अपना रूप विचारों तब वे सब दुख भागें
॥ २१ ॥ विन समता तनऽनंत धरे मैं तिनमैं
ये दुख पायो। शस्त्रघाततैंऽनन्त बार मर

नाना योनि भ्रमायो ॥ बार अनंतहि अग्नि माहिं जर मूवो सुमति न लायो। सिंह व्याघ्र अहि अनन्त बार मुझ नाना दुःख दिखायो ॥२२॥ विन समाधि ये दुःख लहे मैं अब उर समता आई। मृत्युराजको भय नहिं मानो देवै तन सुखदाई ॥ यातैं जब लग मृत्यु न आवै तबलग जपतप कीजै। जपतपविन इस जगके माहीं कोई भी ना सीजे ॥ २२ ॥ स्वर्गसंपदा तपसों पावे तपसों कर्म नसावे। तपही सों शिवकामिनिपाति है यासों तप चित लावे ॥ अब मैं जानी समता विन मुझ कोऊ नाहिं सहाई। मात पिता सुत बांधव तिरिया ये सब हैं दुखदाई ॥ २४ ॥ मृत्यु समयमें मोह करें ये तातैं आरत हो है। आरततैं गति नीची पावै यों लख मोह तज्यो है॥ और परीग्रह जेते जग मै तिनसों प्रीत न कीजे। परभवमें ये संग न चालैं नाहक आरत कीजे ॥२५॥ जे जे वस्तु लखत हैं ते पर तिनसों नेह निवारो। परगति

मैं ये साथ न चाले, ऐसो भाव विचारो ॥ जो परभवमैं संग चलै तुझ तिनसों प्रीत सु कीजे। पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजे ॥ २६ ॥ दशलक्षणमयधर्म धरो उर, अनुकंपा उर लावो। षोडशकारण नित्य विचारो, द्वादश भावन भावो ॥ चारों परवी प्रोषध कीजे, अशन रातको त्यागो। समता धर दुरभाव निवारो, संयमसों अनुरागो ॥ २७ ॥ अंत समयमैं यह शुभ भावहि, होवैं आनि सहाई। स्वर्गमोक्षफल तोहि दिखावैं, ऋद्धि देहिं अधिकाई। खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमैं समता लाकैं। जासेती गतिचार दूरकर, बसहु मोक्षपुर जाकैं ॥२८॥ मनथिरता करकै तुम चिंतो, चौ आराधन भाई। येही तोकों सुखकी दाता, और हितू कोउ नाहीं॥ आगैं बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता भारी। बहु उपसर्ग सहे शुभ पावन, आराधन उरधारी ॥२९॥ तिनमैं कछुइक नाम कहूं मैं, सो सुन जिय चित लाकै। भावसहित अनु-

मोदे तासों, दुर्गति होय न ताकै ॥ अरु समता निज उरमें आवै, भाव अधीरज जावै । यों निशदिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये विच लावै ॥ ३० ॥ धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसें धीरज धारी । एक श्यालनी जुगबच्चाजुत पांव भख्यो दुखकारी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी । तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव भारी ॥ ३१ ॥ धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो । तौ भी श्रीमुनि नेक डिगे नहिं, आतम सों हित लायो ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥३२॥ देखो गजमुनिके शिर ऊपर, विप्र अगिनि बहु बारो । शीश जलै जिम लकडी तिनको, तौ भी नाहिं चिगारी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ३३ ॥ सनतकुमार मुनीके तनमें, कुष्ट वेदना व्यापी । छिन्न भिन्न तन तासों हूवो, तब चिन्त्यो गुण आपी ॥

यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी। तौ तुमरे० ॥ ३४ ॥ श्रेणिकसुत गंगा में डूब्यो तब जिननाम चितार्यो। धर सलेखना परिग्रह छोड्यो शुद्ध भाव उर धार्यो॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चित धारी। तौ तुमरे० ॥३५॥ समतभद्रमुनिवरके तनमें छुधावेदना आई। तौ दुखमें मुनिनेक न डिगियो चित्यो निजगुण भाई। यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी तौ तुमरे० ॥३६॥ ललितघटादिक तीस दोय मुनि कौशांबीतट जानो। नद्दीमें मुनि बहकर मूवे सो दुख उन नहिं मानो॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥३७॥ धर्मघोष मुनि चंपानगरी बाह्य ध्यान धर ठाड़ो। एक मासकी कर मर्यादा तृषा दुःख सह गाढो॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥३८॥ श्रीदतमुनिको पूर्वजन्मको वैरी देव सु आके। विक्रिय

कर दुख शीततनो सो, सह्यो साध मन लाके॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥ ३९ ॥ वृषभसेन मुनि उष्णशिलापर, ध्यान धर्‍यो मनलाई। सूर्यघाम अरु उष्ण पवनकी, वेदन सहि अधिकाई॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥४०॥ अभयघोषमुनि काकंदीपुर, महावेदना पाई। वैरी चंडने सब तन छेद्यो, दुख दीनो अधिकाई॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ।४१। विद्युतचरने बहु दुख पायो, तौ भी धीर न त्यागी। शुभभावनसों प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥ ४२ ॥ पुत्रचिलाती नामा मुनिको, बैरीने तन घाता। मोटे मोटे कीट पडे तन, तापर निज गुण राता॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ।४३। दंडकनामा मुनिकी देही, बा

कर अरि भेदी। तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ।४४। अभिनंदन मुनि आदि पांचसौ, घानी पेलि जु मारे। तौ भी श्रीमुनि समताधारी, पूरबकर्म विचारे॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥ ४५ ॥ चाणकमुनि गौघरके माहीं, मूंद अगिनि परजाल्यो। श्रीगुरु उर समभाव धारकै, अपनो रूप सम्हाल्यो॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ॥४६॥ सातशतक मुनिवर दुख पायो, हथनापुरमें जानो। बलिब्राह्मणकृत घोरउपद्रव, सो मुनिवर नहिं मानो॥ यह उपसर्ग सह्या धर थिरता आराधन चितधारी। तौ तुमरे० ।४७। लोहमयी आभूषण गढके, ताते कर पहराये। पांचों पांडव मुनिके तनमैं, तौ भी नाहिं चिगाये॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधनचितधारी। तौ तुमरे० ॥ ४८ ॥ और

अनेक भये इस जगमैं, समतारसके स्वादी।
वे ही हमको हो सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी॥
सम्यकदर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारों।
ये ही मोको सुखकी दाता, इन्हें सदा उर धारों
॥ ४९ ॥ यों समाधि उरमाहीं लावो, अपनो
हित जो चाहो। तज ममता अरु आठों मदका.
जोतिस्वरूपी ध्यावो ॥ जो कोई नित करत प-
यानो. ग्रामांतरके काजै। सो भी शकुन विचारै
नीके. शुभके कारण साजै ॥ ५० ॥ मातपिता
दिक सर्व कुटुम सब. नीके शकुन बनावै। हल्दी
धनिया पुंगी अक्षत, दूब दही फल लावै॥ एक
ग्रामजानेके कारण, करैं शुभाशुभ सारे। जब
परगतिको करत पयानो. तब नहिं सोचौ प्यारे
॥ ५१ ॥ सर्वकुटुम जब रोवन लागै. तोहि रु-
लावैं सारे। ये अपशकुन करैं सुन तोकों. तू यों
क्यों न विचारै॥ अब परगतिको चालत बिरियां.
धर्मध्यान उर आनो। चारों आराधन आराधो.
मोहतनो दुख हानो।५२। होय निःशल्य तजो

सब दुविधा. आतमराम सुध्यावो। जब परग-
तिको करहु पयानो. परम तत्त्व उर लावो॥ मोह
जालको काट पियारे. अपनो रूप विचारो। मृत्यु-
मित्र उपकारी तेरो. यों उर निश्चय धारो॥५३॥
दोहा—मृत्युमहोत्सव पाठको. पढो सुनो बुधि-
वान। सरधा धर नित सुख लहो. सूरचंद शि
वथान॥ ५४॥ पंच उभय नव एक नभ. संवत
सो सुखदाय। आश्विन श्यामा सप्तमी. कह्यो
पाठ मन लाय॥ ५५॥

इति श्रीसमाधिमरण पाठ भाषा समाप्त॥

बारहमासा नेमिराजुलका।

विनवै उग्रसेनकी लाडलड़ी करजोर नेमिजीके
आगें खरी। तुम काहे पिया गिरनार चढे. हम
सेती कहो कहा चूक परी॥ यह समय नहीं पिय
संजमको. तुम काहेको ऐसी चित्त धरी। कैसे
बारहमास बितावोगे तुम. समझावो मुहिको
सगरी॥ १॥

तुम आगें अषाढ़में क्यों न लियो व्रत. काहे

को एती बरात बुलाई। अरु छप्पनकोड जुड़े यदुवंशी. व्याहन आये निशान बजाई॥ संग समुद्रविजय बलभद्र मुरारिहुकी तुम्हैं लाज न आई। नेमिपिया उठ आवो घरै. इन बातनमैं कहो कौन बडाई॥ २॥ बडाई कहा करिये सुन राजुल. जीवन है निशको सुपनो। सुत बंधु बधू सब जात चले. जलबूंद जैसें तन है अपनो॥ दिन चारकके महमान सबै. थिरता न कछू सब है स्वपनो। तिहँतैं इह जान अनित्य सबै. हमरे अब सिद्धनको जपनो॥ ३॥

पिया सावनमें व्रत लीजे नहीं, घनघोर घटा जुर आवैगी। चहुँओरतैं मोर जु शोर करैं, वन कोकिल कुहक सुनावैगी॥ पिय रैन अँधेरी में सूझै नहीं. कछु दामन दमक डरावैगी। पुरवाईकी झोंक सहोगे नहीं. छिनमें तपतेज छुडावैगी॥ ४॥ या जियको कोइ न राखनहार. कहो किसकी शरणागत जैये। कालबली सब सों जगमैं तिहसों. निशिवासर देख डरैये॥ इंद्र

नरेंद्र धनेंद्र सवै जम आन परै तव बांध चलैये।
यातैं कहा डर सावनको सुन, राजुल चित्तको
यों समझैये ॥५॥
पिय भादवकी वरषा वरषै कैसैं दिन रैन गमा-
वोगे। चहुँओरतैं पौन झकोर करै तव क्योंकर
बुँदैं बचाओगे॥ घर ही क्यों न आयकै जोग
धरो बनमें बहु दुःख उठावोगे। कहै राजमती
पिय मान कहो शिवसुंदर यों नहिं पावोगे॥
।६। या जगमैं सुख नेकु न राजुल दुःखमें काल
अनंत गँवायो। योनहिं लाख चुगर्मा फिर्यो
गति चारूंही जाय महादुख पायो॥ रोगहि
शोक वियोग भरे फिर जामन मरण अनेक
सतायो। भादवकी वरषा किस गिनतीमें नर-
क निगोदनमें फिर आयो॥ ७॥
पिय लागैगो मास असोज जबै तब शीतल
बूंद सुहावैगी। कितहूं गरजै कितहू वरषै कितहू
दुतिचंद दिखावैगी॥ छिन वायु बहै छिन ग्रीष-
मता छिनमें ऋतु तीन जनावैगी। कहै राजम-

तौ पिय मान कह्यो. छिनही छिन चित्त डुलावैंगी ॥ ८ ॥ कैसें कर चित्त डुलै सुन राजुल. एकतैं एक समाधि लगावैं। एक फिरै तिहुँलोकमें हिंडत. एक विना फिर एक न पावै ॥ जाय जहां तहां है इकलो. इकलो विडवै इकलोइ गँवावै। आवत जात अकेलो रहै यह. आदि अनादि अकेलो ही धावै ॥ ९ ॥

पिय कातिकमैं मन कैसें रहै जब भामिनि भौन सजावेंगी। रचि चित्र विचित्र सुरंग सबै. घर ही घर मंगल गावैंगी ॥ पिय नूतन नारि सिंगार किये अपनो पिय टेर बुलावैंगी। पिय बारहिवार बरै दियरा. जियरा तुमरा तरसावैंगी ॥१०॥ तो जियरा तरसै सुन राजुल. जो तनको अपनो कर जानै। पुदगल भिन्न है भिन्न सबै तन. छांडि मनोरथ आन समानै॥ बूडैगो सोई कलिधारमैं. जड़ चेतनको जो एक प्रमानै। हंस पिवै पय भिन्न करै जल. सो परमातम आतम जानै ॥ ११ ॥

हिमकी ऋतु आवैगी नाथ जबै. तब शीतल पौन सुआवैगी। तब शीतल नीर समीर लगै. तन अंबर प्रीत जनावैगी ॥ सब भोजन पान सुहान लगै. सगरी तनताप बुझावैगी ॥ कहै राजमती अगहनमैं जबै ऋतु नायक लायक आवैगी ॥ १२ ॥ यह देह अपावन खेह भरी. सुन राजुल यामैं कहा थिर है ॥ यह चामकी चादर ओट दिये. इसमैं कृमिकीटनको घर है ॥ यह मूतन पीव पुरीष भरी यह. हाडरु पिंजरको घर है। तिहितैं इसको हम नेह तज्यो. हमको अब शीतको का डर है ॥ १३ ॥

पिय पौषमैं जाड़ो परैगो घनो विन. सौडके शीत कैसें भरहो। कहा ओढोगे शीत लगै जबही. किधौं पातनकी धुवनी धर हो ॥ तुमरो प्रभुजी तन कोमल है. कैसें कामकी फौजनसों लरहो। जब आवैगी शीत तरंग सबै. तब देखत ही तिनकों डर हो ॥ १४ ॥

आस्रव होय जहांपर शोभित. शीत लगै अरु

पौन झकोरै। इंद्रिय पांच पसार जहां तहां राग रोषतैं नातो हि जोरै॥ आठ महामद मात रहैं परद्रव्यको देख जहां चित्त दौरै। जो पर आप विचार न राजुल तो गृह आपतैं आपही बोरै॥

पिय माघ तुषार परैगो घनो. तब पाथरतैं परिहो गिरिकैं। यह मानुषदेह कहा वपुरी विन अंवर शीत नहीं ठरकै। किन पावक होय सहाय जहां नहिं शीत तुषार नहीं हरकै। कहै राजमती उठमानो कह्यो जु समै सिर जोग लिये फिरकै॥ संवरअंबरमैं रह राजुल शीत तुषार अनंत बचाऊं। राग रु द्वेषबयार बहै तब छांय छिमा तन छांनि छवाऊं। इंद्रिय पांच निरोध किये करुणा करके मद आठ गवांऊं। आप लखों परद्रव्य तजों समता गहिकै मनको समझाऊं॥१७॥ पिय लागेगो फागुन मास जबै, तब गावैंगी चहुं ओरतैं होरी। केसरकी पिचकारी लिये कर. फैं कैं गुलालनकी भर झोरी॥ गावत गीत धमार बजावत, ताल मृदंग लिये डफ गोरी

तब भूलोगे पिया बात सबै, जब खेलन आवैंगी सब ओरी ॥१८॥ हम होरी खेलैं सुन राजुल यों, अपने घर ऐसे खेल मचाऊं। पांच सखी अपने सँग लेकर, द्वादश भांतिके नाच नचाऊं॥ पांच सखी अपने सँग लेकर निर्जरसे सब कर्म जराऊं। खेल रचूं शिवसुंदरसों, तब आठहि कर्मकी धूर उडाऊं॥ १९॥ पिय लागैगो चैत वसंत सुहावनो, फूलैंगी बेल सबै बनमाहीं। फूलेंगी कामिनि जाको पिया घर, फूलैंगी फूल सबै बनराई॥ खेलहिंगे ब्रजके बनमें सब बाल गुपाल रु कुँवर कन्हाई। नेमि पिया उठ आवो घरै तुम काहेको करहो लोग हँसाई ॥२०॥ तीनहु लोकको जान सबै पुरुषाकर चौदह राजु ऊँचाई। ताके [illegible] घनाकार सबै तीनसौ तेतालिस है चौराई॥ बात [illegible]लैनसों बेढि रह्यो हरता करता न कोई ठहराई। यह आदि अनादितैं आयो चल्यो, सुन राजुल यामैं कहा है हँसाई॥ २१॥ पिय मास वैशाखकी ग्रीषमता ऋतु शीतल नीरकी प्यास लगैगी।

क्यों गिरिपै रहो नाथ मेरे अति घाम परै सब देह दगैगी॥ ऐसे कठोर भये कबतैं ममता तजके सब प्रीति पगैगी। नेमि पिया उठ आवो घरै सुन एकहि बार न सिद्धि जगैगी॥ २२॥
धर्मतैं सिद्धि नजीक है राजुल धर्म कियेतैं कहा नहिं आवै। धर्मतैं इंद्र नरेंद्र धनेंद्र सुरेंद्रनका सब ही पद पावै॥ धर्म सुदर्शन ज्ञान चरित्र करै तिहितैं शिवमारग पावै। धर्म महत्त बडो जगमैं जहां जीवदया तहां धर्म कहावै॥ २३॥
धर्मकी बात तो सांची है नाथ पै जेठमें कैसें धर्म रहैगो। लूह चलै सरवान कमान ज्यों घाम परै गिरमेरु वहैगो॥ पक्षी पतंग सबै डर हैं अपने घरको सब कोई चहैगो। भूखतृषा अति देह दहै तब ऐसो महाव्रत क्यों निबहैगो॥२४॥
दुर्लभ है नरको भव राजुल दुर्लभ श्रावकयोनि हमारी। दुर्लभ धर्म जु है दशलच्छन दुर्लभ षोडशभावना भारी॥ दुर्लभ श्रीजिनराजको मारग दुर्लभ है शिवसुंदर नारी। यह सब दुर्लभ

जान तबै जब दुर्लभ है सन्यासकी त्यारी ।२५।
बारह मास जे पूरे भये तब नेमिहि राजुल जाय सुनाये । नेमहिं द्वादस भांति तबै उठ पीछेसों राजुलको समझाये ।। राजुलने तब संजम ले सब निर्जराकर वसु कर्म जराये। राजुलके पति नेमि जिनेश्वर उत्तर लालविनोदीने गाये ।। २६ ।।

॥ इति नेमिराजुलका बारहमासा समाप्त ॥

। बारहमासा सीतासतीका ।

यति नैनसुखदासकृत ।

रागिनी हिंडोला चाल श्रावणकी मल्हार तथा निहालदे ।

विन कारण स्वामी क्यों तजी विनवै, जनक दुलारि, विन कारण स्वामी क्यों तजी ।। टेक ।।
साढ घुमडि आये बादरा, घन गरजै चहुं ओर। निर्जन वनमें स्वामी तुम तजी, बैठनकूं नहिं ठौर ।। विनकारण स्वामी क्यों तजी, विनवै जनकदुलारि । विन० ।। १ ।। क्या मैं सतगुरु निंदियो, क्या दियो सतियन दोष । क्या हम सत संजम तज्यो, किस कारण भये रोस। वि०

भक्तामरके प्रभावसे ४८ ताले टूट गयें
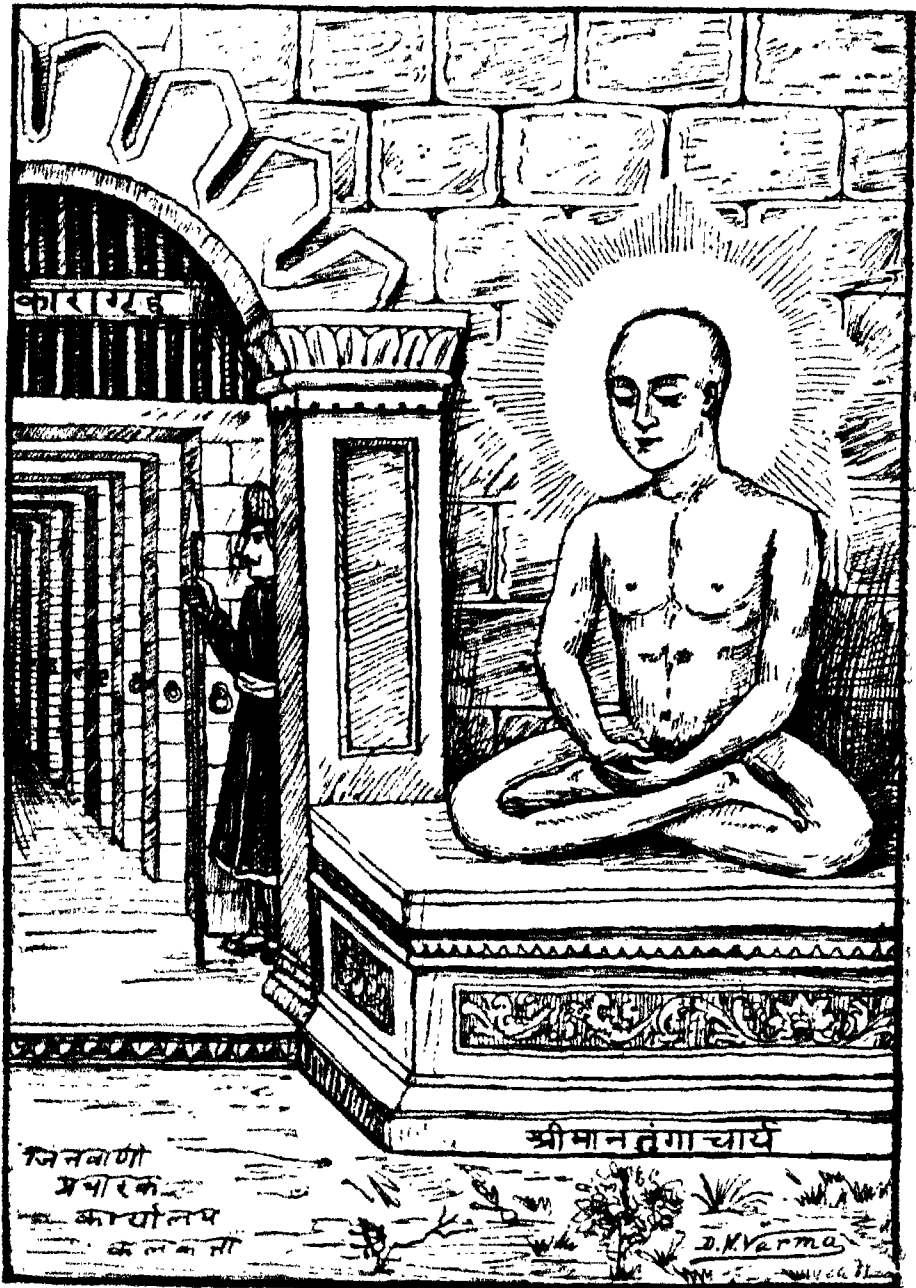
॥२॥ क्या परपुरुष निहारिके, परभव कियो है निदान। क्या इसभव इच्छा करी, क्या मैं कियो अभिमान। विन०।३। कटुक वचन स्वामी नहिं कहे, हिंसा करम न कीन। परधन पर चित नहिं दियो, क्यों मन भयो है मलीन॥ विन० ॥४॥

श्रावण तुमसँग वनविषै, विपति सही भगवान। पांवपयादी बन बन में फिरी, तनक न राखी आन। विन० ।१। स्वसुर दिसौटा जिस दिन तुम दियो, कियो भरत सरदार। तादिन विकल्प नहिं कियो, तज संपति भइ लार। विन० ॥२॥ जनक पिताकी मैं हूं लाडली, मात विदेहाकी बाल। भ्रात प्रभामंडलसे बली, विपत भरूं बेहाल। विन० ॥३॥ मात मंदोदरी गर्भमें जन्मी रावणगेह। परभव करमसंयोगसे, रावण कियो है सँदेह। विन० ॥ ४ ॥

भादों पंडित पूछियो, पंडित करी है विचार। कन्याके कारण राजा तुम मरो, दीनी तुरत विसार। विन० ॥१॥ छोडी धर मंजूसमें, जनक

नगर वनबीच । हलजोतत किरसानके, लई करमने खींच । विन० ॥ २ ॥ मरण भयो नहिं ता दिना, करम लिखे दुखदोष । करी नजर राजा जनकने, पाली पुत्र संजोग । विन० ।३। जनक स्वयंवर जब कियो, लिये सबभूप बुलाय। दरशनकर थारे वश भई, परी चरणबिच आय ॥ विन० ॥ ४ ॥

कारमास फिरगये भूपसब, मोकारण कियो युद्ध । बहुत बली मारे रणविषै, ठायो धनुष प्रबुद्ध ॥ विन० ॥ १ ॥ खरदूषणके युद्धमें, आयो रावण दौड । छलकर धोका प्रभु तोहि दियो, नाद बजायो घनघोर । विन० ॥ २ ॥ जल्दी पधारो प्रभु मैं घिर गयो, तुम जानी भगवान । कष्ट पड्यो जी मेरे भ्रातपैं, उपज्यो मोह निदान ॥ विन० ॥ ३ ॥ मोहि लकोई पात बटोरिकैं, करम लिखी कछु और। आप पधारे अपने वीर पै आगयो रावण चोर ॥ विन० ॥ ४ ॥ चील झपट्टा करिकै लेगयो, मोकूं अधर उठाय। देखी

नाथ जटायुनैं, क्या तुम जानत नाहिं। विन० ॥ ५ ॥ झपटि झपटि वाकै शिर हुयो, मुकुट खसोट्यो मूंछ उपारि। मारि तमाचो डार्‌यो भूमिपर, पक्षी खाईजी पछार ॥ विन० ॥ ६ ॥ लछमन तुमहिं निहारिकै, बात कही करि गौर। विनहिं बुलाये आये भ्रात क्यों है कछु कारण और ॥ विन० ॥ ७ ॥ काहू छलियाने यह कछु छल कियो, कै कछु करम चरित्र। नाहिं पिछार्‌यो जावें युद्धमें, कौन है वैरी कोन मित्र ॥ विन० ॥ ८ ॥

कातिक तुरत पठाइयो, उलट तुम्हें थारे भ्रात। विनही बुलाए आये आप क्यूं, शत्रु करेंगे उतपात। विन०॥१॥ आएजी तुरत रक्षा करनकूं, हममे धर प्रभु प्यार। बिखरे ही पाये पत्र बेल तब, खाई आप पछार। विन० ॥ २ ॥ भ्रात हटाई आकै मूरछा, सकल शत्रुगण जीत। पडा जटायू सिसकता, श्रावण धर्म पुनीत। विन० ॥ ३ ॥ जन्म सुधारयो वाको आपने, मोविन

पायो नहिं चैन । डारी डारी ढूंडी वनविषें. रोय सुजाये तुम नैन । विन० ॥ ४ ॥ धीर बंधाई लछिमन भुजबली. बहुत करी थारी सेव । विपति कटैगी प्रभु धीरज धरे. तदपि न माने थे तुम देव । विन० ॥५॥ ल्याऊं काढ पतालसे. ल्याऊं पर्वत फोर । अवर मिलैं तो सब कुछ मैं करूं, चीर बगाऊं थारा चोर । विन० ॥ ६ ॥ फेर मिले जी प्रभु सुग्रीवसे. साहसगति दियो मार । पाय सुतारा ल्यायो हनुमानकूं. ढूंढ़न भेज्यो मोहि ततकार । विन० ॥७॥

अगहन खबर मँगायकै, मोढ़िग भेज्यो हनुमान । कूदि समुंदर गयो गढलंकमैं. भेजी तुम मुंदरी भगवान । विनका० ॥१॥ तुमबिन बैठी रोऊं बागमैं. रामहि राम पुकार । अन्न कियो ना पानी मैं पियो. परवश पडी थी लाचार । विन० ॥१॥ मुख धुलवायो हनुमानने. तुम आज्ञा परवान । प्राण बचाये मेरे विपतमैं. करवायो जलपान । विन० ॥३॥ तुरतही भेज्यो

तुमरे चरणमें. चूड़ामणि दियो तारि । गाय फसी है गाढ़ी गारमें. खैंच निकारोजी भरतार विनकारण० ॥ ४ ॥

पोष चढे जो गढलंकपै. युद्ध कियो भगवान । गारत किये लाखों सूरमा. मार कियो घमसान । विन० ॥ १ ॥ काटा शिर लंकेशका. लक्ष्मी-धर वर वीर । कूद पडेजी जोधा लंकमें, लवण समुंदर चीर । विन०॥२॥ ल्याये तुरत छुडायकै अशरण शरण अधार । इतनी कर ऐसी क्यों करी. घरसे दई क्यूं निकार । विन० ॥ ३ ॥ पगभारीजी गिरगिर मैं पडूं. शरण सहाय न कोय । अपनी कही न मेरी तुम सुनी. बहुत अँदेशा है मोहि । विनकारण० ॥ ४ ॥

माघ प्रभुजी पाला पड रह्या. पड़नेकूं नहिं सेज । ओढनकूं नहिं कांबली. दई क्यूं विपतिमें भेज । विन० ॥ १ ॥ सिंह धडुकें कूकें भेडिये. नारै गज चिंघाड़ । थरथर कांपै थांरी कामिनी स्यालिनी रही है दहाड़ । विन० ॥ २ ॥

भूत पिशाचगण, रुंड मुंड विकराल । सनन सनन सारा बन करै, कांटे चुभैजी कराल। विन०॥३॥ कित बैठूं लेटूं कित प्रभू, पास खवास न कोय। अन्न करूं ना पानी मैं पिउं, बालककूं दुख होय। विन०॥४॥ तुम सब जानत मेरे हालकूं, अष्टमबलि अवतार। तुम सूरज मैं पटवीजनी, क्या समझाउं भरतार। विन०॥५॥ समरथ है प्रभु क्यों कसी प्रगट किया क्यों ना दोष। धोका दे क्यों धक्का दियो आवे नहिं संतोष॥ विन० ॥६॥

फागुन आईजी अठाइयां अपने करम दे दोष। ध्यान धऱ्यो भगवानको बैठ रही मनमोस॥ विनकारण० ॥१॥ अरज करौं प्रभु दरबारमैं ममताभाव निवार। तुमही पिता प्रभु तुम मात हो तुमही भ्रात हमार॥ विन० ॥२॥ निर्धनके प्रभु तुम धनी निर्जनके परिवार। इकबर राम मिलायके दीजियो दोष उतार॥ विन० ॥३॥ तुम हो प्रभु राजा धरमके परजा ल-

गायो हमैं दोष। शीलमें मेरे सब संशय करैं, राम रुसाये हुये रोस ॥ विन० ॥ ४ ॥ त्याग दिये हम रामजी, त्यागि दियो संसार। गर्भवती हूं संजोगसे, इससे हुई हूं लाचार ॥ विन० ॥ ५ ॥ जिस दिन प्रभु पह्लापाक हो, मिलै मोहि भरतार। भरम मिटाकै धारूं धरमको, त्यागूं सब संसार ॥ विन० ॥ ६ ॥ राम मनावै तौ भी ना मनूं, करि जाउं बनकूं विहार। करपै श्री रघुवीरके, चोटी धरूंगी उपार ॥ विन० ॥ ७ ॥ भावै यों सीता वैठी भावना, ध्यावै पद नवकर। पाप घट्यो प्रगट्यो पुण्यफल, सुन लई तुरत पुकार ॥ विन० ॥ ८ ॥ पुंडरीकपुर नगरका, वज्रजंघ भूपाल। आये पुण्यसंयोगसों गज पकड़न तिहँ काल ॥ विन० ॥ ९ ॥ ढूंढत गजपति बनविषैं, भनक पड़ी वाकै कान। कोई सतवंती रोवै वनविषैं, किनही सताई अज्ञान ॥ विन० ॥ १० ॥ दोष लगायो कहा पूछिये, गज तज उतर्‍यो धीर विनयसहित दुख पूछन चल्यो, जैसै भै-

नाके घर वीर॥ विन०॥११॥ तुम हो बहन मेरी धर्मकी विपति कहो समुझाय। मातापिता पति परिवारसैं दूंगा बहन मिलाय।विन०।जनक पिता कीमैं हूँ लाडली भ्रात प्रभामंडल धीर। स्वसुर हमारे दशरथ नृपबली भर्ता श्रीरघुवीर। विन० ॥ ३ ॥ रावण हरकै ले गयो दोष धरै संसार। शीलमैं सब संशय करैं दीनी राम निकार॥ विन०॥ १४॥सुनी कथा छाती थरहरी टपकैं अंसुवनधार। हायरे कर्म ऐसी क्यों करी कियो तुरत उपगार॥ विन०॥१५॥ देव धरम दिय बीचमैं बहन बनाई ततकार पुंडरीकपुर लै गयो करिकै गज असवार॥ विन०॥ १६ ॥ पुत्र भये लवअंकुश बली शिवगामी अवतार। वज्रजंघ रक्षाकरी पालकिये हुशियार॥ विन०

चैत्रमास नारदमुनि मिले चरण पडे दोऊ बीर राम लखनकीसी संपदा हूज्यो थारै वर वीर। त्रिनकारण० ॥१॥ पूछ्यो तबै अपनी मातसूं राम लखन माता कौन। टसटस

लागी आसूं टपकने, मारयो मन धारयो मौन ॥ विन० ॥२॥ नारद मुनि समुझाइयो, पिछलो सकल वृतंत । सुनत उठे योधा खडग ले, बैठ विमान तुरंत ॥ विन० घेरि अजुध्या रणभेरी दई, कांपै सुरग पताल । सोच भयो श्रीरघुवीर-को, आये कौन अकाल ॥ विन० ॥४॥ निकसे दोउ भ्राता युद्धकूं, खूब मचा घमसान । राम लखन घबरा दिये, तोड्यो रथ काटे बाण ॥ वि-न० ॥ ५ ॥ हलमूशल धारे रामने, लछमन चक्र सँभार । सातवार फेंक्यो तानके, वृथाही गये सातों बार । विन० ॥ ६॥ हम हरि बल अरु ये किधौं, उपज्यो सोच अपार । आग बबूला होकै फिर लियो, चक्रप्रलय करतार ॥ विन० ॥७॥ तब नारद आये भूमि पर, रामलखण-ढिग जाय । बात कही सब समुझायकै, किसपै कोपे रघुराय ॥ विन० ॥८ ॥ पुत्र तुम्हारे दोऊं भुजबली, लवअंकुश बलवंत । मातविपति सुन कोपिया, भाख्यो सकल वृतंत ॥ विन० ॥ ९॥

भरि आई छाती श्रीरघुवीरकी, रणकूं दियो है निवार। आय परे सुत चरणमें, लीने दोऊ पुचकार ॥ विन० ॥

मास विसाख बसंतरितु, सुनि सीताजीकी सार। भागपडे हनुमतसे बली, ल्याये करि मनुहार ॥ विन० ॥ १ ॥ वज्रजंघ आयो धूमसे, लायो सब परिवार। राम कहें मैं आने दूं नहीं, सीता दई मैं निकार ॥ विन० ॥ २ ॥ जो आवै तो आवो इसतरां, कूदो अगनिमझार। देय परीछा अपने शीलकी, होवे मेरी पटनार ॥ विन० ॥ ३ ॥ सीता सती प्रण धारियो, होवै कुंड तयार। अगन जलावो देरी मत करो, इक जोजन विसतार ॥ विन० ॥४॥ साड़ी कसि त्यारी करी, अंग ढक्यो बड़भाग। कुंड खुदायो मनभावतो, चेतन कर दई आग ॥ विन० ॥ ५ ॥ जाय चढी ऊंचे दमदमे, देखै सब संसार। सत मूरत सूरत सोहनी, मनमैं हर्ष अपार ॥ विन० ॥ ६ ॥ देखैं देवता, देखैं भवनपत स। चंद्र सूरज

देखैंज्योतिषी देखैं भूत पतीस ॥ विन० ॥७॥
देखैं सब विद्याधरा देखैं गणगंधर्व। कमर क-
सी फौजैं आ पड़ी देखैं राजा सर्व ॥ विन० ।८।
अगनि लपट ऊठी गगनलौं तड़तड़ाट भयो घो-
र। कहत प्रजा श्रीरामसों क्यों प्रभु भए हो
कठोर ॥ विन० ॥९॥ वज्र बचै ना ऐसी अग-
निमैं फाटि धरणि पताल। पर्वत फटि मठ गिर
पडैं हे प्रभु कीजिये टाल ॥विन०॥ १०॥ रा-
म खडग सूंत्यो हाथमैं मत कोई कहो जी ब-
नाय। आज्ञा मानै मेरी जानकी देवै भरम मि-
टाय ॥ विन० ॥ ११ ॥ हुकम दियो रघुवीरने
शीलपरीक्षा देहु। नातर क्यों आई तू यहां
परजा करै है संदेहु ॥ विन० ॥१२॥ पंच परम-
गुरु वंदिकैं करि पतिकूं परणाम। छिमा कराई
सब जीवसौं देखैं लछमन राम ॥विन०॥१३॥
पुत्र जुगल छोड रोवते सोहैं चंद्रसमान। हरष
भरी सतवंती महा बोली वचन महान ॥विन०
॥१४॥ जो परपुरुष निहारिकैं मैं कछु कियो

है कुभाव। भस्म अगनि मोहि कीजियो नातर जल हो जाव ॥ विन० ॥१५॥ जठ तपै सूरज आकरो नीचे अगनि प्रचंड। आस-पास जल थल सभी सूकि गए बनखंड ॥बिन० ॥ १ ॥ कूदपड़ी जलती अगनिमें शांति भई ततकार। उभर कँवल अकाशलों लीनी अधर सहार॥ विन० ॥ २ ॥ जल हलरावै बोलें हंसनी कर रही मीन कलोल। छत्र फिरैजी उसके सीसपै इंद्र चँवर रहे ढोल ॥ विन कार-न ॥३॥ शीतल मंद सुगंध जुत मीठी मीठी चलत बयार। बरषै मनु अमृत कणी देव करें जै जैकार ॥ विन० ॥४॥ धन्य सती धन सत-वंतिनी धन धन धीरज येह। धृग धृग हम उनकूं करें जिनके मनसंदेह ॥ विन० ॥ ५ ॥

बारह भावना सीताजीकी।

सीता भावै मनमें भावना यह संसार अनित्य। धर्म बिना तीनों लोकमैं शरण सहाई ना मित्त॥ विन० ॥६॥ उलट पुलट चालै रहटसा यह सं-

सारी चक्र। एक अकेलो भटकै आतमा, क्या पशु पंछी क्या शक्र ॥विन० ॥ ७ ॥ ना कोई जगमैं आपना औ न हम काहूके मीत। अशुचि अपावन तनविषै, करम करै विपरीत ॥ विन कारण० ॥८॥ संवर जल विन ना बुझै, तृष्णा अगनि प्रचंड। कर्म खिपाये विन ना खपै भटकैं सब ब्रह्मंड ॥विन०॥९॥ दुर्लभबोध जगत्तमैं दुर्लभ श्रीजिनधर्म। दुर्लभ स्वपथ विचार है, कर्मन डार्‍यो भर्म ॥ विन ० ॥१० ॥ परवशभोगी भारी वेदना, स्ववश सही नहिं रंच। सास्वत सुख जासों पावती, लेई करमने वंच ॥ विन० ॥११ ॥ अब मैं सब वेदन सही, कीनी धरम सहाय। परातिज्ञा पूरी करूं, मोह महा दुखदाय ॥ विन० ॥१२॥ राम कहै प्यारी चल घरां, ल्या धुजमैं भुज डार। पाडि शिखा करपै धरि दई, त्यागयो हम संसार ॥ विन० ॥१३॥ तुम त्यागी निरदोष कूं, हम त्यागे लख दोष। करिकै छिमा मैं संजम लियो, करियो मत अ-

फसोस ॥ विन० ॥१४॥ गई सतीजी बन खंडकूं, भई अरजिका धीर। उग्र उग्र तप वह करै, सब दुख सहै है शरीर ॥ विन० ॥ १५ ॥ पूरी करि परजायकूं, अच्युत सुरगमझार। इंद्र भई-जी पुराय सँजोगसों, भोगै सुक्ख अपार ॥ विन० ॥ १६ ॥

इति सीता सतीका बारहमासा समाप्त।

चोबीस दंडक।

दोहा—वंदों वीर सुधीरको, महावीर गंभीर। वर्द्धमान सन्मति महा, देवदेव अतिवीर ॥ १ ॥ गत्यागत्य प्रकाश जो, गत्यागत्य वितीत। अदभुत अतिगत सुगति जो जैनेश्वर जगतीत ॥ २ ॥ जाकी भक्ति विना विफल, गये अनंते काल। अगिनत गत्यागति धरीं घट्यो न जग जंजाल ॥३॥ चौवीसों दंडकविषै, धरी अनंती देह। लख्यो न जिनपद ज्ञानविन, शुद्ध स्वरूप विदेह ॥ ४ ॥ जिनवाणी परसादतैं, लहिये आतमज्ञान। दहिये गत्यागति सबै गहिये पद

निर्वान ॥५॥ चौवीसौं दंडक तनी. गत्यागति सुनि लेहु । सुनकर विरकत भाव धर. चहुंगति पानी देहु ॥ ६ ॥

चौपाई—पहिलो दंडक नारकितनो । भवन पती दस दंडक भनो ॥ ज्योतिस व्यंतरस्वर्ग निवास । थावर पंच महा दुखरास ॥७॥ विक-लत्रय अरु नर तिर्यंच । पंचेंद्री धारक परपंच ॥ यह चौवीस जु दंडक कहे । अब सुनु इनमें भेद जु लहे ॥ ८ ॥ नारककी गाति आगति दोय । नर तिर्यंच पंचेंद्री जोय ॥ जाय असैनी पहली लगें । मनविन हिंसाकर्म न पगें ॥ सरीसर्प दूजे लौं जाय । अरु पच्ती तीजेलौं थाय ॥ सर्प जाय चौथे लौं सही । नाहर पंचम आगें नहीं ॥१०॥ नारीछट्ठे लगही जाय । नर अरु मच्छ सातवें थाय ॥ ऐतौ नारक आगति कही । अब सुन नारककी गति सही ॥११॥ नरक सातवेंको जो जीव । पशुगति ही पावै दुखदीव ॥ अरु सब नारक मर नर पशू । दोऊ गति आवें परवसू

॥ १२ ॥ छट्टेको निकस्यो जु कदापि। सम्यक सह श्रावक निष्पाप। पंचम-निकस्यो मुनि हू होय। चौथेको केवलि हू कोय॥ १३ ॥ तृतिय नरकको निकस्यो जीव। तीर्थंकर भी हो जग-गीव॥ यह नारककी गत्यागती। भाषी जिन-वाणीमें सती॥ १४ ॥ तेरह दंडक देव निकाय तिनको भेद सुनो मन लाय॥ नर तिर्यंच पंचेंद्री बिना। औरनको नहिं सुरपद गिना॥ १५ ॥ देव मरें गति पांच लहाँहिं। भू जल तरुवर नर तिरमाहिं॥ दूजे सुरग उपरले देव। थावर है न कह्यो जिनदेव॥१६॥ सहस्रारतें ऊंचे खिरा मरकर होवै निश्चय नरा॥ भोगभूमिके तिर्यंच नरा दूजे देवलोकतैं परा॥ १७ ॥ जाय नहीं यह निश्चय कही। देवन भोगभूमि नहिं गही॥ कर्मभूमियां नर अरु ढोर। इन बिन भोगभूमि की ठौर॥ १८ ॥ जाइ न तातैं आगति दोइ॥ गति इनकी देवनकी होइ॥ कर्मभूमियां तिर्यग श्रावकव्रत धर बारम शुद्ध॥ १९॥ सह-

स्रार ऊपर तिर्यंच। जाय नहीं तज है परपंच ॥
अव्रत सम्यकदृष्टी नरा ॥ बारमतैं ऊपर नहिं
धरा॥ २०॥ अन्यमती पंचागनि साध। भवन.
त्रिकतैं जाइ न वाद। परिव्राजक तिरदंडी देह।
पंचम परै न उपजैं जेह ॥ १ ॥ परमहंस नामैं
परमती। सहस्रार ऊपर नहिं गती ॥ मोक्ष न
पावै परमति माहिं। जैन बिना नहिं कर्म नसाहिं
॥ २२ ॥ श्रावक आर्य अणुव्रत धार। बहुरि
श्राविकागण अविकार ॥ सोलह स्वर्ग परैं नहिं
जाय। ऐसो भेद कह्यो जिनराज ॥२३॥ द्रव्य
लिंगधारी जे जती। नवग्रीवक ऊपर नहिं गती
नवहिं अनुत्तर पंचोत्तरा॥ महामुनि बिन और
न धरा ॥२४॥ केई बार जीव सुर भया। पण
केइकपद नाहीं गहा॥ इंद्र भयो न शचीहू भयो।
लोकपाल कबहू नहिं थयो ॥२५॥ लोकांतिक
हूवो न कदापि। नहीं अनुत्तर पहुंच्यो आप॥
ए पद धर बहु भव नहिं धरै॥ अल्पकालमैं मु-
क्तिहि वरै ॥२६॥ हैं विमान सरवारथ सिद्ध।

सबतैं ऊंचो अतुल सुरिद्ध ॥ ताके सिर पर है शिवलोक । परैं अनंतानंत अलोक ॥ २७ ॥ गत्यागत्य देवगति भनी । अब सुन भ्रात मनुषगति तनी। चौवीसों दंडकके माहिं। मनुष जांहिं यामैं शक नाहिं ॥ १८ ॥ मोक्षहु पावैं मनुष मुनीश। सकल धराको जो अवनीश ॥ मुनि विन मोक्ष नहीं कोउ बरै । मनुष बिना नहिं मुनि ह्वै तरै ॥२६॥ सम्यकदृष्टी जे मुनिराय। भवजल उतरै शिवपुर जाय। तहां जाय अविनाशी होय ॥ फिर पीछैं आवै नहिं कोय ॥ ॥३०॥ रहे शाश्वते शिवपुरमाहिं । आतमराम भयो सक नाहिं॥ गति पचीस कही नरतनी । आगति फुनि बाइसहि भनी ॥३१॥ तेजकाय अरु वाय जुकाय। इनविन और सबै नर थाय॥ गति पचीस आगति बाईस। मनुषतनी जो भाखी ईश ॥३२॥ ताहि सुरासुर आतमरूप। ध्यावै चिदानंद चिद्रूप॥ तौ उतरो भवसागर जिया। और न शिवपुर मारग लिया॥३३॥

यह सामान्य मनुषकी कही । अब सुन पदवी-
धरकी सही ॥ तीर्थंकरकी दो आगती । स्वर्ग नर
कों आवै सती ॥३४॥ फेरि न गति धारै जग-
दीस । जाय विराजैं जगके शीस ॥ चक्री अर्ध-
चक्रि अरु हली । सुरग लोकतैं आवैं बली ॥
॥३५॥ इनकी आगति एकहि जान । गतिकी
रीति कहूं जु बखानि ॥ चक्रीकी गति तीन जु
होय । सुरग नरक अरु शिवपुर जोय ॥३६॥
तप धारै तौ शिवपुर जांय । मरै राजमैं नरकहि
ठांय ॥ आखरिमैं है पद निर्वान । पदवी धारक
बडे प्रधान ॥३७॥ बलभद्रनकी दोयहि गती ।
सुरग जांहि कै है शिवपती ॥ तप धारैं ये नि-
श्चय भया । मुक्तिपात्र ये श्रुतिमैं कह्या ॥३८॥
अर्द्धचक्रिको एकहि भेद । नारक होय लहै अति
खेद राजमाहिं ये निश्चय मरैं । तदभवमुक्ति
पंथ नहिं धरैं ॥ ३९ ॥ आखिर पावै जिनवर
लोक । पुरुष शलाका शिवके थोक ॥ ये पद
कबहुं न पाये जीव ॥ ये पदपाय होय शिवपीव

॥४०॥ औरहु पद कइयक नहिं गहे। कुलकर नारदपदहु न लहे॥ रुद्र भये न मदन ना भये। जिनवर मात पिता नहिं थये॥ ४१ ॥ ये पद पाय जीव नहिं रुलै। थोडेहि दिनमें जिन सम तुलै ॥ इनकी आगति श्रुतमें जानि। गतिको भेद कहूं जो बखानि ॥४२॥ कुलकर देवलोक ही गहै। मदन सुरग शिवपुरको लहै॥ नारद रुद्र अधोगति जाय। सहै कलेश महा दुखदाय ॥ ४२ ॥ जन्मांतर पावैं निरवान। बडे पुरुष जे सूत्र प्रमान॥ तीर्थंकरके पिता प्रसिद्ध। स्वर्ग जांय कै हो हैं सिद्ध॥ ४४ ॥ माता स्वर्ग लोक ही जाय। आखिर शिवपुर लोक लहाय॥ ये सब रीति मनुषकी कही। अब सुन तिर्यंचन गति सही॥ ४५ ॥ पंचेंद्री पशुमरण कराय। चौवीसों दंडकमें जाय॥ चौवीसों दंडकतें मरै। पशू होय तौ नाहि न करै॥४६॥ गति आगती कही चौवीस। पंचेंद्री पशुकी जिन ईश। तौ परमेश्वरको पथ गह्यो॥ चौविस दंडक नाहीं

लहौ ॥४७॥ विकलत्रयकी दश ही गती। दस आगती कहीं जगपती॥ पांचों थावर विकल जु तीन। नर तिर्यंच पंचेंद्री लीन ॥ ४८ ॥ इनहीं दशमें उपजें जाय। पृथिवी पानी तरवरकाय॥ इनहीतें विकलत्रय आय। इन ही दसमें जन्म कराय ॥ ४९ ॥ नारक विन सब दंडक जोय पृथ्वी पानी तरुवर सोय। तेज वायु मरि नवमें जाय। मनुष होय नहिं सूत्र कहाय ॥५०॥ थावर पच विकलत्रय ठौर। ये नवगति भाखी मदमोर दसतैं आवै तेज अरु वाय। होय सही गावै जि-नराय ॥५१॥ ये चौईस दंडके कहे। इनकूं त्याग परमपद लहे ॥ इनमें रुलै सु जगको जीव। इनतें रहित सु त्रिभुवनपीव ॥५२॥ जीवईसमें और न भेद। ए करमी वे कर्म उछेद॥ कर्म बंध जोलों जगजीव। नाशे कर्म होय शिव-पीव॥ दोहा—मिथ्या अव्रत योग अर, मद परमाद क-षाय। इंद्रियविषय जु त्याग ये, भ्रमन दूरि है जाय ॥ जिन विनगति भवतें धरी, भयी नहीं

सुरझार । जिनमारग उर धारिये, हो हैं भव-दधि पार ॥ ५५ ॥ जिन भज सब परपंच तज बडी बात है येह । पंच महाव्रत धारिकै, भवजलकों जल देह ॥ ५६ ॥ अंतर करण जु सुद्ध है, जिनधर्मी अभिराम । भाषा कारण कर सकूं भाषी दौलतराम ॥ ५७ ॥ इति ॥

। श्रीचौबीस तीर्थंकरोंके चिन्ह ।

वृषभनाथका 'वृषभ' जु जान । अजितनाथके 'हाथी' मान ॥ संभवजिनके 'घोडा' कहा । अभिनंदनपद 'बंदर' लहा ॥ १ ॥ सुमतिनाथके 'चकवा' होय । पद्मप्रभके 'कमल' जु जोय ॥ जिनसुपासके 'सथिया' कहा । चंद्रप्रभपद 'चंद्र' जु लहा ॥ २ ॥ पुष्पदंतपद 'मगर' पिछान । 'कल्पवृक्ष' शीतलपद मान ॥ श्रीश्रियांसपद 'गेंडा' होय । वासुपूज्यके 'भैंसा' जोय ॥ ३ ॥ विमलनाथपद 'शूकर' मान । अनंतनाथके 'सेही' जान ॥ धर्मनाथके 'वज्र' कहाय । शांतिनाथपद 'हिरन' लहाय ॥ ४ ॥ कुंथुनाथके पद 'अज'

चीन। अरजिनके पद चिह्न जु 'मीन'॥ मल्लि नाथ पद 'कलसा' कहा। मुनिसुव्रतके 'कछुआ' लहा॥ ५॥ 'लालकमल' नमिजिनके होय। नेमिनाथ-पद 'संख' जु जोय॥ पार्श्वनाथके 'सर्प' जु कहा। वर्द्धमानपद 'सिंह' हि लहा।६।

संक्षिप्त सूतकविधि।

सूतकमें देव शास्त्र गुरुको पूजन प्रक्षालादिक करना, तथा मंदिरजीकी जाजम वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये। सूतक का समय पूर्ण हुये बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये।

१—जन्मका सूतक दश दिन तक माना जाता है।

२—यदि स्त्रीका गर्भपात (पांचवें छठे महीनेमें) हो तो जितने महीनेका गर्भपात हो उतने दिनका सूतक माना जाता है।

३—प्रसूति स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है, कहीं कहीं चालीस दिनका भी माना जाता है। प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है

४—रजस्वला स्त्री चौथे दिन पतिके भोजनादिकके लिये शुद्ध होती है परन्तु देव पूजन, पात्रदानके लिये पांचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है।

५ मृत्युका सूतक तीन पीढी तक १२ दिनका माना जाता है। चौथी पीढीमें छह दिनका, पांचवीं छठी पीढी तक चार दिनका, सातवीं पीढीमें तीन, आठवीं पीढीमें एक दिन रात, नवमी पीढी में स्नानमात्रमें शुद्धता हो जाती है।

६—जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्यको पांच दिनका होता है। तीन दिनके बालककी मृत्युका एक दिनका आठ वर्षके बालककी मृत्युका तीन दिन तकका माना जाता है। इसके आगे बारह दिनका।

७—अपने कुलके किसी गृहत्यागीका सन्यास मरण, वा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय तो एकदिनका सूतक माना जाता है।

८—यदि अपने कुलका कोई देशांतरमें मरण करै और १२ दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनोंका ही सूतक मानना चाहिये। यदि १२ दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नानमात्र सूतक जानो।

९—गौ, भैंस, घोड़ी आदि पशु अपने घरमें जनै तो एक दिनका सूतक और घरके बाहर जनै तो सूतक नहीं होता। दासी दास तथा पुत्रीके घरमें प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिनका सूतक होता है। यदि घरसे बाहर हो तो सूतक नहीं। जो कोई अपनेको अग्नि आदिकमें जलाकर वा विष, शस्त्रादिसे आत्महत्या करै तो छह महीनेतकका सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराणसे जानना।

१०—बच्चा हुये बाद भैंसका दूध १५ दिन तक, गायका दूध १० दिन तक; बकरीका ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देशभेदसे सूतक विधानमें कुछ न्यूनाधिक भी होता है परन्तु शास्त्रकी पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिये। *समाप्त*

पंचपरमेष्ठीके नाम

अरहंत सिद्ध. आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु ।

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ओंनमः सिद्धेभ्य ॥

नोट—अ सि आ उ सा नाम पंचपरमेष्ठीका है ।

ॐ में पंच परमेष्ठीके नाम व २४ तीर्थंकरोंके नाम गर्भित हैं ।

तीर्थंकरोंका निर्वाण क्षेत्र

ऋषभदेवजीने कैलाश पर्वतपरसे, वासुपूज्यजीने चम्पापुरसे, नेमिनाथजीने गिरनारसे, महावीरजीने पावापुरसे निर्वाण प्राप्त किया है और शेष २० तीर्थङ्करोंने श्री सम्मेदशिखरजीसे निर्वाण प्राप्त किया है ।

पांच महाकल्याण

१ गर्भकल्याण २ जन्मकल्याण ३ तपकल्याण ४ ज्ञानकल्याण ५ मोक्षकल्याण ।

आठ महाप्रातिहार्य

१ अशोक वृक्ष २ पुष्पवृक्ष देवांकृत ३ दिव्य- ध्वनि ४ चमर ५ छत्र ६ सिंहासन ७ भामण्डल ८ दुन्दुभि शब्द ।

चार अनन्त चतुष्टय

अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्तसुख, अनन्त वीर्य ।

चार घातिया कर्म

ज्ञानावर्ण, दर्शनावर्ण मोहनीय और अन्तराय कर्म ।

समवसरणकी ११ भूमियां

१ चैत्यभूमि २ खातिभूमि ३ लताभूमि ४ उपवनभूमि ५ ध्वजाभूमि ६ कल्पांगभूमि ७ गृहभूमि ८ सद्गुण भूमि ६-१० तथा तीन पीठिका ऐसी ११ भूमि हैं।

अठारह दोष

क्षुधा, तृषा, जन्म, जरा, मरण, रोग, भय मद, राग, द्वेष, मोह, चिन्ता, रति, निद्रा, विस्मय, विषाद खेद, स्वेद।

षोडश भावना

दर्शन विशुद्धि, विनय सम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेद, शक्तितस्त्याग, तप, साधु समाधि, वैयाव्रत्यकरण, अर्हन्त भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, आवश्यकापरिहान, मार्ग प्रभावना, प्रवचन वात्सल्य।

दश प्रकारके कल्प वृक्ष

वादित्रांग, पात्रांग, भूषणांग, पानांग, भोजनांग, पुष्पांग, ज्योतिरांग, गृहांग, वस्त्रांग और दीपांग।

बारह चक्रवर्ती

भरत महाराज, सगर, मघवा, सनतकुमार, शांतिजिन, कुंथजिन, अरहजिन, सुभूम, पद्मनाभि, हरिषेण, जयसेन, ब्रह्मदत्त।

चक्रवर्ती राजोंके सात अंग

१ स्वामी २ मन्त्री ३ जनसमूह प्रजा ४ कोट ५ खजाना ६ मित्रगण ७ सेना।

चक्रवर्तीके चौदह रत्न

१ सेनापति २ गृहपति ३ शिल्पकार ४ पुरोहित ५ स्त्री ६ हस्ती ७ अश्व ये सजीव रत्न हैं।

चक्रवर्तीकी नवनिधि

कालनिधि, महाकालनिधि, माणवनिधि, पिंगल-निधि, नैसर्प्पनिधि, पद्मनिधि, पांडुक निधि, शंख निधि, नाना रत्ननिधि।

चक्रवर्तीके दस भोग

रत्न निधि, सुन्दर स्त्रियां, नगर, आसन, शय्या ६ सैन्य, भाजन, पात्र, नाट्यशालाएं, वाहन।

नव नारायण

त्रिपृष्टि, द्विपृष्टि, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुण्डरीक, दत्त, लक्ष्मण, कृष्ण।

नव प्रतिनारायण

अश्वग्रीव, तारक, मेरुक, निशम्भु, मधु (मधु-कैटभ) बली, प्रहलारण, रावण, जरासिंध।

नव बलभद्र

विजय २ अचल ३ भद्र ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन ६ आनन्द ७ नन्दननन्द, ८ पद्म रामचन्द्र ९ बलभद्र।

नव नारद

भीम २ महाभीम ३ रुद्र ४ महारुद्र ५ काल ६ महाकाल ७ दुर्मुख ८ नरकमुख ९ अधोमुख।

ग्यारह रुद्र

भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५ सुप्रतिष्ठ ६ अचल ७ पुण्डरीक ८ अजितधर ९ जितनाभि १० पीठ सात्यकी।

चौदह कुलकर

प्रतिश्रुति २ सन्मति ३ क्षमङ्कर ४ ४ क्षेमंकर ५ सोमकर ६ सीमंधर ७ विमल वाहन ८ चक्षष्मात ९ यशास्वी १० अभिचन्द्र ११ चन्द्राभ १२ मरुदेव १३ प्रसेनजित १४ नाभिराजा।

बारह प्रसिद्ध पुरुष

नाभि श्रेयांस ३ बाहुबली ४ भरत ५ रामचन्द्र ६ हनुमान ७ सीता ८ रावण ९ कृष्ण १० महादेव ११ भीम १२ पार्श्वनाथ।

चौदह गुणस्थान

मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत, सम्यक्त्व देशविरत, प्रमत्त विरति, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण, सूक्ष्मसांपराय, उपशांत कषाय वा उपशांत मोह,

क्षीणकषाय वा क्षीणमोह, सयोगकेवली, अयोग-केवली ।

ग्यारह प्रतिमा

दर्शन प्रतिमा, व्रतप्रतिमा, सामायिकप्रतिमा, प्रोषधोपवासप्रतिमा, सचित्त त्याग प्रतिमा, रात्रि भुक्तित्याग प्रतिमा, ब्रह्मचर्यप्रतिमा, आरम्भत्याग-प्रतिमा, परिग्रहत्यागप्रतिमा, अनुमतित्यागप्रतिमा उद्दिष्टत्याग प्रतिमा ।

श्रावकके १७ नियम

भोजन, अचितवस्तु, गृह, संग्राम, दिशा गमन, औषधिविलेपन, तांबूल, पुष्पसुगंग, नाच, गीत-श्रवण, स्नान, ब्रह्मचर्य, आभूषण, वस्त्र शैय्या, औषध खानो, घोड़ा बैल आदिकी सवारो ।

सप्त व्यसन

दोहा-जुआ खेलना मांसमद,बेश्या विसन शिकार ।
चोरी पररमनीरमन, सातों व्यसन विसार ॥

अष्ट मूलगण

पांच उदम्बर-गूलर कटूम्बर बड़फल, पीपल फल, (पिलखन फल) तीन मकार मद्य, मांस, मधु । इनका त्याग ही मूलगुण हैं ।

दशलक्षण धर्म

उत्तम क्षमा, आर्दव, मार्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन और ब्रह्मचर्य

तीन प्रकारका लोक

उर्ध्वलोक, मध्यलोक, पाताललोक।

पांच प्रकारके ब्रह्मचारी

उपनयन, अदीक्षित, अवलम्ब, गूढ़, नैष्ठिक।

छह आर्यकर्म

इज्या, वार्ता, दत्ति, संयम, स्वाध्याय, तप।

दशों पूजा

अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनबिम्ब, शास्त्र जिनवाणी, सम्यकदर्शन, दशलक्षण धर्म।

चार प्रकारके ऋषि

राजर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, परमर्षि।

नव प्रकारका प्रायश्चित्त

आलोचना, प्रतिक्रमण, उभय, विवेक, व्युत्सर्ग, तपश्छेद, परिहार, उपस्थापन, ऐसे प्रायश्चित्तके नौ भेद हैं।

बारह प्रकारका तप

अनशन, अवमोदर्य, व्रत परिसंख्यान, रसपरित्याग, बिवक्त शय्यासन, कायक्लेश, ऐसे बाह्य तप हैं और प्रायश्चित विनय वैयावृत्य, स्वध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान ऐसे, आभ्यन्तर तप, सब मिला कर बारह प्रकार है

॥ श्रीः ॥

जैन झण्डा गायन

ये जैन धरमका प्यारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा*॥ स्वस्तिक चिह्न विभूषित पावन, अर्धचन्द्र शिव थल प्रकटावन। पुष्प त्रयान्वित है मन भावन। यह उज्जवल यश धारा, झण्डा हो ऊंचा हमारा। शांति सुधाका नीरव निर्झर, विश्व प्रेमका सुन्दर-सा सर। शुभ सन्देशक नव साहसवर। है संसृति का प्यारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ ऋषभ देवसे आदि विधायक, मूल मन्त्र ओंकार सहायक। बना जर्मनीका यह नायक, गौरव नभ ध्रुवतारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ स्याद्वाद संदेश सुनाया, परम अहिंसा धर्म बताया। वीरप्रभूने यह फहराया, अपने केवल द्वारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ प्रिय भ्राताका शीश कटा कर, बौद्धिक वातावरण हटाकर। दिग्विजयी अकलंक दिवाकर

---

*यह पंजाब तर्ज पर है जैसेः—मेरा रंगदे बसन्ती चोला।

ने इसको परसारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ दिव्य समन्त भद्र गुण मंडित, खण्ड खंड शंकर कर खण्डित, किया इसे जगमें अभिमंडित ॥ अपने कौशल द्वारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ चन्द्रगुप्त सम्राट वीरने, दिव्य साहसी सुभट धीरने। इस झंडेकी एक पीरने, मान शत्रुका मारा झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो तुम भी तो बल शाली, रखना इसकी गौरव लाली। हो दुनियांमें शान निराली, यह प्राणोंसे प्यारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा* इसको निज करमें ले सत्वर, कार्य क्षेत्रमें बढ़ो अग्रसर। उन्नत रखना प्राण गवांकर आत्मज्योति उजियारा। झंडा हो ऊंचा हमारा॥ बतलाता क्या फहर व्योमपर, सीखो तुम जीना भी मरकर। अमर रहा कोइ न धरा पर, है यह विजय सितारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो इसके नीचे आना, विश्व शिखर पर यह फहराना। तुम कुमरेश इसे अपनाना, बहा प्रेमकी धारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

---

*इस पद्यसे आगे वे पद्य जोड़कर पढ़ने चाहिये. जिस समय उत्सव हो जिस त्योहारका।

होलीकोत्सवके समय—

होली होगी वीरो आओ, फूट द्वेषको खूब जलाओ, आपसमें आकर मिल जाओ, जिससे हो सुखसारा। झंडा हो ऊंचा हमारा॥ छल-कपटोंकी होली है बस, मिथ्या मायाकी होली बस। दुरव्यसनों की होली है बस, इनसे हो छुटकारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ कीचड़ धूल नहीं उड़ पावे, गन्दी रस्मोंकी जड़ जावे। होलीकी होली होजावे, कोई न दुखियारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ वीरो! होली होवे ऐसी, हो पापों की ऐसी तैसी। दुनियां हो फिर पहले जैसी, हो दुखका परिहारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥

दिवालीके समय—

वीरो, सभ्य दिवाली आकर, बतलाती है क्या इंगित कर। हुआ वीर निर्वाण इसीपर, है वो ही दिन सारा। झंडा हो ऊंचा हमारा॥ देवोंने आनन्द मनाया, रत्नोंका उद्योत रचाया। तबसे ही हमने अपनाया, ये सुख का करतारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ यही दिवाली पर्व हमारा, इसे

मनाओ कर परचारा। बह जावे आनन्द की धारा हो जगमें उजियारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ नहीं खेलना जुआ भूलकर, यह सब पापों का ही है घर। दूर प्रथा इसको कर सत्वर, करो धर्म परचारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥

वीर जयन्ती के समय—

वीरो वीरजयन्ती सुखकर, आई है आनंद नव लेकर। साहस देनेको हां सत्वर। यह आनंदकी धारा। झंडा हो ऊंचा हमारा॥ वीरो यह कर्त्तव्य बताने, भूला पथ तुमको दर्शाने। निज आदर्श तुम्हें समझाने॥ आई है सुखकारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ जीवन आज हुआ कंटकमय, पद-पदपर मिलता तुमको भय। तोभी तुम हो सुखमें भी लय, है तुमको धिक्कारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ वीरो तुम अब भी जग जाओ, प्राणोंका मत मोह बढ़ाओ। निज रक्षा हित बलि चढ़ जाओ, मिले उन्नति द्वारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ वीर जयन्ती यही बता कर, समझाती है तुम्हें निरन्तर। वीरो सत्वर आगे बढ़ कर, काटो बंधन कारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥

रक्षा-बन्धन के समय—

रक्षा बन्धन आओ सुखमय, हम तुम में हो जाये बस लय। दूर हमारे अब सब हों भय॥ हो जीवन सुख सारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ वीरो यह रक्षाका है दिन, व्यथित हुये जब सात शतक मुनि। विष्णु कुमार यही केवल मुन, बलि का गर्व निवारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ हमको भी आगे बढ़ना है, रक्षा अपनी अब करना है। नहीं व्यथित हो कर मरना है॥ दुखसे हो निस्तारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥

पर्यूषण पर्वके अवसर पर—

वीरो, पर्यूषण सुख सागर, धर्म ध्यान साधन उजियागर। इस अवसर को सानन्द पाकर, भरो पुण्य भण्डारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ क्रोध मान माया मत करना, सत्य शौच संयम से रहना। यथा शक्ति तप त्यागन करना, आंकिचन ब्रह्मचारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥ इस पुण्य विधि से है पाया, पुण्य करम करलो मन भाया। पापोंकी छोड़ो भी काया, होगा शिव सुख सारा। झण्डा हो ऊंचा हमारा॥

अक्षय तृतियाके समय ।

अक्षय तृतिया पर्व सलोना, ऋषम प्रभु आहार बनोना। नृप श्रेयांस नव विधवत दीना ॥ सीखो तुम आचारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ पर्वत से भी यह प्रचिलित है, होना नहीं कभी विचिलित है । पुण्य करो इससे संचित है ॥ यह सुखका दातारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो इस विस्मृत अतीत पर, गर्व हमें अबतक है सादर । इसकी परम्परा प्रचिलित कर ॥ कर दो फिर उजियारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

नवीन भजन ।

(१)

तर्ज—नंदके लाला मुरलीवाले तुमको लाखों प्रणाम ।

सब जगसे वीर निराले तुमको लाखों प्रणाम । तुमको लाखों प्रणाम ॥ त्रिसला की आंखोंके तारे, कुण्डलपुरके हो उजियारे। जग जीवनके हो हित-कारे ॥ तुम हो मुक्तीवाले तुमको लाखों प्रणाम ।

तुमको लाखो प्रणाम ॥ सबको प्रेमामृत पिलवाया, शिवमारग तुमने दिखलाया । जगको हित अपना बनलाया ॥ तुम हो भोले भाले तुमको लाखों प्रणाम । तुमको लाखों प्रणाम ॥ स्वान भेक सब ही तो तारे, जो फिरते थे मारे मारे । कर कुमरेशकी नाव किनारे ॥ तुम हो तारन वाले, तुमको लाखों प्रणाम तुमको लाखों प्रणाम ॥

(२)

तर्ज - वीर भगवान मुझे दर्श दिखादे आजा ।

घोर सागरमें पड़ा आज तिरादे आजा ॥ सुनते आये हैं तुझे तू है निराला स्वामी । अपनी शक्ति के करिश्मे तो दिखादे आजा ॥ नाव मझधार पड़ी कौन किनारे लावे । टूटी किस्तीको मेरी पार लगादे आजा ॥ गमकी छाई है घटा हाय गजब मुझ पर ये । रंजो गम मेरा प्रभू शीघ्र मिटादे आजा ॥ तेरे बिन और न कोई है सहारा स्वामिन । तूही कुमरेशको धीर बंधादे आजा ॥

(३)

तर्ज—मरोता कहां भूल आये प्यारे ननदोइया

प्रभुको काहे भूल रह्यो मोरे ज्ञानी भैय्या ॥ टेक ॥

पहले तू निज आतम भूल्यो। भूल्यो पथ दैय्या।
ता पीछे तू भूल गयो सब ज्ञान ध्यान व्रत वैय्या॥
पहले तू निज हित ही भूलो भूलो स्वहित करैय्या।
ता पीछे तू भूल गयो सब दर्शनादि शिवपैय्या॥
पहले तू निज संयम भूलो भूलो शमदम धैय्या।
कैसे हो कुमरेश तुम्हारी आज किनारे नैय्या?

(४)

तर्ज—अगर किस्मतसे लैलाके गलेका हार हो जाना।

मुझे प्रभुका मनोहारी अगर दीदार हो जाता॥
जमाने भरके दुखोंसे सहज ही पार हो जाता।
न होता मोह मायाका वहां पर बोल बाला यूं॥
छुड़ा कर बनसे पहुंचा तू जहांसे पार हो जाता॥
करम शठ कर रहे होते खड़े किस्मत को वे रोते।
निरंजन निर विकारी तू सुखोंका सार हो जाता॥
कपट हट आदिको छिनमें फ़ला उनको मिटा देना।
सदानंद बीतरागी तो स्वयं भव पार हो जाता॥
प्रभुका ध्यान तू धरना न तेरा कुछ बिगड़ जाता।
अरे कुमरेश मुक्तीका तुझे दीदार हो जाता॥

(५)

तर्ज—या इलाही मिट न जाये दर्द दिल।

हे प्रभो यह मिट न जाये आत्मबल। मिटने वाले

को उठाये आत्मबल ॥ रात दिन रहते पड़े हम हाय सब, मोहमें अपना छुपाये आत्मबल ॥ आत्मबल भी क्या कहीं मिलना अरे। मांगले जो मुफ्तमें हम आत्मबल ॥ आत्मबल ही इस जगतमें सार है। मुक्तिदायक है यही निज आत्मबल ॥ सोचले कुमरेश दिलमें तू यही। आत्मबल ही है जगतमें आत्मबल। हे प्रभो यह मिट न जाये आत्मबल ॥

(६)

तर्ज—प्रेम बिन कोई नहीं अपना।

धर्म बिन कोई नहीं अपना ॥ टेक ॥ विकल प्राण जब निकल जायेंगे, सब सम्पद सपना ॥
झूंठा तन धन झूंठा यौवन झूंठी जगकी रचना। झूंठा २ अब क्यों न तजें झूंठ नहीं अपना ॥ धर्म-ध्यान धर धर्म गान कर धर्म सदा करना। धर्म तुम्हारी आत्म वस्तु है धर्म ही चित रखना ॥ धर्म मोक्षका द्वार, जगतमें कोई नहीं अपना ॥

(७)

यह जग झूंठा सारा रे मन नाहक क्यों ललचाया

तन धन यौवन पर गुमान क्या यह चपलाकी छाया ॥ सब मुच क्षणमें बिनसि जायगी तेरी कंचन काया । रे मन नाहक क्यों ललचाया ॥ मात पिता परिवार पुत्र सब नारी अरु समुदाया । देखनके नीके हैं लागत वक्त पै काम न आया ॥ रे मन नाहक क्यों ललचाया । धर्म अमर है अमर रहेगा याकी सांची छाया ॥ विफल गवांवत क्यों मानुष भव कठिन कठिन नं पाया । रे मन नाहक क्यों ललचाया ॥ वीर प्रभु का ध्यान निरन्तर करले मन हर्षाया । समय निकल कुमरेश जायगा औसर तज पछताया ॥ रे मन नाहक क्यों ललचाया ॥

(८)

तर्ज छोटोसो बलमा मोरे आंगनामें गिल्ला खेले ।

देखो अज्ञानी जिया जगतमें भ्रमता डोले ॥ टेक ॥
कबहुं नरक गयो वां अरे सुख दुखको तोले ।
सह करके दुखड़ोंकी मार ये तो रोता डोले ॥ १ ॥
कबहुं तिर्यंच भयो वां अरे मद माता डोले ।
देखके दुखड़ोंका गार ये तो रोता डोले ॥ २ ॥
कबहुं मनुष भयो वां अरे भोगोंमें भूले ।

समझके विषयनको सार ये तो हंसता डोले ॥३॥
कबहुं असुर भयो वां अरे ममता को रोले।
देखके औरन को कार ये तो झुरता डोले ॥ ४ ॥
अबहुं कुमरेश जगो अपने को क्योंकर भूले।
जगत दुखों का है गार यां तो रोता डोले ॥ ५ ॥

(९)

(तर्ज—चिड़िया मोरी खोय गई का जाने राम)

उमर सारी खोय गई नहीं कीना ध्यान ॥ टेक ॥
बाली उमर मोरी खेलनमें खोय गई। सोवनमें निकल गई नहीं कीना ध्यान ॥ १ ॥ तरुण उमर मोरी विषयन में खोय गई। भोगन में निकल गई नहिं कीना ध्यान ॥ २ ॥ वृद्ध उमर मोरी सोचनमें खोय गई। रोगनमें निकल गई नहिं कीना ध्यान। सारी उमर कुमरेश यों खोय गई। गफलत में निकल गई नहिं कीना ध्यान ॥ ४ ॥

(१०)

(तर्ज—धर्मको जाना नहीं फिर जन्म लेकर क्या किया)

वीर प्रभुकी भक्ति बिन सूना रहा जिसका हिया ॥
धरमका संसारमें आदर्श पहिचाना नहीं। वह अगर सुखसे जिया आखिर जिया तो क्या जिया

धरमका जिसने न रक्खा ध्यान किंचित भी कभी,
वह हुआ बाबा अरे तो कौनसा सुकृत किया ॥३॥
धर्म ही संसार में कुमरेश बस हितकार है।

(११)

रे जिया विसरत क्यों पद अपना ॥ टेक ॥
यह पर पद सम्पद नहिं तेरा यह है रैन सपना।
क्षणभरके भीतरही भीतर विनस जायेगा सपना।
मात-पिता भगनी सुतदारा इनको माने अपना।
अन्त समय कोई साथ चलेना जाय तड़फना अपना,
जा तन तू मलमल कर धोवत येही संग चले ना।
फिर किनपर कुमरेश आश है कौन सगाहै अपना।

(१२)

(तर्ज- यह वह नागिन है जो कि आपसे मारी न गई)

वीर प्रभु तेरी छवि दिल से भुलाई न गई॥
तेरी दौलत भी अरे मुझसे संभाली न गई।
तेरी महिमाको करूं कैसे वयां मेरे प्रभू।
तेरी हस्ती भी अभी मुझसे संभाली न गई।
जिसने भी देखा तुझे वन गया तेरा शैदा।
तेरी वाणी भी कभी नीरसी खाली न गई॥

तेरी फुरकतमें तड़फता है मिरा दिल नादां।
तेरी कुमरेश छवि दिलसे हटाई न गई॥

(१३)

ठुमरी—हे प्रभु मैं हूं दास तिहारो—
तुम करुणा निधि दीन दयालो
मैं हूं अधम उद्धारो।
भवसागरमें डूब रह्यो हूं
मेरी ओर निहारो॥
जर्जर जीवन तरणी डगमग
दूर अभी है किनारो।
विषय वायु अति प्रबल चलत है
चहुं दिश मद अंधियारो॥ २॥
इष्ट-अनिष्ट नहीं कुछ सूझत
है नहिं ज्ञान उजारो।
पद कुमरेश तुम्हारे ध्यावत
मोहि वेग अब तारो॥

(१४)

हे वीर जगके रक्षक तू मुझ पे दया करना।
आनेको जो सरपे हो तू दूर बला करना।
मुझ भूले हुये पथको पथ आके बता देना।

मैं तुझमें समा जाऊं तू मुझमें रमा करना।

मैं विश्वकी ममतामें मायामें उलझता हूं।

तू उनसे बचा करके भव पार मुझे करना।

संभव है मनोमें पड़ मैं तुझको भुला बैठूं

पर नाथ कहीं तू भी विस्मृत न मुझे करना।

निर्विघ्न हो गया अब मैं तेरे आसरेपर

कुमरेशको दुनियांसे अब पार प्रभो करना।

(१५)

चेतन क्यों नहीं आज चेतनवा

चेतन क्यों नहीं आज ॥ टेक ॥

सोवत सोवत बीत गये जुग क्यों न करे निज काज।

तू विषयन बिच नाच रह्यो है भोगत आवें न लाज।

चेतनवा चेतन क्यों नहीं आज ॥ १ ॥

समदमसंयम जपतप त्यागत त्यागत है निज साज।

तू नागिन ममताके फंदे फंसि भूल रह्यो निज राज ॥

चेतनवा चेतन क्यों नहिं आज ॥ २ ॥

यह निज निधि सम्यक विध धरले फिर थिरकर निज काज

तू कुमरेश जगत सर तरजा समय अभी है आज ॥

चेतनवा चेतन क्यों नहिं आज।

(१६)

तर्ज—तन प्रेमकी राख लगा करके नित प्रेमकी
धूनि रमायेंगे।

मन धर्ममें नित्य लगा करके सुख प्रेमकी धूनि
रमायेंगे।

फिर वीरके नामकी माला ले शुभ सत्यके अलख
जगायेंगे।

धर्म ही साजन धर्म ही पूजन धर्मसे ही है सफल
यह जीवन

धर्मसे होकर लैस जगतमें धर्मकी वंशी बजायेंगे।

धर्म पुजारी धर्म मन्दिरमें धर्मके पुष्प चढ़ायेंगे।

धर्म एक कुमरेश प्रेमसे धर्म ही धर्म मनायेंगे।

(१७)

तर्ज—कोई प्रेमके गीत सिखा दे हमें—

कोई धरमके गीत सिखा दे हमें—

कोई धर्मकी रीति बता दे हमें-

खिल जावे धर्मकी दिलमें कली ॥ टेक ॥

कोई पापी धर्म कहां जाने

कहीं झूठा भी सत्यको पहिचाने

जग धर्म महत्वको क्या जाने

खिल जावे धर्मकी दिलमें कली ॥ १ ॥
यह सब दुनियांके धन्धे हैं
नर धर्म बिना सब अन्धे हैं
सब वीर प्रभूके वन्दे हैं
मिल जावे धर्मसे ज्योति भली ॥ २ ॥
तुम धर्म करो दिन रैन चलो
जग जाल कराल अभीसे दलो
सिवा वीरके औरका नाम न लो
कुमरेश मिलेगी मुक्ति थली ।

(१८)

तर्ज--[हमतो मक्केको जायेंगे झूम २ कर]

हम तो दर्शनको जायेंगे झूम झूमकर ।
पुण्य बाधेंगे नाचेंगे घूप घूमकर ॥ १ ॥
देखो कैसी मनोहर है प्रतिमा प्रभु
गुण गायेंगे आयेंगे घूम घूम कर ॥ २ ॥
वीतरागी झलक कैसी आभा अहा
हम तो देखेंगे हर्षित हो झूम झूमकर ॥३॥
काट कुमरेश अपने करम दर्श कर
हमतो चरणोंको आयेंगे चूम चूमकर ॥ ४ ॥

राग—उत्तम क्षमा पे अचंभो मोहि भारी जी,

किस विधि किये क्रोध रिपु दूर।

एक तो प्रभु तुम परम विरागी

पास न लेष वसन तन पूर।

दूजे भवसागरसे तारक

तीजे सुखदायक भर पूर ॥ १ ॥

चौथे तुम सन्तोषी स्वामी

अचल अकम्पन जगमें शूर।

कोमल वचन सुधा सम सुखकर

हिय उपदेशी नायक भूर ॥ २ ॥

पांचवें जीव दयाके सागर

ज्ञायक जगत द्रव्यनके नूर।

छठवें सिद्ध स्वरूपी ध्यानी

निरलाभी कृतराग विदूर ॥ ३ ॥

सातवें मोह न पास निहारे

कर्मन की कीनी तुम धूर।

निज पदको निशदिन चिन्तनकर

तप संयममें होकर शूर ॥ ४ ॥

आठम अष्टम भूमि बसे हो

निज गुनमें निज सुर परिपूर।

सिर कुमरेश नवावत तुम पद
दूर करो मेरे दुखको क्रूर ॥ ५ ॥

(२०)

[तर्ज--मुझे शम्भु दर्शन दिखाना पड़ेगा]

मुझे स्वामी दर्शन दिखाना पड़ेगा ॥ टेक ॥
पड़ा घोर सागर तिराना पड़ेगा ॥

ये संसार सागर महादुःखका घर ।
मुझे पार इसके लगाना पड़ेगा ॥

मैं सुनता हूं तुमको परम वीतरागी ।
मुझे वीतरागी बनाना पड़ेगा ॥

मेरी किस्तिये गम भँवरमें पड़ी है ।
किनारे से अब तो लगाना पड़ेगा ॥

ये तूफान करमोंका आकर सताता ।
करम जाल मुझसे हटाना पड़ेगा ॥

यही आरजू एक कुमरेश की है ।
मेरा पार बेड़ा लगाना पड़ेगा ॥

(२१)

ऐसो नर क्यों न दुखी हो जावे—
जाको मार्दव भाव न भावे ॥ टेक ॥

मत विषरूप फलत है ऐसे सब सम्पद् विनसावे।
आत्म गुननको चिन्तन तजके बुद्धिस्वयंनसजावे॥१॥
पर द्रव्यन पर गर्व करत है मेरो है नित गावे।
सुन्दर तन धन पाय अयाने और न खूब चिढ़ावे॥
रावण लंकपतीक कथासे क्यों नहिं शिक्षा पावे।
भूल रह्यो अपने मदमें तू एक दिना पछतावे॥३॥
निज जड़को तू काट रह्यो है फेर कहां टिक पावे।
तू स्वयमेव गिरोगे ऐसे खोज नहीं फिर पावे॥४॥
ताते जग कुमरेश सयाने आपही विष मत खावे।
जान बूझकर अंध बने मत समय वृथा न गंवावे।५।

तर्ज [तेरे इश्कका जिसको आजार होगा]

प्रभु वीरका जिसको दीदार होगा।
जमानेसे वोही अरे पार होगा॥
न यों किस्तिये गम भंवरमें भी पड़ेगी।
न दुनियांमें भी वह कभी ख्वार होगा॥
न जीवन मरणके कभी दुख सहेगा।
अरे एकदम उसका उद्धार होगा॥
यही खासियत है प्रभु वीरमें बस।
कि दर्शनसे भक्तोंका उपकार होगा॥
सदा वीर दर्श कुमरेश कर ले।
कि दुनियांके दुखोंसे तू पार होगा॥

(२२)

[कांटो लागोरे देवरिया मोपै गैल चलो ना जाय]

आर्जवधर्म अमित हितकारी गुरुने यहीबनाया है।टेक।
करमतत् छल कपट कभी भीयह स्वभावनहीं तेरा है।
निज स्वभाव तज होत बावरो क्यों भरमाया है ॥
अपना तनधन अपना जोबन मान रहा यह मेरा है।
परजानत क्या नाहिंअयाने विनसि जायगी काया है।
किनके हित करना फिरता है तू निशिदिन फेरा है।
कौन सगा अपना है मूरख क्यों भरमाया है।
बूंद पड़त आकाश चाह तो उड़ना भ्रम यह तेरा है।
रतन छोड़कर कांच खण्डपर क्यों ललचाया है।
समझसोचकुमरेश समय अब बहुत रह गयाथोड़ा है
आर्जव भाव सहज अपनाले क्यों भरमाया है ॥

(२३)

[तर्ज—क्या जादू भर लाई रे मेरा बारा दिवरिया]

तू तो बड़ा अज्ञानी रे छोड़ी शिवकी डगरिया।
बन गया अब अभिमानी रे पड़ भवकी भंवरिया ॥
शैर—छोड़ अभिमानको मूरख नहीं दुख उठायेगा।
पिटेगा मार खायेगा मरेगा नर्क जायेगा ॥
रोवेगा वहां अज्ञानी रे लख दुखकी नगरिया ॥१॥

शैर-अरे कर प्यार समतासे विषयकेफंदमें मनपड़।
बुरा इनका नतीजा है यहां पर जायगा तू सड़ ॥
पाये न फिर अज्ञानीरे शिव सुखकी डगरिया ॥२॥
शैर-अगरतू चाहता हितहै तो अब जिनराजको भजले
सुपथपर आजसे चल दे अरे शुभ काम कुछ करले।
कुमरेश सुन जिनवाणीरे पाले मुक्ति महरिया ॥

(२४)

मत मलमल धोवे काया नहीं शुचि बावरे ॥ टेक ॥
मल मूत्रादिक भरी थैलियां देखत ही घिन आव।
क्यों इसपर तू रीझ रह्यो है पीछे हो पछताव ॥
कर मल मल रोवे काया नहीं शुचि बावरे ॥ १ ॥
नित प्रित गंगा जमुना न्हावे और सभो दरियाव।
यह पवित्र होनेकी नाहीं इसका अशुचि स्वभाव।
मत जनम डुबावे काया नहीं सुध जावरे ॥ २ ॥
यह माटीकी बनी हुई है माटीकी परियाव।
माटी ऊपर माटी नीचे माटी का पहिनाव॥
यह माटी होवे काया नहीं रह जायरे ॥ ३ ॥
रत्नत्रय निधि अन्तर धरले समय यही है आव।
समता जल पीले कुछ पीले लोभ क्रोध विनसाव ॥
नहीं येही होवे काया जगत भरमाव रे ॥ ४ ॥

तू शुचि शारद गंग नहाले ज्ञान पयोनिधि जाव।
धर्म शौच कुमरेश समझले तब जगसे तिरजाव
नहीं ये ही होवे काया नहीं सुख पावरे ॥ ५ ॥

(२५)

(तर्ज—तू क्या उम्रकी शाखपर सो रहा है)

तुझे जर पे इतना गुमां हो रहा है।
खबर भी है दममें कि क्या हो रहा है ॥
जो कल था शहंसाह वही आज देख।
कि जा जाके दरपे खड़ा हो रहा है ॥
थी जिनके खजांनेमें दौलत ही दौलत।
वह पैसेके खातिर शिला ढो रहा है ॥
ये है जिन्दगी बस अरे चार रोजा।
कि जिसपर तू इतना मगन हो रहा है ॥
समझ सोच कुमरेश अब भी समय है।
क्यों गफलतमें प्यारे पड़ा सो रहा है ॥

(२६)

(रसिया)

जिया तोहि बार बार समझायो समझ रे झूठ
कभी मत बोल।
जगमेंसे परतीत उठत है लाभ नहीं कछु होय।

लाभ नहीं कछु होय चतुर अब सत्य सदा शिवतोल ॥
वसु राजाकी तरफ गौरकर यही हाल बस होय ।
यही हाल बस होय देख अब आंख जरा तू खोल ॥
सत्यघोष सम झूठ बोलकर पकड़ करमको रोय ।
पकड़ करमको रोय मूढ़ नर रखमत दिलमें पोल ॥
आतम हित कछु सोच बावरे पागल मत तू होय ।
पागलमत तू होय भूलकर आफत ले मत मोल ॥
झूंठ बोलकर और न ठगनों कहा ठगीसे होय ।
कहा ठगीसे होय करम नर शुभ कारज कर धोल ॥
तू कुमरेश संभल अब भी जा झूंठ कहे नहीं कोय ।
झूंठ कहेंना कोयमिले नहिं यह नर भव अनमोल ॥

(२७)

[तर्ज—क्यों न लूटे मजे वस्ले यारके रे]

क्यों न करले उपाय उद्धारके रे ।
दिन तो आये हैं अब निस्तारके रे ॥
शेर—तोड़ संसारका जाल क्षणमें अभी ।
मोह ममतासे नाता न तू कर कर ॥
छोड़ झंझट सभी संसारके रे ॥ १ ॥
शेर—देख पछतायेगा एक दिन तू यहां ।
तेरा होगा न दुनियांमें नामोनिशां ॥
फिर न होगा न तू भव पारके रे ॥ २ ॥

शैर—मानले सीख जो है लिखी धर्ममें।
मन लगा आजसे शुद्धसे कर्ममें॥
सुख पाये सदा शिव सारके रे॥३॥
है समय अब भी कुमरेश तू चेत जा।
साफ अपनी नियत रख कहा मानजा॥

(२८)

[तर्ज—छोटी बड़ी सुइयां रे जालीका मेरा काढ़ना]

भोले भाले जीयारे संयमको चितमें धारना॥ टेक॥
एक दुखपायोतूनेइंद्रियनके वशमें,हां इंद्रियोंकेवशमें
मनको मारा रे, गतियोंमें तेरा जावना॥ १॥
एकदुखपायोतूने नरक निगोदमें, हाँ नरक निगोदमें।
लड़ना भिड़नारे मुखसे तो कहा जायना॥ २॥
एक दुख पायो तूने गति तिर्यंचमें हां गति तिर्यंचमें
पिटना बंधना रे बोझेका तेरा लादना॥ ३॥
एक दुःख पायो तूने देवगतीमें हां देवगतीमें।
और की लखके रे सम्पतिका तेरा झूरना॥ ४॥
एक दुःख पायो तूने मनुष्य गतीमें हां मनुष्य गतीमें।
आधी व्याधी रे विषयनकी तेरी चाहना॥ ५॥
बहुदुख पायो तूने ज्ञान विसार जिया।
कुमरेश अब जगरे संयमको प्यारे धारना॥ ६॥

(२९)

[तर्ज—मेरी जान माँगी तो क्या तूने मांगा]

विषय सुखको भोगा तो क्या तूने भोगा।
तुझे भोगने का कोई रोग होगा॥
समझता है दिल में कि मैं भोगता हूं।
मगर तेरा उलटा यहाँ भोग भोगा॥ २॥
अरे भोग का सुन नतीजा बुरा है।
किसी दिन तुझे सच स्वयं शोक होगा॥ ३॥
जो तू फंस गया फन्द में हाय इनके।
नहीं फिर कभी तेरा उद्धार होगा॥ ४॥
इसी से समझ सोच कुमरेश दिलमें।
न संयम सा जगमें कहीं यार होगा॥ ५॥

(३०)

हम भक्त हैं तेरे वीर प्रभू
तुझे ढूंढ ही लेंगे कहीं न कहीं।
तू वीतराग है दोष रहित
इसकी परवा हमको है नहीं॥
हम दीवाने हैं तेरे प्रभू
तुझे ढूंढ ही लैंगे कहीं न कहीं॥
हो देव रहो देवालय में
या जाके रहो सिद्धालय में।

हम प्यासे हैं तेरे दर्शनके

तुझे ढूंढ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥

चाहे यां पे रहो चाहे वां पे रहो।

जहां चाहे रहो है मेरे प्रभू।

इक आश लगी तेरे दर्शनकी

तुझे ढूंढ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥

है चाह एक कुमरेश यही

हो जाय कहीं दीदार तेरा।

तेरी भक्ति सदा ही दिलमें रहे

तुझे ढूंढ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥

(३१)

अर्ज करूं महावीर भव दुखसे मुझको काढ़ना।
बहु दुख पाये मैंने कुमतिके संगमें।
नर्क निगोद मझार मर करके मेरा जावना ॥ १ ॥
बहुत दिना दुख भोगत बीते।
काल अनन्ता रे मुझसे तो कहा जायना ॥ २ ॥
करम न जाने कौन किये मैंने।
पापोंमें मन रतरे समताकी नाहीं चाहना ॥ ३ ॥
बड़े सौभाग्य से हम दर्शन पाये—
कुमरेश दुखिया है इसपे तो दया धारना ॥ ४ ॥

(३२)

बनादे बनादे बनादे महावीर

मुक्तिका पंथ बनादे महावीर ॥

भव भव भ्रम कर सही हाय वीर।

पाई नहीं मैंने कोई ऐसी तद्वीर ॥

मिटादे मिटादे मिटादे मेरी पीर।

आयो तेरे चरन शरन महावीर ॥ १ ॥

सुन यश ढिग तेरे आयो अतिवीर।

पलट दे आज मेरी खोटी तकदीर ॥

दिखादे दिखादे दिखादे सुखसीर।

अरज यही है मेरी इक महावीर ॥ २ ॥

मेरी अब बात सुन ओरे धीरवीर।

काट कुमरेशकी करम जंजीर ॥

पिलादे पिलादे पिलादे वह नीर।

समकित शुद्ध पिलादे महावीर ॥ ३ ॥

(३३)

बीच भंवरमें नैय्या है डगमग सन्मति पार लगाना मनका पड़ा है मुझ पर फन्दा, किसको पुकारे तेरा वन्दा। नावके नाविक तुमही हो बस, सन्मति पार लगाना ॥ १ ॥ पिता पुत्र नारी अरु

माता, वक्त पड़े कोइ काम न आता। बिगड़ी सब की बनाने वाले, बिगड़ी मेरी बनाना ॥ २ ॥ करो दया अब मुझ पै अपारा, तेरे बिना नहीं कोई सहारा। है कुमरेश भंवर में आका, बेड़ा पार लगाना ॥ ३ ॥

"प्रेम" जीके गायन

‑।‑ प्रार्थना ‑।‑

थारे चरणोंमें नमें चौवीसों जिनराज।

रिखब अजित संभव अभिनंदन,
सुमति नाथ काटें भव फंदन,
पद्म प्रभु महाराज ॥ थारे० ॥
श्री सुपार्श्व को शीश झुकावें,
चन्द्र प्रभु जग फन्द छुड़ावें,
पुष्प दन्त महाराज ॥ थारे० ॥
शीतल शीतल करने वाले,
श्रेयांस दुख हरने वाले,
वास पूज्य महाराज ॥ थारे० ॥

विमल नाथके मिल गुण गाओ,
श्री अनन्त से ध्यान लगाओ,
धर्मनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

कुंथनाथ आधार तुम्हारा,
अरहनाथ कर दें निस्तारा,
मल्लनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

मुनिसोव्रत हम शरण तुम्हारी,
नमी नेम की छवि सुखकारी,
पार्श्वनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

महावीर तुम सब गुण आगर,
दर्शन दीजै नाथ दया कर,
दया करो महाराज ॥ थारे० ॥

हमतो शरण तुम्हारी आए,
"प्रभू" दरश करके हर्षाए,
सुधि लीजै महाराज ॥ थारे० ॥

गायन २

(तर्ज—भारतमें फिरसे आजा बंशी बजाने वाले)

इस दिलमें फिर समाजा-दिलवर कहाने वाले ।
बिगड़ी को फिर बनाजा-बिगड़ी बनाने वाले ॥
लाखोंको जगसे तारा मुझको तेरा सहारा ।

शिव मग मुझे बताजा शिव मग बताने वाले।
है क्रोध मोह का दल मायाके छाये बादल।
इनसे मुझे बचादे दुखसे छुड़ाने वाले॥
अन्धकार यहां है छाया कुछ भी नजर न आया।
इसको प्रभू मिटादे, भ्रमतम मिटाने वाले॥
यह प्रेम हुआ है निर्बल कलसे हुआ है बेकल।
संसार के चक्कर से तुम हो बचाने वाले॥

गायन ३

(तर्ज—वेदोंका डङ्का आलममें)

विपदाका पर्वत टूट पड़ा महावीर प्रभो महावीर प्रभो।
संसारमें हाहाकार मचा महावीर प्रभो महावीरप्रभो॥
निर्बलके बल निर्जनके जन निर्धनके धन तुमहीं
तो हो। अब कष्ट हमारा दूर करो महावीर प्रभो
महा० ॥ भवतापसे गर जो कोई जलता हो
उसको चन्दन सम हो शीतल। इस तापको
भगवन शांत करो महावीर प्रभो महावीर प्रभो॥
भव सिंधुमें गोते खाते हैं और नाम जबांपर
लाते हैं। अब नाथ हमारा हाथ गहो महावीर
प्रभो महा० ॥ अबतो आधार तुम्हारा है और
पद्मने तुम्हें पुकारा है। इस "प्रेम" के जीवन
धन तुमहो महावीर प्रभो महावीर प्रभो॥

गायन ४

(तर्ज—सुना है तुमने हैं लाखों तारे)

शरणमें आये तुम्हारो भगवन दया करो हे दयालु जिनवर। करो आत्मा हमारी निर्मल दया करो हे दयालु जिनवर॥ मनुष्य जन्म यह है सार जगमें इसे भूल करके खो रहे हैं। तुम्हारी भक्ती हृदयमें होवे दया करो हे दयालु जिनवर। तुम्हें भुलाया न सुख है पाया पड़े हैं संसार सिंधुमें हम अब हमें उबारो और जगसे तारो दया करो हे दयालु जिनवर॥ तुम्हारी छवि दिलमें है समाई और ध्यान धरेंगे तुम्हारा निशदिन। जन्म सुधारें हम जगमें अपना दया करो हे दयालु जिनवर॥ कभी न माया पर हम भुलावें क्रोध भावको दूर घटावें। सुनें न बातें बुरी किसीकी दया करो हे दयालु जिनवर॥ बस "प्रेम" चरणोंसे अब तुम्हारे दास पदमका बनालो अपना। पवित्र मनमें बसो निरंतर दया करो हे दयालु जिनवर॥

गायन ५

(तर्ज—सच्चे दिलसे जो तैने लौभी लगाई होती)

उसको कहते हैं महावीर जमाने वाले।
वीरता अपनी जमानेको दिखाने वाले॥

उन्हींके नामको सन्मति भी कहा करते हैं।
थे अहिंसाकी वो तलवार चलाने वाले॥
पूर्ण यौवन था जब संसारको छोड़ा पलमें।
घोर तप करके हैं निर्वाण पद पाने वाले॥
कर्म शत्रूको जीतनेमें वह लासानी थे।
विष बुझे तीर थे कर्मों पै चलाने वाले॥
ऐसे महावीरके चरणोंमें प्रेम हो तेरा।
पद्मकी नावको पल भरमें तरानेवाले॥

गायन ६

(तर्ज—नाज भी होता रहे बेदाद भी)

दीन बन्धु हो प्रभू दुखियोंके जीवन प्रान हो,
आनन्द सिन्धु हो तुम्हीं सारे सुखोंकी खान हो।
घट घटके ज्ञाता आप हैं क्या आपकी महिमा कहें,
भक्त वत्सलनाथ हो भक्तोंके तनकी जान हो।
इन्द्र सुर नर भी तुम्हारा पा नहीं सकते पता।
शक्तियां कहां तक कहें तुम सर्वशक्तीमान हो।
तर गये लाखों बसर वो नाम लेकर आपका,
संसारके हो प्राण तुम जगमें निराली शान हो।
पद्मको तो "प्रेम" है शिवका स्वरूप दिखाइए,
तार दो हमको हमारा नाथ तब कल्याण हो।

गायन ७

(तर्ज—फैले गुलशनमें दाने अनारके)

अब तो ध्यावो प्रभु जिनराज को रे ।
तूतो विषयोंके चक्करमें आया हुआ ।
और भगवनका ध्यान भुलाया हुआ ।
मत छोड़ो कभी सरताजको रे ॥ अब तो० ॥
बड़ी मुश्किलसे नर देह पाई तैंने,
और पाकरके यूंही गंवाई तैंने ।
क्यों न किया तैंने शुभ काज को रे ॥ अब तो० ॥
गर चरणों से लौ लगाएगा तू ,
बुरे भावोंको दिलसे हटायेगा तू ।
मत छोड़ो गरीब निवाजको रे ॥ अब तो० ॥
सच्चे दिलसे जो जिनवरके गुण गायगा ।
भव सागरसे आखिरको तर जायगा ।
"प्रेम" छोड़ दे नखरे नाज का रे ॥ अब तो० ॥

गायन ८

(तर्ज—टाकीज सिनेमा-बालम आन बसो मोरे मनमें)

भगवन आन बसो मेरे मनमें
दीन बन्धु सुख धाम तुम्हीं हो
और निश्चल निष्काम तुम्हीं हो

कर्म जलावें करें तपस्या मुनिवर जाकर बनमें ॥

॥ भगवन० ॥ १ ॥

है मुझको आधार तुम्हारा

लिया तुम्हारा नाथ सहारा

नाम तुम्हारा जपूं निरन्तर तुम्हीं बसे इस तनमें ।

॥ भगवन० ॥ २ ॥

प्रभु तुम्हारा जो गुण गावे

भवसागरसे वह तर जावे

"प्रेम" तुम्हारी छवी बसी है मेरे दोउ नैनन में ॥

॥ भगवन० ॥ ३ ॥

गायन ६

(कौवाली)

भाइयो सो रहे हो कहां ध्यान है

उठो निद्रा तजो व्यर्थ अभिमान है

जब कि धर्मका पौदा है कुम्हला रहा

दिन व दिन देखो कैसा है मुरझा रहा

करो सर सब्ज पौदेको नुकसान है ॥ भाइयो० ॥

भाई भाईके दुश्मन बने जा रहे

फूटसे दर व दर ठोकरें खा रहे

फूटसे किरकिरी सब हुई शान है ॥ भाइयो० ॥

आपसमें मुकद्मा लड़ाने लगे
धन अदालतमें जाकर लुटाने लगे
जीत जावें मुकद्मा यही ध्यान है ॥ भाइयो० ॥
छोड़ो आपसमें करना गिला भाइयो
मिलो सीनेसे सीना मिला भाइयो
वरना जाति चमन होगा बीरान है ॥ भाइयो० ॥
"प्रेम" आपसमें अब तो बढ़ाते चलो
धर्म क्या है पद्म ये बताते चलो
बस इसमें हमारा ही कल्यान है ॥ भाइयो० ॥

गायन १०

(तर्ज—चाहे बोलो या न बोलो)

हे दीनबन्धु तुम हो दुखसे छुड़ाने वाले।
नैया मेरी किनारे भगवन लगाने वाले ॥
मझधार में भंवर का तूफान उठ रहा है।
भगवान एक तुम हो इसके बचाने वाले ॥
संसार में फंसा हूं दुख पा रहा हूं कैसा।
तुम हो प्रभु भगत की विपदा मिटाने वाले ॥
इस भव विशाल बनमें कुछ भी पता नहीं है ॥
बस "प्रेम" जबाँ पर है तेरा ही नाम भगवन।
आवागमन मिटा कर शिव मग दिखाने वाले ॥

गायन ११

श्रीशान्ति सागर मुनि संघके पधारनेपर गाया हुआ भजन।

(तर्ज—आये मालकाने तख्त वह दौलत कहां गई)

आनन्द सुधा सार श्री मुनिराज पिलाया।
सोती हुई समाज को आकार के जगाया॥
पौदा ये जैन धर्म का कुम्हला सा था गया।
उपदेश दे सर-सब्ज इस पौदेको कराया॥ आनंद॥
पर्दा पड़ा था मोह का अन्धकार हो रहा।
अज्ञान के अन्धेरे को था दूर भगाया॥
था आप की जबान में जादू भरा हुआ।
गौरव भी जैन धर्म का कैसा है बढ़ाया॥
तप का भी दर्जा ऊंचा है शास्त्रोंमें है लिखा।
उस चमत्कारको हमें प्रत्यक्ष दिखाया॥ आनंद॥
श्री शान्ति सागर मुनि के जो मुनिराज साथ हैं।
अब "प्रेम" हैं मुनिराजके चरणोंसे हमारा।
वह तर गया है जिसने इनसे नेह लगाया॥आनंद०

गायन १२

(तर्ज—टाकीज सिनेमाकी—नजरिया लाग रही कित ओर)

नजरिया लाग रही प्रभू ओर।
दीन-बन्धु वह हैं जगनायक, दीनन के ये हैं

सुखदायक। उनकी अनुपम कोर ॥ नजरिया० ॥
नाम निरंजन सब सुख कंजन, श्रीजिनराज सर्व दुखभंजन। लगी उन्हींसे डोर ॥ नजरिया० ॥
उनकी छबी देख हर्षाते, इन्द्रादिक भी पार न पाते "प्रेम" जगतमें शोर ॥ नजरिया० ॥

गायन १३

(तर्ज–प्रभूका मिल गुण गावेंगे)

प्रेमका नगर बसावेंगे,
वहां सुख शान्ती पावेंगे।
प्रेमकी एक मकान बनावें,
प्रेमकी कड़ियों से पटवावें।
प्रेमकी छत पर प्रेम का,
चूना भी डलवायेंगे। प्रेम०।
प्रेमका आंगन प्रेमके आले,
प्रेमके द्वार होंइ मतवाले।
प्रेम झरोखे बैठे प्रेमसे,
प्रभु गुण गावेंगे। प्रेम०।
प्रेम पड़ोसी बसे हुए हों,
प्रेम मित्र भी बने हुए हों।
प्रेमका हो संसार,
प्रेमकी साया पावेंगे। प्रेम०।

प्रेम-सुधा का पान करेंगे,
प्रेमके जलमें स्नान करेंगे।
प्रेम का गंगा बहे,
"प्रेम" से गोते खावेंगे। प्रेम०।

गायन १४

(तर्ज—फलक देता है इनको पेश)

कलामे शास्त्रको श्रावक समझ कर चलना बहतर है।
लो फिर तो मोक्ष जानेमें हमारा फर्स्ट नम्बर है।
बहुत मुश्किल हैं इस नर तनका पाना गौरसे सुन लो
और पाना जैन मतका फिर भलाये कैसा अवसर है
दया हो दिलमें हरदम ध्यान हो जिनराजका सुन लो
तो भव सिन्धूके चक्करसे न मुश्किल होना बाहर है।
धर्म पुलसे गुजर जावे हमारे जिस्मकी मोटर।
बता दो मोक्ष जानेमें हमें किस बातका डर है॥
स्पेशल जैनियोंकी मोक्ष जानेमें नहीं खटका।
"प्रेम"इंजिनमें जब होवे ज्ञान और तपकी पावर है।

गायन १५

(तर्ज—दर्शन दीजे भगवन आज)

आओ आओ श्री जिनराज।
मनमें धर्म भाव भर जाओ॥

द्वेष कषाय दूर कर जाओ

राह देखती जैन समाज ॥ आओ०॥

शीघ्र यहां पर जो आवोगे।

हृदय पवित्र बना पाओगे।

दया करो सरताज ॥ आओ० ॥

घरघरमें हो आनन्द भारी।

हर्षित होंगे नर और नारी।

होय यहां शुभ काज ॥ आओ० ॥

'प्रेम' धर्मकी दशा सुधारो।

शीघ्र यहां भगवान पधारो ॥

रहे धर्मकी लाज ॥ आओ० ॥

गायन १६

(तर्ज—आंखोंमें समाजाओ परदेमें रहा करना)

भगवान मुझे अपने चरणोंमें लगा देना।

मायामें फंस रहा हूं, अब इससे बचा देना ॥

मिथ्यात्वका अंधेरा इस घरमें छा रहा है।

पर ज्ञान सुधा रसका एक जाम पिला देना ॥

अज्ञानके भंवरका तूफान उठ रहा है।

चक्करमें पड़ी नैया अब पार लगा देना ॥

दुनियांके झंझटोंमें शायद मैं भूल जाऊं।

पर नाथ नहीं मेरी तुम याद भुला देना ॥

उम्मेद 'प्रेम' ये है तारोगे नाथ मुझको।
करना दया दयामय भव-फन्द छुड़ा देना।

गायन १७

[तर्ज—वेदोंका झंडा आलममें]

मसजिदमें मिलो चाहे मन्दिरमें हम तुमसे मिलेंगे
कहीं न कहीं।
तेरी चाह हमारे दिलमें बसी तुझे ढूंढ़ ही लेंगे
कहीं न कहीं।
दिखलाके हमें एक बांकी झलक रूपोश हुआ तू
हमसे अलग।
तड़फाया हमें तो समझ लेना महशरमें मिलेंगे
कहीं न कहीं॥

हाथमें लेकर अभी देखा तेरी तसवीर को।
ख्याल आया ढूंढ़ता रह गया मैं तदबीरको॥
शक्ल थी कैसी मनोहर सामने आई हुई।
संसारमें जिस उजालेकी रोशनी छाई हुई॥
ख्याल करना किसीका संसारमें बेकार है।
सार कुछ भी है नहीं भगवानका आधार है॥
उस दिन ही जबांसे यह निकला भगवनसे मिलेंगे
कहीं न कहीं॥
नाम भगवनका ए मित्रो भुलाते न चलो।

'प्रेम' हो सबसे किसीको भी सताते न चलो।
गर होगा कुछ नालोंमें असर वह हमसे मिलेंगे।
कहीं न कहीं॥

गायन १८

(तर्ज—हो जाओगे बदनाम जमाना नहीं अच्छा)

विषयोंमें अपने दिलको लगाना नहीं अच्छा।
सत धर्मसे इस दिलको हटाना नहीं अच्छा॥
अपनी जान जानिए औरोंकी हमेशा।
उन बेकसोंका खून बहाना नहीं अच्छा॥ विषयों०॥
छोड़ो शराब पीना है ये बुरी बला।
मयखानेमें जा जाम चढ़ाना नहीं अच्छा॥ विषयों॥
मरते हो नजाकत पर है मौतका सामां।
देना न दिल किसीको जमाना नहीं अच्छा॥विषयों०
लाखोंकी जान जाती है तब बनाता है शहद।
इससे शहद्से हाथ लगाना नहीं अच्छा॥ विषयों०॥
रख देते हैं धन धाम जुएबाज हमेशा।
जुएमें अपनी शान मिटाना नहीं अच्छा॥विषयों०॥
चोरोंको सजा मिलती है होते हैं परेशान।
फिर इस बलामें हाथ फँसाना नहीं अच्छा।विषयों०
सत धर्ममें अब'प्रेम' से कर लीजे तरक्की।
विषयोंमें कभी दिलका झुकाना नहीं अच्छा॥विष०

अहिक्षेत्र पार्श्वनाथ स्तुति ।

जोगीरासेकी चालमें ।

वंदौ श्रीपारसपदपंकज, पंच परम गुरु ध्याऊँ । शारदामाय नमो मनवचतन, गुरु गौतम शिरनाऊं ॥ एक समय श्रीपारस जिनवर बनतिष्ठे वैरागी । बाह्याभ्यंतर परिग्रह त्यागे आतमसों लव लागी ॥ १ ॥ कल्प—द्रुमसम प्रभुतन सोहै, करपल्लव तनसाखा । अविचल आतम-ध्यान पगे, प्रभु इक चितमन थिर राखा ॥ माता तात कमठचर पापी, तपसी तप करि मूवो । अ-ज्ञानी अज्ञान तपस्या-बल, करि सो सुर हूवो ॥२॥ मारग जात विमान रह्यो थिर, कोप अधिक मन ठान्यो । देखत ध्यानारूढ़ जिनेश्वर, शत्रु आपनो मान्यो ॥ भीषणरूप भयानक दृग कर, अरुण वरण तन कापै । मूसलधारासम जल छोड़ै, अधर डशनतल चांपै ॥ ३ ॥ अति अँधियार भयानक निशि अति, गर्ज घटा घनघोरै । चपला चपल चमकती चहुंदिशि धीर न धीरज छोरै ॥ शब्द भयंकर करत असुर गण, अग्निजाल-मुख-छोड़ै । पवन प्रचण्ड चलाय प्रलत, यव द्रुमगण तृणसम तोड़ै ॥ ४ ॥

पवन प्रचंड मूसलजलधारा, निशि अतिही अन्धियारी। दामिनि दमक चिकार पिसाचन,बन कीनो भयकारी॥ अविचल घोर गंभीर जिनेश्वर, थिर आसन वन ठाढ़े। पवनपरीषहसों नहिं कांपै सुरगिरि सम मन गाढ़ें ॥५॥ प्रभुके पुण्यप्रताप पवन– वश, फणपति आसन कंप्यो। अति भय भीत बिलोक चहुंदिशि, चकित ह्वै मनजंप्यो॥ जाण्यो प्रभु उपसर्ग अवधिबल पद्मावतिजुत धायो। फणको छत्र कियो प्रभुके शिर, सर्वारिष्ट नशायो॥ ६॥ फणपतिकृत उपसर्ग निवारण, देखि असुर दुठ भाग्यो। लोकालोक विलोकन प्रभुके, तुरतहिं केवल जाग्यो॥समवशरणकी रचना कारण, सुरपति आज्ञा दीनी। मणिमुक्ता हीराकंचनमय, धनपति रचना कीनी॥७॥ तीनों कोट रचे मन मंडित धूलीसाल बनाई। गोपुर तुङ्ग अनूप विराजै, मणिमय गहरी खाई॥ सरवर सजल मनोहर सोहैं, वन उपवनकी शोभा। वापी विविध विचित्र बिलोकत सुरनर खग मनलोभा॥८॥ खेवैं देव गलिनमैं घटभरि धूपसुगंध सुहाई। मंद सुगंध प्रतापपवन- वश, दशहूं दिशिमैं छाई॥ गरुणादिकके चिन्ह

अलंकृत धुज चहुं ओर विराजैं। तोरन बंदनवारी सोहैं नवनिधिकी छबि छाजैं ॥ ९ ॥ देवीदेव खड़े दरवानो, देखि बहुत सुख पावै। सम्यकवंत महा-श्रद्धानी, भविसों प्रीति बढ़ावैं ॥ तीन कोटिके मध्य जिनेश्वर गंधकुटी सुखदायी। अंतरीक्ष सिंहासन ऊपर, राजैं त्रिभुवन राई ॥१०॥ मणिमय तीन सिंहासन शोभा, वरणत पार न पाऊं। प्रभुके चरणकमलतल सोभै, मनमोदित सिर नाऊं ॥ चन्द्रकांतिसम दीप्ति मनोहर, तीन छत्रछबि आखी तीन भुवन ईश्वर ताके हैं, मानों वे सब साखी ॥ ११ ॥ दुन्दुभि शब्द गहिर अति बाजै, उपमा वरनि न जाई ॥ तीन भुवन जीवन प्रति भाखैं, जयघोषण सुखदाई ॥ कल्पतरूवर पुष्प सुगंधित गंधोदककी वर्षा। देवी देव करे निशिवाशर, भवि जीवन मन हर्षा ॥ १२ ॥ तरु अशोककी उपमा वरणत भविजन पार न पावैं। रोग वियोगदुखी जन दर्शत, तुरतहिं शोक नशावैं। कुन्दपुहुप सम श्वेत मनोहर, चौसठि चमर दुराहीं। मानों निरमल मरगिरिके तट, झरना झमकि झराहीं ॥ १३ ॥ प्रभुतन-श्री भामंडलकी दुति, अद्भुत तेज विराजैं

जाकी दीप्ति मनोहर आगैं, कोटि दिवाकर लाजै ॥ दिव्य बचन सब भाषा गर्भित, खिरहिं त्रिकाल सुवानी । 'आसा' आस करे सो पूरण, श्री पारस-सुखदानी ॥ १४ ॥ सुर नर जिय तिरयंच घनेरे, जिनवंदनचित आनै । वैरभावपरिहार निरन्तर प्रीति परस्पर ठानैं । दशहूंदिशि निरमल अति दीखैं, भयो है शोभ घनेरा । स्वच्छसरोवरजलकर पूरे, बृक्ष फरे चहुं फेरा ॥१५॥ साली आदिक खेत चहूंदिशि भई स्वमेव घनेरी । जीवनबध नहिं होय कदाचित यह अतिशय प्रभुकेरी । नख अरु केश बढ़ै नहिं प्रभुके, नहिं नैनन टमकारे । दर्पणवत प्रभुको तन दीपै, आननचार निहारे ॥ १६ ॥ इंद्र नरेंद्र धनेंद्र सबै मिलि धर्मामृत अभिलाषी । गण धरपदशिरनाय सुरासुर प्रभुकी थुति अतिभाषी दीनदयाल कृपाल दयानिधि, तृषावंत भवि चीन्हें धर्मामृत वर्षाय जिनेश्वर; तोषित बहुविधि कीन्हें ॥१७॥ आरज खण्डविहार जिनेश्वर कीनो भवि-हितकारी । धर्मचक्र आगौनि चलै प्रभु, केवल महिमा भारी ॥ पंद्रह पांति कमल पंद्रह जुग सुन्दर हेम सम्हारे । अन्तरीक्ष डग सहित चलैं

प्रभु, चरणांवुज जल धारे ॥१८॥ मिटि उपसर्ग भये प्रभु केवलि, भूमि पवित्र सुहाई। सो अहिक्षेत्र थप्यो सुर नर मिल, पूजकको सुखदाई ॥ नाम लेत सब बिघन विनाशै, संकट क्षणमें चूरे। बंदन करत बढ़ै सुख सम्पति सुमिरत आशा पूरै ॥१६॥ जो अहिक्षेत्र विधान पढ़ै नित, अथवा गाय सुनावै श्रीजिनभक्ति धरैं मनमें दिढ़, मनवांछित फल पावै जुगल वेद वसु एक अङ्क गणि, बुधजन वत्सर जान्यो। मारग शुक्ल दशैं रबिवासर, "आशाराम" बखान्यो ॥

आराधना पाठ।

मैं देव नित अरहंत चाहूं सिद्धका सुमिरन करौं। मैं सुर गुरु मुनि तीनि पद, मैं साधुपद हृदय धरौं ॥ मैं धर्मकरुणामयी चाहूं, जहां हिंसा रंच ना मैं शास्त्रज्ञान विराग चाहूं जासु मैं परपंच ना ॥ १ ॥ चौबीस श्रीजिनदेव चाहूं और देव न मन बसैं। जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूं बंदिते पातिकनशै गिरनार शिखर संमेद चाहूं चम्पापुरी पावापुरी कैलास श्रीजिनधाम चाहूं भजत भाजैं भ्रमजुरी॥२॥

नवतत्वका सरधान चाहूं और तत्व न मन धरों षटद्रव्य गुण परजाय चाहूं ठीक तासों भय हरों ॥ पूजा परम जिनराज चाहूँ और देव न हूं सदा । तिहुंकालकी मैं जाय चाहूं पाप नहिं लागै कदा ॥ ३ ॥ सम्यक्त दरशन ज्ञान चारित्र सदा चाहूं भावसों । दशलक्षणी मैं धर्म चाहूँ महा हर्ष उछावसों । सोलह जु कारण दुखनिवारण सदा चाहूँ प्रीतिसो ॥ मैं चित्त अठाई पर्व चाहूं लहा मंगल रीतिसों ॥४॥ मैं वेद चारों सदा चाहूं आदि अंत निवाहसों । पाए धरमके चार चाहूं अधिक चित्त उछाहसों । मैं दान चारों सदा चाहूं भुवन वशि लाहो लहूं । आराधना मै चारि चाहूं अन्तमें जेई गहूं ॥५॥ भावन बारह सदा भाऊं भाव निर मल होत हैं । मैं व्रत जु बारह सदा चाहूं त्याग भाव उद्योत हैं ॥ प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूं ध्यान आसन सोहना । बसुकर्मतैं मैं छुटा चाहूं शिव लहूँ जहं मोहना ॥६॥ मैं साधुजनको संघ चाहूं प्रीति तिन हीं सो करौं । मैं पर्वके उपवास चाहूँ अरम्भै मैं परिहरौं । इस दुःख पंचमकाल माहीं कुल शरावक मैं लहौं ॥ अरु महाव्रत धरि

मकों नाहीं निबल तन मैंने गहो ॥७॥ आराधना उत्तम सदा चाहूं सुनो जिनरायजी। तुम कृपानाथ अनाथ द्यानत दयाकरना न्यायजी ॥ बसुकर्मनाश विकाश ज्ञान प्रकाश मोको कीजिए। करि सुगति गमन समाधि मरन सुभक्ति चरनन दीजिए ॥ ८ ॥

णमोकार महिमा प्रभाती।

प्रातकाल मन्त्रजापो णमोकार भाई। अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदयमें धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पातक टर जाई। विघन जासू दूरहोत संकटमें सहाई ॥१॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतामणि जाई ऋद्धि सिद्ध पारस तेरे प्रकटाई ॥ २ ॥ मन्त्र जन्त्र तन्त्र सब जाही बनाई। सम्पति भंडार भरे अक्षय निधि आई ॥३॥ तीन लोक महिं सार वेदनमें गाई। जगतमें प्रसिद्ध धन्य मंगलीक भाई ॥ ४ ॥
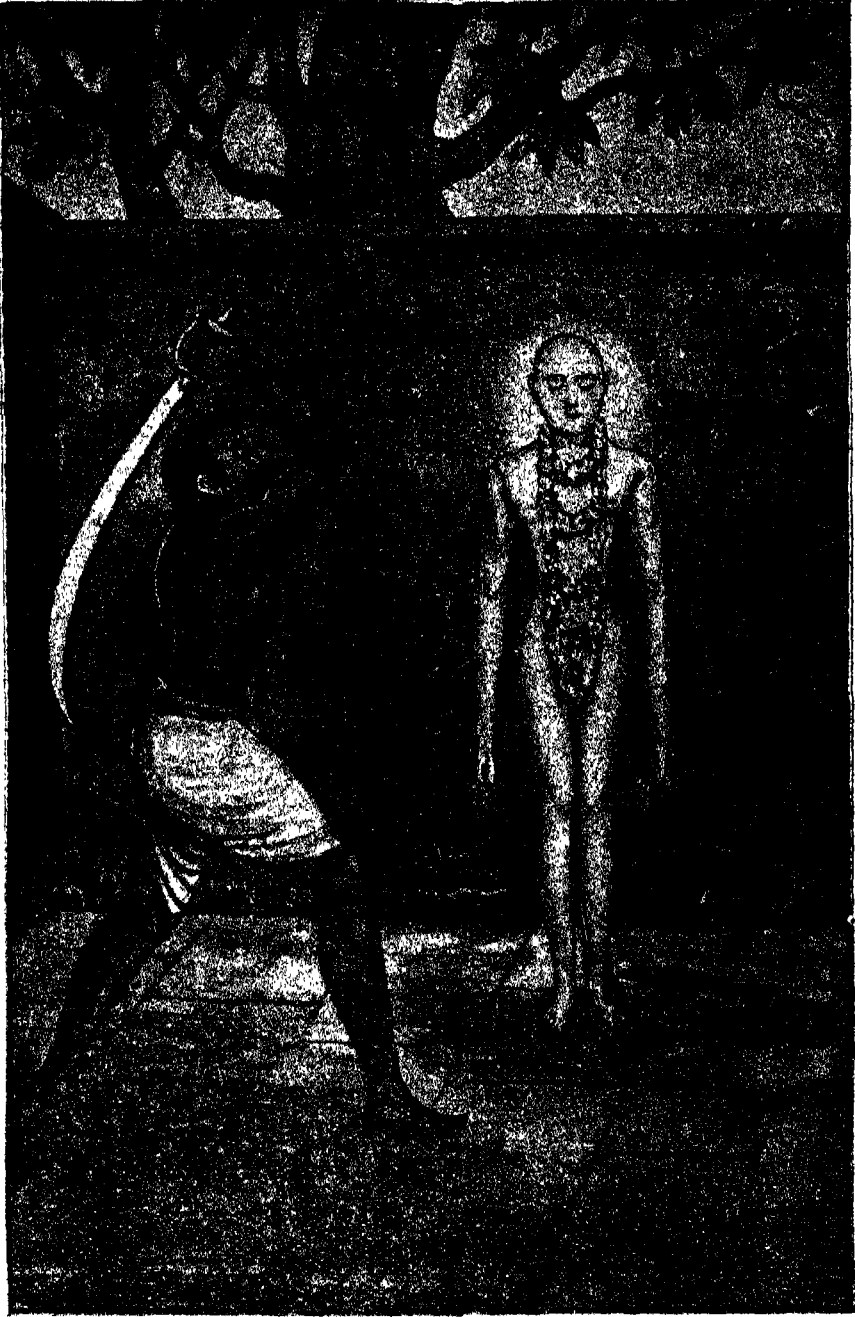
सुदर्शन पर तलवारोंके वार सब फूलोंकी माला हो जाते है।

(सुदर्शन चरित्र)

सती चंदना महावीरको आहार दे रही है।

(महावीर पुराण)

श्री सम्मेदशिखर पूजा-विधान

(क्रमानुसार टोंक प्रति टोंकका अर्घ)

ज्ञानधर कूट

१ दोहा—कुंथुनाथ जिनराजका, कूट ज्ञान धरजेह।
मन वचतन कर पूजहूं, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री कुंथुनाथजिनेद्रादि ९६ कोडाकोडी ९६ कोडि ३२ लाख ९६ हजार ७४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणार विन्दको मेरा मन बचन काय करि बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

२—ओं ह्रीं श्रीपंडित गौतमस्वामी आदि गणधरदेव गुण वा ग्रामके उद्यान आदि भिन्न-भिन्न स्थानोंसे निर्वाण पधारे हैं तिनके चरणारविन्दको जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मित्रधर कूट

३—नमिनाथ जिनराजका कूट मित्रधर जेह।
मन मनवचतनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्रीनमिनाथ जिनेन्द्रादि नौसै कोडाकोडी १ अरब ४५ लाख ७ हजार ९४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको मेरा नमस्कार हो जलादि अर्घं ॥ ३ ॥

नाटक कूट

४ दोहा—अरहनाथ जिनराजका नाटक कूट है जेह ।
वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि ९९ कोड़ ९९ लाख ९९ हजार ९ सै ९९ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्द को जलादि अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

संबल कूट

५ दोहा-मल्लिनाथ जिनराजका संबल कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्रीमल्लिनाथ जिनेन्द्रादि ९६ कोड़ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको जलादि अर्घ ।

संकुल कूट

६ दो०-श्रेयांसनाथजिनराजका संकुल कूट है जेह ।
मन वच तनकर पूजाहूँ शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ कोड़ाकोड़ी ९६ कोड़ ९५ लाख ९ हजार ५४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको अर्घ ।

सुप्रभ कूट

७ दो०—पुष्पदन्त जिनराजका सुप्रभुकूट है जेह।
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ि ९९ लाख ७ हजार ४८० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके करणारविन्दको अर्घ।

मोहन कूट

८ दो०—पद्मप्रभु जिनराजका मोहन कूट है जेह।
मन वच तनकरपूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्रादि ९९ कोड़ ८७ लाख ४३हजार ७२७ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको अर्घ।

निर्जर कूट

९ दो०—मुनिसुब्रत जिनराजकानिर्जर कूट है जेह।
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्री मुनिसुब्रतनाथ जिनेन्द्रादि ९९ कोड़ाकोड़ी ९७ कोड़ ९ लाख ९९९ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ।

ललित कूट

१०दो०--चन्द्रप्रभु जिनराजका ललित कूट है जेह।
मनवचतनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि ६८४ अरब ७२ कोड़ ८० लाख ८४ हजार ५६५ मुनि इसकूटसे सिद्ध भये तिनके अघं ।

११ दो०-ऋषभदेवजिन सिद्ध भये गिरिकैलाशसे जोय
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूं पद दयो ।

ओं ह्रीं श्री ऋषभनाथजिनेन्द्र कैलाशपर्वतसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

विद्युत कूट

१२ दो०-शीतलनाथ जिनराजका कूट विद्युतवरजेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्रादि १८ कोडाकोड़ी ४२ कोड़ ३२ लाख ४२ हजार ९०५ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घं ।

स्वयम्भूकूट

१३ दो०-अनंतनाथ जिनराजका कूट स्वयंभू जेह
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि ९६ कोड़ाकोड़ी ७० कोड़ ७० लाख ७० हजार ७ सौ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके०अर्घ

धवलकूट

१४ दो०-संभवनाथ जिनराजका धवलकूट धर जेह
मन बच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्रादि ९ कोड़ाकोड़ ७२ लाख ४२ हजार ५ सौ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ ।

१५ दो०-बासुपूज्य जिन सिद्ध भये चम्पापुरसे जेह
मन बच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुरसे सिद्ध भये तिनके अर्घं।

१६ दो०-अभिनंदन जिनराजका आनंद कूट है जेह
मन वच कर तन पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि ७२ कोड़ाकोड़ ७०कोड़ ७० लाख ४२ हजार ७०० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ।

सुदत्तवर कूट

१७ दोहा-धर्मनाथ जिनराजका कूट सुदत्तवर जेह
मन बच तनकर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि २६ कोड़ाकोड़ी १६ कोड़ ६ लाख ६ हजार ७६५ मुनि सिद्ध भये तिनके० अर्घं।

अविचल कूट

१८ दो०-सुमतिनाथ जिनराजाका अविचलकूट है जेह
मन वचतन कर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं सुमतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि १ कोडाकोड़ी ८४ कोड़ि ७२ लाख ८१ हजार ७०० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ

शांतिप्रभु कूट (कुन्दप्रभु कूट)

१९ दो०-शांतिनाथ जिनराजका कुन्दप्रभ है जेह।
मन वच तनकर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्रादि ९ कोड़ाकोड़ी ९ लाख ९ हजार ९९९ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ्य ।

२० दो०-महावीर जिन सिद्ध भये पावापुरके जोय
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूं पद होय

ओं ह्रीं श्री महावीर स्वामी पावापुरसे सिद्ध भये तिनके अर्घ

प्रभास कूट

२१ दो०-सुपार्श्वनाथ जिनराजका प्रभासकूटहै जेह ।
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि ४९ कोडाकोडी ८४कोड़ी ७२ लाख ७ हजार ७४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ

सुवीर कूट

२२ दो०-विमलनाथ जिनराजका कूट सुवीर है जेह
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीविमलनाथ जिनेन्द्रादि ७० कोड़ाकोड़ि ६० लाख ६ हजार७४२मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणार बिन्दको अर्घ ।

२३ दो०-अजितनाथ जिनराजका सिद्ध वरकूटहै जेह
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

सिद्धवर कूट

ओं ह्रीं श्रीअजितनाथ जिनेन्द्रादि १ अरब ८० कोड़ ५४ लाख मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दके अर्घ ।

२४दोहा-नेमिनाथजिन सिद्ध भये सिद्धक्षेत्र गिरनार
मन वच तनकर पूजाहूं भवदधि पार उतार ॥

ओं ह्रीं श्रीनेमिनाथ भगवान् गिरनार पर्वतसे मोक्ष गये तिनके चरणारविन्दको अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णभद्र कूट

२५ दोहा-पार्श्वनाथ जिनराजका स्वर्णभद्र है कूट।
मन वच तन कर पूजाहूं जाउं कर्मसे छूट ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि ८२ कोड़ ८४ लाख ४५ हजार ७ सौ ४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको अर्घं निर्मपामीति स्वाहा।

इस कूटका शुद्ध भावसे ध्यान व दर्शन करनेसे पशुगतिसे छुटकारा हो जाता है।

सलूना पूजा

श्री १०८ मुनीन्द्र विष्णुकुमार पूजन

बलि मद मर्दन मदन जाप, मंगल मय जगदीश।
महारथी जिनधर्मके अशरण शरण मुनीश ॥१॥
आह्वानन कैसे करैं, कहां बिठावैं तोहि।
अर्चामें असमर्थ हैं, क्षमा कीजिये मोहि ॥ २ ॥
तव गुण अगम अपार हैं, कैसे करूं बखान।
अपनीसी वर शक्ति दो हमें "विष्णु" भगवान॥३॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र तिष्ठ॰ तिष्ठ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

प्रासुक मिष्ट सुगंधित शीतल, स्वर्ण पात्रभर निर्मल नीर । जन्म मरण दुख दूर करन हित, लाया तव पदपंकज तीर ॥ वत्सलताकी मूर्ति मनोरम, धर्म ध्वजाके थंभ महान । अन्तस्थलमें शांति सुधाका श्रोत बहादो अय भगवान ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्व-पामीति स्वाहा ।

शुचि सुरभित मलयज संसर्गित कुंकुम और लिया कपूर । आशा है संसृतिका सारा ताप हमारा होगा दूर ॥ वत्सलता॰ ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनींद्राय संसारतापविनाशनाय सुगन्धं निर्वपा मीति स्वाहा ।

उज्वल अनुपम धवल तुहिन सम अक्षत परम पवित्र महेश । अर्चाहित ! जगदर्चित ! लाया वर अक्षय पदके उद्देश्य ॥ वत्सलता॰ ॥

ओं ह्रीं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि॰स्वाहा

जिसका पी मकरन्द मधुप भी सारी सुध बुध

देत बिसार। कुसुम माल मद्-मदन-दलन हित लाया चरणोंसे उपहार ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०स्वा०

वह नैवेद्य विविधि रस पूरित मिष्ट मनोहर भरकर थाल। लाया हूं भव भेंट प्रभो! मम-नश जाये क्षुद्व्यथा बिशाल ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय क्षुधारोग विनाशाय नैवेद्यं नि० स्वा०

मणिमय दीप सजाकर झिलमिल झिलमिल करता विमल प्रकाश। मोह महातम दलनहेतु तव करूं आरती तव उल्लास ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय मोहान्धकारविध्वंसनायदीपंनि०स्वा०

दश बिध द्रव्य सुगंधित लेकर चूर्ण बनाया यह तत्काल। डाल हुताशनमें महकाऊं जलजाये कर्मोंका जाल ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० स्वाहा

श्रीफल सेव सन्तरा ऐला केला कमरख अरु बादाम। निःश्रेयस पद प्राप्त करनको लाया हूं प्रभु कलमी आम ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि० स्वाहा

मलयज अक्षत सलिल पुष्प चरु धूप दीप फल

मिश्रित अर्घ्य। लेकर तव पद-पंकज अर्चूं मिल जाये पद हेम अनर्घ्य॥ वत्सलताकी मूर्ति मनोरम धर्म ध्वजाके थंभ महान अन्तस्थलमें शान्ति सुधाका श्रोत बहा दो अय भगवान।

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं नि० स्वाहा

जयमाल।

—oo—

जयति २ जय २ विभो! मुनिवर विष्णुकुमार।
अर्चा मिस अभ्यर्थना, होवे मम स्वीकार॥

अकम्पन सूरि आदिपर अहह! किये वलिने जब अत्याचार। चतुर्दिक् बाड़ी लगा नरमेध-रच किया पशुओंका संहार॥ पुनः धधकादी अनल प्रचण्ड, प्र म प्रस्तित हुआ चहुंओर। कंठ होजानेसे विच्छिन्न, हुआ दुख सब ऋषियोंको घोर॥ एक क्षणमें भूतल पर धर्म-प्रेमियोंमें तब भारी शोर। हुआ, पर थे सबही चुपचाप देख अन्याय नृपतिका घोर॥ सुना जब अर्धरात्रिके समय आज ऋषियों पर प्राणाघात। हो रहा हस्तिनागपुर बीच, सुनत ही सूख गया सब गात॥ चले फिर सत्वर हीतुम देव! योगि रक्षा करने तत्काल। लिया नहिं पल,

भर भी विश्राम, त्याग निज हितका स्वार्थ विशाल ॥
बनाकर वामनका निज रूप-दान शालामें बलिके
पास। गये, मांगी निज पगसे भूमि-तीन ही पग
हो बहुत उदास ॥ दुष्ट बलिने त्रय बचन उचार
तुम्हें दे दिया भूमिका दान। झटिति तब ऋद्धि
सिद्धिसे वाह ! किया तन अपना मेरु समान ॥
पुनः द्वय पगही में नर लोक-मापकर बलिके ऊपर
जोर। लगाकर रक्खा तीसरा पैर, भूमि तब कांप
उठी चहुंओर ॥ असुर सुर नर मुनियोंके बीच,
देख तब अनुपम रूप विशाल। हुआ आश्चर्य विषाद
अपार, हर्षके साथ एकही काल ॥ कृत्य यह बलिका
लख सब लोग, रहे थे उसे बहुत धिक्कार। कह
रहे थे उससे 'ंगर्जा-"कियेका फल चखले मक्कार"।
आपके प्रति हैं नम्री भूत-सभीने गाया मंगलगान
धन्य है शक्ति तुम्हारी नाथ ! धर्मके रक्षक श्री
भगवान। आजका रक्षाबंधन पर्व अहाहा ! स्मृति
यह सुखद ललाम। मनाई जाती है चहुंओर, उसी
मुनि रक्षक दिनके नाम ॥ उसी दिनसे ही बस
कुछ लोग, मानते वामनका अवतार। किन्तु सच
मुच वह तुम वात्सल्य-अंग धारक थे विष्णुकुमार ॥

झुका सिर चरणोंमें हरबार मांगता देव ! यही बरदान। धर्मके रक्षा करने हेतु-हमें दो शक्ति "विष्णु" भगवान ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं नि० स्वा०

श्रद्धा भक्ति भाव वैभवसे सज मन मन्दिर दिव्य ललाम। अनुपम मूर्ति मुनीन्द्र तुम्हारीआरोपण कर हो निष्काम॥ जो "अवनीन्द्र" निरन्तर कर्ता अर्चा चर्चा और प्रणाम। संसृतिमें स्वर्गिक विभूति या मुक्तिश्री पाये अभिराम ॥

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

॥ इति शुभम् ॥

प्रात:कालकी स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनकी अब पूरो आस। ज्ञान भानुका उदय करो मम मिथ्यातमका होय विनाश ॥१॥ जीवोंकी हम करुणा पालें झूठ वचन नहिं कहैं कदा। परधन कबहुं न हरहूं स्वामी ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा ॥२॥ तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें। श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥ ३ ॥ दूर

भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार। मेल मिलाप बढ़ावें हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥ ४ ॥ सुख दुखमें हम समता धारैं रहें अचल जिमि सदा अटल। न्याय मार्गको लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल ॥५॥ अष्टकर्म जो दुःख हेतु हैं तिनके क्षयका करें उपाय। नाम आपका जपैं निरन्तर विघ्न शोक सबही टल जाय ॥ ६ ॥ आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा॥ विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञानहू बढ़े सदा ॥ ७ ॥ हाथ जोड़कर शीष नवावें तुमको भविजन खड़े खड़े। यह सब पूरो आस हमारी चरण शरण हैं आन पड़े ॥ ८ ॥

सायंकालकी स्तुति

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जन-पर करहु दया। कुमति निशा अंधियारीकारीसत्य ज्ञान रबि छिपा दिया ॥१॥ क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरें चहुं ओर। लूट रहे जग जीवनको यह देख अविद्यातमका जोर। मारग हमको सूझे नांही ज्ञान बिना सब अन्ध भये। घटमें आय विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े

नये ॥ ३ ॥ शतपथ दर्शक जनमन हर्षक घटघट अन्तरयामी हो। श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥ घोर विपतमें आन पड़ा हूं मेरा बेरा पार करो । शिक्षाका हो घर घरआदर शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥ मेल मिलाप बढ़ावें हम सब द्वेष भावकी घटाघटी। नहीं सतावें किसी जीवको प्रीत क्षीरकी गटागटी ॥ ६ ॥ मात पिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया करें। स्वारथ तजकर सुखदें परको आशिष सबकी लिया करें ॥७॥ आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा। विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा॥८॥ दोऊकर जोड़े बालक ठाड़े करैं प्रार्थना सुनिये तात। सुखसे बीते रैन हमारी जिनमतका हो शीघ्र प्रभात ॥ ६ ॥ मात पिताकी आज्ञा पालैं गुरुकी भक्ति धरें उरमें। रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज निज पुरमें ॥ १ ॥

शील महात्म्य

जिनराज देव कीजिये मुझ दीनपर करुना। भवि वृन्दको अब दीजिये बस शीलका शरना ॥ टेक ॥ शीलकी धारामें जो स्नान करे है। मल

कर्मको सो धोयके शिवनार वरै है। व्रतराज सो बेताल व्याल काल डरे हैं। उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरै हैं ॥१॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग आचारा। इस शीलसे सब धर्मके मुंहका है उजारा॥ शिवपंथ ग्रंथ मंथके निर्ग्रन्थ निकारा। बिन शील कौन कर सके संसारसे पारा ॥२॥ इस शीलसे निर्वाण नगरकी है अबादी। त्रेसठ शलाका कौन ये ही शील सबादी। सब पूज्यके पद्वीमें है परधान ये गादी। अठारा सहस्र भेद भने वेद अबादी ॥३॥ इस शीलसे सीताको हुआ आगसे पानी। पुर द्वार खुला चलनिमें भर कूपसों पानी। नृप ताप टरा शीलसे रानी दिया पानी। गङ्गामें ग्राहसों बची इस शीलसे रानी ॥४॥ इस शील-हीसे सांप सुमन माल हुआ है। दुख अञ्जनाका शीलसे उद्धार हुआ है। यह सिन्धुमें श्रीपालको आधार हुआ है। वप्राका परम शील ही से यार हुआ है ॥ ५ ॥ द्रोपदीका हुआ शीलसे अम्मरका आमारा। जा धातु द्वीप कृष्णने सब कष्ट निवारा। सब चन्दना सतीकी व्यथा शीलने टारी। इस शीलसे हा शक्ति विशल्याने निकारी ॥ ६ ॥ वह

कोट शिला शीलसे लक्ष्मणने उठाई। इससे ही नागको नाथा श्रीकृष्ण कन्हाई। इस शीलने श्रीपालजीकी कोढ़ मिटाई। अरु रैनमञ्जूसाको लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शीलसे रनपालकूं अरकी कटी बेड़ी। इस शीलसे विष सेठकी नन्द-नकी निवेड़ी। शूलीसे सिंह पीठ हुआ सिंह ही सेरी। इस शीलसे करमाल सुमन माल गलेरी ॥ ८ ॥ समन्तभद्रजीने यही शील सम्हारा। शिव पिण्डसे जिनचन्द्का प्रतिविम्ब निकारा। मुनि मानतुङ्गजीने यही शील सुधारा। तब आनके चक्रेश्वरी सब बात सम्हारा ॥९॥ अकलङ्कदेवजीने इसी शीलसे भाई। ताराका हरा मान विजय बौद्ध से पाई। गुरु कुन्दकुन्दजीने इसी शीलसे जाई। गिरनारपै पाषाणकी देवीको बुलाई ॥१०॥ इत्यादि इसी शीलकी महिमा है घनेरी। विस्तारसे कहनेमें बड़ी होयगी देरी। पल एकमें सब कष्टको यह नष्ट करेगी। इसही से मिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सबेरी ॥११॥ बिन शील खना खाते हैं सब कांछके ढीले। इस शील बिना तन्त्र मन्त्र जन्त्र ही कीले। सब देव करें सेव इसी शीलके हीले। इस शीलहीसे

चाहे तो निर्वाण पदी ले ॥१२॥ सम्यक्त्व सहित शीलको पाले हैं जो अन्दर। सो शील धर्म होय है कल्याणका मन्दिर ॥ इससे हुए भव पार हैं कुल कौल और बन्दर। इस शीलकी महिमा न सकै भाष पुरन्दर ॥१३॥ जिस शीलके कहनेमें थका सहस बदन है। जिस शीलसे भय पाय भगा क्रूर मदन है॥ सो शील ही भविवृन्दको कल्याणप्रदन है। दश पैंडही इस पैंडसे निर्वाण सदन है ॥१४॥

णमोकार मंत्रका महात्म्य

(पं० सतीसचन्द्रजी न्यायतीर्थ)

णमोकार है मंत्र सर्व पापोंका हर्ता।
मङ्गल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता ॥
संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई।
सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई॥१॥
संसार छेदके लिये मंत्र है सर्व प्रधाना।
विषको अमृत करे जगतने यह सब माना ॥
कर्म नाशकर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता।
मंत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता ॥ २॥
सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती।
सर्व विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती।

पशु पक्षी नर नारि श्वपच जो धारण करते।
ज्ञान, मान, सम्मान, और सुख सम्पति भरते।३।
जीवन्धर थे स्वामि एक जन करुणा धारी।
कुत्तेको दे मन्त्र शीघ्र गति भली सुधारी॥
मन्त्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये।
ध्याये जो जन उसे सर्व सुख हो मनचाये॥४॥

श्रीजिनगिरा स्तवन

शरण आया माता, जिनेश्वर वाणी दुख हरो। विरत् अनुपम तेरा, प्रगट जगत्राता सुख करो। भ्रमो जग बहुतेरा, सहा दुःख जन्मन मरणका। टरे नाहीं टारा, यत्न बहु कीना हरणका ॥१॥ भजे बहुते देवा, करी बहु सेवा शरणकी। फँसे भव दुख सोही न पाई आशा शरणकी। अष्ट विधि खलमारी, हमारी कीनी दुर्दशा। इन्हींके बश माता, भवोदधि दुखमें मैं फँसा ॥२॥ सतत चारों गतिमें भ्रमावें मोकों ये बली। ज्ञान धनको हरिके भुलाई मोकों शिवगली। नरक पशु नर देवा, चतुर्गतिमें जो दुख लहो। कहा जाता नाहीं, तुम्हीं सब जानों जो सहो ॥३॥ निबल मोको पाके सताते ये खल अति घने। शरण राखो माता, बचावो

इनसे निज जने । सुमति अब दे माता । बिनाशों आठों खलनमें । लहौं शिवपुर पन्था, दहों ना फिर त्रय ज्वलनमें ॥ ४ ॥ अल्प मति मैं माता सुमति निज दीजे दासको । यही विनती मेरी, पुरावो अम्बे आशको । युगल पदकी सेवा, करत नर देवा ध्यायके । लहत शिव सुख मेवा, शरण मां तेरी पायके ॥ ५ ॥

दोहा-तुम पदाब्ज मो उर बसो, नशो तिमिर अज्ञान
सेवक नाथूरामको, दीजे मां बरदान ॥ ६ ॥

रविव्रत पूजा

यह भवजन हितकार, सु रबि व्रत जिन कही करहु भव्यजन लोग, सुमन देके सही ॥ पूजों पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगायके । मिटै सकल संताप मिले निधि आयके ॥ मति सागर इक सेठ कथा ग्रन्थन कही । उन्हींने यह पूजा कर आनन्द लही ॥ ताते रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये । सुख सम्पति सन्तान, अतुल निधि लीजिये ।

दोहा-प्रणमों पार्श्व जिनेशको हाथ जोड़ शिरनाय ।
परभव सुखके कारने, पूजा करूं बनाय ॥

एतवार व्रतके दिना एही पूजन ठान । ता फल सुरग सम्पति लहै, निश्चय लीजे मान ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो० ।

अष्टक—उज्वल जल भरके अति लायो रतन कटोरन मांहीं । धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रवि-व्रतके दिन भाई । सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही आनन्द मङ्गलदाई ॥

ओंह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं निर्व० ।

मलयागिर केशर अति सुन्दर कुमकुम रंग बनाई धार देत जिन चरनन आगे भव आताप नसाई ।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं निर्व० ।

मोती सम अति उज्वल तन्दुल ल्यावो नीर पखारो । अक्षय पदके हेतु भावसों श्रीजिनवर ढिग धारो ।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

केला अर मचकुन्द चमेली पारजातके ल्यावो । चुन चुन श्रीजिन अग्र चढ़ाओ मनवांछित फल पावो ॥

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायकामबाणविध्वंशनायपुष्पंनिर्वपामी०

बावर फेनी गोजा आदिक घृतमें लेत पकाई। कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यंनिर्वपा०

मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई। जिनके आगे आरती करिके मोह तिमिर नस जाई।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायमोहांधकारविनाशनायदीपं निर्वपा०

चूरनकर मलयागिरि चन्दन धूप दशाङ्ग बनाई तट पावकमें खेय भावसों कर्मनाश हो जाई।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति

श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांति भांतिके लावो। श्रीजिनचरन चढ़ाय हर्ष कर तातैं शिवफल पावो।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायमोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

जल गन्धादिक अष्टदरवले अर्घ बनाओ भाई। नाचत गावतहर्ष भावसों, कञ्चन थार भराई।

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति०

गीतका छन्द-मन बचनकाय बिशुद्ध करके पार्श्वनाथसु पूजिये। जल आदि अर्घ बनाय भवि-

जन भक्तिवन्त सु हूजिये। पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी। जे करत हैं नर नार पूजा लहत सुक्ख अपार जी।

जयमाला

—o—

दोहा--यह जगमें विख्यात है, पारसनाथ महान।
जिनगुणकी जयमालिका, भाषा करो बखान॥

जय जय प्रणमों श्रीपार्श्वदेव। इन्द्रादिक तिनकी करत सेव। जय जय सु बनारस जन्म लीन्ह॥ तिहुं लोकविषै उद्योत कीन॥ १॥ जय जिनके पितु श्री विश्वसेन। तिनके घरभये सुख चैन एन। जय बामादेवी मात जान तिनके उपजे पारस महान॥ २॥ जय तीन लोक आनन्द देन। भविजनके दाता भये हैं पैन। जय जिनने प्रभुकी शरण लीन। तिनकी सहाय प्रभूजी सो कीन॥३॥ जय नाग नागनी भये अधीन। प्रभू चरनन लाग रहे प्रवीन। तजके सो देह स्वर्गसु जाय। धरनेंद्र पद्मावती भये जाय॥ ४॥ जे चार अंजना अधम जान। चोरी तजा प्रभुको धरो ध्यान। जे मतिसागर इक सेठ जान। जिन रविव्रत पूजा करी ठान

॥५॥ तिनके सुत थे परदेश माहिं जिन अशुभ कर्म काटै सु ताहि ॥ ६ ॥ जो रविव्रत पूजन करी सेठ। ताफलकर सबसे भई भेंट। जिन-जिनने प्रभुकी शरनलीन । तिन रिद्धि-सिद्धि पाई नवीन ॥७॥ जो रविव्रत पूजा करहि जेय। ते सुख्य अनंतानंत लेय। धरनेंद्र पद्मावति हुए सहाय। प्रभु भक्ति जान ततकाल जाय ॥८॥ पूजा विधान इहि विधि रचाय। मन वचन काय तीनों लगाय। जो भक्तिभाव जैमाल गाय। सोही सुख सम्पत्ति अतुलपाय॥९॥बाजत मृदंग बीनादिसार। गावत-नाचत नानाप्रकार। तन नन नन नन ताल देत। सन नन नन सुर भर सु लेत ॥१०॥ ता थेई थेई थेई पग धरत जाय। छमछम छमछम घुंघरू बजाय। जो करहिं विरति इहि भांति भांति। ते लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात ॥११॥

दोहा-रविव्रत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जनकोय।
सुख संपति इहि भव लहै, तुरत सुरग पद होय।

अडिल्ल--रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव मन धरैं। भव भवके आताप सकल छिनमें टरैं ॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहैं। सुख सम्पत्ति

सन्तान अटल लक्ष्मी रहैं ॥ फर सर्व विधि पाय भक्ति प्रभु अनुसरे। नाना विधि सुख भोग बहुरि शिव त्रियवरे ॥

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

संस्कृत प्रार्थना

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानंदैककारणं कुरुस्व। मयि किंकरेऽत्र करुणा यथा तथा जायते मुक्तिः ॥१॥ निर्विण्णोऽहंनितर मार्हन् बहुदुःखया भवस्थित्या। अपुनर्भवाय भव हर ! कुरु करुणा-मत्र मयि दीने ॥२॥ उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपांकृत्वा। अर्हन्नल मुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥३॥ त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणंजिनेश ! तेनाहम् मोहरिपुदलित मानसःफूत्क-रणं तव पुरः कुर्वें ॥४॥ ग्रमपतेरपि करुणा परेण केनप्युपद्रुते पुंसि। जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥५॥ अपहर मम जन्म दयां, कृत्वैत्येकवचसि वक्तव्यम। तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वम् ॥६॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत्। संसारता-पतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥७॥ जगदेक-

शरण भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ ८ ॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

महावीर स्वामी

जय महावीर जिनेन्द्र जय, भगवन् । जगत् रक्षा करो । निज सेवकोंके भव-जनित संतापको कृपया हरो ॥ हैं तजके रवि आप हम, अज्ञान तममें लीन हैं । हैं दयासागर आप हम, अति दीन हैं बलहीन हैं ॥१॥ दानी न होगा आप-सा, हम-सा न अज्ञानी कहीं । अवलम्ब केवल हैं हमारे, आप ही दूजा नहीं ॥ भवसिंधुके भव भ्रमरमें हम डूबते हैं हे प्रभो ! झटपट सहारा दीजिये, हम ऊबते हैं हे प्रभो ॥२॥ गिरिको अंगूठेसे हिलाया आपने तो क्या किया ॥ यदि इन्द्रके मदको मिटाया आपने तो क्या किया ॥ यदि कमलको गजने हिलाया तो प्रशंसा क्या हुई । यदि सिंहने गीदड़ भगाया तो प्रशंसा क्या हुई ॥ ३ ॥ अपकारियोंके साथ भी उपकार करते आप थे । मनमें न प्रत्युपकारकी कुछ चाह रखते आप थे ॥ बड़वाग्नि वारिधिके हृदयको है जराता नित्य ही । पर जलधि अपनाये उसे है

क्रोध कुछ करता नहीं ॥ ४ ॥ शुभ स्वावलम्बनका सुपथ सबको दिखाया आपने। दृढ़ आत्म बलका मर्म भी सबको सिखाया आपने ॥ समता सभीके साथ सब दिन आपकी रहती रही। इस हेतु सेवा आपकी निश्छल मही करती रही ॥ ५ ॥ यद्यपि अहिंसा कम सभीने श्रेष्ठ मत माना सही। पर वास्तविक उसके विधानोंको कभी जाना नहीं ॥ किस भांति करना चाहिये जगमें अहिंसा धर्मको। अतिशय सरल करके दिखाया आपने इस मर्मको ॥६॥ करके कृपा यदि अवतरित होते न भूपर आप तो। मिटता नहीं संसारका त्रयकालमें त्रय ताप तो ॥ जितकाम हो निष्काम हो अरु शांतिके सुख धाम हो। योगीश भोगोंसे रहित गुण हीन हो गुण ग्राम हो ॥ ७ ॥ जय जय महावीर प्रभो जगको जगाकर आपने। संसारके हिंसा-जनित भयको भगाकर आपने ॥ इस लोकको सुरलोकसे भी परम पावन कर दिया। अज्ञान-आकर विश्व को प्रज्ञान-सागर है किया ॥८॥

—००—

शांति पाठ भाषा ।

चौपाई १६ मात्रा

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शीलगुणव्रत-संयमधारी ॥ लखन एक सौ आठ विराजैं । निरखत नयन कमलदल लाजैं ॥ १ ॥ पंचम चक्रवर्ति पदधारी । सोलम तीर्थंकर सुखकारी ॥ इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक । नमो शांतिहित शांतिविधायक ॥२॥ दिव्य विटप पुहुपनकी वरषा । दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ॥ छत्र चमर भामण्डल भारी। ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ॥३॥ शांति जिनेश शांति सुखदाई । जगतपूज्य पूजौं शिरनाई । परमशांति दीजै हम सबको । पढ़ैं तिन्हें, पुनि चार संघको ॥४॥

वसन्ततिलका

पूजैं जिन्हे मुकुट हार किरीट लाके ।
इन्द्रादिदेव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥५॥

इन्द्रवज्रा

संपूजकोंको प्रतिपालकोंको । यतीनको औ

यतिनायकोंको ॥ राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले। कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥ ६ ॥

स्रग्धरा

होवै सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी नरेश। होवै वर्षा समै पै तिलभर न रहै व्याधियोंका अन्देशा। होवै चोरी न जारी सु समय वरतै हो न दुष्काल भारी। सारे ही देश धारैं जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दो०—घातिकर्म जिन नाश करि पायो केवलराज।
शांति करो सब जगतमें वृषभादिक जिनराज॥

मंदाक्रांता

शास्त्रोंका हो पठन सुखदा लाभ सत्संगतीका।
सद्वृत्तोंका सुजस कहके, दोष ढांकूं सभीका॥
बोलूं प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊं।
तौलौं सेऊं चरण जिनके, मोक्ष जौलौं न पाऊं॥

आर्या

तव पद मेरे हियमें, मम हिय तेरे पुनीत चरणोंमें। तबलौं लीन रहौं प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति पद मैंने।१०। अक्षर पद मात्रासे, दूषित जो कछु कहा गया मुझसे। क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा

करि पुनि छुड़ाउं भवदुखसे ॥ ११ ॥ हे जगबन्धु जिनेश्वर, पाऊं तब चरण शरण बलिहारी । मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी १२

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्

विसर्जन पाठ भाषा

दोहा—बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय । तुव प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय ॥१॥ पूजनविधि जानों नहीं, नहिं जानों आह्वान । और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥२॥ मंत्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव । क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ॥ ३ ॥ आये जो जो देवगन, पूजे भक्ति प्रमान । सो अब जावहु कृपाकर अपने अपने थान ॥४॥

श्रीजिनवर पच्चीसी

छप्पै छन्द–ऋषभ आदि चौबीस तीर्थपति तिन गुणगाऊं । दिवपुर कुल पितु मात वर्ण लक्षण बतलाऊं । कार्य आयु शिव आसन अरु शिव स्तान मनोहर । कहूं सर्व दरशाय जांय पातक भव भय हर । प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़े स्वर्ग मुक्ति

सुख सों लहै । क्रमशः ऊंचे पाय पद नाथूराम सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धिसे ऋषभ आयकर बसे अयोध्या । वंशोछवाकु प्रधान नाभि पितु अनुपम योद्धा, । मरुदेवी जिनमात वर्ण कंचन तनु सोहै । वृष लक्षण शत पांच चाप तनु लख जगमोहै । थिति चौरासी पूर्व लख पद्मासन कैलास गिरि । मुक्ति थान जिनराज नवों जन्म ना होय फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थसिद्धि अयोध्या बसे अजित जिन । श्रेष्ठवंश इक्ष्वाकु पिता जिन शत्रु कहे तिन । विजयासेना मात तनु गज लक्षणबर। हौंच शतेक धनु तनु थिति पूर्व लाख बहत्तर । कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेदचल । नमो त्रियोग सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथल ॥३॥ सम्भव ग्रीवक त्याग जन्म श्रीवस्ती लीना । वंश कह्यो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना । मात सुसेना हेमवर्ण घोटक शुभ लक्षण। शतक चार धनु देह साथ लख पूर्व आयु गण । खड्गासनसे शिव गये मुक्तिथान सम्मेद गिरि। नमो त्रिलोकीनाथको जन्म मरण ना होय फिर ॥ ४ ॥ अभिनन्दन तज विजय अयोध्या पितु संवर घर ।

सिद्धार्था जिन मात वंश इक्ष्वाकु जन्म वर।
कनक वर्ण कपि चिन्ह हूंठ शत चांप काय जिन।
पूर्व लाख पंचास आयु षड्गासन है तिन। श्रीस-
म्मेदाचल विमल मुक्तिनाथ जिनराजका। त्रिकाल
वंदों भावसे धन्य जन्म है आपका ॥ ५ ॥ वैज-
यन्त तज सुमति अयोध्या नगरी आये। पिता मेव
प्रभु मात मंगला अति मन भाये। विमल वंश
इक्ष्वाकु हेम तनु चकवा लक्षण। धनुष तीन शत
देह तुंग त्रिभुवनसे रक्षण। आयु पूर्व चालीस लख
खड्गासन राजो अटल। सम्मेद शिखरसे शिव
गये नमों नमों तुमको स्वस्थल ॥ ६ ॥ पद्म प्रभु
ग्रीवक सुत्याग कोशाम्बी आये। धारण नृप
पितुमातु सुसीमा आनन्द पाये। वंशकह्यो इक्ष्वाकु
कमल सम लाल वर्ण तन। कमल चिन्ह तन तुंग
चांप ढाई सौ भगवन। आयु तीस लख पूर्वकी
खड्गासनसे शिव गये। सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र
जिन नमों आज आनन्द लये ॥७॥ नाथ सुपार्श्व
ग्रीवकसे काशी उपजाये। सुप्रतिष्ठित पितु माता
पृथिवीके मन भाये। विमल वंश इक्ष्वाकु हरित
तन स्वस्तिक लक्षण। धनुष दोय सौ काय बीस

लख पूर्व आयु भण। खड्गासन सम्मेदगिरि सिद्ध क्षेत्रसे शिव गये। त्रिजग ताप हर्त्तारिको हाथ जोड़ हम इत नये ॥८॥ वैजयन्त तज चन्द्रपुरी चन्द्रप्रभु स्वामी। महासेतु पितु मात लक्ष्मणाके भये नामी। श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि लक्षणवर। धनुष डेढ़सौ देह लाख दश पूर्व आयु सर। खड्गासनसे मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये। शिव थान शिखर सम्मेद जिन तिन पदको हम नित नये ॥ ६ ॥ पुष्पदन्त आरण दिव तज काकन्दी राजे। पिता नृपति स्वग्रीव मात रामा सुख साजे॥ वंश लह्यो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मारग लक्षण। सौधनु तुंग शरीर आयु नौ लाख पूर्वगण खड्गासनसे शिव गये सम्मेदाचल मुक्ति थल। नमों त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युग विमल। ॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग वास मंगलपुर लीना। दृढ़ रथतात सुमति सुनंदाको सुखदीना। निर्मल कुल इक्ष्वाकु हेम तन श्रीतरु लक्षण॥ नब्बे धनुष शरीर आयु लख पूर्व विचक्षण।, खड्गासन दृढ़ धारके सम्मेदाचल पर ध्यान धर। मुक्ति भये तिनको नवें शीश नाय हम जोड़कर।

॥ ११ ॥ श्रेयांस पुष्पोत्तरसे चय वसे सिंहपुर। विष्णुपिया विष्णु श्रीमाता उभय धर्मपुर। वंशो-क्ष्वाकु पुनीत हेम तन गेंडा लक्षण। असीचाप तनु लाख असीचउ वर्ष आयु भण। खड्गासन दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर। नमों त्रियोग लगायके अशुभ कर्मदल जांय खिर ॥१२॥ वासपूज्य कापिष्ट स्वर्गसे चय चम्पापुर। लिया जन्म वसुपूज्य पिता माता विजया उर। ख्यात वंश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण। सत्तर धनुष शरीर उच्च जग जनके रक्षण। लाख बहत्तर वर्षका आय पद्म आसन अटल। सिद्ध क्षेत्र चंपापुरी बन्दौं सुखदाता अचल ॥ १३ ॥ विमल शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लिया वर। कृत वर्म्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकर। विमल वंश इक्ष्वाकु कनक तन बराह लक्षण। साठ चांप तनु तुङ्ग साठ लाख वर्ष आयु गण। खड्गासन सम्मेदगिर मुक्ति थान बन्दन करों। त्रिभुवनाथ प्रसादसे अब न भवोदधिमें परों ॥ १४ ॥ सहस्रार दिवसे अनन्त जिन जन्म अयोध्या। सिंहसेन पित ग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा। सर्व यशा

जित मात वंश इक्ष्वाकु बखानो। हेमवर्ण सेई लक्षण जिनवरके जानो। काय धनुष पंचासका आयु तीसलख पूर्व जिन। खड्गासन सम्मेद शिव नवों चरण कर जोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुष्पोत्तरसे धर्मनाथ चय बसे रत्नपुर। भानु पिता सुव्रता मात इक्ष्वाकु वंश धुर। हेमवर्ण लक्षण सुवज्र तन धनु पैंतालिस। आयु लाख दश वर्ष संग आसन विधि जालिस। सम्मेदाचल मुक्ति थल धर्मपोत धर भव्य जन। पार किये भव उदधिसे करुणा-कर करुणायतन ॥ १६ ॥ शांतिनाथ पुष्पोत्तरसे चय गजपुर आये। विश्वसेन पेरा माता गृह बजे बधाये। कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहे। काय धनुष चालीस आयु लख वर्ष लयो है। षड्गासनसे शिव गये मुक्तिनाथ सम्मेदगिर। युग चरण कमल मस्तक धरों बधे कर्म खलु जांय खिरि ॥ १७ ॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तरसे चय जन्मे गजपुर। सूर्य पिता श्रीदेवी माता उभय धर्मधुर। कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण अज जानो। काय धनुष तैंतीस काम सुरकी पहिचानो। आयु सहस्र पंचानवे वर्ष खण्ड आसन कहो। सम्मेदशिखर

शिवक्षेत्र शुभ जिन बन्दत हम सुख लहो ॥१८॥
अरहनाथ सर्वार्थ सिद्धसे गजपुर आये। पिता
सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये। शुभ
कुरुवंश महान हेमतनु मच्छ चिन्हवर। तीसचांप
तनु तुङ्ग त्रिजन मनमोहन सुन्दर। सहस्र चउरा-
सी वर्षका आयु खण्ड आसन अटल। शिवथान
शिखर सम्मेद जिन बन्दों तिनके पदकमल ॥१९॥
मल्लिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना।
कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना।
वंश कहो इक्ष्वाकु हेमतनु घट लक्षण वर। काय
धनुष पच्चीस तुङ्ग मोहै लख सुर नर। आयु वर्ष
पचपन सहस्र खड्गासन सोहैं अचल। शिवथान
शिखर सम्मदवर तीर्थराज बिसरे न पल ॥ २० ॥
मुनि सुब्रत अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे। पितु
सुमित्र पद्मावत माताको सुख साजै। हरि वंशी
तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहै। बीस धनुषका
काय तुङ्ग देखत मन मोहै। तीस सहस्र सुवर्षका
आयु खड्ग आसन सुभग। सम्मेद शिखर शिव-
थान प्रभु तीर्थराज भवि मुक्ति मग ॥२१॥ प्राणत
तज नमिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना ॥ विजय

पिता विप्रामाताको अति सुख दीना। विमल वंश इक्ष्वाकु वर्ण तनु हेम सुहावन। पद्म पाखुरी अङ्क पञ्चदश चांप सुभग तन। आयु वर्ष दश सहस्त्रका पद्मासनसे शिव गये। सिद्ध क्षेत्र सम्मेद गिरि वंदित हो मंगल नये॥ २२॥ बैजयन्तसे नेमनाथ सूरीपुर प्रगटे। सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत दुख विघटे। लहो श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख अंकुवर। काय धनुष दश सहस्त्र वर्षका आयु पूर्णधर। खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति शिव गये। पशुवंदि छुड़ाई दयाकर तिन पदपङ्कज हम नये॥ २३॥ पारस प्रभु आनत दिव तज काशी राजे। अश्वसेन बामा माता गृह दुन्दुभि बाजे। उग्रवंश तनु नील चिन्ह अहिराज विराजे। नव कर काय उतंग आयु शत वर्ष सु छाजै। खड्गासन सम्मेदगिरि मुक्ति थान मद कमठ हर। मन वच तन बन्दन करों तेवीसम जिनराज वर॥२४॥ वर्द्धमान पुष्पोत्तरसे कुण्डलपुर आये। सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये। नाथ वंश तनु हेमवर्ण हरि चिन्ह मनोहर। सात हाथ तनु आयु बहत्तर अब्द लयोबर। खड्गासन

पावापुरी मुक्ति थान जगताप हर। नवे सु नाथूराम नित हाथ जोड़ युग शीशधर ॥२५॥

—०—

समाधिमरण लघु भाषा।

गौतम स्वामी बन्दोंनामी मरण समाधि भला है। मैं कब पाऊं निशदिन ध्याऊं गाऊं वचन कला है। देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ़ सप्त व्यसन नहिं जाने। त्यागि बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥१॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न विरोधै। बनिज करै पर द्रव्य हरै नहिं छहों करम इमि साधै। पूजा शास्त्र गुरुनकी सेवा संयम तप चहुं दानी। पर उपकारी अल्प अहारी सामायक बिधि ज्ञानी ॥२॥ जाप जपै तिहुं योग धरै दृढ़ तनुकी ममता टारै। अन्त समय वैराग्य सम्हारै ध्यान समाधि विचारै ॥ आग लगै अरु नाव डुबै जब धर्म विघन जब आवै। चार प्रकार अहार त्यागिके मंत्र सु मनमें ध्यावै ॥३॥ रोग असाध्य जहां बहु देखै कारण और निहारै। बात बड़ी है जो बनि आवै भार भवनको डारै। जो न बनै तो

घरमें रह करि सबसों होय निराला। मात पिता सुत त्रियको सौंपै निज परिग्रह इहिकाला ॥ ४ ॥ कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुखिया धन देई। क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य हनेई॥ शत्रुन सों मिल निजकर जोरै मैं बहु करिहै बुराई। तुमसे प्रीतमको दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥ धन धरती जो मुखसों मांगै सब सो दे संतोषै। छहों कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पैले। दूधाधारी क्रमर तजिके छाछ अहार पहेलै ॥ ६ ॥ छाछ त्यागिके पानी राखै पानी तजि संथारा। भूमि मांहि फिर आसन माड़ै साधर्मी ढिग प्यारा ॥ जब तुम जानो यहै जपै है तब जिनवाणी पढ़िये यों कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम पद गहिये ॥७॥ चौ आराधन मनमें ध्यावै बारह भावन भावै दशलक्षण मम धर्म विचारै रत्नत्रय मन ल्यावै ॥ पैंतीस सोलह षटपन चौ दुइ इकई बरन विचारै काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मयी तूं सारै ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुणसों पूरै परमानन्द सुभावै। आनन्द कन्द चिदा नन्द साहब तीन जगतपति

ध्यावै। क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम राखै। अतीचार पांचों सब त्यागै ज्ञान सुधारस चाखै॥ ९॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागै। अद्भुत पुण्य उपाय सुरगमें सेज उठै ज्यों जागे। तहंतै आवै शिवपद पावै बिलसै सुक्ख अनन्तो। द्यानत यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो॥१०॥

देव दर्शन।

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनं। दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनं॥१॥ दर्शनेन जिनेन्द्राणाम्, साधूनां वंदनेन च। न चिरं तिष्ठते पापम् छिद्रहस्ते यथोदकम्॥२॥वीतरागमुखं दृष्ट्वा पद्मरागसमप्रभं। अनेकजन्मकृतंपापं, दर्शनेन विनश्यति॥३। दर्शनं जिन सूर्यस्य संसारध्वान्तनाशनं। बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनं॥४॥ दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणं। जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुख वारिधेः॥५॥ जीवादितत्त्वं प्रतिपादकाय। सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय॥ प्रशांतरूपाय

दिगंबराय । देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥ चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने । परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥ अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेवशरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥८॥ नहिं त्राता नहिं त्राता, नहिं त्राता जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९॥ जिनेभक्तिर्जिने भक्ति-र्जिने भक्तिर्दिने दिने । सदामेऽस्तु सदा मेऽस्त सदा मेत्तु भवे भवे ॥१०॥ जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवच्चक्रवर्त्यपि । स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि,जिनधर्मानवासितः ॥११॥ जन्मजान्मकृतंपापं जन्मकोटिभिरर्जितं । जन्ममृत्युजरारोगं हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥ अद्याभावत सुफलता नयनद्वयस्य । देव त्वदीयचरणांबुजावीक्षणेन । अद्य त्रिलोकतिलकप्रतिभाषते मे । संसारवारिधिरयंचुलुक प्रमाणं ॥

पर्यूषण पर्व भजनावली

उत्तम क्षमा-गजल कौवाली ।

उत्तम क्षमाको धारो, दशलक्ष पर्ववालो। मनमें न क्रोध लाओ, हे ऊंचे भाववालो ॥ १ ॥ उत्तम

क्षमाके धारी फैला दो कीर्ति सारी। सुमरो क्षमाकी मुद्रा, जैनी कहानेवालो ॥ २ ॥ फेरो क्षमाकी माला कैसा ये मन्त्र आला। उत्तम क्षमाको रट लो, भक्तीके मार्गवालो ॥ ३ ॥ फैला दो शांति जगमें उत्तम क्षमासे सबमें। भावोंको शुद्धि कर लो, खोटे विचारवालो ॥ ४॥ माया ममत्व छोड़ो, प्रभु-जीसे नेह जोड़ो। तृष्णाको अब घटाओ, दानी कहानेवालो ॥५॥ दश दिन न क्रोध करना, पापोंसे डरते रहना। विद्या बिनयको सुनलो मुक्तीके जाने वालो ॥ ६ ॥

उत्तम मार्दव

उत्तम मार्दव व्रत करो सब मान कुछ करना नहीं। मान करनेसे कभी भी लाभ कुछ होता नहीं ॥ मानी नरकमें दुःख उठाते, जायकर नर्कों में वे। अभिमानसे होता है सबको फायदा बिलकुल नहीं। अभिमानमें रावण मरा अरु दुर्दशा उसकी हुई। दुख उठाये सैकड़ों पर सुख मिला कुछ भी नहीं ॥ दश पर्व व्रतोंके दिनोंमें भाव समताके धरो। संतोष व्रत धारण करो अरु धैर्यको त्यागो नहीं ।योग्य नित प्रभु दर्श करना अष्टद्रव्यी मेलसे

निश्चल कैसी शांत मुद्रा मान इसमें कुछ नहीं। मान विषका कूप है गति नीचमें ले जायगा। अभि-मान ज्ञानी मत करो अरु धर्मको विसरो नहीं। जाप मार्दवकी जपो, छोटे बड़ोंको सम लखो। करती विनय "विद्या" यही कि, मान कुछ करना नहीं।

उत्तम आर्जव

व्रत पालो उत्तम आर्जव छलसे दूर दूर दूर।
आओ कपट नीतिसे बाज कपटी दूर दूर दूर ॥१॥
अब जपलो आर्जव माला, छलका करदे मूं काला।
ये मन्त्रोंमें मन्त्र निराला, सुखसे पूर पूर पूर ॥२॥
सब सुन लो जैनी भाई, ये छल है बहु दुखदाई।
है निश्चय धरम सहाई, विपदा चूर चूर चूर ॥३॥
कोई रंचक दगा न करना, छलियासे डरते रहना।
सब मनमें सदा सुमरना, जिनका नूर नूर नूर ॥४॥
हे सरल स्वभावी जैनी, इस छलकी धारा पैनी।
'विद्या' मत चढ़ये नसैनी श्रावक शूर शूर शूर ॥५॥

उत्तम सत्य

जगतमें उत्तम सत्य महान! बुद्धिमान गुण-

वान ॥ जगतमें झूठ वचन नहिं मुखसे बोलो, झूठ महा दुख खान ॥ जगतमें० ॥ दुनियांमें है सत्यकी महिमा, सत्यहि मन्त्र महान् ॥जगतमें०॥ दृढ़प्रतिज्ञ बन जो सत निबोले तो निश्चय कल्याण ॥जगतमें०॥ पर विश्वासघात न करना, और न करना मान ॥ जगतमें० ॥ परवस्तुमें मन न लुभानी चाहे जावें प्राण ॥ जगतमें० ॥ सत्य सत्य सब नित्य ही सुमिरो, गाकर उसका गान । जगतमें०॥ उत्तम सत्यकी माला जपलो, धरकर हृदे ध्यान ॥ जगतमें० ॥ हाथ जोड़ सब शीश नवावें, दे प्रभु यह वरदान ॥ जगतमें० ॥ विद्या विनय यही है प्रभुजी, पाऊं उच्च स्थान ॥ जगतमें ॥

उत्तम शौच

जैनी धारियो जी, उत्तम शौच आज मन भाया ॥ टेक ॥ दुखदाई लालच दुःख देता सुनलो उसका हाल । सच्चे मनसे लोभ त्याग दो ये जीका जंजाल ॥ १ टेक० ॥ कौन कहत है लोभ बिना तुम, होवोगे कङ्गाल । दूर हटाओ दिलसे इसको कैसा रही ख्याल ॥ २ टेक ॥ निर्लोभी बन

नेकी शिक्षा प्रभुसे लेलो आज। उत्तम शौचकी जाप जपलो मुक्तीका ये साज ॥टेक० ॥ राग द्वेष मनमें नहिं लाना ये है काला सांप। निज सरूप पहिचानलो फिर देखो आपहि आप ॥ ४ टेक० ॥ हृदेमें सन्तोष धारो निश्चय बेड़ापार। "विद्या" पर्वके उत्तम दिनमें कर अपना उद्धार ॥ ५ ॥

उत्तम संयम राग रेखता।

संयम तेरा मन बता अब क्यों नहीं लगता।
सञ्जम चेतन करता नहीं भोगोंमें क्यों फंसता॥१॥
चैतन सम्भलजा अब भी नरकोंमें क्यों धंसता।
कर करके कपट जाल क्यो भोगोंको है करता॥२॥
संजम रतन सम्भालले विषयोंमें विष दिखाता।
भव भव बिगड़ गये तेरे अब क्यों नहीं सुनता ॥३॥ जग सून्य है संयम बिना पापोंसे नहिं लजता
छहकायके जीवों पै रहम क्यों नहीं करता ॥ ४ ॥
सब इन्द्रियां बसमें रखो धारण करो समता।
इतना किये बिन पापसे कैसे भला बचाता ॥ ५ ॥
दुनियाँमें कहीं भी रहो कुछ हो नहीं सकता।
'विद्या' बिना संजमके देखो कैसा है रुलता।

उत्तम तप गजल

आज उत्तम तप बिरतमें मन लगाना चाहिये। इस दुःखदाई लाभसे अब दिल हटाना चाहिये ॥१॥ निर्लोभी अब बन जाइये लोभ है जहरी छुरा। लोभ लालचको हृदयसे अब हटाना चाहिये ॥२॥ ये लोभ दुश्मन जानका है जीव लेकर जायगा। इस कष्टमय जीवनको सुखसे अब बिताना चाहिये ॥ ३ ॥ द्वादश विधिके तप कठिन है. कैसे कब ये होंयगे। पर्वके उत्तम दिनोंमें तन तपाना चाहिये ॥४॥ नर भव महा दुर्लभ रतन मुश्किलसे 'विद्या' है मिला। तो क्या बिना तपके इसे, योंही गमाना चाहिये ॥५॥

उत्तम त्याग राग [बनजारा]

मन उत्तम त्याग समाया, नरभव जीवनका पाया। है दान चार परकारा, दे औषधि दान अहारा ॥ टेक ॥ दिल अभय शास्त्र मन भाया नर भव जीवनका पाया। तप राग द्वेष निरवारे, मेरे कर्म शत्रुको मारे, मुनियोंने देह तपाया, मेरे मन त्याग सुहाया ॥२॥ ये जीवन बहु दुखदाई, ये विपदा तप

बिन आई। क्यों पाप कूप खुदवाया, नर भव जीवनका पाया ॥ ३ ॥ दुनिया भी अन्तमें न्यारी "विद्या" निश्चय है ख्वारी। कह प्रभुसे नेह लगाया मेरे मन त्याग समाया ॥४॥

उत्तम आकिंचन

(रघुवर कौशल्याके लाल मुनिकी यज्ञ रचानेवाले)

उत्तम आकिंचन ब्रत धार जैनी मात्र कहाने वाले। जैनी मात्र कहानेवाले, त्यागकारूप दिखाने वाले ॥१॥ त्यागो चौबिस परिग्रह भेद। फिर धर तीरथ सिखर सम्मेद। करना आवश्यक नहिं खेद धर्म्मकी बाढ़ बढ़ाने वाले ॥२॥ निश्चय जिनवाणी श्रद्धान,जगमें जैनी धर्म प्रधान। कहते बुद्धिमान गुणवान, जग उपदेश सिखाने वाले ॥ ३ ॥ ये हैं दुखदाई संसार,इसमें सुख पाना दुश्वार। जीवके दुश्मन कई हजार,पग पग दुःख दिलानेवाले ॥४॥ है दुनिया निस्सार, जायेंगे सब कोई हाथ पसार। "विद्या" दान चार परकार, मुक्तिकी राह बताने वाले ॥ ५ ॥

महाबीर स्तुति

महावीर तेरे दर्श बिन दिल दासिका बेजार है। नाथ मुझको तार जल्दी आपका इकरार है ॥२॥ आप जैसी शांत मुद्रा, तीन लोकोंमें नहीं। फिर आपकी सेवासे किसको कब भला इन्कार है ॥२॥ मोह वश अज्ञानतासे भूल भारी हो गई। प्रभु अष्ठ कर्मों जालसे बचना मुझे दुश्वार है ॥३॥ लोभ लालच बेड़ियोंने कसके जकड़ा है मुझे। नाथ चरणों आपड़ा हूं तूं जगतका करतार है ।४। लीला प्रभु अद्भुत तेरी कौन मुखसे गांय हम। डूबती नैयाका तूही मोक्षमग पतवार है ॥५॥ होऊं भव भव स्वामी सेवक जोड़ कर विद्या विनय। बिघ्न टरता दुःख हरता तूही जगदाधार है ॥

नेम स्तुति

सामलिया मैं तो आईजी तुम्हारे दरबार टेक टुक नजर मेहरकी कीजेजी दासीको अवतार ॥टेक॥ प्रभु मेरी ओर निहारो तुम इतनी बात बिचारो। अब मुझको पार उतारोजी सुन लीजे भरतार। ॥ १ टेक ॥ तुम समद विजै दुलारे सुनलो प्रिय

प्राण हमारे तुम अच्छी बात विचारीजी मोह छोड़ी मझधार । २ टेक ॥ अब सुनियो प्रीतम मेरे मैं आई हूं ढिग तेरे । मोह दिक्षा देवो प्यारेजी आई हूं तुमरे द्वार ॥ ३ टेक ॥ अजी नौ भव चरणन सेवा करके पाई मैं मेवा । अन्ते समय बिसराये जी सु मनमें दया धार ॥ ४ टेक ॥ नेमि प्रभु दीक्षा दीनी राजुल मन, बच तन लीनी। सुरगोंमें देव भई जी निज करणीली सुधार ॥५ टेक ॥ सुन हाथ जोड़ मैं बोलूं अपने हिये पट खोलुं । तुम मनमें सुमरो "विद्या" अपनी उन्नतिको संभार ॥ ६ टेक ॥

तीर्थंकरोंका निर्वाणक्षेत्र

ऋषभदेवजीने कैलास पर्वतसे, वासुपूज्यजी चम्पापुरसे, नेमिनाथजीने गिरनारसे. महावीरजीने पावापुरसे निर्वाण प्राप्त किया है और शेष २० तीर्थंकरोंने श्रीसम्मेद शिखरजीसे निर्वाण प्राप्त किया है ।

पांच महाकल्याण

१ गर्भकल्याण २ जन्मकल्याण ३ तपकल्याण ४ ज्ञानकल्याण ५ मोक्ष कल्याण ।

जैनव्रत कथा संग्रह।

दशलक्षणव्रत कथा।

दोहा—प्रथम बन्दि जिनराजको, शारद गणधर पाय। दशलक्षणव्रतकी कथा, कहूं सुगन सुखदाय॥

चौपाई

विपुलाचल श्रीवीरकुमार। आये भविभव-भंजनहार॥ सुनि श्रेनिकनृप बंदन गयो। सर्व लोकसंग आनन्द भयो॥ २॥ श्रीजिन पूजे गणधर चाव। स्तुति करी जोड़कर भाव॥ धर्मकथा तहँ सुनी विचार। दान शील तप भेद अपार॥ ३॥ भव दुखघातक दायक शर्म। भाख्यो प्रभु दशलच्छन धर्म॥ ताको सुनि श्रेणिक रुचि धरी। गुरु गौतमसों बिनती करी॥ दशलच्छनव्रत कथा रसाल। मुझको भाखहु दीनदयाल॥ तव गुरु गौत-

म गणधर कही। सुन जिनधुनिमें भाखी वही ॥५॥ खंड धातुकी पूर्व विदेह। मेरूतैं दक्षिणदिश तेह॥ सीतोदा नदि तीर जु सही। पुरी विशालाक्षा शुभ कही॥६॥ भूपति प्रीतंकर तहं बसै। राणी प्रियकारिणी तस लसै॥ सुता मृगांकरेखा तस जान। मतिशेखर तस मंत्रि प्रधान॥७॥ शशीप्रभा ताकी तिय सही। सुता कामसेना तस भई॥ राज सेठ गुणसागर जान। तस तिय शील सुभद्रा मान॥८॥ सुता मदनरेखा अवतरी। रूप कला गुण लक्षण भरी॥ लक्षभद्रनामा कृतवाल। तस तिय शशिरेखा गुणमाल॥९॥ रोहिणी कन्या ताके भई। चारों कन्या मिल सखि थई॥ शास्त्र पढ़ी इक गुरुके पास। बढ्यो सनेह परस्पर जास॥१०॥ रितु बसन्त आया निरधार। कन्या चारों बनहिं मझार॥ गई सु मुनिवर देखे एक। बन्दन थुति कीनी सविवेक॥११॥ चारों कन्या मुनिसों

कही। तिय परजाय ज्यों छूटें सही॥ ऐसो व्रत उपदेशहु अबै। जासौं नरतन पावै सबै॥१२॥ बोले मुनि दशलक्षण सार। यह व्रत किये होहु भवपार॥ कन्या बोली किहविध करैं। किस दिनतैं यह व्रत हम धरैं॥ १३॥ तब गुरु बोले बचन रसाल। भादव मास कह्यो सुखमाल॥ शुक्लपंचमी दिनसों लेय। पंचामृत अभिषेक करेय॥ १४॥ पूजार्चन कीजे शुभ सही। जिन चौबीसतणी सुख मही॥ उत्तम क्षमा आदि सुखसार। दशमों ब्रह्मचर्य गुणधार॥१५॥ तीनकाल अतिभक्ती करो। तीनकाल पुष्पांजलि धरो॥ इह विध दश वासर आचरो। नियमित ही शुभ कारज करो। उत्तम व्रत दश अनशन किये। मध्यम व्रत कुछ कांजी लिये॥ अथवा दश एकाशन करो। भूमिशयन ब्रह्मचर्य जु धरो॥ १७॥ या विधि दश बरसहिं लग करै। भवसहित व्रत विधि अनुसरे॥ फिर व्रतका उद्यापन

करैं। दान सुपात्रनको विस्तरै ॥१८॥ औषध अभय शास्त्र आहार। चार संघको दे चित धार ॥ रचि मंडल पूजा कीजिये। छत्र चमर आदिक दीजिये ॥१९॥ जो उद्यापन शक्ति न होय। तो दूनों व्रत कीजै लोय ॥ यह व्रत पुण्यतणों भंडार। क्रमसों परभव दे शिवसार ॥२०॥ तब च्यारों कन्या व्रत लियो। भक्ति भाव लखि मुनि व्रत दियो ॥ यथाशक्ति व्रत पूरण करयो। उद्यापन विधिसों आचर्यो ॥२१ अन्तकाल वे कन्या चार। सुमरण कियो पंच नवकार ॥ चारों मरणसमाधि सु कियो ॥ दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥२२॥ सोलह सागर आयू लहो। धर्मध्यान नित सर्व सही ॥ सिद्धक्षेत्र सब करहिं बिहार। क्षायक सम्यक उदय अपार ॥२३॥ नाना विध सुख भोगैं जहां। दुखका लेस न जानै तहां। यह तो कथा रही इह ठौर। आगैं सुनो भई जो और॥२४॥ सब दीपनमांध जंबूद्वीप। दक्षण

लवणसमुद्र समीप ॥ भरतक्षेत्र राजत है तहां । आर्यखण्ड राजै शुभ जहां ॥ २५ तामें मालवदेश विशाल। उज्जयनी नगरी सुख-साल ॥ स्थुलभद्र ताको नरपती । लक्ष्मीमति रानी गुणवती ॥२६॥ क्रमसे चयकर वे सुर चार । आये रानी उदरमझार ॥ प्रथम सुपुत्र देवप्रभ भयो । दूजो सुत गुणचन्द्र जु थयो ॥ २७ ॥ तीजो पद्मप्रभ बलवीर । चौथे पद्मसारथी धीर ॥ जन्म महोत्सव तिनके करे । असुभ दोय ग्रह सबही टरे ॥ २८ ॥ पठनयोग्य जब चारों भये । नृपने गुरु समीप पठादये । सब विद्या पढ़लीनो सार । ब्याह योग्य तब भये कुमार ॥ २६ ॥ निकलप्रभ राजी सुता । चारोंनें परनी गुणयुता ॥ प्रथम सुताका 'ब्राह्मी' नाम । दुतिय, कुमारी सो गुणधाम ॥ तीजी 'रुपवती' सुकुमाल । 'मृगनत्री' चौथी गुणशाल ॥ ब्याह महाच्छव कियो अपार । सुखसों रहने लगे कुमार ॥३१॥

कुछ दिन राज कियो भूपाल। मन वैराग भयो इह काल। भवतनं भोग लखें निस्सार। दिच्चा ग्रहण किया सुविचार ॥ ३२ ॥ बड़े पुत्र को राज सु दियो। वनमें जाकर मुनिव्रत लियो ॥ तपकर पायो केवल ज्ञान। हनि अघात पहुंच्यो शिवथान ॥ ३३ ॥ सुखसों राज करें चउभ्रात। पुरजन सुख भोगे दिन रात। चारों भ्राता चतुर सुजान। पूरब पुण्यतणों फलमान ॥ ३४ ॥ नितप्रति धर्मध्यान आचरैं। पापक्रियातैं अति-शय डरैं ॥ इकदिन मन उपज्यो वैराग। राजपाट सब दीने त्याग ॥ ३५ ॥ वनमें जाकर मुनिव्रतधार। करने लगे करम संहार करत करत तप बहुदिन गये। घाति करम सब छय कर दये ॥ ३६ ॥ तब उपज्यो तिन केवलज्ञान। सुर आये जय जयकर बान ॥ कियो महोच्छव अति सुखमान। कर कल्याण गये निज थान ॥ विविध देश में

कियो विहार। दै उपदेश भव्यजन तार॥ करम अघाति किये सब नास। सिद्धालय कीनो चिरवास॥ ३८॥ दशलच्छनव्रतका फल यही। पायो च्यारों कन्या सही॥ तातैं सबजन तनमन धार। दशलच्छनबृत धारो सार॥ ३९॥ यह बृतकर बहुजन सुर गये। सुरसुख भोग मुक्ति मैं गये॥ गुरु गौतम गणधर यह कही, कर श्रद्धान बृत धारो यही॥ भट्टारक श्रीभूषणवीर, तिनके चेला गुण गंभीर। बृह्मज्ञान सागर सुविचार, कहीकथा दशलच्छनसार॥ ४१॥ पढै सुने जो नर यह कथा, दशलच्छन बृत धारैं तथा। दश-लच्छनबृत वृष भावैं जोय, सो अवश्य शिव तिय पिय होय॥

॥ इति दशलक्षण ब्रत कथा समाप्त॥

पुष्पांजलिव्रत कथा

वीर देवको प्रणामिकर, अर्चा करों त्रिकाल
पुष्पांजलिब्रतकी कथा, सुनो भव्य अघटाल

चौपाई--पर्वत विपुलाचल पर आय । समो-शरण जिनवरका पाय। तिंह सुन राजा श्रेणिक राय। बंदन चले प्रियासुत्त भाय ॥ २ ॥ बंदन कर पूछत नृप तबै। हे प्रभु पुष्पाजालि व्रत अबै ॥ मोंसो कहो करों चितलाय। कौनोंक्रिया कहाफल पाय ॥ बोले गौतम बचन रसाल। जम्बूद्वीपमध्य सुविशाल ॥ सीतानदी दक्षिण दिशि सार ॥ मंगलावर्त सुदेश मंझार ॥ ४ ॥

दोहा=रतनसंचयपुर तहां, बज्रसेन नृपराय जयवंती बनिता लसै, पुत्र बिना ही थाय । ५ । चौपाई—पुत्रचाह जिनमंदिर गई। ज्ञानोदधि मुनि बंदित भई ॥ हे मुनिनाथ कहो समझाय मेरे पुत्रहोय कै नाय ॥ ६ ॥ दोहा=मुनि बोले हे बालकी, पुत्रहोय शुभसार । भूमी छह खगड साधि है, मुक्ति तनों भरतार ॥७॥ सुनकर मुनि के बचन तब, उपज्यो हर्ष अपार। क्रमसों पूरे मास नव, पुत्र भयो शुभ सार ॥ ८ ॥ यौवन

वयस सो पायकर, क्रीड़ा मंडप सार। तहां व्योमसों आइयो, खग भूपर तिसवार॥ ९॥
रत्नशिखर को देखकर, बहुत प्रीति उरमांहिं। मेघवाहन पांचसौं, विद्या दीनो ताहि॥ १०॥

चौपाई

दोनों मित्र परस्पर प्रीति। गये मेरु बंदन तज भीति॥ सिद्धकूट चैत्यालय बंदि। आये सब जन मनआणंदि॥ ११॥ ताकी सखी जनाई सार। वेग स्वयंवर करो तयार॥ भूरि भूप आये तत्काल। माल रत्नशेषर गल डाल॥१२॥ धूमकेतु विद्याधर देख। क्रोधकियो मनमाहिं विशेख॥ कन्या काज दुष्टता धरी। विद्याबल बहु माया करी॥१३॥ युद्ध रत्नशेखरसों करचो बहुत परस्पर विद्याधरो॥ जीत रत्नशेखर तिस वार। पाणिग्रहण कियो व्यवहार॥१४॥ मदन मंजूषा रानी संग। आयो अपने गेह असंग॥ वज्रसन को कर नमस्कार। तात मात मन सुक्ख अपार॥१५॥ एकदिना मंदिर गिरयोग

पहुंचे मित्र सहित सबलोग ॥ चारण मुनि बन्दें
तिहि बार। सुन्यो धर्म चित भयो उदार ॥१६॥
हे मुनि पूर्वजन्म सम्बन्ध। तीनोंके तुम कहो
निबन्ध ॥ तब मुनि कहैं सुनो चितधार। एक
मृणालनगर सुखकार ॥ १७ ॥ नृपमन्त्री इक
तँह श्रुतिकीर्ति। बंधुमती वनिता अति प्रीति
॥ एक दिन वन क्रीड़ा गयो। नारीसंग रमत
सो भयो ॥ १८ ॥ पापी सर्प सो भक्षण करी।
मंत्री मृतक लखी निज नरी ॥ भयो विरक्त जि-
नालय जाय। दिक्षा लीनी मन हर्षाय ॥ १ ॥
यथाशक्ति तप कुछ दिन करयो। पीछे भ्रष्ट
भयो तप टर्यो ॥ गृह आरंभ करन चित ठन्यो
तब पुत्री मुख ऐसे भन्यो ॥ २० ॥ तात जु मेरु
चढे किहिं काज। फिर भवसिन्धु पड़े तज लाज
॥ यों सुन प्रभावती बचसार। मंत्री कोप कियो
अधिकार ॥ २१ ॥ तब विद्याको आज्ञा करी
। पुत्रीको ले वनमैं धरी ॥ विद्या जब बनमें ले
गई। प्रभावती मन चिन्ता भई ॥२२॥ अर-

हंत-भक्ति चित्त में धरी। तब विद्या फिर आई खरी ॥ हे पुत्री तेरा चित जहां। वेग बोल पहुंचाऊं तहां ॥२३॥ पुत्री कही कैलाश के भाव। जिनदर्शनको अधिक ही चाव ॥ पूजा करके बैठी वहां। पद्मावति आई सो तहां ॥२४॥ इतने मध्यम देव आइयो। प्रभावती ने प्रश्न जु कियो ॥ हे देवी कहिये किस काज आये देवी देव जु आज ॥ २५ ॥ पद्मावती बोली बचसार। पुष्पांजलिव्रत है सु अबार ॥ भादो मास शुक्ल पंचमी। पंचदिवस आरंभ न अमी ॥२६॥ प्रोषध यथाशक्ति व्यवहार। पूजो जिन चौबीसी सार ॥ नानाविधिके पुष्प जुलाय। करै एक मंडल जु बनाय ॥ २७ ॥ तीन काल वह माला देय। बहुत भक्तिसों विनय करेय ॥ जपै जाप शुभ मंत्र विचार। याविधि पंचवर्ष अवधार ।२८। उद्यापन कीजै पुनि सार चार प्रकार दान अधिकार। उद्यापनकी शक्ति न होय, तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥२९॥ यह

सुन प्रभावती व्रत लियो, पद्मावती कृपाकर दियो । स्वर्ग मुक्ति फलका दातार, है यह पुष्पाजलिव्रत सार ॥३० ॥ दो०-पद्मावती उपदेशसों, लीनों व्रत शुभ सार । पृथ्वी परसु प्रकाशिके, कियो भक्ति चितधार ॥ तप विद्या श्रुतकीर्तिने, पाई अति जु प्रचंड । प्रभावती व्रत खंडने, आई सो बलबंड ॥ ३२ ॥ चौपाई -वासर तीन व्यतीत जबै, पद्मावती पुनि आई तबै । विद्या सब भागी ततकाल कियो सन्यासमरण तिस बाल ॥३३॥ कल्प सोलवें मुख्य सु जान, देव भयो सो पुण्य प्रमान । तहां देवने किया विचार, मेरा तात भ्रष्ट आचार॥३४॥मैं संबोधों वाकों अबै, उत्तम-गति वह पावै तबै । यही विचार देव आइयो मरणसन्यास तातको कियो ॥३५॥वाही स्वर्ग भयो सो देव, पुण्यप्रभाव लिया फल एव । बंधुमती माताको जीव, उपज्यो ताही स्वर्ग अतीव ॥ ३६ ॥

प्रभावतीका जीव तू, रत्नशेखर भयो जाय
माताको जो जीव थो, मदनमंजूषा थाय ।३७।
श्रुतिकीर्तिको जीव जु तहां, मंत्री मेघवाहन
है यहां । ये तीनोंके सुन पर्याय, भई सुचिन्ता
अंगन माय ॥३८॥ सुन व्रतफल अरु गुरुकी
बानि, भयो सुचित व्रत लीनों जानि । अपने
थान बहुरि आइयो । चक्रवर्तिपद भोग सु
कियो ॥३९॥ समय पाय वैरागी भयो, राजभार
सब सुनकों दयो । त्रिगुप्ति मुनिके चरणों पास
दीक्षा लीनी परम हुलास॥४०॥रत्नशेखर दिक्षा
ली जबै, भयो मेघवाहन मुनि तबै । भवि
जीवोंको अति सुखकार ज्ञान उपायो उनने सार
॥४१॥ घातिकर्म निर्मल सु करै, पाछै मुक्तिपुरी
अनुसरै । इह विधि व्रत पालै जो कोई,
अजर अमर पद पावै सोई॥ ४२ ॥

इति पुष्पांजलि व्रतकथा सम्पूर्ण ।

अनंतनाथ बंदों सदा, मनमें कर बहु भाव।
सुर असुरहि सेवत जिन्हें, होय मुक्तिपर चाव

चौपाई।

जबूद्वीपमैं सार। लख योजन ताको विस्तार॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान। भरत-क्षेत्रता दक्षिण मान॥ २॥ मगध देश देशों शिरोमणी। राजगृह नगरी अति बनी॥ श्रेणिक महाराज गुणवन्त। रानी चेलना गृह शोभंत॥३॥ धर्मवन्त गुण तेज अपार। राजा शय महागुण सार॥ एक दिवस विपु-लाचल वीर। आये जिनवर गुण गंभीर।४। चार ज्ञान के धारक कहे। गोतम गणधर सो संग रहे॥ छह ऋतुके फल देखे नैन। वन-माली ले चाल्यो ऐन॥५॥ हर्ष सहित वन-माली गयो। पुष्प सहित राजा पर गयो॥ नमस्कारकर जोड़े हाथ। मोपर कृपा करो नर-नाथ।६। विपुलाचल उद्यान महंत। महा-

वीर जिन तहां बसंत॥ सुन राजा अति हर्षित भयो। बहुत दान मालीको दयो। ७। सप्त ध्वनि बाजे बाजंतें। प्रजा सहित राजा चाजंत॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राय। जिनवर देव कियो चित चाव॥ ८॥ द्वैविधि धर्म कह्यो समझाय। जासों पाप सर्व जर जाय॥ खग तंह आया एक तुरंत। सुन्दर रूप महा गुणवन्त॥ ९॥ नमस्कार जिनवर करयो। जयँ जयकार शब्द उच्चरयो॥ ताहि देखि अचरज अति कियो। राजा श्रेणिक पूछत भयो॥१०॥ सैना सहित महा गुण-खानि। का यह आयो सुन्दर वानि॥ याकी बात कहो समझाय। ज्ञानवन्त मुनिवर गुरु राय। ११। गौतम बोले बुद्धि अपार। विजयागर कह्यो अतिसार॥ मनो कुम्भ राजा राजंत। श्रीमती रानीको कंत। १२। ताका पुत्र अरिंजय नाम। पुण्यवन्त सुन्दर गुणधाम॥ पूरब तप कीनो इन जोय। ताको

फल भुगतै शुभ सोय ॥ १३ ॥ ताकी कथा कहूं विस्तार । जंवूद्वीप द्वीपनमें सार ॥ भरत क्षेत्र तामैं सुखकार । कौशल देश विराजतसार ॥ १४ ॥ परम सुखद नगरी तहं जान । विप्र सोमशर्मा गुणखान । सोमिल्या भामिनि ता कही । दुख दरिद्रकी पूरति मही ॥ १५ ॥ पूरब पाप किये अतिघने, तिनके फल भुगते ही बने । सुन राजा याका विरतांत, नगर २ सो भ्रमैं दुखांत ॥ १६ ॥ देश विदेश फिरे सुख आश, तो हु न पावै सुख निवास भ्रमत भ्रमत सो आयो तहां, समोशरण जिनवर का जहां ॥ १७ ॥

अनन्तनाथ जिनराजका, समोशरण तिहिंवार
सुर नर अति हर्षित भयें देख महाद्युतिसार

चौपाई ।

बिप्र देखि अति हर्षित भयो, समोशरण बदन को गयो । वंदि जिनेश्वर पूछे सोइ कहा पापमैं मै कीनो होई ॥१८॥ दरिद्र पीड़ा

रहै शरीर । सो तो व्याधि तरो गम्भीर । गणधर कहै सुनो द्विजराय। अनन्त व्रत कीजै सुखदाय ।२०। तबै विप्र बोल्यो कर भाय किस विधि होई सो देहु बताय ।। किस प्रकार या व्रतकों करों । कहो विधान चित्तमें धरो ।२३। भादवमास सुक्खकी खान, चौदस शुक्ल कही सुखदान । कर स्नान शुद्ध हो जाय, तब पूजै जिनवर सुखदाय ।२२। गुरु बन्दना करै चितलाय । या विधि सों व्रत लये बनाय त्रिकाल पूजन श्री जिनदेव । रात्रि जागरन कर सुख लेव । २३ । गीत रु नृत्य महोत्सव जान, धारा जिनवर करो बखान । वर्ष चतु-र्दश विधिसों धरै, ता पीछे उद्यापन करै ।२४। करै प्रतिष्ठा चौदह सार, जासों पाप होइ जर छार । झारी धरै जु अधिक अनूप, स्वर्ण कलश देव शुभरूप ।२५। दीवट झालर संकल माल और चन्दोवे उत्तम जाल । छत्र सिंघा-सन विधिसों करै, तातैं सर्व पाप परिहरै ।२६।

चार प्रकार दान दीजिये, जासों अतुल सुक्ख लीजिये। अंत समय लेवे सन्यास, तातैं मिलै स्वर्ग का वास ।२७। उद्यापन की शक्ति न होय कीजै व्रत दूनो भवि लोइ । विप्र कियो व्रत विधिसों आय, सब दुख ताके गये बिलाय ।२८ अंतकाल धरके सन्यास, तातैं पायो स्वर्ग निवास। चौथे स्वर्गदेव सो जान, महाऋद्धि ताके जु बखान ।२६। विजयाधर गिरि उत्तम ठौर, कांजीपुर पत्तन शिरमौर। राजा तहं अपराजित वीर, विजया तासु प्रिया गंभीर ।३०। ताको पुत्र आरिंजय नाम, तिन यह आय किये परनाम। कंचनमय सिंहासन आन, ता-पर नृप बैठो सुख खान।३१। व्योम पटल विनशत लख संत, उपज्यो चित्त वैराग महंत। राज्य पुत्रको दिया बुलाय, आप लई दीक्षाशुभ भाय ।३२। सही परीषह दृढ़ चित धार, तातैं कर्मभये आति क्षार। घाति घातिया केवल भयो सिद्ध बुद्धि सो पद निर्मयो ।३३। रानीने व्रत

कीना सही, देव देह तिन अच्युत लही। तहां सुसुख भुगते अधिकाय। तहांसों आय भयोनर राय। ३४। राजऋद्धि पाई शुभसार, फिर तपकर विधि कीनेंछार। तहांतेमुक्तिपुरको गयो ऐसो तिन व्रतको फल लयो।३५। ऐसो व्रत करे जो कोई, स्वर्ग मुक्तिपद पावै सोई। विनयसार गुरु आज्ञा करी। श्रावक सुजन चित्तम धरी। ३६। तब यह कथा करी मन ल्याय, यथा शास्त्र में वरणी आय। विधि पूर्वक पालै जो कोय, ताकों अजर अमर पद होय ॥ ३७ ॥

(इति अनत चौदश व्रतकथा समाप्त)।

सुगंधदशमीव्रत कथा।

चौपाई।

वर्द्धमान बंदों जिनराय, गुरु गौतम बन्दों सुखदाय। सुगंधदशमी व्रतकी कथा, वर्द्धमान सुप्रकाशी यथा ॥१॥ मगधदेश राजगृहि नाम, श्रेणिक राज करै अभिमान। नाम चेलना ग्रह पटरानि चन्द्ररोहिणीरूप समान ॥२॥

नृप बैठ्यो सिंहासन परे, बनमाली फल लायो हरे। कर प्रणाम बच नृपतैं कह्यो, प्रमुदित चित्तसे ठाड़ो रह्यो ।३। बर्द्धमान आये जिन स्वामि, जिन जीत्यो उद्धत अरि काम। इतनी सुनत नृपति उठ चला, पुरजनयुत दलबलसे भला ।४। समोशरण वंदे भगवान, पूजा भक्तिधार बहुमान। नर कोठा बैठ्यो नृपजाय हाथ जोड़ पूछ्यो शिरनाय ।५। सुगंधदशमीव्रत फल भाख। ता नरकी कहिये अब साख, गणधर कहैं सुनो मगधेश, जम्बूद्वीप विजयार्द्ध प्रदेश ।६। शिवमंदिर पुर उत्तर श्रेणि, विद्याधर प्रीतंकर जैनि। कमलावती नारि अति रूप सुर कन्यासे अधिक अनूप। सागरदत्त बसें तहां साह, जाके जिन ब्रतमें उत्साह। धनदत्ता बनिता गृह कही, मनोरमा ता पुत्री सही ।८। मुनि सुगुप्त गृहपर आइयो, देख मुनिन्द्र दुःख पाइयो। कन्या मुनि की निन्दा करी, कुद्ध मनमें नहिं शंका धरी ।९। नमगात दुर्गन्धशरीर

प्रगटपनै देहि नाहिं चीर । मुख ताम्बूल हता मुनि अंग, नाख्यो सुखको कीनो भंग ।१०। भोजन अन्तराय जब गयो, मुनि उठ जाय ध्यान वन दियो । समता भाव धरै उर माहिं ।किंचित खेद चित्तमें नाहिं ।११। बीती अवधि समय कुछ गयो, मनोरमाको काल सु भयो । गधी भई पुनि कुकरी ग्राम, अपर ग्राम भई सूकरी नाम ।१२। मगधसुदेश तिलकपुर जान विजयसेन तंहका नृप मान । चित्ररेखा ता रानी कही, तस पुत्री दुर्गन्धा भई ।१३। एक समय गुरु बंदन गयो, पूजा कर विनतीको ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गन्ध शरीर । कहो भवां तर गुणगंभीर ॥ १४ ॥ राजा वचन मुनिश्वर सुने । मुनि बिरतांत रायसे भने ॥ सब विर तांत हाल जो जान । मुनि राजा से कह्यो बखान ॥ १५ ॥ सुन दुर्गन्धा जोड़े हाथ । मोपर कृपा करो मुनिनाथ ॥ ऐसा व्रत उपदेशो मोहिं । जासों तनु निरोग अब होहि ॥१६॥

दयावंत बोले मुनिराय। सुन पुत्री व्रत चित्त लगाय ॥ समता भाव चित्त में धरो। तुम सुगन्धदशमी व्रत करो ॥ १७ ॥ यह व्रत कीजै मनवचकाय। यासों रोग शोक सबजाय ॥ दुर्गन्धा विनवै मुनि पाय। कहिये सबिधि महामुनिराय। ऐसे बचन सुनै मुनि जबै। तब बोले पुत्री सुन अबै ॥ भादों शुक्लपक्ष जब होय। दशमी दिन आराधो सोय ॥१६॥ पंचामृतकी धारा देव। मनमें राखो श्रीजिन देव ॥ शीतल जिनकी पूजा करो। मिथ्या मोह दूर परिहरो ॥२०॥ व्रतके दिन छोरो आरंभ। यासों मिटै कर्मका बंध ॥ याके करत पाप छय जाय। सो दश वर्ष करो मनलाय ॥२१॥ जब यह व्रत संपूरन होय। उद्यापन कीजै चित जोय ॥ दश श्रीफल अमृतफल जाम। नीबू सरस सदा फलआन ॥ २२ ॥ दश दीजे पुस्तक लिखवाय। इह विधि सब मुनि दई बताय ॥ विधि सुन दुर्गन्धा व्रतलयो

स बदुर्गन्ध तच्छिन गयो ॥ २३ ॥ अंत कर आयु जो पूरण करी। दशवें स्वर्ग भई अप्सरी ॥ जिनचैत्यालय बंदन करे। सम्यकभाव सदा उर धरै ॥ २४ ॥ भरतक्षेत्र मंह मध्य सुदेश। भूतितिलकपुर बसै अशेष ॥ राजा मही-पाल तंह जान। मदन सुन्दरी प्रिया बखान ॥ २५ ॥ दशवें दिनसों देवी आन। ताके पुत्री भई निदान ॥ मदनावती नाम धरतास। अति सुरूप तनु सकल सुवास ॥ २६ ॥ बहुत बात को करे बखान। सुन कन्या मान्यो उन्मान ॥ कोशांबीपुर मदन नरेन्द्र। रानी सती करे आनन्द ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम नृप सुन्दर जान। विद्यावंत सुगुणकी खान ॥ जो सुगन्ध मदनावलि जाय। सो पुरुषोत्तम को नरनाय ॥ २८ ॥ राजा मदनसुन्दरी बाल। सुखसों जात न जान्यो काल ॥ एक दिवस मुनिवर बंदियो। धर्म श्रवण मुनिवरपै कियो ॥ २९ ॥ हाथ जोड़ पूछै तब राय।

कहा मनींद्र कहो समुझाय ॥ मो गृहरानी मद-
नावली । ता शरीर शौरभता भली ॥ ३० ॥
कौन पुण्यसे सुभग सुरूप । सुर बनितासों
अधिक अनूप ॥ राजा बचन मुनिश्वर सुनै
। सब विरतांत रायसों भने ॥ ३१॥ जैसे दुर्ग-
न्धा ब्रत लह्यो । तैसी विधि नरपतिसों क-
ह्यो ॥ सुने भवांतर जोड़े हाथ । दीक्षाब्रत
दीजै मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजाने जब दीक्षा
लई । रानी तबै अर्जिका भई ॥ तपकर अन्त
स्वर्गको गई । सोलम स्वर्गप्रतेन्द्र सो भई
॥ ३३ ॥ बाइस सागर काल जो गयो । अन्त
काल ता दिवसों चयो ॥ भरत सु क्षेत्र मगध
तहं देश । वसूधा अमर केतु पुरनेश ॥३४॥
ता गृप गेह जनम उन लहयो । जो प्रतेन्द्र
अच्युत दिव कहयो ॥ कनककेतु कंचनद्युति
देह । बनिता भोग करै शुभ गेह ॥ ३५ ॥
अमरकेतु मुनि आगम भयो । कनककेतु तहं
बंदन गयो । सुनो सुधर्म श्रवण संयोग । तज

परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घातिया केवल लयो । पुनिअघ तिह तिनि शिवपुर गहो ॥ व्रत सुगन्ध दशमी विख्यात । ता फल भयो सुरभियुत गात ॥ ३७ ॥ यह व्रत पुरुषनारि जो करै । तिहि दुख संकट मुनि न परै ॥ शहर गहेली उत्तम वास । जैनधर्म को जहां प्रकाश ॥३८॥ सब श्रावक व्रत संयम धरै । पूजादानसों पातक हरे । उपदेशी वि-श्वभूषण सही । हेमराज पंडितने कही ॥३९॥ मनवच पढ़ै सुनै जो कोय । ताको अजर अमर पद होय ॥ यासों भविजन पढ़ो त्रिका-ल । जो छूटै भवके भ्रमजाल ॥ ४० ॥

इति श्रीसुगंधदशमीव्रतकथा भाषा समाप्त ।

मुक्तावलीव्रत कथा ।

दोहा ।

ऋषभनाथके पद नमों, भविसरोजरवि जान ।
मुक्तावलि व्रतकी कथा, कहूंसुनो धारिध्यान ।१।

मगधदेश देशनप्रधान। तामैं राजगृही शुभ थान॥ राजा तहां श्रेनिकराय। धर्मवंत सबको सुखदाय॥ २ ॥ ता गृह नारि चेलना सती। धर्मशील पूरणगुणवती ॥ इक दिन समोशरण महावीर। आयो विपुलाचलपर धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप अति आनन्दित भयो कुटुमसहित बंदनको गयो ॥ पूजाकर बैठ्यो सुख पाय। हाथ जोड़ कर अर्ज कराय॥४॥ हे प्रभु मुक्तावलिव्रत कहो। यह कर कौनैं क्या फल लहो॥ तब गौतम बोले हर्षाय। सुनो कथा मुक्तावलि राय ॥ ५ ॥ याही जंबूद्वीप मंझार। भरतक्षेत्र दक्षिणदिशि सार ॥ अंगदेश सोहै रमणीक। नगर बसै चम्पा-पुर ठीक॥ ६ ॥ नगर मध्य इक ब्राह्मण बसै। नाम सोमशर्मा तसु लसै॥ ता गृह एक सुता जो भई। यौवनमद कर पूरण थई॥७॥ इक दिन देखे श्रीगुरु जबै। नग्नगात लाखि

निन्दी तबै। अति खोटे दुर्बचन कहाय।
बहुतहि ग्लानि चित्तमें लाय ॥ ८ ॥ ताकरि
महापाप बांधियो। आयु वितीत मरण जो
कियो ॥ नरक जाय नाना दुख सहे। छेदन
भेदन जाय न कहे ॥ ९ ॥ नरक आयु पूरी
कर सोइ। भवभ्रमि द्विजग्रह पुत्री होइ ॥
निर्नामिका पढ्यो तिहं नाम। अतिदुर्गन्धा
देह निकाम ॥ १० ॥ कोई ढिग आवै नहिं
तहां। क्रमकर बड़ी भई सो वहां ॥ अन्न पान-
कर दुःखित महा। जूठन भखै कष्ट अति
लहा ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय।
कर परनाम विनय शिरनाय ॥ कौन पापमैं
कीनी देव। मैं पायो अति दुःख अभेव ॥१२॥
तब मुनिवर पूरब भव कहे। गुरुकी निन्दा-
सों दुख लहे॥ तब दुर्गन्धा जोड़े हाथ। ऐसो
व्रत दीजै मोहिं नाथ ॥ १३ ॥ जासों रोग
शोक सब जाय। उत्तम भव पाऊं गुरुराय। तब
श्रीगुरू बोले हर्षाय ॥ मुक्तावलिव्रत कर मन

जाय ॥ १४ ॥ तासों सबै पाप जर जाय
सुख सम्पति मिलै अधिकाय ॥ तब दुर्गन्धा
कहै बिचार। कौन भांति कीजै व्रतसार ॥१५॥
तब मुनिवर इम बचन कहाय । सुनो भेद
व्रतको चितलाय ॥ भादों सुदि सप्तमि दिन
जोय। ता दिन ब्रत कीजै अवलोइ ॥१६॥
प्रात समय जिनमंदिर जाय । पूजा कथा
सुनो मनलाय ॥ सब आरंभ तजो दिनमान।
संजम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ भोरभये
जिन दर्शन करो। शुद्ध अशन कीजे तब खरो
॥ दूजो ब्रत पूरववत करो । अश्विन वदि
छठि पाप जु हरो ॥ १८ ॥ तीजे ब्रत कीजे
उर धार। अश्विनवदि तेरस सुखकार ॥ कर
उपवास पाल गुणरसा। चौथो अश्विन सुदि
ग्यारसी ॥ १९ ॥ पंचम ब्रत कीजे मनलाय।
कातिकबदि बारसी सुखदाय ॥ फिर छठवां
उपवास सुजान। कार्तिक शुक्ल तीज गुणखान
॥ २०॥ सप्तम ब्रत जिनवरने कह्यो। कार्ति-

क सुदि ग्यारसि शुभ लह्यो ॥ फेर करो अष्ट-
व्रत लोय । मगसिर बदि ग्यारसी जब होय
।२१। नवमों व्रत मगसिर सुदि तीज। येव्रत धर्म-
वृक्षके बीज ॥ या विधि कर नव वर्ष प्रमान ।
मनवचकाय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत
पूरण होय निदान । उद्यापन कीजै गुणखान
॥ श्रीजिनवर अभिषेक कराय । करो मांडनो
जिनगृह जाय ॥ २३ ॥ अष्टप्रकारी पूजा
करो । जन्मजन्मके पातक हरो ॥ यथाशक्ति
उपकरण बनाय । श्रीजिनधाम चढ़ावो जाय
॥ २४ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तोदूनो
व्रत कीजै सोय ॥ सब विध सुन दुर्गन्धा बाल
। मनवचतन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरु-
भाषित तिन व्रत यह कियो । पूरवभव अघ
पानी दियो ॥ ताफल नारि लिंग छेदियो ।
प्रथमहिं स्वर्ग देवसो भयो ॥२६॥ तहां आयु
पूरण कर सोय । चलत भयो मथुराकी लोय
॥ श्रीधर राजा राज करंत । ताके सुत उपज्यो

गुणवंत ॥ २७ ॥ नाम पद्मरथ पंडित भयो एक दिवश वनक्रीड़ा गयो ॥ गुफा मध्य मुनिवरको देख । बंदन कर सुन धर्म विशेष ॥ २८ ॥ तहां पूछ मुनिवरसों सोय । तुमसों अधिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले सुन बाल । वासूपूज्य जिनदीप्ति विशाल ॥२९॥ चम्पापुर राजै जिनराज । तेजपुंज प्रभु धर्म जहाज । यह सुन धर्मविषै चित दयो । समो-शरण जिनबंदन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर दीक्षा लई । तपकर गणधर पदवी भई ॥ अष्टकर्म इस विधिसों जार । पहुंच्यो शिवपुर सिद्धमझार ॥ ३१ ॥ लखौ भव्य व्रतका जु प्रभाव, राज भोग भयो शिवपुर राय ॥ जो नरनारि करै व्रतसार, सुर सुख लहि पावै भवपार ॥ ३२ ॥

॥ इति मुक्तावली व्रत कथा समाप्त ॥

दोहा—अरहनाथ पद बंदिके, बन्दों सरस्वति पाय । रत्नत्रयबृतकी कथा, कहूं सुनो मनलाय

चौपाई

जबूद्वीप भरत शुभ खेत । मगधदेश सुख सम्पति हेत ॥ राजगृही तहं नगर बसाय । राजा श्रेणिक राज कराय ॥२॥ विपुलाचल जिनवीर कुंवार । केवल ज्ञान विराजत सार ॥ माली आय जनावो दयो, ततछिन राजा बंदन गयो ॥ ३ ॥ पूजा बंदन कर शुभ सार लाग्यो पूछन प्रश्न विचार ॥ हे स्वामी रत्न-त्रयसार । बृत कहिये जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥ दिव्य ध्वनि भगवान बताय । भादोंसुदी द्वादश शुभ भाय । कर स्नान स्वच्छ पट श्वेत पहिनो जिनपूजनके हेत ॥ ५ ॥ आठों द्रव्य लेय शुभ जाय । पूजो जिनवर मनबचकाय ॥ जीरण नूतन जिनके गेह । बिंब धराबो तिनमें तेह ॥ ६ ॥ हेमरूप्य पीतलके यन्त्र

तांबा यथा भोजनके पत्र ॥ यन्त्र करो बहु मन थिरदेव । रत्नत्रयके गुण लिख लेव ॥ ७ ॥ निशंकादि दर्शन गुण सार । संशय रहित सुज्ञान अपार ॥ अहिंसादि महाव्रत सार । चारितके ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥ ये तीनोंके गुण हैं आदि । इन्हें आदि जेते गुण वाद ॥ शिवसागर के साधन हेत । ये गुण धारे व्रती सुचेत ॥ ९ ॥ भादों माघ चैत्रमें जान । तीनों काल करो भवि आन । या विधि तेरह बरस प्रमान । भावन भावैं गुणहि नि-धान ॥ १० ॥ लवंगादि अष्टोत्तर आन । जपो मंत्र मनकर श्रद्धान ॥ पुनि उद्यापन विधि जो एह । कलशा चमर छत्र शुभ देह ॥ ११ ॥ संघ चतुर्विधको आहार । वस्त्राभरण देहु शुभसार ॥ बिंबप्रतिष्ठा आदि अपार । पूजो श्रीजिन हो भवपार ॥ १२ ॥

दोहा ।

इस विध श्रीमुख धर्म सुन, भव्यों चित्तधर

भाय। कोनैं फल पायो प्रभू, सो भाखो समुझाय ॥ १३ ॥

चौपाई।

जंबूद्वीप अलंकृत हेर। रह्यो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरु सु दक्षिण दिशा है सार। है सो विदेह धर्म अवतार ॥ १४ ॥ कच्छवती सुदेश तहँ बसै। वीतशोकपुर तामैं लसै ॥ वैस्रिवनाम तहांको राय। करै राज सुरपति सम भाय ॥ १५ ॥ मालीनें जु जनावा दयो विपुल बुद्धि प्रभु बनमें ठयो॥ इतनी सुन नृप बंदन गयो। दान बहुत मालीको दयो॥१६॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म। मोसों कहो मिट सब भर्म ॥ तब स्वामीने सब विधि कही। जो पहिले सो प्रकाशी सही ॥ १७ ॥ पंचामृत अभिषेक सु ठयो। पूजा प्रभुकी कर सुख लयो ॥ जागरणादि ठयो बहु भाय। इस विध व्रतकर वैस्रिवराय ॥ १८ ॥ भावसहित राजा व्रत करयो। धर्म प्रतीत चित्त अनुसरयो।

॥ षोड़शभावन भावत भयो । अन्त समाधि-
मरण नित कियो ॥ १९ ॥ गोत्र तीर्थंकर
बांध्यो सार । जो त्रिभुवनमें पूज्य अपार ॥
सर्वारथसिद्धि पहुंच्यो जाय । भयो तहां अह-
मेंद्र सुभाय ॥ २० ॥ सात हाथ तन ऊंचो
भयो । तैंतिस सागर आयु सु लयो ॥ दिव्य
रूप सुखको भण्डार । सत्यानिरूपण अवधि
विचार ॥ २१ ॥ सौधर्मेन्द्र विचारी धरी ।
यक्षेश्वरको आज्ञा करी ॥ वेग देश निर्माप्यो
जाय । थाप्यो सुथरापुर अधिकाय ॥ २२ ॥
कुम्भपुर राजा तहं बसै । देवी प्रजावती ।तिस
लसै ॥ श्रीआदिक तहं देवी आय । गर्भ सो-
धना कीनी जाय ॥२३॥ रत्नवृष्टि नृप आगन
भई । पद्रंह मासलों बरसत भई ॥ सर्वार्थसि-
द्धसों सुर आय । परजावती कुक्ष उपजाय
॥ २४ ॥ मल्लिनाथ शुभ नाम जु पाय । दृज-
चन्द्रसम बढ़त सुभाय ॥ जब विवाह मंगल वि-
धि भई । तब प्रभु चित विरागता लई ॥२५॥

दीक्षा धर वनमें प्रभु गये। घातिकर्म हनि निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण सु जाय। पूजा करी सुरन सब आय ॥ २६ ॥ यह विधान श्रेणिकने सुन्यो। व्रत लीनं चित अपने गुण्यो ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय पहुंचे अपने गृहको आय ॥ २७ ॥ या विधि जो नरनारी करै, सो भवसागर निश्चय तरै ॥ नलिनकीर्ति मुनि संस्कृत कही। ब्रह्मज्ञान भाभा निर्मयी ॥ २८ ॥

नंदीश्वरव्रत कथा।

चरण नमों जिनराजके, जासों दुरित नशाय। शारद बंदों भावसों, सद्गुरु सदा सहाय ॥१॥

जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु। रह्यो ताहि लव-णोदधि घेर ॥ मेरुसे दक्षिण भारत खेत। मगधदेश सुखसंपति हेत ॥ २ ॥ राजगृही नगरी शुभ बसै। गढ़ मठ मन्दिर सुन्दर लसै ॥ श्रेणिक राज करै सु प्रचण्ड। जिन कीनों अरिगण पै दण्ड ॥ ३ ॥ पटरानी चेलना

सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठोसो जाय । बनमाली शिर नायो आय ॥ ४ ॥ दो कर जोड़ करें सो सेव । विपुलाचल आये जिनदेव ॥ बर्द्धमानको आगम सुन्यो । जन्म सफल अपने चित गुन्यो ॥ ५ ॥ राजा रानी पुरजन लोग । बन्दन चाले पूजन योग ॥ चलत चलत सो पहुंचे तहां । समोशरण जिनवरका जहां ॥ ६ ॥ दे प्रदच्छिणा भीतर गये । बर्द्धमानके चरणों नये । पुनि गणधर को कियो प्रणाम । हर्षित चित्त भया अभिराम ॥ ७ ॥ दशविध धर्म-सुने जिन पास । जातै गयो चित्तको त्रास दोकरजोड़ नृपति वीनयो । अति प्रमोद मेरे मन भयो ॥ ८ ॥ प्रभुदयाल अब कृपा करेव व्रत नंदीश्वर कहु जिनदेव ॥ अरु सबविधि कहिये समझाय । भाव सहित यों पूछी राय ॥ ९ ॥ चार ज्ञानधर गणधर कहै । कौशल देश स्वर्ग सम रहै ॥ ताकै मध्य अयोध्यापुरी

धनकन सुर्वा छतीसों कुरी ॥ १० ॥ तिहिंपुर राज करै हरिसेन । त्याग तेज बल पूरण सेन वंश इच्छाकु प्रगटे चक्रेश । आज्ञा धरे छख-एड प्रदेश ॥ ११ ॥ पाटबन्ध रानी नृप तीन गांधारी जेठी गुणलीन ॥ प्रियामित्रा रूपाश्री नाम। साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥१२॥ सुखसों रहत बहुत दिन गये॥ ऋतुबसंत बनराजा गये जलक्रीड़ा बनक्रीड़ा करै। हास्य बिलास प्रीति अनुसरै ॥१३॥ ता बन मध्य कल्पतरु मूल । चन्द्रकांति मणि शिलानुकूल। मएडपलता अ-धिक विस्तार । चारण मुनि आये तिहं बार ॥ १४ ॥ अरिंजय अमितंजय नाम । सोम दयालु धर्म क धाम॥ राजा रानी पुरजन नारि देखत मुनि तिन दृष्टि पसारि ॥ १५ ॥ सब नर नारि आनन्दित भये। क्रीड़ा तजि मुनि बंदन गये॥ त्रिया पुरुष चरणों अनुसरै । अष्टद्रव्य मुनि पूजैं खरै ॥ १६ ॥ धर्म ध्यान कह्यो मुनिराय। श्रद्धा सहित सुन्योकर

भाय ॥ राजा प्रश्न किया मुनि पास। सुन्यो धर्म भया चित्त हुलास॥ १७॥ दलबल सहित संपदा घनी। और भूमि षटखण्ड जु तनी॥ महापुण्य जो यह फलहोय। गुरु बि-न ज्ञान न पावै कोय॥ १८॥ बार बार बि-नवै कर सेव। कहो भयंकर पूरव देव॥ अवधि ज्ञान बल मुनिवर कहै। पुर अहिच्छेत्र बनिक इक रहै॥ १९॥ सुखित कुबेरमित्र ता नाम साधे धर्म अर्थ अरु काम॥ जेष्टपुत्र श्रीवर्म कुमार। मध्यम जयवर्मा गुणसार॥ २०॥ लघु जयकीर्त्ति कीर्त्ति विख्यात। तीनों शुभ आनन्दित गात॥ एक दिवस उपज्यो शुभकर्म वनमें आये मुनि सौधर्म॥ २१॥ सेठपुत्र मुनिवर बंदियो। श्रीवर्मा जु अठाई लियो॥ नन्दीश्वर व्रत विधिसों पाल, भवभव पाप पुंजका जाल॥ २२॥ अन्त समाधिमरणको पाय। इस पुर वज्रबाहु नृपराय॥ ताके विमला रानी जान। तुम हरिसेन पुत्र भये

आन ॥ २३ ॥ पूरव व्रत पाल अभिराम। तासो लह्यो सुक्खको धाम ॥ जयवर्मा जय कीरति बीर। निकट भव्य गुणसाहस धीर ॥ २४ ॥ बंदे गुरु जु धुरंधर देव। मनबच काय करी बहु सेव ॥ तब मुनि पंच अणुव्रत दियें। दोनों भाव सहित व्रत लिये ॥ २५ ॥ अरु नदीश्वर व्रत तिन लियो। अन्त समाधि मरण तिन कियो ॥ हस्तनागपुर शुभ जहँ बसै, तहां विमलवाहन नृप लसै ॥२६॥ ताके नारि श्रीधरा नाम। अरिंजय अमितंजय धाम ॥ पुत्र युगल हम उपजे तहां। पूर्वपुण्य फल पायो जहां ॥२७॥ गुरु समीप जिनदीक्षा लई। तपबल चारण पदवी भई ॥ यासों हम तुम पूरव भ्रात। देखत प्रेम ऊपजै गात ॥२८॥ पूरव ब्रत नदीश्वर कियो तासों राज चक्रपद लियो ॥ अब फिर व्रत नंदीश्वर करो। तातैं स्वर्गमुक्तिपद वरो ॥२९॥ तब हरिसेन कहै करजोर। व्रत नंदीश्वर

कहो बहोर ॥ मुनिवर कहैं द्वीप आठमों । तास नाम नंदीश्वर नमों ॥ ३० ॥ ताके चउदिश पर्वत परे । अंजन दधिमुख रतिकर धरै ॥ तेरह तेरह दिश दिश जान । ये सब पर्वत बावन मान ॥ ३१ ॥ पर्वत पर्वत पर जिन गेह । तस परिमाण सुनो धर नेह ॥ सौ योजन ताका आयाम । अरु पचास विस्तार सुताम ॥३२॥ उन्नत है योजन पच्चीस । सुर तहं आय नवावें शीस ॥ अष्टोत्तर शत प्रतिमा जान । एक एक चैत्यालय मान । ३३ । गोपुर मणिमयके प्राकार । छत्र चमर ध्वज बंदनवार । प्रातिहार्य विधि शोभा भली । तिन रवि कोटि सोम छवि छली ॥ ३४ ॥ ताही द्वीप जु सुरपति आय । पूजा भक्ति करै बहु भाय ॥ देव अव्रती व्रत नाहिं धरै । भाव भक्ति कर पातक हरै ॥३५॥ तास द्वीप सम्बन्धी सार । व्रत नन्दीश्वर को अधिकार ॥ यहां कह्यो जिनवर सु प्रकाश । आदि अनादि

पुण्यकी राशि ॥ ३६ ॥ जो व्रत भव्यभाव-
सों करै। ते भव जन्मजरामय हरैं ॥ ता व्रत
को सुनिये अधिकार। वर्ष वर्षमें त्रय त्रय बार
॥ ३७ ॥ अषाढ कार्तिक अरु जो फाग।
शाखा तीन करो अनुराग ॥ आठहिं दिन
पूनों परजंत। भक्ति सहित कीजै व्रत संत
॥ ३८ ॥ सातैंका एकासन करो। यथा समय
जिनवर मन धरो ॥ आठेंके दिन कर उपवास
। जासों कटै कर्मकी त्रास ॥ ३९ ॥ करो
प्रथम जिनका अभिषेक। जातैं पातक जाय
अनेक ॥ अष्टप्रकारी पूजा करो। मुखपर-
मेष्ठि पञ्च उच्चरो ॥ ४० ॥ तादिन व्रत नंदी
श्वर नाम। ताको फल सुनिये अभिराम ॥
फल उपवास लक्ष दश जान। श्रीजिनवर
ने कियो बखान ॥ ४१ ॥ दूजे दिन जिन
पूजा करो। पात्र दान दे पातक हरो ॥ अष्ट
विभूति नाम दिन सोय। ता दिन एकाशन
कर लोय ॥ ४२ ॥ फल उपवास सहस दश

होई । अब तीजो दिन सुनिये लोई ॥ जिन पूजा कर पात्रहिं दान। भोजन पानी भात प्रमाण ॥ ४३ ॥ नाम त्रिलोकसार दिन कह्यो साठ लाख प्रोषधफल लह्यो ॥ चतुर्थ दिन कर अवमौदर्य। नाम चतुर्मुख दिन सों हर्य ॥४४॥ तस उपवास लक्ष फल होई। पंचम दिन विधि करियो सोई ॥ जिन पूजा एका- शन करो। हय लक्षण नामजु दिन धरो ॥४५॥ फल चौरासी लक्ष उपवास। जासों होय भ्रमण भव नाश॥ षष्ठम दिन जिन पूजा दान। भोजन भात आमिली पान ॥४६॥ तादिन नाम स्वर्गसोपान । व्रत चालीस लक्ष फल जान॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान ॥ कीजै भविजनको सन्मान ॥ ४७ ॥ सब सम्पति नामक दिन सोय। भोजन भात त्रिबली होय॥ फल उपवास लक्षको जान। अष्टम दिन व्रत चित्तमें आन ॥४८॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो। पात्र दान दे शुभ कृत

गुनो ॥ इन्द्रध्वजव्रत दिन तस नाम। सुमरो जिनवर आठों जाम ॥४९॥ तीन करोड़ अरु लाख पचास। यह फल होय हरै सब त्रास ॥ इस विधि आठ वर्षमें सोइ। भाव सहित कीजै भवि लोइ ॥ ५० ॥ उत्तम आठ वर्ष विधि जान। मध्यम पांच, तीन लघु मान ॥ उद्यापन विधिपूर्वक रचो। वेदीमध्य मांडनो रचो ॥ ५१ ॥ जिन पूजारु महा अभिषेक। चन्द्रोपम ध्वज कलस अनेक ॥ छत्र चमर सिंहासन करो। बहुविधि जिन पूजा अघ हरो ॥५२॥ चारों दान सुपात्रहिं देहु। बहुत भक्ति कर विनय करहु ॥ बहु विधि जिन भावना होइ। शक्ति समान करो भवि लोइ ॥ ५३ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय। तो दूनों ब्रत कीजे सोइ ॥ जिन यह व्रत कीनो अभिराम। तिन पद लियो जु सुखको धाम ॥ ५४ ॥ यह ब्रत पूर्व महाफल लियो। प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥

अनन्तवीर्य अपराजित पाल। चक्रवर्ति पदवी मंह हाल॥ ५५॥ श्रीपाल मैनासुन्दरी। व्रत कर कुष्ट व्याधि सब हरी॥ बहुयक नर नारी व्रत कियो। तिन सब अजर अमर पद लियो॥५६॥ सुन्यो विधान राय हरिसेन अति प्रमोद मुख जपै जु बैन॥ सब परिवार सहित व्रत लियो। मुनिवर धर्म प्रीतिकर दियो॥५७॥ व्रत कर फिर उद्यापन करयो धर्मध्यानकर शुभपद धरयो॥ अन्त समाधि मरणको पाय। भयो देव हरिसेन सुराय॥५८॥ पर्यायांतर जैहैं मुक्ति। श्रेणिक सुन्यो सकल व्रतयुक्ति॥ गौतम कह्यो सकल अधिकार सुन्यो मगाधिपति चित्त उदार॥ ५९॥ जो नर नारी यह व्रत करै। निश्चय स्वर्ग मुक्ति पद वरै॥ संकट रोग शोक सब जाहिं। दुख दरिद्रता दूर विलाहिं॥ ६०॥ यह व्रत नंदी-श्वर की कथा। हेमराज सु प्रकाशी यथा॥ शहर इटावा उत्तम थान। श्रावक करे धर्म

शुभ ध्यान । ६१ । सुने सदा ये जैनपुरान । गुणीजनोंका राखैं मान ॥ तिहिठा सुन्यो धर्म संबध। कीनी कथा चौपाई बंध । ६२ । कहैं सुनै देवै उपदेश । लहैं भावसों पुराय विषेश ॥ जाके नाम पाप मिट जांय । तिहं जिनवरके बन्दों पांय । ६३ ।

इति श्री नन्दीश्वरव्रत कथा समाप्त ।

अठारह नातेकी कथा ।

पंच परमगुरु प्रणामि कर, जिनवाणी उरधार ।
अट्टारह नाते कौ कहू, भवि जीवन हितकार ।१।

जम्बूद्वीप दीपनमें सार । लख जोजन है गोल अकार ॥ भरत क्षेत्र दच्छिन दिन तास उज्जयिनी नगरी तहां खास । २ । विश्वसेन नृप राज्यहि करै । पालै प्रजा नीति अनुसरै ॥ तामें सेठ सुदत्त जु गुनी । सतरह कोटि द्रव्यको धनी । ३ । बसंतातिलका वेश्या एक । घरमें राखी रहित विवेक ॥ ताके संग रमहिं दिनरात । तसफल गर्भ रह्यो सुखपात

॥ ४ ॥ फिर वह वेश्या रुगनी भई। तबहि सेठ तिहं काढ़ जु दई॥ अपने घर वह वेश्या गई। कुछ दिन गये निरोगी भई॥ ५ ॥ ताके सुत कन्या दो बाल। जुगल भये सुन्दर सुकुमाल॥ तिन्हें देख अति दुःखित सोय तिन्हहिं लपेटी कंबल दोय ।६। दरवाजे उत्तर सुत डार। कन्या डारी दखन दुवार॥ प्रातहिं बनिजारो इक आय। कन्या वानै लई उठाय ।७। अपनी तियको जाकर दई कन्या देखजु हर्षित भई॥ तानैं पाली तन मन लाय। 'कमला' नाम धर्‌यो सुखदाय ।८। साकेतापुर वासी एक। वणिक सुभद्रा धरै सविवेक। तिह लीनो वह पुत्र उठाय। तस तिय पाल्यो तिहिं मनलाय। ताको नाम धर्‌यो धनदेव। बढ़त रह्यो शशि सम स्वयमेव। ब्याह योग दोनों हो गये। दोनों वणिक विचारत भये॥१०॥ यह सुन्दर जोड़ी सुखदाय। ब्याह दिये दोनों मनलाय।

भाइ बहन युग उतपन भये। कर्मयोग तिय पति है गये ॥ ११ ॥ दोहा—

सुनहु भविजन कथन अब, पूर्व करम अनुसार। वणिजहेत धनदेव सो गयो उज्जैन मझार ॥१२॥

तहां बसंतिलका तस मात। रहे उजैनीमें बहु ख्यात ॥ तासों प्रीति करी धनदेव। रमै मात सों वह स्वयमेव ॥ १३ ॥ ताको फल एक पुत्र जो भयो। नाम वरुण ताको धर दयो। यह तो कथन रह्यो इह ठौर। आगे भयो सुनो जो और ॥ १४ ॥ दोहा—

अवधिज्ञान जुत एक मुनि कमला द्वारे आय। हित पड़गाह्यो भावजुत, माथा धुनि फिर जाय ॥ १५ ॥ कमला मुनिढिग जायकर, प्रश्न कियो शिरनाय। मो घरतैं पाछे फिरे कारणको मुनिराय ॥ १६ ॥

चौपाई

तब मुनि बोले सुनि चित लाय, तेरो ब्याह

भ्रातसंग थाय । तुम दोनों वेश्या संतान, यह लखि हम आये बन थान ॥ १७ ॥ तो पति पुनि उज्जयिनी जाय । रमहि मात संग मन हुलसाय ॥ ताको फल पुत्र जु भयो । वरुण नाम ताको धर दयो ॥ यह सुन कमला कंपित भई । ह्वै विराग दीक्षा तब लई ॥ व्रत आर्याके धारे सार । तबहि गई उज्जयिनि मंझार ॥ १९ ॥ निजमाता वेश्या घर जाय झूलै वरुण बाल तिहं ठांय ॥ हे बालक तेरे संग मोर, छह नाते हैं सुन चितचोर ॥२० ॥

वरुणके साथ छह नाते ।

प्रथमाहिमेरी मामों जायो, तातैं मेरो है तू भ्रात, दूजे तू सौतनको सुत है वातें मेरो पुत्र विख्यात, देवर भी मेरा लगता है क्योंकि तू पतिका लघु भ्रात, होय भतीजा भी तू मेरे सगे भ्रातका पुत्र जू ख्यात ।२१। मेरी माका पति धनदेव, जु तातैं वह भी पिता भया पितु का छोटा भाई तातैं, तू काका मम होय गया

सौतिनका सुत है धनदेव जु वह मेरा भी पुत्र जु होय। पूतका पूत भया पोता तू, यह नाते छह मेरे जोय ॥ २२ ॥ बसंततिलका रोष कर, आई कमला पास। तू को है मो सुतहि सङ्ग नाते करत प्रकास ॥ २३ ॥ कमला बोली मात सुन, छह नाते तो सङ्ग। भिन्न भिन्न क्रमसे कहू, तामें कछू न भंग ॥ २४ ॥

बसन्ततिलका वेश्याके साथ छह नाते।

मैं धनदेव जुगल तो उरस पदा है तातैं तू मात फिर तू भोजाई है मेरी भ्रात तिया जगमें विख्यात॥ तू माता धनदेव पिता मम पितुकी मा दादी जु थई। मो पतिकी तू दूसरी तिय है तातैं मेरी सोति भई ॥२५॥ सौत पुत्रकी तू तिय है तातैं तू पुत्रबधू मेरी। मो पति जो धनदेव उसी की माता तू सासू है री ॥ या विध छह नाते सुनते हो, तहां जु आया तब धनदेव। तुमरे संग भी छह नाते हैं, सुनलो कान लगा स्वयमेव ॥ २६ ॥

धनदेवके साथ छह नाते ।

प्रथम भ्रात हैं फिर पति हो गये, माताके पति
हो मम तात । वरुण मेरा काका है ताके पिता
भये तैं दादा भ्रात ॥ मेरे सौत पुत्र हो तुम
तातैं मेरे भी पुत्र भये । वेश्या मेरी सास तास
पति तातैं मेरे श्वसुर थये ॥ २७ ॥
वेश्याके संग रमण तैं, एकहि भवके मांहि
एक जीवके साथमें, नाते अठदश थांहि ॥२८॥

जैन भारतीका नमूना ।

प्रस्तावना ।

होंगे सजग सबही मनुज पढ़कर हमारी भारती,
पाषान भी होगा द्रवित सुनकर हमारी भारती ।
सोये हुये निर्जीवसे उनको जगायेगी सही,
सन्मार्ग विमुखोंको सदा पथपर लगायेगी सही ।
जोसड़ रहे हैं खेदसे आलस्यकी ही गोदमें,
पढ़कर इसे वे नर सदा हंसते फिरेंगे मोदमें ।
होगा इसीसे ज्ञात सब क्या क्या हमारा हो गया,
सुविशाल इस भंडारमेंसे रत्न क्या क्या खोगया ।

रविव्रत कथा

श्रीसुखदायक पार्स जिनेश । सुमति सुगति दाता परमेश ॥ सुमरो शारदपद अरविन्द । तिन कर व्रत प्रगट्यो सानन्द ॥ १ ॥ वाणारसि नगरी सुविशाल प्रजापाल । प्रगट्यो भूपाल ॥ मतिसागर तहं सेठ सुजान । ताको भूप करै सन्मान ॥ २ ॥ तासु-तिया गुणसुन्दरी नाम । सात पुत्र ताके अभिराम ॥ षट्सुत भोग करै परणीत । बालरूप गुणधर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्रकूट शोभित जिन धाम । आये यतिपति खण्डित काम ॥ सुनि मुनि आगन हर्षित भये । सर्व लोग बंदनको गये ॥ ४ ॥ गुरुवाणी सुनिकें गुणवती । सेठिन तबै करी बीनती ॥ प्रभो सुगमव्रत देहु बताय । जासों रोगशोक भय जाय ॥ ५ ॥ करुणानिधि भाखहिं मुनिराय । सुनो भव्य तुम चित्त लगाय । जब आषाढ़ सुदि पक्ष विचार । तब कीजै अन्तिम रवि वार ॥६॥ अनशन अथवा अल्प आहार । लव-णादिक जु करै परिहार ॥ नवफलयुत पंचामृतधार । बहु प्रकार पूजो भवहार ॥७॥ उत्तम फल इक्यासी

जान । नवश्रावक घर दीजै आन ॥ या विध कर नववर्ष प्रमाण । जातैं होय सर्व कल्याण ॥ ८ ॥ अथवा एक वर्ष इस सार । कीजै रविव्रत मनहिं विचार ॥ सुन साहुन निज घरको गई । व्रत निंदा करि निंदित भई ॥९॥ व्रत निन्दातैं निर्धन भये । सातहिं पुत्र अवधपुर गये ॥ तहां जिनदत्त सेठ घर रहैं । पूरब दुष्कृतका फल लहैं ॥१०॥ मात पिता गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पूछे तदा ॥ दयावन्त मुनि ऐसैं कह्यो । व्रतनिन्दासैं तुम दुख लह्यो ॥ ११ ॥ सुनि गुरु वचन बहुरि व्रत लयो । पुण्य थयो घरसे धन भयो ॥ भविजन सुनो कथा सम्बन्ध । जहं रहते थे वे सब नन्द ।१२ एक दिवस गुणधर सुकुमार । घास लेन आयो गृहद्वार ॥ क्षुधावंत भावजपै गयो । दंत बिना नहिं भोजन दयो ॥१३॥ बहुरि गयो जहां भूल्यो दंत । देख्यो तासों अहिलिपटंत ॥ फणिपतिकी तहं विनती करी । पद्मावति प्रगटी तिहिं घरी ॥१४॥ सुन्दर मणिमय पारसनाथ । प्रतिमा एक दई तिहिं हाथ ॥ देकर कह्यो कुंवरकर भोग । करो क्षणक पूजा संयोग ॥१५॥ आनबिम्ब निज घरमें धर्‍यो । तिहंकर तिनको दारिद हर्‍यो ॥ सुखविलास

सेवै सब नन्द। नित प्रति पूजें पार्श्व जिनन्द ॥१६॥ साकेतानगरी अभिराम। सुन्दर बनवायो जिनधाम॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य संयोग। आये भविजन संग सु लोग॥ १७॥ संघ चतुर्विधिका सनमान। कियो दियो मनवांछित दान॥ देख सेठ तिनकी संपदा। जाय कही भूपतिसों तदा ॥१८॥ भूपति तब पूछ्यो विरतंत। सत्य कह्यो गणधर गुणवंत॥ देख सुलक्षन ताको रूप। अति आनन्द भयो सो भूप॥ १९॥ भूपति गृह तनुजा सुन्दरी। गुणधरको दीनो गुणभरी॥ कर विवाह मंगल सानन्द। हय गय पुरजन परमानन्द ॥२०॥ मनवांछित पाये सुख भोग। विस्मित भये सकल पुर लोग॥ सुख सों रहत बहुत दिन भये। तब सब बंधु बनारस गये॥ २१॥ मातपिताके परसे पांय। अति आनन्द हिरदे न समाय॥ विघट्यो सबको विषय बियोग। भयो सकल पुरजन संयोग ॥२२॥ आठ सात सोलहके अङ्क। रविव्रत कथा रची अकलंक॥ थोड़ो अर्थ ग्रन्थ विस्तार। कहै कवीश्वर ओ गुणसार ॥२३॥ यह व्रत ओ नरनारी करैं। कबहूं दुर्गतिमें नहिं परै॥ भाव सहित ते शिवसुख लहैं। भानुकीर्ति मुनिवर इमि कहै ॥२४

निशिभोजन भुंजन कथा

दोहा।

नमों सारदा सार बुध, करै हरै अघ लेप।
निशि भोजन-भुंजनकथा, लिखूं सुगम संक्षेप॥

चौपाई।

जम्बूद्वीप जगत विख्यात। भरतखण्ड छवि कही न जात॥ तहाँ देश कुरुजांगल नाम। हस्तनागपुर उत्तम ठाम॥२॥ यशोभद्र भूपति गुणवास। रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास॥ अश्वमास तिथि दिन आराध। पहिली पडवा कियो सराध॥३॥ बहुत विनयसों नगरी तने। न्योत जिमाये ब्राह्मण घने॥ दान मान सबहीको दियो। आप विप्र भोजन नहिं कियो॥ ४॥ इतने राय पठायो दास। प्रोहित गयो रायके पास॥ राजकाज कछु ऐसो भयो। करम करावत सब दिन गयो॥ ५॥ घरमें रात रसोई करी। चूल्हे ऊपर हांडी धरी॥ हींग लेन उठि बाहर गई। यहां विधाता औरहिं ठई॥६॥ मेंडक उछल पड्यो तामहिं। त्रिया तहां कछु जान्यो नाहिं॥ बैंगन छौंक दिये ततकाल।

मेंढ़क मर्यो होय बेहाल ॥ ७ ॥ तबहु विप्र नहिं आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम ॥ पराधीनकी ऐसी बात । औसर पायो आधी रात ॥ ८ ॥ सोय रहे सब घरके लोग । आग न दीवा कर्मसंयोग ॥ भूखो प्रोहित निकसै प्रान । ततछिन बैठो रोटी खान ॥९॥ बैंगन भोलै लीनों ग्रास । मेंढक मुंहमें आयो तास ॥ दांतन तलैं चर्यो नहिं जबै । काढ़ धर्यो थालीमें तबै ॥ १० ॥ प्रात भयो मेंढक पहि-चान । तौ भी विप्र न करी गिलान ॥ तिथि पूरी कर छोड़ी काय । पशुकी योनि उपज्यो जाय ॥११॥

सोरठा

घुघू काग बिलाव, सावर गिरध पखेरुआ ।
सूकर अजगर भाव, बाघ गोह जलमें मगर ॥१२॥
दशभव इहविधि थाय, दशों जन्म नरकहिं गयो ।
दुर्गति कारन पाय, फल्यो पाप बटबीजवत् ॥१३॥

दोहा

निशि भोजन करियो नहिं प्रगट दोष अविलोय ।
परभव सब सुख संपजे, इहभव रोग न होय ॥१४॥

कीड़ी बुधबल हरै, कंपगत करै कसारी। मकड़ी कारण पाय कोढ़ उपजे दुख भारी॥ जुवां जलोदर जनै फांस गल विथा बढ़ावें। बाल सवै सुरभंग वमन मांखी उपजावै॥ तालुवे छिद्र बिछू भखत, और व्याधि बहु करहिं सब। यह प्रगट दोष निशि अशनके, परभव दोष परोक्ष फल॥ १५॥

दोहा

जो अघ इहभव अनुभव करै, परभव क्यों न करेय
डसन सांप पोड़ै तुरत, जहर क्यों न दुःख देय॥१६॥
सुवचन सुर डाहारजै, मूरख मुदित न कोय।
मणिधर फण फेरै सही, नहीं सांप वह होय॥१७॥
सुवचन सतगुरुके वचन, और न सुवचन कोय।
सतगुरु वही पिछानिये, जा उर लोभ न लोय॥१८॥
भूधर सुवचन सांभलो, स्वपरपक्ष पर बौन।
समुद्रेणुका जो मिले, तोड़ैतैं गुण कौन॥ १६॥

इति भोजन भुंजन कथा समाप्त।

पद्मपुराण ।

स्वर्गीय कविवर रविषेणाचार्य कृत संस्कृतका अनुवाद पंडित दौलतरामजाने इतनी सरल और मिष्ट भाषामें लिखा है कि उसको आजकलकी भाषामें बदलनेकी इच्छा नहीं होती कारण वे सीधे साधे और भावपूर्ण शब्द पुरुष ही नहीं हमारा स्त्री समाज तथा बालक बालिकायें भी सरलतासे समझ लेता है ।

जबकि देशमें रामायणका प्रचार जोरोंसे है, तब उसी कथाको समझानेके लिये पद्मपुराणका स्वाध्याय अत्यंत उपयोगी है। शास्त्राकार खुले पत्रोंके ग्रन्थकी न्याछावर १०) रुपया ।

हरिवंशपुराण ।

श्री कृष्णकी जैन धर्ममें कितनी मान्यता है तथा कौरव, पांडव आदिका इतिहास, इस महान ग्रन्थमें संपूर्ण भरा हुआ है । भगवान नेमिनाथ को जीवनीसे तमाम जैन समाजको काफी शिक्षा मिलती है । नीतिपूर्ण एतिहासिक घटनायें पढ़कर मन गद्‌गद हो जाता है। इस ग्रन्थके लेखक वही स्वर्गीय पं० दौलतरामजी हैं जिन्होंने सरल भाषा लिखनेमें काफी ख्याति प्राप्त की है, यह ग्रन्थ भी शास्त्राकार सरल भाषामें छपा है। न्यो० ८) रु०

अंजना पवनजय (नाटक)	|||)	दीपमालिका विधान	-)||
भाद्रपद पूजा	||=)	अरहंतपासा केवली	-)||
विजातीय विवाह मीमांसा	||=)	संसार दुःखदर्पण	-)
नित्यपाठ गुटका (संस्कृत)	||)	जैनस्तव रत्नमाला	-)||
,, (भाषा) सजिल्द	||)	**स्कूली**	
भाग्य उद्योग	||)	छहढाला सार्थ सचित्र	|-)
साध्वी (काव्य)	||)	,, की कुंजी	=)
जैन गायन सुधा	||)	रत्नकरण्ड श्रावकाचार सार्थ	|-)
दौलतपद संग्रह	||)	द्रव्य संग्रह सार्थ	|-)
प्रद्युम्न चरित्र पं० गुणभद्र कृत	||)	श्रावकाचारकी कहानियां	|≈)
प्रेम (सचित्र)	||)	शिशुबोध जैनधर्म प्र० भाग	-)
बुधजन पद ,,	|=)	"२ रा -||) ३ रा ≋) ४ था	|-)
जिनेश्वरपद ,,	|-)	सूत्र भक्तामर मूल	=)
द्यानतपद ,,	|-)	निर्वाण कांड आलोचना	-)
भूधरपद ,,	|-)	पंच मंगल -) छहढाला मूल	-)
विश्वासघात नाटक	|≈)	इष्ट छत्तीसी	-)
अंधेर नगरी नाटक	|)	भक्तामर संकट हरण	-)
नवग्रह विधान	≡)	दर्शन पाठ	-)
कर्मदहन विधान	=)	उपयोगी शिक्षायें	-||)
पंचपरमेष्ठी विधान	≈)	विनती संग्रह	-)||
पंचकल्याणक विधान	≈)	नित्यपूजा संस्कृत और भाषा	|)
सम्मेद शिखर विधान	-)	,, संग्रह (भाषा)	=)

जैन शतक ≡)
षोड्स संस्कार ।।)
रक्षा बंधन कथा -)
सामयिक पाठ सार्थ -)
सोमासती नाटक ≢)
शील कथा (सचित्र) ।≢)
दर्शन कथा „ ।≢)
दान कथा अठारह नाते ।=)
निशि भोजन कथा ।)
रात्रि भोजन तर्ज राधेश्याम ।-)
प्रेम तरंग प्रथम भाग -)
दूसरा -) तीसरा -)
बड़ी बहू बड़े भाग -)
सज्जनचित्त वल्लभ ≣)
दशलक्षण धर्म संग्रह ।-)
भावना संग्रह =)
वैराग्य शतक -)
मौनव्रत कथा (सचित्र) ।)
जैनव्रत कथा ≣)
पिंड शुद्धि =)
समाधिमरण (सचित्र) -)
मेरीभावना ।।)

कुमारी अनन्तमती ≢)
बारहमासा संग्रह -)।।
श्रावक वनिता रागनी ≣)
सुगन्ध दशमी कथा -)।।
रविव्रत कथा -)।।
आदर्श नाटक ≢)

हिन्दीकी उत्तम पुस्तकें

सन् ५७ का गदर १।।)
अबलाकी आत्मकथा २।।)
सद्गुणी सुशीला २)
चिताकी चिनगारियां १)
डिवेलरा १।।)
महारानी द्रौपदी १।।)

सुन्दर तिरंगे चित्र

(१५×२० साइज)

१ भगवानका समोशरण ।।)
२ नेमनाथ स्वामीका वैराग्य ।।)
३ गोमट्ट स्वामी ।।)
४ गिरनार पर्वत ।।)
५ सम्मेद शिखरजी ।।)
६ राजगृही क्षेत्र ।।)
७ सम्राट चंद्रगुप्तके स्वप्न ।।)

बृहद्विमल पुराण ।

यह ग्रन्थ अप्राप्य था इसको संस्कृतमें प्राप्त कर उसकी सरल भाषा-टीका श्रीमान माननीय पं० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थसे लिखाकर छपाया गया है । द्वितीय वृत्तिका मूल्य ६) मात्र ।

शांतिनाथ पुराण ।

यह ग्रन्थ भी संस्कृतमें था, इससे हिन्दी भाषा वाले स्वाध्यायसे वंचित ही रह जाते थे, अतएव इसका सरल भाषामें पं० लालारामजी शास्त्री द्वारा अनुवाद कराया गया है । शास्त्राकार छपाया है । मूल्य ६) रुपया ।

आदिपुराण ।

इस बड़े भारी ग्रन्थको सार रूपमें सरल भाषा वचनिकामें पं० बुद्धि-लाल श्रावकसे लिखवाया गया है । सिर्फ शृङ्गार भाग छोड़कर बाकी प्रत्येक विषयको ग्रन्थमें लानेका प्रयत्न किया है, यही कारण है कि थोड़े ही समयमें ग्रन्थकी द्वितियावृत्ति करानी पड़ी । शास्त्राकार, मूल्य ६) रुपया ।

मल्लिनाथ पुराण ।

पं० गजाधरलालजी शास्त्रीने संस्कृतसे हिन्दीमें इसकी भाषाटीका की है । ग्रन्थको हिन्दी जाननेवालोंके लिये ही छपाया है । जैन समाजने इसको थोड़े ही समयमें मंगाकर खतम कर दिया है । यह द्वितीय वृत्ति है । न्योछावर ४) रुपया मात्र ।

पुन्याश्रव कथा कोष ।

इस ग्रन्थका मिलना १५ वर्षसे बन्द हो गया था उसीको सचित्र ४० चित्र देकर छपाया है, इसकी कथायें कितनी सुन्दर और शिक्षाप्रद हैं, यह हमारे धर्मात्मा पाठक स्वाध्याय करके ही अनुभव प्राप्त कर सकते हैं । भाषा वर्तमान ढंगकी सरल और मुहावरेदार है । फिर भी इस ४०० पृष्ठके ग्रन्थकी न्योछावर २॥) मात्र है ।

आदर्श नाटक—इसमें दिल्ली अनाथालयके बालकों द्वारा गाये जाने वाले ड्रामाओंका संग्रह सचित्र है। मू =)

सोमासती या बिगड़ेका सुधार—रात्रि भोजनपर अच्छा शिक्षाप्रद ड्रामा लिखा गया है। मू० =)

स्कूली पुस्तकें

रत्नकरन्ड श्रावकाचार—सचित्र (सार्थ) मय चार्ट सहित इतना उत्तम अभीतक नहीं छपा था उसे बहुत परिश्रमसे एक सुप्रसिद्ध विद्वान द्वारा सम्पादन कराया है। मू० ।-)

द्रव्य संग्रह—(सचित्र) मुख पृष्ठपर छह द्रव्योंका भावपूर्ण दोरंगा चित्र देखकर आप द्रव्योंका रूप आसानीसे समझ लेंगे। उपयोगी कई चार्ट भी दिये गये हैं। सार्थ अन्य तमाम द्रव्य-संग्रहोंसे उत्तम। छपाई सफाई सर्वोत्तम मू० ।-)

छहढाला—(सार्थ) कव्हर पर "जिन सुथिर मुद्रा देख मृग गण उपल खाज खुजावते" का भावपूर्ण चित्र अन्वय अर्थ आदि कठिन-कठिन उलझनों को हमारे सुयोग्य सम्पादकने सुलझानेका प्रयास किया है। छपाई सफाई सर्वोत्तम होनेपर भी मू० ।-) मात्र।

शिशुबोध जैन धर्म—प्रथम बालबोध जैन धर्मकी तरह बड़े-बड़े बम्बईया टाइपोंमें छपा है। १४ पृष्ठका यह प्रथम भाग है, बारह बार छप चुका है। मू० -)

द्वितीय भाग—१० बार छप चुका है। मू० -)॥

तृतीय भाग—सचित्र बहुत ही उत्तम ढंगसे लिखा गया है। मू० =) आठ बार छप चुका है।

चौथा भाग—सचित्र बहुतही सुंदरताके साथ छपाया गया है। मू० ।-)

भावना संग्रह—पृष्ठ संख्या ३२. इसमें धर्म पचीसी, बारह भावना, भूधर, बुधजन, भगोतीदास, जयचंद, मंगतरायकी भावना सम्मिलित हैं, सोलह कारण भावना, वैराग्य भावना, मेरी भावना, ज्ञान पचीसी आदि भी सम्मिलित हैं।